विषय-सूची

पहला अध्याय

रूसमें सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टीकी स्थापनाके लिये संघर्ष

(१८८३-१९०१)

दूसरा अध्याय

रूसकी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टीका निर्माण—पार्टीमें बोल्शेविक और मेन्शेविक दलोंका जन्म

(१९०१-१९०४)

तीसरा अध्याय

रूस-जापान युद्ध और पहली रूसी क्रान्तिके समय बोल्शेविक और मेन्शेविक

(१९०४–१९०७)

चौथा अध्याय

प्रतिक्रियावादी स्तोलीपिनके शासन-कालमें बोल्शेविक और मेन्शेविक—बोल्शेविकों द्वारा एक स्वतंत्र मार्क्सवादी पार्टीका निर्माण

(१९०८-१९१२)

पाँचवाँ अध्याय

प्रथम साम्राज्यवादी युद्धके पूर्व मज़दूर-आन्दोलनके नये उठानमें बोल्शेविक पार्टी

(१९१२-१९१४)

छठवाँ अध्याय

साम्राज्यवादी युद्धके समय बोल्शेविक पार्टी—रूसमें दूसरी क्रान्ति

(१९१४—मार्च १९१७)

सातवाँ अध्याय

अक्तूबरकी समाजवादी क्रान्तिकी विजय और उसकी तैयारीके समय बोल्शेविक पार्टी

(अप्रैल १९१७-१९१८)

आठवाँ अध्याय

गृहयुद्ध तथा अन्य राष्ट्रों द्वारा सशस्त्र हस्तक्षेपके युगमें बोल्शेविक पार्टी

(१९१८-१९२०)

नवाँ अध्याय

आर्थिक पुनर्संगठनकी शान्तिमय कार्यवाहीकी ओर संक्रमणके युगमें बोल्शेविक पार्टीका कार्य

(१९२१-१९२५)

दसवाँ अध्याय

देशके समाजवादी औद्योगिक निर्माणके संघर्षमें बोल्शेविक पार्टी

(१९२६-१९२९)

ग्यारहवाँ अध्याय

पंचायती कृषि व्यवस्थाके संघर्षमें वोल्शेविक पार्टी

(१९३०–१९३४)

बारहवाँ अध्याय

सोशलिस्ट समाजके निर्माणकी पूर्तिके लिये बोल्शेविक पार्टीका संघर्ष

(१९३५-१९३७)

सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टीका इतिहास

परिचय

१९ वीं सदीके अंतिम भागमें रूसके छोटे-छोटे मार्क्सवादी गुटों और दलोंमें जन्म लेकर सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टी बीसवीं सदीकी महान् बोल्शेविक पार्टीमें परिणत हुई और आज संसारमें किसान-मजदूरोंकी पहली समाजवादी शासन-व्यवस्थाका संचालन कर रही है। इस प्रकार वह अपने जीवनका एक लंबा और गौरवमय युग पार कर चुकी है।

क्रांतिसे पहलेके रूसमें मजदूर-वर्गके आंदोलनसे इस पार्टीका विकास हुआ, उसका जन्म उन मार्क्सवादी गुटों और दलोंमें हुआ जिन्होंने अपना संबंध मजदूर-वर्गसे स्थापित किया था और जिन्होंने उसमें समाजवादी चेतना उत्पन्न की थी। इस पार्टीके पथ-निर्देशक मार्क्सवाद-लेनिनवादके क्रांतिकारी सिद्धांत हैं। साम्राज्यवाद, साम्राज्यवादी युद्ध और सर्वहारा क्रांतियोंके युगकी नयी परिस्थितियोंमें इसके नेताओंने मार्क्स और एंगेल्सके दर्शनको और विकसित किया तथा वे उसे एक और ऊँचे स्तर पर ले आये।

अपने मूल सिद्धांतोंके लिये मजदूर-आंदोलनके भीतरकी मध्यवर्गकी पार्टियोंसे—समाजवादी क्रांतिकारियों (और उनसे भी पहले उनके पूर्ववर्ती नारोद्निकों), मेन्शेविकों, अराजकतावादियों और सभी तरहके पूँजीवादी राष्ट्रवादियोंसे तथा पार्टीके भीतर ही मेन्शेविक, अवसरवादी प्रवृत्तियोंसे—त्रात्स्की-पंथियों, बुखारिनके अनुयायियों, राष्ट्रवादी गुमराहों और दूसरे लेनिनवादके विरोधी दलोंसे लड़कर यह पार्टी बढ़ी और पुष्ट हुई।

मजदूर-वर्ग और सभी श्रमिकोंके सारे शत्रुओंसे—जमींदारों, पूँजीवादियों, धनी किसानों, तोड़-फोड़ करनेवालों, गुप्तचरों और आसपासकी पूँजीवादी शासन-सत्ताओंके भाड़के टट्टुओंसे लड़ कर क्रांतिकारी संघर्षकी आँचमें यह पार्टी पकी और मजबूत हुई।

सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टीका इतिहास तीन क्रांतियोंका इतिहास है:—१९०५ की पूँजीवादी-जनवादी क्रांतिका, फरवरी १९१७ की पूँजीवादी-जनवादी क्रांतिका और अक्तूबर १९१७ की समाजवादी क्रांतिका।

सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टीका इतिहास जारशाहीके नाश और पूंजीवादियों और जमींदारोंकी शक्तिके नाशका इतिहास है। उसका इतिहास गृह-युद्धमें पर-राष्ट्रोंके सशस्त्र हस्तक्षेपकी पराजयका इतिहास है; उसका इतिहास हमारे देशमें सोशलिस्ट समाज और सोवियत सरकारके निर्माणका इतिहास है।

सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टीके इतिहाससे हम उस महत्वपूर्ण अनुभवसे परिचित होंगे जिसे हमारे देशके किसानों और मजदूरोंने समाजवादके लिये लड़ कर प्राप्त किया है।

सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टीके इतिहासका अध्ययन, मजदूर-वर्ग और मार्क्स-वाद-लेनिनवादके सभी शत्रुओंसे हमारी पार्टीके युद्धके इतिहासका अध्ययन, बोल्शेविज्म में दक्षता प्राप्त करनेमें सहायक होता है और हमारी राजनीतिक जागरूकताको सतेज करता है।

सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टीका इतिहास वीरोंका इतिहास है। उसके अध्ययन से हमें सामाजिक विकास और राजनीतिक संघर्षके नियमोंका ज्ञान होता है, क्रांतिकी मूल प्रेरक शक्तियोंका ज्ञान होता है।

सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टीके इतिहासके अध्ययनसे लेनिन और स्तालिनकी पार्टीके ध्येयमें हमारा विश्वास दृढ़ होता है, संसार भरमें कम्युनिज़्मकी विजयमें हमार विश्वास दृढ़ होता है।

इस पुस्तकमें सोवियत संघकी कम्युनिस्ट (बोल्शेविक) पार्टीका संक्षिप्त इतिहास है।

★

पहला अध्याय

रूसमें सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टीकी स्थापनाके लिये संघर्ष

(१८८३–१९०१)

१. रूसमें दास-प्रथाका अंत और औद्योगिक पूँजीवादका जन्म—आधुनिक औद्योगिक सर्वहारा वर्गका उत्थान—मज़दूर-आन्दोलनकी प्रगतिका आरंभ।

अन्य देशोंकी अपेक्षा ज़ारशाही रूस पूँजीवादकी ओर बिलंबसे अग्रसर हुआ। १८६०–७० के पहले रूसमें बहुत थोड़ीसी मिलें और कारखाने खुले थे। दास-प्रथा पर निर्भर बड़ी-बड़ी जागीरें आर्थिक व्यवस्थाकी नींव थीं। दास-प्रथाके होते हुए उद्योग-धंधोंका वास्तविक विकास असंभव था। दासोंके बेगार करनेसे उपज कम होती थी। समाजके समग्र आर्थिक विकासकी माँग थी कि दास-प्रथाका शीघ्र ही अंत हो। क्राइमियाके युद्धमें पराजयसे निर्बल होकर और ज़मींदारोंके विरुद्ध किसानोंके विद्रोहसे त्रस्त होकर १८६१ में ज़ार सरकारको दास-प्रथाका अंत करना ही पड़ा।

दास-प्रथाका अंत कर देने पर भी ज़मींदार किसानों पर अत्याचार करते रहे। दासोंको "मुक्त" करते-करते उन्होंने बहुतसी उस धरतीको भी छीन-झपट लिया जिस पर पहले दास काम करते थे। धरतीके इन छीने हुए टुकड़ोंको किसान **ओत्रेत्स्की** (लूटकी धरती) कहते थे। अपनी "मुक्ति" के मूल्य-स्वरूप उन्हें ज़मींदारोंको २,००,००,००,००० रूबल भी देने पड़े।

दास-प्रथाका अंत हो जाने पर भी किसानोंको बहुत ही कड़ी शर्तों पर ज़मींदारोंसे खेत किराये पर लेने पड़ते थे। लगान लेनेके अलावा ज़मींदार अक्सर कुछ अपनी धरती भी किसानसे उसीके जानवरों और उसीकी हल-माचीसे बिना छदाम दिये जुतवाते थे। इसे **ओत्राबोत्की** या बार्श्चीना (मिहींदारी, लगानके बदले मजदूरी) कहते थे। अधिकतर किसानोंको लगानके नाम पर अपनी आधी फ़सल दे देनी होती थी। इसे **इस्पाल्** (आधा-साझा या बटाई) कहते थे।

इस प्रकार किसानकी स्थिति प्रायः वैसी ही थी जैसी दास-प्रथामें; केवल अब उसे व्यक्तिगत स्वाधीनता थी और पशुकी भाँति उसका क्रय-विक्रय न हो सकता था।

पिछड़े हुए किसानोंसे लगान लेकर या जुर्माना करके किसी न किसी बहाने रक़में वसूल करके ज़मींदारोंने उन्हें बेदम कर दिया था। इन्हीं अत्याचारोंके कारण अधिकांश

किसान अपने खेतोंमें कोई उन्नति न कर सकते थे। इसीलिये क्रांतिके पूर्व रूसमें खेती-किसानीका काम बहुत ढीला था जिससे कभी-कभी फ़सलकी फ़सल मारी जाती थी और अकाल पड़ जाते थे।

दास-युगकी अवशिष्ट रूढ़ियोंसे, लगान और अपनी मुक्तिका मूल्य चुकानेसे—जो बहुधा उनकी सम्पूर्ण आयसे भी बढ़ जाता था—किसान तबाह हो गये। रोजीकी तलाशमें वे गाँव छोड़-छोड़कर परदेस चलने लगे। मिलों और कारखानोंमें वे भर्ती होने लगे। मिल-मालिकोंको सस्ते मज़दूर मिलने लगे।

मज़दूर और किसानोंके सिर पर मुंशी, दरोगा, चौकीदार, जमादार, वगैरहकी एक लंबी-चौड़ी फ़ौज थी जो ज़ार, पूँजीवादियों और ज़मींदारोंकी रक्षा करती थी। १९०३ तक शारीरिक दंडकी प्रथाका अंत न हुआ था। यद्यपि दास-प्रथाका अंत हो चुका था, फिर भी लगान न देने पर या और किसी छोटी-मोटी बात पर भी किसानोंको वेतोंसे पीट दिया जाता था। पुलिसके सिपाही और कज़्ज़ाक़ मज़दूरोंको मार चलते थे—ख़ासकर जब मिल-मालिकोंके दुर्व्यवहारके कारण मज़दूरोंको हड़ताल करनी पड़ती थी। ज़ारशाहीमें मज़दूरों और किसानोंके राजनीतिक अधिकार थे ही नहीं। यह निरंकुश ज़ारशाही जनताका सबसे बड़ा शत्रु थी।

ज़ारशाही रूस अल्पसंख्यक जातियोंका कठघरा था। रूसियोंसे भिन्न इन तमाम अल्पसंख्यक जातियोंके कोई अधिकार न थे और उन्हें हर तरह लांछित और अपमानित किया जाता था। ज़ार-सरकारने रूसी जनताको इन जातियोंसे घृणा करना, उन्हें तुच्छ समझना और म्लेच्छ (इनोरोत्सी) कहना सिखाया था। ज़ारशाही सरकार फूटकी आग धधकाती थी, यहूदियोंके क़त्लेआमके लिये लोगोंको भड़काती थी और कॉकेशस प्रदेशमें उसके भड़कानेसे तातार और आर्मेनियन एक दूसरेकी जानके गाहक बन गये थे।

जिन प्रदेशोंमें ये जातियाँ बसी हुई थीं वहाँकी प्रायः सभी सरकारी जगहें रूसियोंको ही मिलती थीं। कचहरी और दूसरी सरकारी संस्थाओंमें सारा काम रूसी भाषामें होता था। ग़ैर-रूसी जातियोंकी भाषामें अख़बार निकालने या स्कूलोंमें शिक्षा देनेकी मनाही थी। जातीय संस्कृतिका कोई चिन्ह भी न रह जाय, इसकी ज़ार-सरकारने पूरी कोशिश की और ग़ैर-रूसियोंको ज़बरदस्ती रूसी साँचेमें ढालनेकी नीतिका पालन किया। ज़ारशाही इन ग़ैर-रूसी जातियोंको सतानेके लिये जल्लाद थी।

दास-प्रथाका अंत हो जानेके बाद रूसमें औद्योगिक पूँजीवादका विकास काफ़ी तेज़ीसे होने लगा यद्यपि दास-प्रथाकी अवशिष्ट रुढ़ियोंने उसमें अनेक बाधाएँ डालीं। १८६५ से ९० तक, २५ वर्षोंमें, बड़ी मिलों और कारखानोंमें काम करनेवाले मज़दूरोंकी संख्या ७,०६,००० से बढ़कर १४,३३,००० हो गयी, यानी दुगनीसे भी ज़्यादा हो गयी।

१९ वीं सदीके पिछले दस वर्षोंमें रूसका औद्योगिक पूँजीवाद बड़े-बड़े डग रखता हुआ आगे बढ़ चला। इस अवधिके समाप्त होते-होते बड़ी मिलों, कारखानों, खानों और रेलमें काम करनेवाले मज़दूरोंकी संख्या रूसके योरोपीय भागमें ही २२,०७,००० हो गयी और संपूर्ण रूसमें उनकी संख्या २७,९२,००० तक पहुँच गयी।

यह एक आधुनिक सर्वहारा-वर्ग था जो दास-प्रथाके युगमें कारखानोंमें काम करने-वाले मजदूरों तथा और छोटे-मोटे उद्योग-धंधोंमें काम करनेवाले मजदूरोंसे एकदम भिन्न था। यह इसलिये कि बड़े-बड़े कारखानोंमें काम करनेवाले मजदूरोंमें एकताकी भावना थी और उनमें विशेष क्रांतिकारी गुण थे।

१९ वीं सदीके अंतिम दशकमें इस द्रुत औद्योगिक उन्नतिका कारण रेलवे लाइनोंका निर्माण था। इस अवधिमें २१,००० वर्स्ट (लगभग १४,००० मील-सं.) से ऊपर रेलवे लाइनें बनायी गयीं। रेल बनाते समय इंजनों, डब्बों और रेलकी पटरियोंके लिये लोहेकी जरूरत हुई और लोहेके साथ ज्यादा ईंधन, पानी, तेल और कोयलेकी माँग हुई। इस माँगको पूरा करनेके लिये धातु और ईंधन संबन्धी उद्योग-धन्धोंका विकास हुआ।

अन्य पूँजीवादी देशोंकी तरह रूसमें भी औद्योगिक विकासके बाद ह्रासका युग आया जिससे मजदूरोंको भारी हानि सहनी पड़ी और सैकड़ों मजदूर बेरोजगार और बेघरबार होकर इधर-उधर भटकने लगे।

दास-प्रथाका अंत होनेके बाद रूसमें पूँजीवादका विकास यद्यपि काफ़ी तेजीसे हुआ, फिर भी आर्थिक विकासमें रूस दूसरे पूँजीवादी देशोंसे काफ़ी पिछड़ा रहा। अधिकांश जनता अब भी किसानी करती थी। लेनिनने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ "**रूसमें पूँजीवादका विकास**" में, १८९७ की जन-गणनासे आँकड़े देकर यह दिखाया था कि संपूर्ण जनताका लगभग ५/६ भाग किसानीमें लगा था और केवल १/६ भाग छोटे-बड़े उद्योग-धंधों और व्यापारमें तथा लकड़ी या पानीके काममें, या रेल या राजगीरी या और ऐसे ही कामोंमें लगा हुआ था।

इससे स्पष्ट है कि रूसमें यद्यपि पूँजीवादका विकास हो रहा था, फिर भी वह एक कृषि-प्रधान और आर्थिक दृष्टिसे पिछड़ा हुआ देश था। उसमें मध्य-वर्गकी प्रधानता थी अर्थात् रूसमें अब भी उस कृषि-व्यवस्थाकी प्रधानता थी जिसमें किसान अपने छोटे-छोटे खेतोंको जोतते-बोते थे, जिससे उन्हें बहुत कम आय होती थी।

नगरोंके अतिरिक्त गावोंमें भी पूँजीवादका विकास हो रहा था। क्रांतिसे पहलेके रूसमें जनताका सबसे बड़ा वर्ग, किसान-वर्ग छिन्न-भिन्न हो रहा था। खाते-पीते किसानों में से कुलक या धनी किसानोंकी श्रेणी बन रही थी जो देहाती पूँजीवादियोंकी श्रेणी थी। दूसरी ओर बहुतसे किसान तबाह हो रहे थे तथा गरीब किसानों और सर्वहारा और अर्द्ध-सर्वहारा किसानोंकी संख्या बराबर बढ़ रही थी। इन दोनों श्रेणियोंके बीचके किसानों अर्थात् मझोलेकी संख्या प्रतिवर्ष घटती जाती थी।

१९०३ में रूसमें लगभग एक करोड़ किसान कुटुंब थे। "**गांवके ग़रीबोंसे**"* नामक अपनी पुस्तिकामें लेनिनने हिसाब लगाया था कि इनमें कमसे कम पैंतीस लाख कुटुंब ऐसे थे **जिनके पास घोड़े थे ही नहीं**। ये कुटुंब सबसे गरीब किसानोंके थे जो बहुधा अपनी भूमिके कुछ हिस्सेमें खेती करते थे और शेष धनी किसानोंको उठा

---

* हिन्दी संस्करण जन-प्रकाशन गृहसे मिल सकता है।—सं.

कर आप इधर-उधर रोजीकी तलाशमें भटकते थे। ये किसान सर्वहारा-वर्गके सबसे निकट थे। लेनिनने उन्हें अर्द्ध-सर्वहारा या ग्रामीण सर्वहारा-वर्गका नाम दिया था।

दूसरी ओर उन एक करोड़ किसान-कुटुंबोंमें पंद्रह लाख धनी किसानोंके परिवार ऐसे थे जिन्होंने कुल खेतीकी आधी ज़मीन अपने हाथमें कर रखी थी। ये देहाती पूँजीवादी मध्य और निम्न श्रेणीके किसानोंको पीस कर और खेतिहर मजूरोंकी मेहनतसे मुनाफ़ा खाकर साहूकार बन रहे थे।

१८७०–८० में, विशेष कर '८० की ओर मजदूर-वर्गमें जाग्रति होने लगी और उसने पूँजीवादियोंसे युद्धकी घोषणा कर दी। जारशाही रूसमें मजदूरोंका जीवन बड़ा ही कठिन था। सन् ७० के आसपास मिलों और कारखानोंमें मज़दूरोंको १२॥ घंटेसे कम काम न करना पड़ता था और कपड़ेकी मिलोंमें तो १४–१५ घंटे तक भी काम करना पड़ जाता था। स्त्री और बच्चे भी मजदूरीमें खूब कसे जाते थे। बच्चे उतनी ही देर काम करते थे जितनी देर बड़े-बूढ़े, लेकिन स्त्रियोंकी तरह उन्हें भी मज़दूरी कम मिलती थी। मजदूरी बहुत ही कम थी। अधिकांश मजदूरोंको प्रतिमास ७–८ रूबल मिलते थे। सबसे ज़्यादा मज़दूरी लोहेके कारखानों, ढलाई-घरों आदिके मज़दूरोंको मिलती थी और वह भी ३५ रूबल प्रतिमाससे ज़्यादा न होती थी। मजदूरोंको मशीनोंसे कोई क्षति न पहुँचे इसके लिये कोई नियम न थे। जिसका परिणाम यह होता था कि बहुतसे मजदूर कट जाते थे या घायल हो जाते थे। उनका बीमा न होता था और दवा-दारूके लिये भी उन्हें अपने पाससे ही पैसे खरचने पड़ते थे। उनकी रहनेकी कोठरियाँ बीभत्स थीं। मिलकी बारिकोंमें दस-दस बारह-बारह मजदूर तक एक-एक कोठरीमें ठूँस दिये जाते थे। मिल-मालिक मजदूरीका हिसाब करते समय भी मजदूरोंको ठग लेते थे और मिलकी दूकानोंसे ही बड़े-बड़े दामों पर जरूरी चीजें खरीदने पर उन्हें मजबूर करते थे। रही सही कसर जुर्माना करके निकाल लेते थे।

मजदूर संगठित होने लगे और अपनी दुःसह परिस्थितियोंमें सुधार करनेके लिये मिल-मालिकोंके सामने एक साथ माँगें पेश करने लगे। काम बंद करके वे हड़तालें भी करने लगे। सन् ७०–८० की हड़तालें जुर्माना, मज़दूरीमें कटौती या मिल-मालिकोंकी ठगविद्याके कारण हुई थीं।

उन पहली हड़तालोंमें, मजदूर कभी-कभी निराशासे उत्तेजित होकर मिलकी दूकानों, दफ़्तरों, खिड़कियों और मशीनोंको तोड़ डालते थे।

अधिक सजग मजदूरोंने अनुभव किया कि पूंजीवादियोंसे इस लड़ाईमें सफल होनेके लिये संगठन आवश्यक है। इसलिये वे यूनियन बनाने लगे।

१८७५ में, ओदेसामें, दक्षिणी रूसके मज़दूरोंकी यूनियन क़ायम हुई। मजदूरोंका यह पहला संघ ८–९ महीने चला; उसके बाद जारशाही सरकारने उसे नष्ट कर दिया।

१८७८ में सेंट-पीटर्सबर्गमें एक बढ़ई खाल्तूरिन और फिटर ओबनोर्स्कीके नेतृत्वमें **रूसी मज़दूरोंका उत्तरी संघ** स्थापित हुआ। संघके कार्यक्रममें कहा गया कि उसके

उद्देश्य वे ही हैं जो पच्छिमकी सामाजिक-जनवादी मज़दूर-पार्टियों (सोशल-डेमोक्रेटिक लेवर पार्टियों—सं०) के हैं। संघका ध्येय था, अंतमें एक समाजवादी क्रांति करना— " वर्तमान राजनीतिक और आर्थिक व्यवस्थाका, जो एक बहुत ही अन्यायी व्यवस्था है, अंत करना।" औबनौर्स्की, जो संघके संस्थापकोंमेंसे था, कुछ दिन बाहर रह चुका था और वहाँ पर मार्क्स द्वारा संचालित पहली इंटरनेशनल और मार्क्सवादी सामाजिक-जनवादी पार्टियोंके कार्यसे परिचित हो चुका था। इस बातकी छाप रूसी मज़दूरोंके उत्तरी संघके कार्यक्रम पर भी पड़ी। संघका उद्देश्य पहले जनताके लिये राजनीतिक स्वाधीनता और सभा-समिति, भाषण-प्रकाशन आदिके अधिकार प्राप्त करना था। उनकी तात्कालिक माँगोंमें मज़दूरीके घंटे कम करनेकी भी माँग थी।

संघके २०० सदस्य हो गये और लगभग उतने ही उसके हमदर्द थे। संघ हड़तालोंमें भाग लेकर मज़दूरोंका नेतृत्व करने लगा। ज़ारशाही सरकारने इस यूनियन का भी ख़ात्मा किया।

फिर भी मज़दूर-आंदोलन एक ज़िलेसे दूसरेमें और दूसरेसे तीसरेमें फैलने लगा। सन् '८० के आसपास बहुत सी हड़तालें हुईं। १८८१ से '८६ तक पांच वर्षकी अवधिमें ही ४८ हड़तालें हुईं जिनमें ८०,००० मज़दूरोंने भाग लिया था।

१८८५ में ओरेखोवो-सुयेवोमें मोरोसौफ़ मिलमें जो भारी हड़ताल हुई, क्रांतिकारी आंदोलन पर उसका विशेष प्रभाव पड़ा।

इस मिलमें लगभग ८,००० मज़दूर काम करते थे। दिन पर दिन मिल-मालिकों की धाँधली बढ़ती जाती थी। १८८२ से '८४ तक मज़दूरीमें पाँच बार कटौती हुई और कुछ साल बाद मज़दूरी एकबारगी २५ % घटा दी गयी। इस सबके अलावा मिल-मालिक मोरोसौफ़, मजदूरों पर जुर्माना करता था। हड़तालके बाद जो मुकदमा हुआ, उससे पता चला कि मज़दूरीके फ़ी रूबलसे ३० से ४० कोपेक (१ रुबल=१०० कोपेक—स०) तक जुर्माना मोरोसौफ़की जेबमें पहुँच जाता था। मज़दूर इस गिरहकटीको ज़्यादा दिन तक न सह सके और जनवरी १८८५ में उन्होंने हड़ताल कर दी। हड़तालका प्रबन्ध पहलेसे किया गया था। उसका नेता सुलझे विचारोंका एक मज़दूर प्योत्र मोइजेयेंको था जो रूसी मज़दूरोंके उत्तरी संघका सदस्य रह चुका था और कुछ क्रांतिकारी अनुभव भी प्राप्त कर चुका था। हड़तालके एक दिन पहले मोइजेयेंको और दूसरे सचेत बुनकरोंने मिल-मालिकके सामने पेश की जानेवाली अपनी माँगोंका एक चिट्ठा तैयार किया। अपनी एक गुप्त सभामें मज़दूरोंने उस चिट्ठेको पास किया। उसमें ख़ास माँग यह थी कि सरिहन ज़बरदस्तीके जुर्माने बंद किये जायँ।

इस हड़तालका सैनिक शक्तिसे दमन किया गया। ६०० से ऊपर मज़दूर गिरफ़्तार कर लिये गये और पचीसों पेशीके लिये हवालातमें बंद रखे गये।

१८८५ में इवानोवो-वौस्नेजेंस्ककी मिलोंमें भी ऐसी हड़तालें हुईं।

दूसरे साल मज़दूरोंके इस बढ़ते हुए आंदोलनसे भय खाकर ज़ार सरकारको यह

क़ानून बना देना पड़ा कि जुर्मानेकी रक़म मिल-मालिकोंकी जेबोंमें जानेके बदले मज़दूरोंके काममें ही सर्फ़ की जाय।

इन हड़तालोंसे मजदूरोंने यह सीखा कि एक साथ मिलकर लड़नेसे उनका बहुत काम बन सकता है। मज़दूर-आंदोलनसे योग्य नेता और संगठन-कर्ता पैदा होने लगे जो दृढ़तासे मजदूर-हितोंका समर्थन करते थे।

साथही, मजदूर-आंदोलनकी प्रगतिके बल पर, और पश्चिमी योरपके मज़दूर-आंदोलनके प्रभावके कारण रूसके प्रथम मार्क्सवादी संघोंका जन्म हुआ।

२. रूसमें नारोदिज़्म (लोकवाद) और मार्क्सवादका संघर्ष—प्लेखानौफ़ और "मज़दूरोंका उद्धार करनेवाला गुट"—प्लेखानौफ़ द्वारा लोकवादका विरोध—रूसमें मार्क्सवादका प्रसार।

मार्क्सवादी दलोंके जन्मके पहले रूसमें लोकवादी (नारोद्निक) क्रांतिकारी कार्य किया करते थे। वे मार्क्सवादके विरोधी थे।

रूसके पहले मार्क्सवादी गुटका जन्म १८८३ में हुआ। उसका उद्देश्य "मज़दूरोंका उद्धार" करना था और उसका संगठन प्लेखानौफ़ने जेनीवामें किया, जहाँ अपने क्रांतिकारी कार्यके लिये ज़ारशाही दमनसे बचकर उसने आश्रय लिया था।

पहले प्लेखानौफ़ भी लोकवादी था। लेकिन विदेशमें मार्क्सवादका अध्ययन करके उसने लोकवादसे नाता तोड़ लिया और मार्क्सवादका एक प्रमुख प्रचारक बन गया।

"मजदूरोंका उद्धार करने" वाले इस गुटने रूसमें मार्क्सवादके प्रचारके लिये बहुत कुछ किया। उसके सदस्योंने मार्क्स और एंगेल्सके "**कम्युनिस्ट मेनिफेस्टो**",* "**मजूरी और पूँजी**",* "**समाजवाद—काल्पनिक और वैज्ञानिक,**" आदि पुस्तकोंका रूसी भाषामें अनुवाद किया और बाहर छपवा कर उन्हें गुप्त रूपसे रूस में बँटवाया। प्लेखानौफ़ सासुलिच, ऐक्सलरोद और उनके दूसरे साथियोंने मार्क्स और एंगेल्सके दर्शन और **वैज्ञानिक समाजवाद**के विचारोंकी व्याख्या करते हुए अनेक ग्रंथ रचे।

सर्वहारा-वर्गके महान् शिक्षक मार्क्स और एंगेल्सने ही सबसे पहले इस बातको स्पष्ट रूपसे कहा था कि काल्पनिक समाजवादियोंके मतके प्रतिकूल वैज्ञानिक समाजवाद कल्पनाकी उड़ान नहीं है वरन् आधुनिक पूँजीवादी समाजके विकासका वह अनिवार्य परिणाम है। उन्होंने बताया था कि दास-प्रथाकी तरह पूँजीवादी व्यवस्था भी ध्वस्त

* हिन्दी संस्करण जन-प्रकाशन गृहसे मिल सकता है।—सं.

होगी; सर्वहारा-वर्गके रूपमें पूँजीवाद स्वयं अपने यमराजको जन्म दे रहा था। उन्होंने बताया था कि एक मात्र श्रमिकोंके वर्ग-संघर्षसे, केवल पूँजीवादी दुर्ग पर सर्वहारा-वर्गकी विजयसे, मानव-समाज पूँजीवाद और वर्ग-शोषणसे मुक्ति पा सकेगा।

मार्क्स और एंगेल्सने सर्वहारा-वर्गको अपनी शक्ति पहचानना, अपने वर्ग-हितोंको पहचानना, और पूँजीवादियोंसे जमकर लड़नेके लिये संगठित होना सिखाया था। मार्क्स और एंगेल्सने पूँजीवादी समाजके विकासके नियमोंका पता लगाया था और वैज्ञानिक रीति से सिद्ध किया था कि पूँजीवादी समाजके विकास और उसके आंतरिक वर्ग-संघर्षका अनिवार्य रूपसे यही परिणाम होगा कि पूँजीवादका अंत होगा, और सर्वहारा-वर्गकी विजय होगी, उसका **एकाधिपत्य होगा**।

मार्क्स और एंगेल्सने सिखाया था कि पूँजीके दृढ़ बंधनोंसे मुक्ति पाना और पूँजीवादी सम्पत्तिको जन-संपत्ति बनाना शांतिपूर्ण उपायोंसे असंभव है। क्रांतिकारी हिंसा द्वारा, एक **सर्वहारा क्रांति** द्वारा ही श्रमिक-वर्ग पूँजीवादियोंका अन्त करके, और अपना एकाधिपत्य स्थापित करके शोषकोंके विरोधका अंत कर सकता है और एक नये वर्गहीन कम्युनिस्ट समाजका निर्माण कर सकता है।

मार्क्स और एंगेल्सने सिखाया था कि पूंजीवादी समाजमें औद्योगिक मज़दूरोंका वर्ग ही सबसे अधिक क्रान्तिकारी और इस कारण सबसे अग्रगामी वर्ग है। वही एक ऐसा वर्ग है जो पूंजीवादसे असंतुष्ट सब लोगोंको संगठित करके पूंजीवादी दुर्ग पर आक्रमण करनेमें उनका नेतृत्व कर सकता है। किन्तु पुरानी दुनियाका अन्त करके एक नये वर्ग-विहीन समाजकी स्थापना करनेके लिये यह आवश्यक है कि सर्वहारा-वर्गकी एक अपनी मज़दूर-पार्टी हो। मार्क्स और एंगेल्सने इसी पार्टीका नाम कम्युनिस्ट पार्टी रक्खा।

रूसके पहले मार्क्सवादी गुट, प्लेखानौफ़के **"मज़दूरोंका उद्धार"** करने वाले गुटने मार्क्स और एंगेल्सके विचारोंका प्रसार करने की ओर विशेष रूपसे ध्यान दिया।

इस गुटने सबसे पहले विदेशके रूसी अख़बारोंमें मार्क्सवादका नारा उस समय बुलंद किया जब कि रूसमें किसी भी सामाजिक-जनवादी आंदोलनका जन्म न हुआ था। इस तरहके आंदोलनका सूत्रपात करनेके लिये पहले उसके सिद्धांतों और आदर्शोंका प्रचार करना आवश्यक था। मार्क्सवादके प्रसारमें जो विचार-धारा मुख्य रूपसे बाधक थी, वह लोकवादियोंकी थी जिन्होंने उस समयके सचेत मज़दूरों और क्रांतिकी ओर उन्मुख बुद्धिजीवी-वर्ग पर अपना सिक्का जमा रखा था।

जैसे-जैसे रूसमें पूँजीवादका विकास होता गया वैसे-वैसे मज़दूर-वर्ग एक ऐसा प्रबल और अग्रगामी शक्ति बनता गया जो कि संगठित होकर क्रांतिकारी लड़ाई लड़ सकता था। लोकवादी नेता मज़दूर-वर्गके कार्यके महत्वको न समझ पाये थे और उन्हें यह भ्रम था कि प्रमुख क्रांतिकारी शक्ति मज़दूर-वर्ग नहीं, किसान हैं, और ज़ार तथा ज़मींदारोंके शासनका अंत केवल किसानोंके विद्रोह करनेसे हो जायगा। लोकवादी मज़दूर-वर्गसे दूर थे और यह न समझते थे कि मज़दूर-वर्गकी सहायता और उसके नेतृत्वके बिना

अकेले किसान ज़मींदारी और ज़ारशाहीका अंत नहीं कर सकते। वे यह न समझते थे कि मजदूर-वर्ग समाजका सबसे क्रांतिकारी और अग्रगामी वर्ग है।

ज़ारशाही सरकारसे लड़नेके लिये लोकवादियोंने पहले किसानोंको उभारनेका प्रयत्न किया। इसी विचारसे बुद्धिजीवी-वर्गके बहुतसे क्रांतिकारी नौजवान किसानोंके कपड़े पहन कर जैसा कि उस वक्त कहा जाता था जनताकी ओर चल पड़े। इसीलिये उनका नाम **नारोद** (लोक या जनता) से **नारोद्‌निक** (लोकवादी) पड़ा। लेकिन किसानोंने उनका साथ न दिया क्योंकि ये लोग उनकी समस्याओं आदि से अपरिचित थे। उनमेंसे अधिकांशको पुलिसने पकड़ लिया। इसके बाद उन्होंने अकेले ही, विना जनताके सहयोगके, ज़ारशाहीसे युद्ध करनेकी ठानी। नतीजा यह हुआ कि वे ग़लती पर ग़लती करते चले गये।

लोकवादियोंकी एक गुप्त संस्था "नारोद्नाया वोल्या" (लोक-स्वाधीनता) ने ज़ारकी हत्या करनेकी तैयारी की। पहली मार्च १८८१ को "नारोद्नाया वोल्या" के सदस्योंने ज़ार अलेग्ज़ेंडर द्वितीयको बमसे मार डाला। लेकिन इससे जनताको किसी तरहका भी लाभ न हुआ। कुछ गिने-चुने लोगोंकी हत्या करनेसे ज़ारशाही या ज़मींदारी प्रथाका अंत न हो सकता था। एक ज़ारकी जगह दूसरा ज़ार आ गया और अलेग्ज़ेंडर तृतीयके शासन-कालमें किसान-मजदूरोंकी दशा पहलेसे भी बदतर हो गयी।

आतंकवादसे या गिने-चुने लोगोंकी हत्या करके लोकवादियोंने ज़ारशाहीका अंत करनेकी चेष्टा की, लेकिन उनका यह रास्ता ग़लत था। इससे क्रांतिके वास्तविक कार्यको क्षति पहुँची। उनका आतंकवाद इस मिथ्या धारणा पर निर्भर था कि जनता भेड़ोंकी तरह हाँकी जा सकती है; वीरताके कार्य तो कुछ विशेष "वीर" करते हैं और उन वीर कार्योंके लिये जनता उनका मुँह जोहा करती है। उन्हें भ्रम था कि इन गिने-चुने वीरोंके कार्योंसे ही इतिहास बनता है; जनता, वर्ग, समूह, आदि "भेड़ें" हैं जो नेताओंके पीछे आँख मूँद कर चल सकती हैं लेकिन सचेत और जागरूक रह कर संगठित रूपसे कार्य करनेमें एकदम असमर्थ हैं। इस भ्रमके कारण लोकवादियोंने किसानों और मजदूरोंमें क्रांतिकारी कार्य करना छोड़ दिया और गिने-चुने लोगोंकी हत्या करने पर तुल गये। उस युग के एक प्रमुख क्रांतिकारी स्तेपान खाल्तूरिनको भी उन्होंने फुसला लिया और वह क्रांतिकारी मजदूरोंका संगठन छोड़ कर आतंकवादमें अपना सारा समय लगाने लगा।

शोषक वर्गके गिने-चुने प्रतिनिधियोंकी हत्यासे क्रांतिको लाभ पहुँचना तो दूर रहा, मजदूरोंका ध्यान इस सत्यसे अवश्य बँट गया कि उन्हें एक समूचे वर्गसे युद्ध करना है। आतंकवादने किसान-मजदूरोंकी क्रांतिकारी प्रगतिमें बाधा डाली।

लोकवादियोंने मजदूर-वर्गको यह न समझने दिया कि क्रांतिमें उसीको प्रमुख रूपसे भाग लेना है। इस कारण मजदूरोंकी एक अपनी अलग पार्टी बननेमें विलंब हुआ।

यद्यपि ज़ार-सरकारने लोकवादियोंके गुप्त संगठनको तोड़ दिया, फिर भी क्रांतिकारी बुद्धिजीवी वर्गमें उनके विचारोंकी धाक बहुत दिन तक जमी रही। बचे हुए लोक-

वादियोंने भरसक प्रयत्न किया कि रूसमें मार्क्सवादका प्रचार न हो। मजदूर-वर्ग के संगठनमें वे बराबर अड़चनें डालते रहे।

इसलिये लोकवादका विरोध करके ही मार्क्सवाद रूसमें विकसित हो सकता था और सशक्त बन सकता था।

"मज़दूरोंका उद्धार" करनेवाले गुटने लोकवादियोंसे लड़ाई छेड़ दी और यह आवाज़ उठायी कि आतंकवाद और उसकी मिथ्या धारणाओंसे मज़दूर-आंदोलनको वास्तविक क्षति पहुँच रही है।

लोकवादियोंपर आक्षेप करते हुए प्लेखानौफ़ने अपनी रचनाओंमें दिखाया कि यद्यपि वे अपनेको समाजवादी कहते थे, फिर भी उनकी विचार-धारा और वैज्ञानिक समाजवादमें कोई भी समानता नहीं है।

सबसे पहले प्लेखानौफ़ने लोकवादियोंकी भ्रांत धारणाओंकी मार्क्सवादी आलोचना की। उनके सिद्धांतोंपर नपे-तुले वार करनेके साथ प्लेखानौफ़ने मार्क्सवादका समर्थन भी बड़े अच्छे ढंगसे किया।

लोकवादियोंकी वे कौनसी मिथ्या धारणाएँ थीं, जिन पर प्लेखानौफ़ने ऐसे घातक प्रहार किये थे?

पहली धारणा यह थी कि पूँजीवाद रूसके लिये एक "आकस्मिक" वस्तु है। रूसमें उसका विकास असंभव है, इसलिये रूसमें सर्वहारा-वर्गका विकास भी असंभव है।

दूसरी धारणा यह थी कि क्रांतिमें मज़दूर-वर्ग प्रमुख वर्ग न होगा। लोकवादी बिना सर्वहारा-वर्गकी सहायताके ही समाजवाद तक पहुँचनेका स्वप्न देखते थे। वे समझते थे कि प्रमुख क्रांतिकारी शक्ति किसान हैं और बुद्धिजीवी-वर्ग उनका नेतृत्व करेगा। समाजवादी व्यवस्था गाँवकी पंचायती व्यवस्थामें बीजरूपसे वर्तमान है और उसीसे समाजवादका विकास होगा।

उनकी तीसरी मिथ्या धारणा संपूर्ण मानव-इतिहासके संबन्धमें थी और वह धारणा मिथ्या ही नहीं घातक भी थी। समाजके राजनीतिक और आर्थिक विकासके नियमोंसे वे कोरे थे। इस दिशामें वे बहुत पिछड़े हुए थे। वे समझते थे कि इतिहास वर्गों और उनके संघर्षसे नहीं बनता वरन् उसके बनाने वाले कुछ गिने-चुने व्यक्ति या नेता होते हैं जिनके पीछे जनता भेड़ोंकी तरह अंधी होकर चलती है।

लोकवादकी जड़ काटनेके लिये प्लेखानौफ़ने अनेक मार्क्सवादी ग्रंथ रचे जिन्हें पढ़ कर रूसमें बहुतसे लोगोंका इस ओर रुझान हुआ। उसकी **"समाजवाद और राजनीतिक संघर्ष", "हमारे मतभेद", "ऐतिहासिक अध्ययनमें एक सत्तावादी दृष्टिकोणका विकास"** आदि पुस्तकोंने रूसमें मार्क्सवादका मार्ग प्रशस्त किया।

प्लेखानौफ़ने अपने ग्रंथोंमें मार्क्सवादके मूल सिद्धांतोंकी व्याख्या की। इनमें १८९५ में प्रकाशित **"ऐतिहासिक अध्ययनमें एकसत्तावादी दृष्टिकोणका विकास"** विशेष महत्वपूर्ण था। लेनिनका कहना था कि इस पुस्तकको पढ़कर "रूसी मार्क्सवादियोंकी पूरी एक पीढ़ी तैयार हो गयी।" (लेनिन-ग्रंथावली रूसी संस्करण, खंड १४, पृ. ३४७)

लोकवादियोंकी आलोचना करते हुए प्लेखानौफ़ने दिखाया कि उनका यह पूछना ही ग़लत है कि रूसमें पूँजीवादका विकास होना चाहिये या नहीं। वास्तवमें रूसमें **पूँजीवादका विकास आरंभ हो चुका था** और प्लेखानौफ़ने इस बातका समर्थन करनेके लिये आँकड़े देते हुए कहा कि अब कोई भी शक्ति इस विकासको नहीं रोक सकती।

क्रांतिकारियोंका यह कर्तव्य न था कि वे रूसमें पूँजीवादके विकासको रोकें—वे ऐसा कर भी नहीं सकते थे। उनका कर्तव्य था कि पूँजीवादी विकासने जिस नये वर्ग यानी मज़दूर-वर्गको जन्म दिया था, उसमें वे वर्ग–चेतना उत्पन्न करें, उसे संगठित करें और उसे अपनी एक अलग मज़दूर-पार्टी बनानेमें मदद दें।

प्लेखानौफ़ने लोकवादियोंकी इस दूसरी मिथ्या धारणाको भी मिटा दिया कि सर्वहारा-वर्ग क्रांतिकारी संघर्षका अग्रगामी वर्ग नहीं है। लोकवादियोंके लिये सर्वहारा-वर्गका जन्म इतिहासकी एक "दुर्घटना" थी जिसे वे बराबर कोसते रहते थे। प्लेखानौफ़ने मार्क्सवादी सिद्धांतोंका समर्थन करते हुए कहा कि वे रूस पर भी पूरी तरह लागू हैं; और यद्यपि रूसमें संख्यामें मज़दूर कम और किसान ज़्यादा हैं, फिर भी सर्वहारा-वर्ग और उसके विकास पर ही क्रांतिकारियोंकी आशाएँ निर्भर होनी चाहिये। लेकिन सर्वहारा-वर्ग पर ही क्यों?

इसलिये कि संख्यामें कम होने पर भी सर्वहारा-वर्ग मज़दूरोंका वर्ग है जिसका सबसे उन्नत आर्थिक व्यवस्था, बड़े पैमाने पर उत्पादनकी व्यवस्थासे संबंध है और इस कारण जिसका भविष्य अत्यन्त उज्वल है।

इसलिये कि मजदूर–वर्ग प्रतिवर्ष **बढ़ रहा** था, उसकी राजनीतिक चेतनाका विकास हो रहा था। और बड़े-बड़े कारखानोंमें एक साथ काम करनेके कारण उनका संगठन भी शीघ्र ही किया जा सकता था। सर्वहारा होनेके नाते उनका वर्ग सबसे क्रांतिकारी वर्ग था क्योंकि क्रांतिसे उसकी बेड़ियाँ ही कट सकती थीं, घरकी पूँजी खोनेका उसे भय न था।

किसानोंकी हालत इससे बिल्कुल दूसरी थी।

किसान (जो अलग-अलग खेती करते थे—सं०) संख्यामें अधिक थे। पर उनका संबंध सबसे पिछड़ी हुई आर्थिक व्यवस्थासे था। वे बहुत छोटे पैमाने पर उत्पादन करते थे, इसलिये वे न कोई बहुत बड़ा क्रांतिकारी कार्य कर सके थे, और न भविष्य ही में उसकी कोई संभावना थी।

वर्गबद्ध होकर बढ़नेके बदले किसानोंमें ग़रीब–अमीरका भेद पैदा हो रहा था। बिखरे होनेसे मज़दूरोंकी तरह उनका संगठन करना कठिन था। जिनके पास खेती-पाती कुछ अच्छी थी वे मज़दूरोंकी अपेक्षा क्रांतिके निकट आनेमें झिझकते भी थे।

लोकवादियोंका विचार था कि सर्वहारा-वर्गके एकाधिपत्यसे रूसमें समाजवाद न आ सकेगा। समाजवादका आधार किसानोंकी पंचायत है और उसमें समाजवाद बीजरूपमें विद्यमान है। लेकिन पंचायतमें न तो समाजवादका बीज था, न उसमेंसे समाजवाद कभी अंकुरित हो सकता था। पंचायतों पर उन धनी किसानोंका अधिकार था

जो ग़रीब किसानोंका खून चूसते थे और खेतिहर मज़दूरों और मध्य श्रेणीके कमज़ोर किसानोंकी कमाई खाते थे। कहनेको खेत पंचायती थे और हर कुटुंबके घटते-बढ़ते लोगोंके अनुसार समय-समय पर खेतोंका हिस्सा-बाँट भी हो जाया करता था। परंतु वास्तवमें खेतोंको जोतते-बोते थे धनी और मंझोले किसान जिनके पास जोतने-बोनेके साधन यानी हल-माची, बैल-बधिया और बिया-बेसार होता था। इन चीज़ोंके अभावमें सभी तरहके ग़रीब किसान कुलक या धनी किसानोंको अपने खेत उठा देते थे और स्वयं खेतोंमें मजूरी करते थे। पंचायतकी खालमें धनी किसानोंका प्रभुत्व छिपा हुआ था। पंचायतोंके बहाने ज़ारको भी किसानोंसे लगान वसूल करनेमें सुविधा होती थी। इसीलिये ज़ारशाहीने पंचायतोंको ज्यों का त्यों बना रहने दिया। इस तरहकी पंचायतोंको समाजवादका बीज या फूल-पत्ती समझना सरासर मूर्खता थी।

लोकवादियोंकी तीसरी मिथ्या धारणा यह थी कि गिने-चुने वीरही इतिहासका निर्माण करते हैं; उन वीरोंके विचारोंके अनुसार ही समाजका विकास होता है, जनता या वर्गोंकी भूमिका नगण्य होती है।

प्लेखानौफ़ने इस भ्रांतिको भी दूर किया। उसने कहा कि लोकवादियोंका झुकाव **आदर्शवाद** की ओर है परंतु सत्य आदर्शवादमें नहीं मार्क्स और एंगेल्सके **भौतिकवाद**में है।

प्लेखानौफ़ने मार्क्सके भौतिकवादकी व्याख्या की और उसको सही प्रमाणित किया। मार्क्सवादी भौतिकवादके अनुकूल ही उसने दिखाया कि समाजका विकास गिने-चुने लोगोंकी इच्छाओंसे नहीं होता। वह संभव होता है, सामाजिक जीवनकी भौतिक परिस्थितियोंके विकाससे; सामाजिक जीवनके लिये जिस संपत्तिकी आवश्यकता होती है, उसके उत्पादनमें परिवर्तनोंसे, इस उत्पादनमें वर्गोंके पारस्परिक संबन्ध और व्यवहारमें परिवर्तनोंसे, और वह संभव होता है सम्पत्तिके उत्पादन और वितरणमें प्रभुत्व पानेके लिये वर्गोंके संघर्षसे। मनुष्यकी आर्थिक और सामाजिक स्थिति उसके विचारों द्वारा नहीं निर्धारित होती, वरन् मनुष्यके विचारही आर्थिक और सामाजिक स्थिति द्वारा निर्धारित होते हैं। समाजके आर्थिक विकासके और आर्थिक विकासमें प्रमुख भाग लेने वाले वर्गकी आवश्यकताओंके प्रतिकूल होने पर गिने-चुने नेताओंकी इच्छाएँ निस्सार हो जाती हैं। ये गिने-चुने नेता वास्तवमें नेता भी तभी हो सकते हैं जब उनकी इच्छाएँ समाजके आर्थिक विकास और उस विकासमें भाग लेनेवाले प्रमुख वर्गकी आवश्यकताओंको सही-सही व्यक्त कर सकें।

लोकवादियोंका कहना था कि जनता भेड़ है और इतिहासके बनानेवाले नेता होते हैं जो जनताको जनता कहलानेके योग्य बनाते हैं। इसका उत्तर मार्क्सवादियोंने यह दिया कि नेता इतिहास नहीं बनाते वरन् इतिहास नेताओंको बनाता है। इसलिये जनताको बनानेवाले नेता नहीं होते वरन् जनताही नेताओंको बनाती है और वही इतिहासको गति देती है। समाजके इतिहासमें गिने-चुने वीर या नेता तभी महत्वपूर्ण कार्य कर

सकते हैं जब वे सामाजिक विकासकी परिस्थितियोंको और उनमें प्रगतिके लिये आवश्यक परिवर्तन करने की रीतिको भली प्रकार समझ सकें। इस हेकड़ीमें भूल कर कि हम मानव-इतिहासका निर्माण कर रहे हैं, यदि ये नेतागण सामाजिक विकासके नियमोंको न पहचानें और समाजकी ऐतिहासिक आवश्यकताओंके प्रतिकूल चलें तो वे बुरी तरह असफल होंगे और अपने आपको हास्यास्पद बना लेंगे।

इसी तरहके अभागे नेता ये लोकवादी थे। लोकवादियोंकी आलोचनासे और अपनी अन्य रचनाओंसे प्लेखानौफ़ने क्रांतिकारी बुद्धिजीवी-वर्गमें उनका प्रभाव कम कर दिया। परंतु एक विचारधाराके रूपमें लोकवादकी साँस अभी चल रही थी। मार्क्सवादके इस शत्रुका पूरी तरहसे सिर कुचल देनेका काम लेनिनके लिये बच रहा था।

"नारोद्नाया वोल्या"के दमनके बाद अधिकांश लोकवादियोंने ज़ारशाही सरकारसे क्रांतिकारी लड़ाई लड़ना बंद कर दिया और उससे मेलजोल और समझौतेकी नीतिका समर्थन करने लगे। १८८० और ९० के लगभग लोकवादी धनी किसानोंके हितोंका प्रतिनिधित्व करने लगे।

"मज़दूरोंका उद्धार" करनेवाले गुटने १८८४ और '८७ में रूसकी सामाजिक-जनवादी पार्टीके कार्यक्रमके दो मसौदे बनाये। रूसमें एक सामाजिक-जनवादी पार्टी बनानेके लिये यह प्रारंभिक कार्य अत्यंत महत्वपूर्ण था।

लेकिन इसके साथही "मज़दूरोंका उद्धार" करनेवाले गुटने कुछ बहुत बड़ी-बड़ी गलतियाँ भी कीं। उसके पहले मसौदेमें लोकवादकी छाप वर्तमान थी; आतंकवादको उसने शह दी थी। इसके सिवा प्लेखानौफ़ने इस बातकी ओर ध्यान न दिया था कि क्रांतिमें सर्वहारा-वर्गको किसानोंका नेतृत्व करना चाहिये और वह ऐसा कर सकता था। उसने यह न समझा था कि किसानोंसे सहयोग करके ही सर्वहारा-वर्ग ज़ारशाही पर विजय पा सकता था। प्लेखानौफ़का यह भी विचार था कि पूँजीवादी वर्गके उदारपंथी लोग क्रांतिके सहायक हो सकते हैं, यद्यपि उनकी सहायता अस्थायी होगी। लेकिन किसानोंको वह भूल जाता था और कभी-कभी इस तरहकी बातें लिख बैठता था कि, "पूँजीवादी और सर्वहारा-वर्गोंको छोड़ कर रूसमें हमें कोई ऐसी सामाजिक शक्ति नहीं दिखायी देती, जिससे क्रांतिकारी या विरोधी दलोंको सहायता मिल सके।" (प्लेखानौफ़ ग्रंथावली; रूसी संस्करण, खंड ३, पृ. ११९)

इन्हीं भ्रांतियोंसे आगे चल कर प्लेखानौफ़के मेन्शेविक विचारोंका जन्म हुआ।

अभी तक "मज़दूरोंका उद्धार" करनेवाले या दूसरे मार्क्सवादी नेता मज़दूरोंके आंदोलनसे कोई प्रत्यक्ष संबन्ध न स्थापित कर पाये थे। इस युगमें मार्क्सवादके विचार और सामाजिक-जनवादी कार्यक्रमके सिद्धांत रूसी जनताके सामने आकर उसे अपनी ओर आकर्षित कर रहे थे। १८८४ से '९४ तक सामाजिक-जनवादी आंदोलन छोटे-छोटे गुटों और दलोंमें बँटा हुआ था जिनका मज़दूर-आंदोलनसे संबन्ध नहीं के बराबर था। एक अजात शिशुकी भांति—जैसा कि लेनिनने कहा था—सामाजिक-जनवादी आंदोलन इतिहासके "**गर्भमें विकसित हो रहा था।**"

लेनिनके अनुसार, "मज़दूरोंका उद्धार" करनेवाले गुटने, "सामाजिक-जनवादी आंदोलनका केवल सैद्धांतिक आधार खड़ा किया और मज़दूर-आंदोलनके लिये मार्ग प्रशस्त किया।"

मार्क्सवाद और मज़दूर-आंदोलनको मिलाना तथा "मज़दूरोंका उद्धार" करनेवालोंकी ग़लतियोंको सही करना लेनिनका काम था।

३. लेनिनके क्रांतिकारी कार्योंका आरंभ—सेंट-पीटर्सबर्गका श्रमिकोद्धारक संघ।

बोल्शेविज़्मके संस्थापक, व्लादीमीर इलिच उलियानौफ़ (लेनिन) का जन्म सिम्बिर्स्कमें, जो अब उलियानोव्स्क कहलाता है, १८७० में हुआ था। १८८७ में लेनिन कज़ान विश्वविद्यालयमें भर्ती हुए लेकिन विद्यार्थियोंके क्रांतिकारी आंदोलनमें भाग लेनेके कारण शीघ्र ही वहाँसे निकाल दिये गये। कज़ानमें फेदोस्येफ़ नामके एक व्यक्तिने एक मार्क्सवादी गुट बनाया था जिसमें लेनिन भी शामिल हुए। बादमें वह समारा चले आये जहाँ शीघ्र ही एक मार्क्सवादी गुट तैयार हो गया। इसका केंद्र लेनिन थे। उन दिनों भी मार्क्सवादके अपने गंभीर अध्ययनसे लेनिन सबको चकित कर देते थे।

१८९३ के अंतमें लेनिन सेंट-पीटर्सबर्ग चले आये। उस शहरके मार्क्सवादी गुटोंको लेनिनने अपनी पहली बातचीतसे ही प्रभावित कर लिया। लेनिन मार्क्सीय दर्शनसे पूरी तरह परिचित थे; रूसकी आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियोंको मार्क्सवादकी कसौटी पर परखकर वह आगेका कार्यक्रम बना सकते थे; सर्वहारा पक्षकी विजयमें उन्हें अडिग विश्वास था; संगठन करनेकी उनमें अद्भुत क्षमता थी,—इसलिये लेनिन शीघ्र ही सेंट-पीटर्सबर्गके मार्क्सवादियोंके सर्वमान्य नेता बन गये।

जिन मज़दूरोंको लेनिनने राजनीतिक शिक्षा दी थी और जो अब सचेत हो गये थे, उनके हृदयमें लेनिनके लिये प्रगाढ़ स्नेह था।

मज़दूरोंमें लेनिनके शिक्षण-कार्यका स्मरण करते हुए बाबूश्किन नामके एक मज़दूरने कहा था, "लेनिनके व्याख्यान बड़े सजीव और मनोरंजक होते थे। उन्हें सुननेमें बड़ा मन लगता था और हम लेनिनकी बुद्धिमत्ताकी बराबर प्रशंसा किया करते थे।"

१८९५ में लेनिनने सेंट-पीटर्सबर्गके सभी मार्क्सवादी गुटोंको—जिनकी संख्या २० के लगभग थी—श्रमिकोद्धारक संघमें एक जगह संगठित किया। इस प्रकार उन्होंने मज़दूरोंकी क्रांतिकारी मार्क्सवादी पार्टीके संगठनके लिये पृष्ठभूमि तैयार कर दी।

श्रमिकोद्धारक संघके लिये लेनिनने यह कार्यक्रम बनाया कि वह मज़दूर-आंदोलन के निकट-संपर्कमें आये और राजनीतिक क्षेत्रमें उसका नेतृत्व करे। लेनिनने यह नया प्रस्ताव रखा कि थोड़े से सचेत मज़दूरोंके गुटोंमें मार्क्सवादके प्रचार कार्यसे आगे बढ़ कर मार्क्सवादियोंको मज़दूरोंके विशाल समुदायमें उनकी दिन-प्रतिदिनकी समस्याओं पर **राजनीतिक आंदोलन** करना चाहिये। सामूहिक आंदोलनकी ओर यह झुकाव रूसमें मज़दूरोंके अगले संघर्षोंके लिये अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ।

१८९० के लगभग उद्योग-धंधोंमें खूब उन्नति हुई। मज़दूरोंकी संख्या बढ़ रही थी और मज़दूर-आंदोलन शक्तिशाली बन रहा था। १८९५ से ९९ तक, अधूरे आंकड़ोंके अनुसार, कमसे कम २,२१,००० मज़दूरोंने हड़तालोंमें भाग लिया। देशके राजनीतिक जीवनमें मज़दूर-आंदोलन एक महत्वपूर्ण शक्ति बन रहा था। लोकवादियोंके विरुद्ध मार्क्सवादियोंने जो कहा था कि क्रांतिकारी आंदोलनमें मज़दूर-वर्ग प्रमुख भाग लेगा, घटना-क्रम अब उस बातका समर्थन कर रहा था।

लेनिनके नेतृत्वमें श्रमिकोद्धारक संघने मज़दूरोंकी आर्थिक माँगोंके—यानी ज़्यादा मज़दूरी, कम घंटों और कारखानोंमें दूसरे सुधारोंकी माँगोंके—आंदोलनके साथ ज़ारशाहीके विरुद्ध देशके राजनीतिक आंदोलनको जोड़ दिया। संघने मज़दूरोंको राजनीतिक शिक्षा दी।

लेनिनके नेतृत्वमें सेंट-पीटर्सबर्गके श्रमिकोद्धारक संघने रूसमें पहली बार **समाजवादको मज़दूर आंदोलनसे मिलाना** आरंभ किया। श्रमिकोद्धारक संघ अपने सदस्यों द्वारा मिलोंकी परिस्थितिसे अच्छी तरह परिचित रहता था और जहाँ कहीं भी हड़ताल होती थी, वह इश्तहार बँटवाता और अपने सोशलिस्ट दृष्टिकोणका ऐलान करवा देता था। इन इश्तहारोंमें मिल-मालिकोंके अत्याचारका कच्चा चिट्ठा रहता था और मज़दूरों की माँगें गिनाते हुए उन्हें यह भी बताया जाता था कि वे उनके लिये कैसे लड़ें। मज़दूरोंकी ग़रीबी, बारहसे चौदह-चौदह घंटे तक उनकी पिसाई, ऊपरसे उनके लिये किसी भी तरहके अधिकारोंका निपट अभाव,—पूँजीवादी महामारीके ये खरे सत्य उन इश्तहारोंमें रखे जाते थे। उनमें मज़दूरोंकी उचित राजनीतिक माँगें भी पेश की जाती थीं। सेंट-पीटर्सबर्गके सेम्यानीकौफ़ कारखानोंके हड़ताल करनेवाले मज़दूरोंसे अपील करते हुए लेनिनने बाबूश्किनके साथ १८९४ के अंतमें इस तरहका पहला आंदोलनात्मक पर्चा लिखा। १८९५ की शरद् ऋतुमें लेनिनने थार्न्टन मिलोंके औरत-मर्द मज़दूर हड़तालियों के लिये एक और पर्चा लिखा। ये मिलें अंग्रेज़ मालिकोंकी थीं जो इनसे लाखोंका मुनाफ़ा खा रहे थे। यहाँ मज़दूरोंको १४ घंटे से भी ज़्यादा काम करना पड़ता था लेकिन उनकी मज़दूरी कुल ७ रूबल मासिकके लगभग थी। हड़तालमें मज़दूर जीत गये। थोड़े ही समयमें संघने दूसरे मिल-मज़दूरोंके लिये दर्जनों ऐसी अपीलें और पर्चे छापे। इन पर्चोंसे मज़दूरोंमें दृढ़ता आयी और उन्होंने अनुभव किया कि सोशलिस्ट उनके पक्षका समर्थन कर रहे हैं और उनकी सहायता कर रहे हैं।

१८९६ में संघके नेतृत्वमें सेंट-पीटर्सवर्गके ३०,००० मजदूर बुनकरोंने हड़ताल कर दी। उनकी ख़ास माँग थी, मज़दूरीके घंटे कम किये जायँ। इस हड़तालसे बाध्य होकर २ जून, १८९७ को ज़ार-सरकारने यह क़ानून बना दिया कि मज़दूरीके घंटे ११॥ से ज़्यादा न हों। इसके पहले किसी तरहका बंधेज न था।

दिसंबर १८९५ में ज़ार-सरकारने लेनिनको पकड़ लिया। लेकिन लेनिनने जेलमें भी अपना क्रांतिकारी काम बंद न किया। वहींसे अपने सुझावों और सलाहसे वह संघकी सहायता करते रहे और कभी-कभी उसके लिये पर्चे और पुस्तिकायें भी लिखते रहे। ज़ारकी बर्बर स्वेच्छाचारिताका ख़ाका खींचते हुए जेलहीमें उन्होंने "**ज़ारशाही सरकारसे**" नामका एक पर्चा और "**हड़तालों पर**" एक पुस्तिका लिखी। वहीं पर उन्होंने पार्टीके कार्यक्रमका एक मसौदा भी तैयार किया। (उन्होंने दूधका अदृश्य स्याहीकी भांति उपयोग करके यह कार्यक्रम एक वैद्यककी पुस्तककी पंक्तियोंके बीचमें लिखा था।)

सेंट-पीटर्सवर्गके संघसे रूसके दूसरे शहरों और प्रदेशोंके मज़दूर-गुटोंको ऐसे ही संघ बनानेके लिये स्फूर्ति मिली। १८९५ के आसपास कॉकेशस-प्रदेशमें मार्क्सवादी दलोंका जन्म हुआ। १८९४ में मॉस्कोमें एक मजदूरोंकी यूनियन क़ायम हुई। कुछ साल बाद एक सामाजिक-जनवादी यूनियन साइबेरियामें बनी। उन्नीसवीं शताब्दीके अंतमें इवानोवो-व्रोस्नेजेंस्क, यारोस्लाव्ल और कौस्त्रोमामें मार्क्सवादी गुट बने और आगे चलकर उन्हींसे सामाजिक-जनवादी पार्टीका उत्तरी संघ स्थापित हुआ। १८९५ से १९०० तक रोस्तौफ़, एकातेरीनोस्लाफ़, किएफ़, निकोलायेफ़, तूला, समारा, कज़ान, ओरखोवो-सुयेवो और दूसरे नगरोंमें सामाजिक-जनवादी गुट और यूनियनें बनायी गयीं।

सेंट-पीटर्सवर्गके संघका महत्व, जैसा कि लेनिनने कहा था, इस बातमें था कि एक **ऐसी क्रांतिकारी पार्टी बनानेके लिये, जिसके पीछे मज़दूर-आंदोलनकी शक्ति भी हो, यहीं पहले-पहल नींव पड़ी थी।**

आगे चलकर रूसमें एक मार्क्सवादी सामाजिक-जनवादी पार्टी बनानेके लिये लेनिनने सेंट-पीटर्सवर्ग संघके अपने क्रांतिकारी अनुभवसे काम लिया।

लेनिन और उनके साथियोंके पकड़े जानेके बाद संघके नेतृत्वमें काफ़ी परिवर्तन हुआ। नये नेता मंच पर आये जो अपनेको "नौजवान" और लेनिन और उनके साथियोंको "पुरान-पंथी" कहते थे। राजनीतिक क्षेत्रमें इन लोगोंने एक ग़लत राह पकड़ी। इनका कहना था कि मज़दूर अपने मालिकोंसे केवल आर्थिक लड़ाई लड़ें; राजनीतिक लड़ाई और उसका नेतृत्व उदार-पंथी पूँजीवादियों पर छोड़ देना चाहिये।

इन लोगोंका नाम पड़ गया "अर्थवादी"।

रूसके मार्क्सवादी संघोंमें समझौतावादियों और अवसरवादियोंका यही पहला गुट था।

४. लोकवाद और "क़ानूनी मार्क्सवाद" से लेनिनका युद्ध—उनका मज़दूरों और किसानोंमें एकता स्थापित करनेका विचार—रूसकी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टीकी पहली कांग्रेस।

१८८० के लगभग प्लेखानौफ़ने लोकवादी सिद्धांतोंपर मार्मिक प्रहार किये थे, फिर भी दस बरस बाद भी कुछ क्रांतिकारी नौजवानों पर इन सिद्धांतोंका प्रभाव बाक़ी था। कुछका विचार था कि रूस अब भी पूँजीवादी विकाससे अलग रह सकेगा और क्रांतिमें प्रमुख भाग मजदूरोंका न होकर किसानोंका ही होगा। बचे-खुचे लोकवादी रूसमें मार्क्सवादका प्रचार रोकने पर तुले हुए थे और मार्क्सवादियोंसे लड़ाई करके उन्हें बदनाम करनेमें वे अपनी ओरसे कुछ उठा न रखते थे। मार्क्सवादके प्रचारको बढ़ानेके लिये और एक सामाजिक-जनवादी पार्टीकी मज़बूत नींव डालनेके लिये **लोकवादके सिद्धांतोंका पूरी तरह ध्वंस करना** आवश्यक था।

यह काम लेनिनने किया।

'"**जनताके मित्र**" **क्या हैं और सामाजिक-जनवादियोंसे वे कैसे लड़ते हैं,** (१८९४) अपनी इस पुस्तकमें लेनिनने अच्छी तरह लोकवादियोंका पर्दाफ़ाश कर दिया और दिखाया कि वे जनताके "दग़ाबाज दोस्त हैं" जो वास्तवमें उसके विरुद्ध कार्य कर रहे हैं।

जहाँ तक क्रांतिकारी संघर्षका संबंध था १८९० के लोकवादियोंने जारशाहीसे अपनी लड़ाई बहुत पहले ही बंद कर रखी थी। उदारमत वाले लोकवादी जार-सरकार से समझौता करनेकी सलाह दे रहे थे। उस समयके लोकवादियोंके बारेमें लेनिनने लिखा था, "ये लोग समझते हैं कि सरकारसे काफ़ी नम्रता और श्रद्धासे प्रार्थना भर की जाय तो वह सब कुछ ठीक कर देगी।" (लेनिन, **संक्षिप्त ग्रंथावली,** अंग्रेज़ी संस्करण, खंड १ पृ. ४१३)

१८९० के लोकवादियोंने देहातके वर्ग-संघर्षसे आँखें फेर ली थीं। धनी किसानों द्वारा ग़रीब किसानोंका शोषण भूल कर वे धनी किसानोंकी बढ़ती हुई खेतीके गुण गाने लगे थे। वास्तवमें वे धनी किसानोंके हितचिंतक बन गये थे।

अपनी पत्रिकाओंमें वे मार्क्सवादियों पर जिहाद बोले हुए थे। उनकी बातोंको तोड़-मरोड़कर, उन्हें झूठका जामा पहना कर, वे जनताके सामने रखते थे। वे कहते थे, रूसी मार्क्सवादीतो यह चाहते हैं कि गाँवोंका सत्यानाश हो जाय और "हर किसान कारखाने की भट्टीमें झोंक दिया जाय।" लेनिनने लोकवादियोंकी झूठी आलोचनाकी बखिया

उधेड़ दी और बताया कि यह प्रश्न मार्क्सवादियोंकी इच्छा-अनिच्छाका नहीं है; रूसमें पूँजीवादका विकास हो रहा है यह एक दृढ़ सत्य है। इस विकासका अनिवार्य परिणाम सर्वहारा-वर्गका अभ्युदय है। यह सर्वहारा-वर्गही पूँजीवादके शवकी दाह-क्रिया करेगा।

लेनिनने दिखाया कि जनताके सच्चे मित्र मार्क्सवादी हैं न कि लोकवादी; और मार्क्सवादीही जारशाहीका नाश करना चाहते हैं तथा ज़मींदारों और पूँजीवादियोंके शोषणका अंत करना चाहते हैं।

'जनताके मित्र क्या हैं' इस पुस्तकमें लेनिनने पहली बार बताया कि जारशाही, ज़मींदारी और पूँजीवादको समाप्त करनेके लिये किसान-मज़दूरोंकी क्रांतिकारी एकता ही एक प्रमुख साधन बनेगी।

इस समयकी अनेक रचनाओंमें लेनिनने लोकवादियोंके सबसे बड़े दल "नारोद्नाया वोल्या" और उसके उत्तराधिकारी सामाजिक-क्रांतिकारियोंकी राजनीति की, विशेषकर आतंकवादकी, आलोचना की। लेनिनका कहना था कि इनकी नीतिसे क्रांतिकारी आंदोलनको धक्का लगता था क्योंकि ये जन-आंदोलनका स्थान कुछ गिने-चुने वीरोंके कार्योंको दे देते थे। इससे सिद्ध होता था कि जनताके क्रांतिकारी आन्दोलनमें उन्हें विश्वास नहीं है।

अपनी उपरोक्त पुस्तकमें लेनिनने रूसी मार्क्सवादियोंके मुख्य कार्योंका निर्देश किया था। उनका विचार था कि रूसी मार्क्सवादियोंको सबसे पहले जुदा-जुदा मार्क्सवादी गुटोंको मज़दूरोंकी एक सम्मिलित सोशलिस्ट पार्टीमें संगठित करना चाहिये। उन्होंने यह भी बताया कि रूसका मज़दूर-वर्गही किसानोंके सहयोगसे जारशाहीका नाश करेगा; उसके बाद रूसी सर्वहारा-वर्ग अपने देशकी अन्य पीड़ित श्रमिक-जनताका सहयोग पाकर विदेशके अन्य सर्वहारा-वर्गोंके साथ कम्युनिस्ट-क्रांतिके विजय-पथ पर बढ़ चलेगा।

इस प्रकार लगभग ४० वर्ष पहले लेनिनने मज़दूरोंको उनके संघर्षकी गति-विधि ठीक-ठीक बता दी थी। उन्होंने श्रमिक-वर्गको समाजका सबसे क्रांतिकारी वर्ग ठहराया था और किसानोंको मज़दूर-वर्गका सहायक बताया था।

लेनिन और उनके साथियोंके आक्रमणसे १९९० के लगभग लोकवाद एक "वाद" के रूपमें परास्त होगया।

"क़ानूनी मार्क्सवाद" से भी लेनिनका युद्ध अत्यंत महत्वपूर्ण था। इतिहासके बड़े-बड़े सामाजिक आन्दोलनोंमें बहुधा ऐसा होता है कि उनके साथ कुछ दूर तक चलने वाले बहुत से "सह-यात्री" निकल आते हैं। ये "क़ानूनी मार्क्सवादी" भी कुछ दूर तक चल कर रुक जानेवाले ऐसे ही साथी थे। जब मार्क्सवादका सारे रूसमें प्रसार होने लगा, तब कुछ उच्च वर्गके शिक्षित लोगोंने भी मार्क्सवादी जामा पहन लिया। ये लोग अपने लेख उन पत्र-पत्रिकाओंमें छपवाते थे, जो क़ानूनी थे, यानी जिन्हें जारकी सरकार प्रकाशित होने देती थी। इसीलिये इनका नाम "क़ानूनी मार्क्सवादी" पड़ गया।

अपने निराले पैंतरे और दाँवपेंचसे इन्होंने भी लोकवादसे लोहा लिया। लेकिन

इनके मार्क्सवाद और इनके युद्धका लक्ष्य पूंजीवादियों और पूंजीवादी समाजकी स्वार्थ-सिद्धि करना भर था। सर्वहारा-क्रांति और सर्वहारा-एकाधिपत्य—मार्क्सवादके इस मुख्य तत्वको उन्होंने तराश दिया था। पीटर स्त्रूवे नामका एक प्रमुख क़ानूनी मार्क्सवादी पूंजीवादी-वर्गके गुण गाता था। पूंजीवादसे क्रांतिकारी संघर्ष करनेकी बात न कर वह सिखाता था,—"हमें मान लेना चाहिये कि हम असंस्कृत हैं और फिर जाकर पूंजीवाद से हमें सांस्कृतिक शिक्षा लेनी चाहिये।"

लोकवादियोंसे युद्ध करते हुए लेनिनने क़ानूनी मार्क्सवादियोंको भी साथ लिया और इस संघर्षके लिये उनसे एक अस्थायी समझौता करना अनुचित नहीं समझा। उदाहरणके लिये लेनिनने उनसे मिलकर लोकवादियोंके विरुद्ध एक लेख-संग्रह प्रकाशित किया। लेकिन इसके साथ-साथ वह उनकी तीव्रसे तीव्र आलोचना करनेसे भी न चूकते थे और उदारपंथी पूंजीवादियोंवाली उनकी मनोवृत्तिको स्पष्ट कर देते थे।

इन साथियोंमें बहुतसे आगे चल कर रूसी पूँजीवादियोंकी सबसे बड़ी पार्टी, वैधानिक-जनवादी पार्टीमें सम्मिलित हो गये और गृह-युद्धमें खुले क़ौमी ग़द्दार बनकर सामने आये।

सेंट-पीटर्सबर्ग, मॉस्को, कियेफ़ और दूसरे नगरोंके साथ-साथ रूसके पश्चिमी प्रदेशोंमें भी सामाजिक-जनवादी दल संगठित होने लगे। १८९० के बाद पोलैंडकी राष्ट्रीय पार्टीके मार्क्सवादियोंने उससे अलग होकर पोलैंड और लिथुआनियाकी सामाजिक जनवादी पार्टी बनायी। १९०० के लगभग लैटवियामें सामाजिक-जनवादी दल संगठित हुए और अक्तूबर १८९७ में यहूदियोंने रूसके पश्चिमी सूबोंमें अपना "बुंद" नामका सामाजिक-जनवादी संघ बनाया।

१८९८ में मास्को, सेंट-पीटर्सबर्ग, किएफ़ और एकातेरी-नोस्लाफ़के संघोंने बुंदके साथ मिलकर पहले-पहल एक सामाजिक-जनवादी पार्टी बनानेका प्रयत्न किया। इसके लिये उन्होंने रूसकी सामाजिक-जनवादी मजदूर पार्टीकी पहली कांग्रेस बुलायी जो मार्च १८९८ में मिंस्कमें हुई।

इस पहली कांग्रेसमें केवल ९ व्यक्ति आये थे। लेनिनको साइबेरियामें कालापानी हो गया था, इसलिये वह न आ सके थे। कांग्रेसमें जो लोग केंद्रीय समितिके लिये चुने गये, वे तुरंतही पकड़ लिये गये। कांग्रेसके नामसे जो घोषणापत्र छपा, वह भी बहुत कुछ असंतोषजनक था। सर्वहारा-वर्ग द्वारा शासन-सत्ता पर अधिकार करनेके प्रश्नसे उसने मुँह चुराया था। सर्वहारा-वर्गका एकाधिपत्य और जारशाही और पूँजीवादियोंसे युद्ध करनेमें सर्वहारा वर्गके साथी—इन बातोंका उसमें कहीं उल्लेख भी न था।

अपने घोषणापत्र और प्रस्तावोंमें कांग्रेसने रूसकी सामाजिक-जनवादी मजदूर पार्टीके संगठनकी सूचना दी।

पहली कांग्रेसका महत्व इसी बातमें था कि उसने विधिपूर्वक पार्टीके संगठनकी घोषणा कर दी जिससे क्रांतिकारी प्रचारमें बड़ी सहायता मिली।

यद्यपि यह पहली कांग्रेस हो गयी फिर भी रूसमें वास्तवमें अभी तक कोई मार्क्स-वादी सामाजिक-जनवादी पार्टी न बनी थी। विभिन्न मार्क्सवादी गुटों और दलोंको मिलाकर कांग्रेस उन्हें एक ही संगठन-सूत्रमें बाँध न सकी थी। स्थानीय दलोंके कार्योंकी कोई एक नीति निर्धारित न हुई थी। अभी पार्टीका केंद्रीय नेतृत्व, उसका कार्यक्रम और नियम भी न बन पाये थे।

ऐसे कारणोंसे स्थानीय दलोंमें सैद्धांतिक भ्रांतियाँ उत्पन्न होने लगीं। इससे मज़दूर-आंदोलनमें *"अर्थवाद"* नामकी *अवसरवादी* मनोवृत्तिको पनपनेके लिये उपयुक्त वातावरण मिल गया।

लेनिनको अपने पत्र **इस्क्रा (चिनगारी)** द्वारा इन भ्रांतियोंको दूर करनेके लिये कई वर्ष तक प्रयत्न करना पड़ा। तब कहीं जाकर अवसरवादी प्रवृत्तियोंका अंत हुआ और रूसकी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टीके संगठनके लिये उचित पृष्ठभूमि तैयार हुई।

५. 'अर्थवाद'से लेनिनका युद्ध--लेनिनके पत्र 'इस्क्रा'का प्रकाशन।

रूसकी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टीकी पहली कांग्रेसमें लेनिन न आये थे। संघके सिलसिलेमें उन्हें बहुत दिन तक सेंट-पीटर्सबर्गके जेलमें रखा गया था और उसके बाद उन्हें कालापानी दे दिया गया था। कांग्रेसके समय वह साइबेरियाके शुशंस्कोये नामके गाँवमें थे।

लेकिन लेनिन अपना क्रांतिकारी काम वहाँसे भी करते जाते थे। वहाँ पर उन्होंने एक बड़े महत्वकी वैज्ञानिक पुस्तक **"रूसमें पूंजीवादका विकास"** पूरी की जिससे 'वाद'रूपमें लोकवादका पूरी तरह नाश होगया। वहीं पर उन्होंने "रूसी सामाजिक-जनवादियोंका कर्तव्य" नाम की अपनी प्रसिद्ध पुस्तिका भी लिखी।

यद्यपि लेनिन क्रांतिकारी कार्यमें प्रत्यक्ष रूपसे भाग न ले सकते थे, फिर भी जो लोग इस काममें लगे हुए थे, उनसे उन्होंने कुछ न कुछ संबन्ध बनाये रखा। कालेपानीमें भी वह उनसे पत्र व्यवहार करके बाहरके समाचार मालूम कर लेते थे और उन्हें परामर्श देते रहते थे। इस समय लेनिनका ध्यान "अर्थवादियों" पर केन्द्रित था। उन्होंने ही और सबसे ज़्यादा इस बातको समझा था कि समझौते और अवसरवादका मुख्य केंद्र यह अर्थवाद है; मज़दूर-आंदोलनमें अर्थवादने ज़ोर पकड़ा तो सर्वहारा-वर्गका क्रांतिकारी संघर्ष मद्धिम पड़ जायगा और अंतमें मार्क्सवादकी पराजय होगी।

इसलिये अर्थवादियोंके मैदानमें आते ही लेनिनने उन पर भरपूर आक्रमण आरंभ कर दिया।

अर्थवादियोंका कहना था कि मज़दूरोंको केवल आर्थिक लड़ाई लड़नी चाहिये; राजनीतिक संग्राम उदार-पंथी पूँजीवादियोंके लिये छोड़ देना चाहिये और मज़दूरोंको उनकी सहायता करनी चाहिये। लेनिनकी दृष्टिमें इस सिद्धांतका अर्थ मार्क्सवादका परित्याग था; मज़दूरोंकी अपनी राजनीतिक पार्टी बनानेकी आवश्यकताको यह सिद्धांत अस्वीकार करता था। वह मज़दूर-वर्गको पूँजीवादियोंका एक राजनीतिक पुछल्ला बना देनेका प्रयत्न कर रहा था।

१८९९ में प्रोकोपोविच, कुस्कोवा तथा अन्य अर्थवादियोंने, जो आगे चल कर वैधानिक-जनवादी बन गये, एक विज्ञप्ति निकाली जिसमें उन्होंने क्रांतिकारी मार्क्सवाद का विरोध किया। उनका कहना था कि सर्वहारा-वर्गकी अपनी एक अलग पार्टी बनाने और राजनीतिक माँगें पेश करनेका विचार छोड़ ही देना होगा। अर्थवादियोंका कहना था कि राजनीतिक लड़ाई लड़ना उदारपंथी पूँजीवादियोंका काम है; मज़दूरोंको अपने मालिकोंसे आर्थिक लड़ाई लड़कर ही संतोष कर लेना चाहिये।

इस अवसरवादी विज्ञप्तिका परिचय पाकर लेनिनने आसपासके कालापानी पाये हुए मार्क्सवादियोंकी एक कान्फ्रेंस की। उसमें १७ मार्क्सवादी आये और लेनिनके निर्देशसे अर्थवादियोंकी बातोंका तीव्र विरोध करते हुए उन्होंने एक ज़ोरदार वक्तव्य प्रकाशित किया।

इस वक्तव्यको लेनिनने ही लिखा था। देशमें जहाँ कहीं भी मार्क्सवादी संगठन थे, वह घुमाया गया। रूसमें मार्क्सवादी विचारों और मार्क्सवादी पार्टीके विकासमें इस वक्तव्यने बड़ा काम किया।

रूसी अर्थवादी वही बातें कह रहे थे जो विदेशकी सामाजिक-जनवादी पार्टियोंमें मार्क्सवादके विरोधी अवसरवादी बर्न्स्टाइनके समर्थक कह रहे थे।

इसलिये लेनिनका अर्थवादियोंसे युद्ध अंतरराष्ट्रीय अवसरवादसे युद्ध था।

लेनिनने अपने गुप्त पत्र **इस्क्रा** द्वारा अर्थवादियोंसे युद्ध किया और सर्वहारा-वर्गके लिये एक अपनी अलग पार्टी बनानेके लिये आंदोलन किया।

१९०० के आरंभमें लेनिन और "श्रमिकोद्धारक संघ"के दूसरे साथी साइबेरियासे रूस लौट आये। लेनिनने सारे रूसके लिये गुप्त रूपसे एक ज़बरदस्त मार्क्सवादी पत्र निकालनेका विचार किया। रूसकी तमाम छोटी-छोटी मार्क्सवादी सभा-समितियाँ और संस्थाएँ एक न हो पायी थीं। उस समय स्तालिनके शब्दोंमें "इन सभा-समितियों के नौसिखियापन और उनके संकुचित स्थानीय दृष्टिकोणसे पार्टी खोखली हो रही थी और उसके आंतरिक जीवनमें सिद्धांतोंकी अस्पष्टता और उलझन पैदा हो रही थी।" इसलिये सारे रूसके लिये एक गुप्त समाचार पत्र प्रकाशित करना उस समयके क्रांतिकारी मार्क्सवादियोंका प्रमुख कर्तव्य था। इस तरहका पत्र ही अलग-अलग मार्क्सवादी दलोंको मिला सकता था और एक सुसंगठित पार्टीके निर्माणमें सहायक हो सकता था।

लेकिन पुलिस-राजके कारण रूसमें इस तरहका गुप्त पत्र प्रकाशित करना असंभव था। महीने दो महीनेमें ज़ारकी सी. आई. डी. सूँघती हुई ज़रूर वहाँ पहुँच जाती और

उसका प्रकाशन बंद कर देती। इसलिये लेनिनने विदेशमें पत्र प्रकाशित करनेका निश्चय किया। पतले किंतु मजबूत कागज पर पत्र छपने लगा और रूसमें गुप्त रूपसे बाँट दिया जाने लगा। बाकू, किशीनेफ़ और साइबेरियाके गुप्त छापेखानोंमें "**इस्क्रा**" के कुछ अंक पुनः मुद्रित किये गये।

१९०० की शरद ऋतुमें "मजदूरोंका उद्धार" करनेवाले गुट के साथियोंके साथ प्रकाशनका प्रबन्ध करनेके लिये लेनिनने विदेश गये। कालेपानीमें ही लेनिनने उसका सारा खाका खींच लिया था। कालेपानीसे लौटते हुए ऊफ़ा, प्स्कौफ़, मॉस्को और सेंट–पीटर्सबर्गमें उन्होंने इस विषयपर कई कान्फ्रेंसें भी की थीं। हर जगह उन्होंने अपने साथियोंसे तै किया कि किन–किन पतोंसे पत्र–व्यवहार होगा और उनकी सांकेतिक भाषा क्या होगी। अगली लड़ाईके कार्यक्रमके बारेमें भी उन्होंने उनसे बातचीत की।

जारशाहीने लेनिनको पहचान लिया कि यही हमारा सबसे बड़ा दुश्मन है। जार की **ओखराना** के एक पुलिस अफ़सर सूबातौफ़ने अपनी एक गुप्त रिपोर्टमें कहा कि, "आजके क्रांतिकारी आन्दोलनमें उलियानौफ़ (लेनिन) से बढ़कर और कोई नहीं है;" इसलिये सूबातौफ़की राय थी कि लेनिनकी हत्या कर दी जाय।

विदेशमें लेनिनने "मजदूरोंका उद्धार" करने वाले प्लेखानौफ़, ऐक्सेलरौड और वी. सासूलिचके गुटसे मिलकर उन्हींके साथ "**इस्क्रा**" निकालनेका प्रबन्ध किया। प्रकाशनका पूरा कार्यक्रम स्वयं लेनिनने बनाया।

दिसंबर १९०० में "**इस्क्रा**" का पहला अंक विदेशमें प्रकाशित हुआ। मुख–पृष्ठ पर यह उक्ति छपी थी,—"इस चिनगारीसे आगकी लपटें उठेंगी।"

यह उक्ति दिसंबर १८२५ के असफल क्रांतिकारियोंके उस पत्रसे ली गयी थी जो उन्होंने कवि पुश्किनके अभिनंदनका उत्तर देते हुए साइबेरियासे भेजा था।

और वास्तवमें लेनिनकी चिनगारी (**इस्क्रासे**) से क्रांतिकी वे महान् लपटें उठीं जिनमें पूँजीवाद, जारशाही और जमींदारोंकी ठाकुरशाही सब जलकर राख होगयीं।

सारांश

लोकवाद, और क्रांतिके लिये घातक उसके भ्रांतिपूर्ण सिद्धांतोंसे जो पहले संघर्ष हुआ, उसीसे रूसकी मार्क्सवादी सामाजिक–जनवादी मजदूर पार्टीका जन्म हुआ।

लोकवादके सिद्धांतोंका खंडन किये बिना रूसमें मजदूरोंकी मार्क्सवादी पार्टी बनाना दुष्कर था। १८८० के लगभग प्लेखानौफ़ और "मजदूरोंका उद्धार" करने वाले गुटने इस पर घातक प्रहार किये।

१८९० में लेनिनने रही–सही कसर पूरी करके उसका काम तमाम कर दिया।

१८८३ में स्थापित "मजदूरोंका उद्धार" करने वाले गुटने रूसमें मार्क्सवादका प्रचार करनेके लिये बहुत काम किया। उसने सामाजिक-जनवादी पार्टीकी सैद्धान्तिक नींव तैयार की और मजदूर-आन्दोलनके साथ संबंध स्थापित करनेका प्रारंभिक कार्य किया।

रूसमें ज्यों-ज्यों पूंजीवादका विकास हुआ त्यों-त्यों औद्योगिक सर्वहारा-वर्गकी संख्या भी बढ़ी। १८८५ के लगभग मजदूरोंने संघ-बद्ध होकर लड़नेकी नीति अपनायी और हड़तालें करके सामूहिक आंदोलन चलाया। लेकिन मार्क्सवादी गुट केवल प्रचार करते रहे; उन्होंने मजदूरोंमें सामूहिक आंदोलन चलानेकी आवश्यकताको नहीं अनुभव किया। इसलिये मजदूर आंदोलनसे भी उनका कोई सीधा सम्बंध न था और वे उसका संचालन भी नहीं कर रहे थे।

१८९५ में लेनिनने सेंट-पीटर्सबर्गमें "श्रमिकोद्धारक संघ" बनाया। इस संघने मजदूर-आंदोलन और मार्क्सवादको एक करनेके लिए मजदूरोंमें सामूहिक आंदोलन चलाया और मजदूरोंकी हड़तालोंका नेतृत्व किया। सेंट-पीटर्सबर्गका "श्रमिकोद्धारक संघ" ही रूसमें सर्वहारा-वर्गकी एक क्रान्तिकारी पार्टीकी स्थापनाका आधार था। सेंट-पीटर्सबर्गके "श्रमिकोद्धारक संघ"की अनुगतिपर रूसके सीमा-प्रदेशों और मुख्य-मुख्य औद्योगिक केंद्रोंमें मार्क्सवादी संघ बनाये गये।

१८९८ में रूसकी सामाजिक-जनवादी मजदूर-पार्टीकी पहली कांग्रेस हुई जिसमें पहली बार मार्क्सवादी सामाजिक-जनवादी गुटोंको एक पार्टीमें संगठित करनेका प्रयत्न किया गया यद्यपि वह प्रयत्न असफल रहा। इस कांग्रेससे पार्टी नहीं बनी। न तो अभी पार्टीका कोई कार्यक्रम था; न उसके नियम बने थे। उसका संचालन करनेवाला कोई निश्चित केंद्र भी नहीं था और विभिन्न मार्क्सवादी गुटों और दलोंका परस्पर सबन्ध भी नहीं के बराबर था।

इन बिखरे हुए मार्क्सवादी गुटोंको एक पार्टीमें संगठित करनेके लिये लेनिनने एक पत्र निकालनेकी योजना बनायी और सारे रूसके लिये क्रांतिकारी मार्क्सवादियोंका पहला पत्र "**इस्क्रा**" प्रकाशित किया।

मजदूरोंकी एक स्वतंत्र राजनीतिक पार्टी बनानेके मुख्य विरोधी उस समय "अर्थवादी" थे। वे इस तरहकी पार्टीकी आवश्यकताको ही स्वीकार न करते थे। वे मार्क्सवादी गुटोंके नौसिखियापन और उनके अलगावको बढ़ावा दे रहे थ। लेनिन और उनके पत्र "**इस्क्रा**" ने पहले इन्हीं पर आक्रमण किया।

१९०० और १९०१ में "**इस्क्रा**" के प्रकाशनसे एक नये युगका आरंभ होता है जिसमें बिखरे हुए गुटों और दलोंसे संगठित होकर वास्तवमें रूसी मजदूरोंकी एक सामाजिक-जनवादी पार्टी बन सकी।

दूसरा अध्याय

रूसकी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टीका निर्माण—पार्टीमें बोल्शेविक और मेन्शेविक दलोंका जन्म

(१९०१—१९०४)

१. रूसमें क्रांतिकारी आन्दोलनकी लहर (१९०१-४)

१९ वीं सदीके अंतमें योरपको एक औद्योगिक संकटका सामना करना पड़ा। इसकी छाया रूस पर भी पड़ी। १९०० से १९०३ तकके इस संकट-कालमें छोटे-बड़े ३,००० कारखाने बंद कर दिये गये और एक लाखसे ऊपर मज़दूर बेकार हो गये। जो अब भी काममें लगे रहे, उनकी मज़दूरी बहुत कम हो गयी। हड़तालोंकी जबरदस्त लड़ाई लड़कर मज़दूरोंने जो रुपयेमें धेले भर सुविधाएँ पायी थीं, वे भी अब उनसे छीन ली गयीं।

इस संकट और बेकारीसे मज़दूरोंका आंदोलन न तो रुका और न कमजोर पड़ा। इसके विपरीत उस पर अब क्रांतिका रंग चढ़ता गया। अपनी आर्थिक माँगोंके लिये ही लड़ाई न करके मज़दूर अब राजनीतिक हड़तालें करने लगे और जुलूस निकालने लगे। प्रजाके अधिकारोंके लिये राजनीतिक माँगें पेश करके अब वे नारा लगाते थे—"ज़ारशाहीका नाश हो!"

१९०१ के मई-दिवस पर सेंट-पीटर्सबर्गमें लड़ाईका सामान बनानेवाले ओबूखौफ़के कारख़ानेमें मज़दूरोंने हड़ताल कर दी। फ़ौजके सिपाहियोंसे उनकी मुठभेड़ हुई। ज़ारके शस्त्र-सज्जित सैनिकोंका सामना करनेके लिये मज़दूरोंके पास केवल पत्थर और लोहेके टुकड़े थे। मज़दूरोंका दृढ़ मोर्चा तोड़ दिया गया। विद्रोहका उन्हें भयानक दंड दिया गया। लगभग ८०० मज़दूर पकड़े गये जिनमें से बहुतोंको सादी या सख़्त क़ैदकी सज़ा दी गयी या कालापानी हो गया। लेकिन ओबूखौफ़के वीर मज़दूरोंकी लड़ाईका रूसके बाक़ी मज़दूरों पर गहरा प्रभाव पड़ा और उनके हृदयमें एक सहानुभूतिकी लहर दौड़ गयी।

मार्च १९०२ में बातुमके मज़दूरोंने भारी हड़तालें कीं और बड़े-बड़े जुलूस निकाले। इनका संगठन वहाँकी सामाजिक-जनवादी कमिटीने किया था। बातुमके इस आन्दोलनसे कॉकेशस प्रदेशके मज़दूरों और किसानोंमें एक नयी चेतना पैदा हुई।

१९०२ में रोस्तौफ़में भी एक भारी हड़ताल हुई। सबसे पहले रेलवेके मज़दूरोंने काम बन्द किया और उनके पीछे बहुतसे कारख़ानोंके मज़दूर भी काम छोड़-छोड़ कर

आने लगे। इस हड़तालसे सभी मजदूरोंमें हलचल पैदा हुई। शहरके बाहर कई दिन तक तीस-तीस हजार मज़दूर जलसोंमें शरीक होते रहे।

इन जलसोंमें सामाजिक-जनवादी ऐलान पढ़े जाते थे और व्याख्यान दिये जाते थे। हज़ारोंके मजमोंको पुलिसके सिपाही और कज़्ज़ाक तोड़नेमें असमर्थ थे। पुलिसके हाथों कई मज़दूर काम आये। दूसरे दिन उनकी अर्थीके साथ एक भारी जुलूस निकाला गया। ज़ारकी सरकारको आस-पासके शहरोंसे फ़ौज बुलानी पड़ी और तभी वह हड़ताल को दवा सकी। रोस्तौफ़के मजदूरोंका नेतृत्व सामाजिक-जनवादी पार्टीकी दोन-कमिटीने किया।

१९०३ की हड़तालें और भी ज़बरदस्त थीं। इस साल दक्षिणमें आम राजनीतिक हड़ताल हुई; काकेशस प्रदेशके बाकू, तिफ़्लिस, बातुम और युक्राइनके बड़े-बड़े नगर ओदेसा, कियेफ़ और एकातेरीनोस्लाफ़ इन हड़तालोंसे आंदोलित हुए। दिन प्रति दिन हड़तालें पहलेसे सुसंगठित होकर दृढ़ वनती गयीं। पहलेकी हड़तालोंके विपरीत मज़दूरोंकी इस राजनीतिक लड़ाईका निर्देश प्रायः सब कहीं सामाजिक-जनवादी कमिटियोंने किया।

रूसका सर्वहारा वर्ग ज़ारकी राज्य-व्यवस्थासे क्रांतिकारी युद्ध छेड़नेकी तैयारी कर रहा था।

मज़दूरोंके आन्दोलनसे किसान प्रभावित हुए। १९०२ की वसंत और ग्रीष्म ऋतुमें उन्होंने वोल्गा-प्रदेश और युक्राइनके पोल्तावा और ख़ारकौफ़ प्रान्तोंमें विद्रोह किया। ज़मीदारोंकी कोठियोंमें उन्होंने आग लगा दी और उनकी ज़मीन छीन ली। "सेम्स्की नाकालनिक" नामके निर्दयी थानेदारों और बहुतसे ज़मींदारोंको उन्होंने मौतके घाट उतार दिया। विद्रोहका दमन करनेके लिये फ़ौज भेजी गयी और किसान गोलियोंसे मारे गये। बहुतसे पकड़ लिये गये और विद्रोहका संगठन करने वालोंको सज़ा हो गयी। फिर भी क्रांतिकारी किसान-आन्दोलन मद्धिम न पड़ा; वह बढ़ता ही गया।

मज़दूरोंकी हड़तालों और किसानोंके विद्रोहसे साबित होता था कि रूसमें क्रांतिकी आग सुलग रही है और उसके भभक उठनेका दिन अब नज़दीक आ रहा है।

मज़दूरोंके आन्दोलनके प्रभावसे ज़ारशाहीके विरुद्ध विद्यार्थियोंके आन्दोलनने और तेजी पकड़ी। उनकी हड़तालों और जुलूसोंसे खीझ कर ज़ारकी सरकारने विश्व-विद्यालयोंको बन्द कर दिया; सैकड़ों विद्यार्थियोंको जेल भेज दिया और अन्तमें यह तै किया कि अब भी जो बिगड़े-दिल बचे हों, उन्हें मामूली रंगरूटोंकी तरह फ़ौजमें भर्ती कर दिया जाय। १९०१ और '०२ के जाड़ेमें सभी विश्व-विद्यालयोंके लड़कोंने एक आम हड़ताल करके इस दमनका जवाब दिया। इस हड़तालमें लगभग तीस हजार विद्यार्थियोंने भाग लिया।

मज़दूरों और किसानोंके क्रान्तिकारी आन्दोलन और विशेषकर विद्यार्थियों पर ज़ारके दमन-चक्रका प्रभाव उदारपंथी पूँजीवादियों और देहाती पँचायतोंमें बैठने वाले

उदारपंथी जमींदारों पर भी पड़ा। अपने बेटों पर जुल्म होते देखकर उन्हें सरकारके "विरोध" में कुछ कहनेके लिये मजबूर होना पड़ा।

उदारपंथी जमींदारोंका गढ़ देहाती पँचायतें थीं। ये पंचायतें सरकारी थीं और इनका काम सड़कें, अस्पताल और स्कूल बनवाना या देहातके लिये ऐसे ही और काम करना होता था। इनका अधिकार-क्षेत्र सीमित था। पँचायतोंमें उदारपंथी जमींदारोंकी चलती थी। उदार-पंथी पूँजीवादियोंसे इनका घनिष्ठ संपर्क था। वास्तवमें दास-प्रथा वाली किसानीका पुराना ढर्रा छोड़ कर वे अपनी जमींदारीमें पूँजीवादी ढंगसे खेती करना शुरू कर रहे थे क्योंकि इसमें मुनाफ़ा ज्यादा था। इस तरह वे उदारपंथी पूँजीवादियोंसे एक हो रहे थे। ये दोनों तरहके उदार-पंथी ज़ारकी सरकारके समर्थक थे। तो भी वे ज़ारशाहीके जुल्मोंका "विरोध" करते थे। उन्हें डर था कि ये जुल्म क्रान्तिकारी आन्दोलनके आगमें घीका काम करेंगे। वे सरकारी जुल्मसे तो डरते थे, लेकिन क्रांतिसे और भी डरते थे। दमनका विरोध करनेमें उनके दो उद्देश्य थे; पहला तो यह कि इससे "ज़ारके होश ठिकाने आ जायँगे" और दूसरा यह कि ज़ारशाहीसे असन्तोष प्रकट करके वे जनताके विश्वासपात्र बन सकेंगे और इस प्रकार जनताको या उसके एक अंगको क्रांतिसे मोड़ कर उसे निर्बल बना सकेंगे।

पँचायतोंके इन उदारपंथी जमींदारोंसे ज़ारशाहीको राई भर खतरा न था; फिर भी उनके "विरोध" से यह साबित हो गया कि ज़ारशाहीकी पुरानी और मजबूत नीवें भी हिल गयी हैं।

उदारपंथियोंके आन्दोलनसे पूँजीवादियोंका एक "देशोद्धारक" दल बना और इसी दलसे आगे चल कर रूसी पूँजीवादियोंकी मुख्य पार्टी, वैधानिक-जनवादी पार्टी, बनी।

मजदूरों और किसानोंके आन्दोलनको सारे देशमें फैलते देखकर ज़ारकी सरकारने उसका वेग रोकनेके हर तरहके जतन किये। मजदूरोंकी हड़तालों और उनके जुलूसोंको तोड़नेके लिये पशुबलका प्रयोग बढ़ता गया। मजदूरों और किसानोंसे बात करनेके लिये सरकार बराबर गोली और लाठियोंसे काम लेने लगी। कालेपानीके अड्डों और जेलोंमें क़ैदियोंके लिये जगह न रह गयी।

अपनी पूरी शक्तिसे दमन-चक्र चलाते हुए ज़ार-सरकारने मजदूरोंको क्रांतिसे मोड़नेके लिये कुछ दूसरे "मधुर" और अहिंसावादी उपायोंसे भी काम लिया। पुलिसने सादी-वर्दी या सशस्त्र सिपाहियोंकी देख-रेखमें मजदूरोंके नये संगठन बनानेकी कोशिश की। ये संघ "पुलिस सोशलिज्म" के नमूने कहलाते थे। इनका संस्थापक सशस्त्र पुलिसका कर्नल सूबातोफ़ था और उसके नामसे ये सूबातोफ़के संघ भी कहलाते थे। ज़ार की सी. आई. डी. ओखरानाने अपने गुप्तचरों द्वारा मजदूरोंको यह विश्वास दिलानेकी कोशिश की कि उनकी आर्थिक मांगोंको पूरा करनेके लिये ज़ारकी सरकार खुद ही उनकी सहायता करनेके लिये तैयार है। सूबातोफ़के एजेंट मजदूरोंको समझाते थे,—"जब ज़ार ही मजदूरोंकी तरफ़दारी कर रहे हैं, तब राजनीतिक लड़ाई लड़ने और क्रान्ति

करनेकी क्या ज़रूरत है ? " कई शहरोंमें सूबातौफ़के संघ क़ायम हुए। इन्हींके ढाँचे पर और इन्हींके उद्देश्यसे गेपन नामके पादरीने १९०४ में " सेंट-पीटर्सवर्गके रूसी मिल-मज़दूरोंका संघ " बनाया।

लेकिन ज़ारकी सी. आई. डी. (ओखराना) मज़दूर-आन्दोलन पर हावी न हो सकी। मज़दूरोंके बढ़ते हुए क्रान्तिकारी आन्दोलनने पुलिसके इस " समाजवाद " को अपने रास्तेसे फूसकी तरह उड़ा दिया।

२. मार्क्सवादी पार्टी बनानेके लिये लेनिनकी योजना—" अर्थवादियों " की अवसरवादी स्वार्थपरता—इस्क्रा द्वारा लेनिनकी योजनाका समर्थन—लेनिनकी पुस्तक " क्या करें ? "—मार्क्सवादी पार्टीके सैद्धान्तिक आधार।

१८९८ में रूसकी सामाजिक-जनवादी पार्टीकी पहली कांग्रेसहो चुकी थी और उसने घोषित भी कर दिया था कि रूसमें एक सामाजिक-जनवादी पार्टी बन चुकी है; फिर भी वास्तवमें अभी पार्टी बनी न थी। न तो पार्टीकी कोई नियमावली थी, न उसका कोई कार्यक्रम था। पहली कांग्रेसमें पार्टीकी जो केंद्रीय समिति बनी थी, उसके सब सदस्य पकड़ लिये गये थे, लेकिन उसकी जगह पर दूसरी समिति न बन पायी थी क्योंकि बनानेवाले थे ही नहीं। और भी शोचनीय बात यह थी कि पहली कांग्रेसके बाद पार्टी-संगठनमें शिथिलता और सैद्धांतिक अराजकता बढ़ती गयी थी।

इसमें सन्देह नहीं कि १८८४—९४ में लोकवादकी पराजय हुई और एक सामाजिक-जनवादी पार्टीके निर्माणके लिये उचित सैद्धान्तिक तैयारियाँ की गयीं। १८९४से '९८ तक विभिन्न मार्क्सवादी दलोंको एक ही सामाजिक जनवादी पार्टीमें संगठित करनेके लिये अनेक विफल प्रयत्न भी किये गये। किन्तु १८९८ के बाद पार्टीके सिद्धांतों और संगठनमें अराजकता बढ़ गयी। मार्क्सवादी लोकवाद पर विजयी हुए थे और मज़दूर-वर्गकी क्रान्तिकारी कार्यवाहीने सिद्धकर दिया था कि मार्क्सवादी सही थे। इन सब बातोंसे जोशीले नौजवान मार्क्सवादकी ओर झुके। मार्क्सवादी होना फ़ैशनमें शामिल हो गया। इसके फलस्वरूप मार्क्सवादी दलोंमें झुंडके झुंड ऐसे पढ़े-लिखे नौजवान भी आ मिले जिनका अध्ययन कच्चा था और जो राजनीतिक संगठनमें कोरे थे। मार्क्सवादके बारेमें इन्होंने एक अस्पष्टसी धारणा बना ली थी; पढ़नेको भी इन्हें बहुधा " कानूनी " मार्क्सवादियोंकी पुस्तकें मिली थीं जिनके प्रकाशन की धूम थी। फलतः मार्क्सवादी दल अपने सैद्धान्तिक और राजनीतिक आदर्शसे नीचे गिर गये और उनमें ये नये अवसरवादी क़ानून छाँटने

लगे। इन दलोंका संगठन शिथिल हो गया, उनकी राजनीति लचर हो गयी और विचारोंमें अराजकता फैल गयी।

मज़दूर–आन्दोलन अपने उभार पर था और क्रान्तिका समय निकट आ रहा था। क्रांतिकारी आन्दोलनका नेतृत्व करनेके लिये मज़दूरोंकी एक सुसंगठित पार्टी बनाना अत्यंत आवश्यक था। फिर भी स्थानीय दल, पार्टी–समितियाँ और गुट ऐसी दुरवस्थामें थे, उनके संगठन और सिद्धान्तोंमें ऐसी व्यापक शिथिलता थी कि एक सुसंगठित पार्टी बनाना दुष्कर था।

एक कठिनाई तो यह थी कि ज़ारशाहीके अन्धाधुन्ध दमनका सामना करके ही पार्टी बनानी थी। अच्छे–अच्छे संगठन–कर्ताओंको चुनकर कालेपानी या कठिन कारावासका दंड दे दिया जाता था। इससे भी बड़ी कठिनाई यह थी कि बहुत–सी स्थानीय समितियां और उनके सदस्य अपनी स्थानीय हलचलसे ही सन्तुष्ट थे। पार्टी–संगठनकी शिथिलता और सैद्धान्तिक अराजकताके वे आदी हो गये थे और समझते थे कि एक दृढ़ केन्द्रवाली सुगठित पार्टीके बिना भी उनका काम चलता रहेगा। पार्टी के संगठन और सिद्धान्तोंमें एकसूत्रता न होनेसे कितनी हानि हो रही थी, इसका उन्होंने अनुभव न किया था।

एक केन्द्र–बद्ध सुसंगठित पार्टी बनानेके लिये स्थानीय समितियोंके संकुचित दृष्टिकोण, उनके आलस्य और उनकी रूढ़ि–प्रियताको समाप्त करना आवश्यक था।

लेकिन कठिनाइयोंका अन्त यही न था। पार्टीके भीतर एक काफ़ी बड़ा गुट उन लोगोंका था जिनके अपने अख़बार थे। रूसमें वे **राबोशाया मिस्ल** (श्रमिक–विचार) और विदेशमें **राबोशेये देलो** (श्रमिक–ध्येय) नामके पत्र निकालते थे। पार्टीकी शिथिलता और अराजकताको वे सैद्धान्तिक भूमि पर सही ठहराते थे। कभी–कभी वे इस प्रकारकी अराजकताको आदर्श रूपमें प्रस्तुत करते थे और इस बातका आन्दोलन करते थे कि मज़दूर–वर्गकी एक केन्द्र–बद्ध सुसंगठित राजनीतिक पार्टी बनाना अनावश्यक और अस्वाभाविक है।

ऐसा कहने और करनेवाले "अर्थवादी" और उनके चेले थे।

सर्वहारा वर्गकी एक संगठित राजनीतिक पार्टी बनानेके पहले इन अर्थवादियोंको परास्त करना था।

इस कार्यको पूरा करने और मज़दूर–वर्गकी पार्टी बनानेका भार लेनिनने उठाया।

मज़दूर–वर्गकी एक संगठित पार्टी बनानेका कार्य पहले कैसे आरंभ किया जाय, इस बारेमें भी लोगोंमें मतभेद था। कुछ लोगोंका विचार था कि पार्टीकी दूसरी कांग्रेस बुलायी जाय और वह स्थानीय दलोंको एक करके संगठित पार्टी बनाये। लेनिन इसका विरोध करते थे। उनका विचार था कि कांग्रेस बुलानेके पहले पार्टीके उद्देश्योंको स्पष्ट कर लेना चाहिये, स्पष्ट शब्दोंमें यह तै कर लेना चाहिये कि हमें किस प्रकारकी पार्टी चाहिये। साथ ही साथ "अर्थवादियों"से हमें सैद्धान्तिक रूपसे अपनेको अलग कर लेना चाहिये। ईमानदारी

और स्पष्टतासे यह भी कह देना चाहिये कि पार्टीमें दो मतोंके लोग ह, एक तो अर्थवादी और दूसरे क्रान्तिकारी सामाजिक-जनवादी। पार्टीके उद्देश्योंके सम्बन्धमें इन दो तरहके लोगोंके दो मत हैं। लेनिनका कहना था कि जैसे अर्थवादी अपने पत्रोंमें अपना प्रचार कर रहे हैं, वैसे ही क्रान्तिकारी सामाजिक-जनवादके लिये हमें भी अपने पत्रोंमें भारी आन्दोलन करना चाहिये और इस प्रकार स्थानीय समितियोंको इन दो धाराओंमेंसे एकको सूझ-बूझके साथ अपनानेका अवसर देना चाहिये। इतनी अनिवार्य भूमिका बाँध लेने पर ही पार्टी-कांग्रेस बुलायी जा सकती थी।

लेनिनने स्पष्ट शब्दों में लिखा:—

"संगठित होनेके पहले और इसलिये कि हम संगठित हो सकें हमें आपसके मतभेदोंको बहुत स्पष्ट रूपसे समझ लेना चाहिये।" (संक्षिप्त लेनिन ग्रंथावली। अंग्रेजी संस्करण, द्वितीय खंड, पृ. ४५)

तदनुसार लेनिनने कहा कि मजदूर-वर्गकी पार्टी बनानेका कार्य एक देश-व्यापी उग्र राजनीतिक पत्रके प्रकाशनसे आरंभ होना चाहिये जिससे क्रांतिकारी सामाजिक-जनवादके लिये प्रचार और आन्दोलन किया जा सके। पार्टी-संगठनके कार्यका इस तरह के पत्रके प्रकाशनसे ही श्रीगणेश होना चाहिये।

"शुरुआत कहाँ हो?" नामके अपने प्रसिद्ध लेखमें लेनिनने पार्टी-संगठनके लिये एक निश्चित कार्यक्रम रखा और आगे अपनी विख्यात पुस्तक "क्या करें?" में उसीका विस्तार किया।

इस लेखमें लेनिन ने लिखा था:—

> "हमारे विचारसे हमारी कार्यवाहीका आरंभ, अपनी अभीष्ट संस्थाके निर्माण कार्यका श्रीगणेश (अर्थात् पार्टी बनानेके कार्य का आरंभ-सं०) सारे रूसके लिये एक राजनीतिक पत्रके प्रकाशनसे होना चाहिये। उसी एक सूत्रके सहारे हम दृढ़ता-पूर्वक अपनी संस्थाका व्यापक प्रसार और विस्तार कर सकेंगे।... ...इसके बिना सैद्धान्तिक दृष्टि से सुसंगत और व्यापक आन्दोलन करना असंभव होगा। इस तरहका आन्दोलन करना सामाजिक-जनवादियोंके लिये सदा ही एक प्रमुख और आवश्यक कार्य है। लेकिन आज जब एक विशाल जन-समुदायमें राजनीति और समाजवादके प्रति उत्कंठा है, तब इस तरहका प्रचार-कार्य उनका तात्कालिक और प्रमुख कर्तव्य हो जाता है।" (**उपरोक्त पृ. १९**)

लेनिनका विचार था कि इस तरहके पत्रसे पार्टीमें सैद्धान्तिक दृढ़ता ही न आयेगी, बरन पार्टीके भीतरके विभिन्न दल एक दूसरेके निकट आकर संगठित हो कर एक हो सकेंगे। पार्टीके स्थानीय संगठन ही पत्रके संवाददाताओं और विक्रेताओंका कार्य करेंगे और इसी ताने-बानेको ले कर पार्टीका संगठनात्मक विस्तार संभव होगा। लेनिन का कहना था कि "पत्रसे सामूहिक आन्दोलन और प्रचार ही नहीं होता, उससे सामूहिक संगठन भी होता है।"

लेनिन ने इसी लेखमें लिखा था :—

> "जैसा संगठन हम चाहते हैं, उसका ढाँचा इन विक्रेताओंसे ही उत्पन्न हो जायगा। यह संगठन इतना विस्तृत होगा कि सारे देशमें उसके केंद्र होंगे, साथ ही वह इतना व्यापक होगा कि एक बड़े पैमाने पर रत्ती-रत्ती कामका भली भाँति बँटवारा किया जा सकेगा। यह जाल इतना मँजा हुआ होगा कि कैसे भी प्रसंग और किन्हीं भी परिस्थितियोंमें वह टूटेगा नहीं वरन **अपना काम** दृढ़तासे करता जायगा। वह इतना लचीला होगा कि अपनेसे बहुत बड़ा शत्रु जब एकही केंद्र पर सारी शक्ति इकट्ठा करे, तब वह उससे खुल्लमखुल्ला लड़ाई करनेसे बच सकेगा; साथ ही दुश्मनकी गलत चालसे तुरंत फ़ायदा उठा कर जहाँ भी और जब भी मौका मिले, उसे चकमा देकर फाँस लेगा।" **(उपरोक्त पृ. २१-२)**

इस्क्राको ऐसा ही पत्र बनना था।

इस्क्रा ऐसा ही देश-व्यापी राजनीतिक पत्र बना भी जिसने संगठन और सिद्धान्तोंकी दृष्टिसे एक सुदृढ़ पार्टी बनानेकी उचित भूमिका तैयार की।

पार्टीके स्वरूप और संगठनके बारेमें लेनिनका विचार था कि उसके दो भाग होने चाहिये। **(क)** पहले तो उसमें चौबीस घंटे काम करनेवाले पार्टीके प्रमुख कार्यकर्ताओंका एक सुगठित व्यूह हो जिनकी धंधा ही क्रान्ति हो। अर्थात् इन कार्यकर्ताओं को क्रान्ति छोड़कर और सब धन्धोंसे छुट्टी हो, इन्हें यथावश्यक राजनीतिका सैद्धांतिक ज्ञान और व्यावहारिक अनुभव हो, संगठन करनेका अभ्यास हो, और जारकी पुलिससे लड़ने और उसे चकमा देनेकी कला भी आती हो। इनके बाद **(ब)** स्थानीय पार्टी-संस्थाओंका एक विस्तृत जाल होना चाहिये जिसके केंद्रोंसे ऐसे सैकड़ों पार्टी-मेम्बर सम्बद्ध हों जिन्हें लाखों मजदूरोंकी आस्था और सहानुभूति प्राप्त हो।

लेनिनने लिखा था :—

> "मेरा दावा है कि (१) नेताओंकी स्थायी और अटूट शृंखलाके बिना कोई भी क्रान्तिकारी आन्दोलन टिकाऊ नहीं हो सकता; (२) ज्यों-ज्यों इस आन्दोलनमें जनता अधिक संख्यामें भाग लेगी, त्यों-त्यों इस तरहके संगठनकी आवश्यकता बढ़ेगी और वैसे ही इस संगठनको और दृढ़ बनना होगा; । (३) इस संगठनमें मुख्यतः ऐसे लोगोंको होना चाहिये जो पेशेवर क्रान्तिकारी हैं; (४) स्वेच्छाचारी शासनमें ऐसे संगठनकी सदस्यता हम जितना अधिक उन पेशेवर क्रान्तिकारियोंके लिये **सीमित** रखेंगे जो खुफिया पुलिसको मात देनेकी विधामें पारंगत हैं उतना ऐसे संगठनको निर्मूल करना कठिन होगा। इसके फलस्वरूप (५) मजदूर और दूसरे वर्गोंके लोग अधिकाधिक संख्यामें सम्मिलित होकर इस आन्दोलनमें सक्रिय भाग ले सकेंगे।" **(उपरोक्त-पृ० १२८-९)**

पार्टीकी रूपरेखा, उसके उद्देश्य, और श्रमिक-वर्गसे उसके सम्बन्ध और कार्यके बारेमें लेनिनका विचार था कि पार्टी श्रमिक-वर्गका अग्रदल होगी, उसके आन्दोलनका नेतृत्व

करेगी और सर्वहारा दलके वर्ग–संघर्षको एकसूत्रमें बाँध कर आगे बढ़ायेगी। उसका मूल ध्येय पूँजीवादका ध्वंस और समाजवादकी स्थापना होगा। उसका तात्कालिक उद्देश्य जारशाहीको निर्मूल करके एक जनवादी व्यवस्था क़ायम करना होगा। जारशाहीके ध्वंसकी भूमिकाके बिना पूँजीवादका पतन असंभव है, इसलिये पार्टीका तात्कालिक ध्येय श्रमिक-वर्ग और संपूर्ण जनताको जारशाहीके विरुद्ध उभारना होगा, उसके विरुद्ध क्रांतिकारी जन–आन्दोलनको व्यापक बनाना होगा और समाजवादके मार्गमें उसे प्रथम और मुख्य बाधा समझ कर उसे जड़से उखाड़ फेंकना होगा।

लेनिनने लिखा था—

> "हमारी साधनाके लिये इतिहासने एक ऐसा तात्कालिक ध्येय रखा है जो कि किसी भी देशके सर्वहारा वर्गके **तात्कालिक** उद्देश्योंमें **सबसे अधिक क्रान्तिकारी** होगा। इस उद्देश्यकी पूर्ति, योरपके ही नहीं (हम अब कह सकते हैं) बल्कि एशियाके भी प्रतिक्रियावादके आधार स्तम्भका ध्वंस करके रूसी सर्वहारा दलको अन्य देशोंके क्रांतिकारी सर्वहारा वर्गका अग्रदल बना देगी।" **(उपरोक्त-पृ० ५०)**

और आगे लिखा था—

> "हमें यह भी याद रखना चाहिये कि छोटी–मोटी माँगोंके लिये सरकारसे लड़ाई मुख्य लड़ाई नहीं है। इस लड़ाईमें छोटी–मोटी सुविधाएँ प्राप्त करके हमें पूर्ण विजय नहीं मिल सकती। यह तो सरहद पर दुश्मनसे छेड़–छाड़ भर है; असली लड़ाई अभी होनेको है। हमारे सामने दुश्मनका मजबूत क़िला है जहाँसे आग बरसा कर वह हमारे अच्छे–अच्छे सिपाहियोंको भूने डाल रहा है। हमें इस क़िलेको जीतना है और हम उसे जीत सकते हैं यदि हम जाग्रत सर्वहारा और रूसी क्रान्तिकारियोंको एक ऐसी पार्टीमें संगठित कर सकें जो रूसकी सभी जीती–जागती और ईमानदार ताक़तोंको अपनेमें समेट सके। तभी रूसके मज़दूर–क्रान्तिकारी प्योत्र अलेक्सेयेफ़की यह महान भविष्यवाणी पूर्ण होगी कि, "लाखों मज़दूरोंकी सशक्त भुजा उठेगी और उस ठाकुरशाहीको चूर-चूर कर देगी जो आज सिपाहियों की संगीनोंसे सुरक्षित है!" **(लेनिन-ग्रंथावली, रूसी संस्करण, चौथा खंड, पृ० ५९)**

स्वेच्छाचारी जारके रूसमें मजदूरोंकी पार्टी बनानेके लिये लेनिनकी यह योजना थी। अर्थवादियोंने भी उस योजनाका विरोध करनेमें विलंब नहीं किया।

उनका कहना था कि जारशाहीके विरुद्ध राजनीतिक लड़ाई सभी वर्गोंकी लड़ाई है परंतु मुख्य रूपसे वह पूँजीवादी वर्गकी लड़ाई है। इसलिये श्रमिक-वर्गके लिये उसका विशेष महत्व नहीं है। मजदूरोंका हित मज़दूरी बढ़वाने और दूसरी सुविधाओंके लिये मिल-मालिकोंके साथ आर्थिक लड़ाई लड़नेमें है। इसलिये सामाजिक-जनवादियोंका प्रमुख और तात्कालिक उद्देश्य जारशाहीका ध्वंस और उसके लिये राजनीतिक संग्राम करना नहीं

है, वरन् "मिल-मालिकों और सरकारके विरुद्ध मज़दूरोंके आर्थिक संघर्ष"का संगठन करना है। सरकारसे आर्थिक संघर्षसे उनका मतलब यही था कि मज़दूरोंके लिये अच्छे क़ानून बनवानेके लिये लड़ा जाये। अर्थवादियोंका दावा था कि इस तरहसे "आर्थिक संघर्षका राजनीतिक संग्राममें परिणत हो जाना" संभव है।

अर्थवादियोंमें अब खुल्लमखुल्ला यह कहनेका साहस न था कि मज़दूर-वर्गकी एक राजनीतिक पार्टी न बननी चाहिये। लेकिन उनका विचार था कि उसे मज़दूर-आन्दोलनका नेतृत्व न करना चाहिये; मज़दूर-आन्दोलनको अपने आप विकसित होने देना चाहिये। इसलिये उसका नेतृत्व करना तो दूर, पार्टीको उसके पीछे चलना चाहिये और उसकी गतिविधिका अध्ययन करके उससे शिक्षा प्राप्त करनी चाहिये।

अर्थवादी यह भी कहते थे कि मजदूर-आन्दोलनमें जागरूक दलका, समाजवादी चेतना और समाजवादी सिद्धान्तोंका कार्य महत्वशून्य अथवा प्रायः महत्वशून्य है। सामाजिक-जनवादियोंके लिये यह आवश्यक नहीं है कि वे मज़दूरोंको उठाकर समाजवादी चेतनाके धरातल तक लायें वरन् उन्हें स्वयं नीचे उतरकर साधारण या और भी पिछड़े हुए मज़दूरोंके मानसिक धरातल तक पहुँचकर उनके साथ साम्य स्थापित करना चाहिये। मज़दूरोंमें समाजवादी चेतनाका प्रसार करनेके बदले उन्हें तब तक सब्र करना चाहिये जब तक कि मज़दूर-आन्दोलन अपने आप विकसित होकर समाजवादी चेतनाके धरातल तक न पहुँच जाय।

पार्टी-संगठनके लिये लेनिनकी योजनाको तो वे इस स्वयंस्फूर्त आन्दोलन का विरोधी समझते थे।

अपने पत्र **इस्क्रा**में तथा अपनी विख्यात कृति "**क्या करें ?**" में लेनिनने अर्थवादियोंकी इस अवसरवादी विचारधारा पर भीषण आक्रमण किया और उसे निर्मूल कर दिया।

(१) लेनिनने कहा,—ज़ारशाहीके विरुद्ध मजदूर आम राजनीतिक लड़ाई बन्द कर दें और मिल-मालिकोंको अपनी गद्दी पर बैठे रहने देकर उनसे केवल आर्थिक लड़ाई लड़ें, इसका मतलब है कि मजदूर हमेशा गुलाम बने रहें। सरकार और मिल-मालिकोंसे मज़दूरोंकी आर्थिक लड़ाई ट्रेड-यूनियनोंकी लड़ाई थी ताकि पूँजीपतियोंके हाथ अपनी श्रम-शक्ति बेचते समय मजदूर अच्छी शर्तें पासकें। लेकिन मज़दूर अपनी श्रम-शक्तिको बेचते समय अच्छी शर्तोंके लिये ही न लड़ना चाहते थे, वे उस पूँजीवादी सत्ताके नाशके लिये भी लड़ना चाहते थे जो उन्हें अपनी श्रम-शक्ति बेचने और शोषित होनेके लिये बाध्य करती थी। लेकिन पूँजीवादके नाशके लिये और समाजवादकी प्राप्तिके लिये मजदूर तब तक न लड़ सकते थे जब तक कि ज़ारशाही पूँजीवादी व्यवस्थाकी रक्षा कर रही थी। इसलिये मजदूर-वर्ग और पार्टीका यह तात्कालिक कर्तव्य था कि समाजवादके रास्ते से ज़ारशाहीको दूर करके अपना पथ उन्मुक्त कर लें।

(२) लेनिनने कहा,—मजदूर-आन्दोलनको अपने आप बढ़ने दो, उसकी प्रगतिमें पार्टीका मुख्य हाथ नहीं है इसलिये पार्टीको बस मुंशीगीरी करने दो कि जो

कुछ हो जाय, उसे अपनी किताबमें लिख ले,—इसका मतलब यह है कि हम पार्टीको **पिछलगुआपन** (ख्वोस्तिज़्म) सिखाते हैं, हम उसे अपने आप बढ़नेवाले आन्दोलनका पुछल्ला बना देते हैं, जिससे वह एक ऐसी निष्क्रिय पार्टी बन जाय कि घटनाओं पर हावी होनेके बदले वह उनके स्वतः प्रेरित विकासको बस टुकुर-टुकुर ताकती रहे। ऐसी बातें करनेका मतलब था पार्टीके नाशके बीज बोना यानी मजदूर-वर्गको बिना पार्टीके छोड़ देना, यानी मज़दूर-वर्गको निःशस्त्र छोड़ देना। लेकिन मज़दूरोंके शत्रु अस्त्र-शस्त्रोंसे सुसज्जित थे। ज़ारशाहीके पास हथियारोंकी कमी न थी और पूँजीवादका आधुनिक ढंग पर संगठन हो चुका था और मज़दूरोंके विरुद्ध अपनी लड़ाईका संचालन करनेके लिये उसके पास अपनी एक स्वतंत्र पार्टी थी। ऐसी स्थितिमें मज़दूर-वर्गको निःशस्त्र छोड़ना उसके साथ विश्वासघात करना था।

(३) लेनिन ने कहा,—स्वयंस्फूर्त आन्दोलनकी उपासना करने और समाजवादी चेतना और सिद्धान्तोंको निर्महत्व घोषित करनेका अर्थ है उन मज़दूरोंका अपमान करना जो प्रकाश और चेतनाकी ओर बढ़ रहे हैं। दूसरे, इसका अर्थ पार्टीके लिये उन समाजवादी सिद्धातोंका मूल्य कम करना है जिससे कि वह वर्तमानकी जाँच-पड़ताल करके भविष्यको समझ सकती है। तीसरे, इसका अर्थ पूरी तरहसे और अनिवार्य रूपसे अवसरवादके दलदलमें फँस जाना है।

लेनिन ने लिखा था,—

> "बिना क्रान्तिकारी सिद्धान्तोंके कोई भी क्रांतिकारी आन्दोलन नहीं चल सकता।... ...अग्रदलका कार्य वही पार्टी कर सकती है जो सबसे उन्नत सिद्धांतों के अनुसार अपना पथ निर्धारित करती है।" (**संक्षिप्त लेनिन-ग्रंथावली—अं. सं., खण्ड २, पृ. ४७८**)

(४) लेनिन ने कहा,—"अर्थवादियों" के अनुसार मज़दूर-वर्गके स्वयंस्फूर्त आन्दोलनसे समाजवादी विचारधारा उत्पन्न होगी। परंतु समाजवादी विचारधारा उत्पन्न होती है विज्ञानसे, न कि स्वयंस्फूर्त आन्दोलनसे। अर्थवादी मज़दूर-वर्गको धोखा देते हैं। श्रमिक-वर्गमें समाजवादी चेतनाके प्रसारकी आवश्यकता को न मानकर अर्थवादी पूंजीवादी विचारोंके लिये रास्ता साफ़ करते हैं। मज़दूरोंमें इन विचारोंके फैलने और उनकी जड़ जमनेमें सहायता कर रहे हैं। इसलिये समाजवाद और मज़दूर-वर्गकी एकताको धूलमें मिलाकर वे पूंजीवाद की सहायता कर रहे हैं।

लेनिन ने लिखा—

> "स्वयंस्फूर्त आन्दोलनकी उपासना करके, 'सोच-समझकर काम करनेको' तुच्छ सावित करके और सामाजिक-जनवादकी पार्टीको तुच्छ ठहरा करके, तुम, चाहे तुम्हारी इच्छा हो या न हो, मज़दूरोंमें पूंजीवादी विचारोंके प्रभावको मजबूत करते हो।" (**उपरोक्त—पृ. ६१**)

और भी,

" हमारे सामने **दोही** रास्ते हैं,–पूंजीवादी या समाजवादी। और बीच की तीसरी राह नहीं है।... ...इसलिये **किसी तरह भी** समाजवादी विचारधाराको तुच्छ ठहराने से और **ज़रा-सा भी उससे इधर–उधर अलग हटने से** पूंजीवादी विचारधाराकी पुष्टि होती है।" (**उपरोक्त—पृ. ६२**)

(५) अर्थवादियोंकी इन सब ग़लतियों पर टीका करते हुए लेनिनने यह परिणाम निकाला कि अर्थवादी ऐसी पार्टी नहीं चाहते थे जो एक सामाजिक क्रान्ति द्वारा मज़दूर-वर्गको पूंजीवादी दासतासे मुक्त करे, वरन् उन्हें एक " समाज–सुधारक " पार्टीकी ज़रूरत थी जो पूंजीवादी शासनके स्थायित्वको स्वीकार करके आगे बढ़े। इसका अर्थ यह निकला कि अर्थवादी सुधारवादी थे जो सर्वहारा वर्गके मूल हितोंके साथ विश्वासघात कर रहे थे।

(६) अन्तमें लेनिनने सिद्ध किया कि " अर्थवादी " रूसकी अनोखी उपज न थे। " अर्थवादी " मज़दूर–वर्ग पर पूँजीवादियोंका प्रभाव डालनेके एक साधन थे। पश्चिमी योरपकी सामाजिक–जनवादी पार्टियोंमें अवसरवादी बर्न्स्टाइनके संशोधनवादी चेले उनके मित्र थे। पश्चिमी योरपकी सामाजिक–जनवादी पार्टियोंमें यह अवसरवादी प्रवृत्ति दृढ़ हो रही थी। मार्क्सकी " आलोचना करनेकी स्वाधीनता " के बहाने वे मार्क्स-वादमें " संशोधन " करनेकी माँग कर रहे थे (इसीलिये " संशोधनवाद " शब्द चल पड़ा।) वे चाहते थे कि क्रान्ति, समाजवाद और सर्वहारा वर्गके एकाधिपत्यके सिद्धान्तों को छोड़ दिया जाय। लेनिनने दिखाया कि रूसके " अर्थवादी " भी इन सिद्धान्तोंको छोड़नेकी नीतिका अनुसरण कर रहे थे।

" **क्या करें ?** " में लेनिनने मुख्य रूपसे इन्हीं सैद्धांतिक तथ्योंकी विवेचना की।

यह पुस्तक मार्च १९०२ में प्रकाशित हुई और रूसी सामाजिक–जनवादी पार्टीकी दूसरी कांग्रेस होनेके पहले साल भरमें इसका खूब प्रचार किया गया। कांग्रेस होने तक " अर्थवाद "के सिद्धान्तोंकी एक अरुचिकर स्मृति मात्र रह गयी और पार्टीके अधिकांश सदस्य " अर्थवादी " कहलानेमें अपना अपमान समझने लगे।

विचार–क्षेत्रमें अर्थवाद, अवसरवाद, स्वयंस्फूर्तिवाद और पिछलगुआपनकी पूर्ण पराजय हुई।

लेनिनकी पुस्तक " **क्या करें ?** "का महत्व इतना ही नहीं है। इस पुस्तकका ऐतिहासिक महत्व इस बातमें है कि उसमें :—

(१) मार्क्सीय विचारधाराके इतिहासमें पहली बार लेनिनने अवसरवादकी सैद्धान्तिक जड़ोंको खोद निकाला। मुख्यतः ये जड़ें थीं—स्वयंस्फूर्त मज़दूर–आन्दोलनकी उपासना करना और मज़दूर–आन्दोलनमें समाजवादी चेतनाके महत्वको कम करना।

(२) लेनिनने समाजवादी सिद्धांतों और चेतना तथा स्वयंस्फूर्त मज़दूर–आन्दोलन का क्रान्तिकारी नेतृत्व करनेवाली पार्टीके महत्वको स्पष्ट किया।

(३) लेनिनने बड़ी सुन्दरतासे मार्क्सवादके इस मूलसूत्रको सिद्ध किया कि

मार्क्सवादी पार्टी समाजवाद और मजदूर-आन्दोलनके मेलसे बनती है ।

(४) लेनिनने मार्क्सवादी पार्टीके मूल सैद्धान्तिक आधारोंकी सुन्दर विवेचना की।

इस पुस्तककी सैद्धान्तिक स्थापनाओंसे आगे चलकर बोल्शेविक पार्टीके आधारभूत सिद्धान्त बने ।

ऐसा दृढ़ सैद्धांतिक आधार पाकर "**इस्क्रा**" लेनिनकी पार्टी-संगठनकी योजनाके लिये व्यापक आन्दोलन कर सकता था और उसने किया भी । दूसरी कांग्रेस बुलानेके लिये, बिखरी शक्तिको बटोरनेके लिये, क्रान्तिकारी सामाजिक-जनवादके लिये और समस्त अर्थवादियों, संशोधनवादियों, अवसरवादियों आदि-आदिके विरुद्ध उसने डटकर प्रचार किया ।

इस्क्राने एक सबसे महत्वपूर्ण कार्य यह किया कि उसने पार्टीके लिये एक कार्यक्रम बनाया । जैसा कि सभी जानते हैं, मजदूरोंकी पार्टीका कार्यक्रम श्रमिक-संघर्षके उद्देश्योंका एक वैज्ञानिक मसौदा है । कार्यक्रममें सर्वहारा वर्गके क्रान्तिकारी आन्दोलनके चरम लक्ष्यकी व्याख्याके साथ उन उद्देश्योंका भी उल्लेख किया गया जिनके लिये लक्ष्य-प्राप्तिसे पहले भी पार्टी लड़ रही थी । इसलिये इस कार्यक्रमको तैयार करना एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य था । कार्यक्रमको तैयार करते समय **इस्क्राके** संपादकीय विभागमें मतभेद उठ खड़ा हुआ । एक ओर लेनिन थे और दूसरी ओर प्लेखानोफ़ और उसके साथी । इस मतभेद और झगड़ेसे प्लेखानोफ़ और लेनिनका सम्बन्ध टूटने ही वाला था परंतु बात वहाँ तक नहीं बढ़ी । कार्यक्रमके मसौदेमें लेनिनने सर्वहारा वर्गके एकाधिपत्य और क्रान्तिमें मज़दूर-वर्गके प्रमुख नेतृत्वका स्पष्ट उल्लेख करवा लिया ।

कार्यक्रमके कृषक-सम्बन्धी भागको भी लेनिनने ही तैयार किया था ।

उस समय भी लेनिन इस पक्षमें थे कि भूमिपर सार्वजनिक अधिकार होना चाहिये । लेकिन संघर्षकी पहली मंजिलमें वह यह माँग करना उचित समझते थे कि "मुक्ति"के समय ज़मींदारोंने "कटौती" करके जो भूमि किसानोंसे छीन ली थी, वह उन्हें वापस मिल जाय । भूमि पर सार्वजनिक अधिकारकी माँगका प्लेखानोफ़ विरोध करते थे ।

किसी हद तक पार्टी-कार्यक्रम के बारेमें लेनिन और प्लेखानोफ़का यह मतभेद ही आगे चलकर बोल्शेविक और मेन्शेविक दलोंके मतभेदमें परिणत हुआ ।

३. रूसकी सामाजिक-जनवादी मज़दूर-पार्टीकी दूसरी कांग्रेस--कार्यक्रम और नियमावलीकी स्वीकृति और एक संगठित पार्टीका निर्माण--कांग्रेसके अवसरपर मतभेद और पार्टीमें वोल्शेविक तथा मेन्शेविक प्रवृत्तियों का उभार।

लेनिनके सिद्धान्तोंकी विजय और इस्क्रा द्वारा उनकी पार्टी-संगठनकी योजनाके सफल प्रचारसे वे विशेष परिस्थितियाँ तैयार हो गयीं जिनसे कि पार्टी, अथवा जैसा कि उस समय कहा जाता था, एक "वास्तविक" पार्टीका निर्माण हो सकता था। रूसकी साजाजिक-जनवादी संस्थाओंमें इस्क्राकी विचारधारा प्रधान हो गयी। अब दूसरी पार्टी कांग्रेस बुलायी जा सकती थी।

पार्टीकी दूसरी कांग्रेस १७ (नवीन शैलीके अनुसार ३०) जुलाई, १९०३ को आरंभ हुई। कांग्रेस विदेशमें गुप्त-रूपसे बुलायी गयी। पहले ब्रुसेल्समें बैठक हुई लेकिन वेल्जियमकी पुलिसने प्रतिनिधियोंसे देश छोड़ देनेकी प्रार्थना की। इसके बाद कांग्रेस लन्दनमें हुई।

कांग्रेसमें २६ संस्थाओंसे ४३ प्रतिनिधि एकत्र हुए। हर कमिटीको २ प्रतिनिधि भेजनेका अधिकार था, लेकिन कुछने केवल एक ही भेजा। ४३ प्रतिनिधियोंके कुल मिलाकर ५१ वोट थे।

कांग्रेसका मुख्य कर्तव्य "उन सिद्धान्तों और संगठन-नीतिके आधारपर, जिनका इस्क्राने निर्देश और प्रचार किया था, एक वास्तविक पार्टी का निर्माण करना था।" (**संक्षिप्त लेनिन-ग्रंथावली—अं. सं., खंड २, पृ. ४१२**)

कांग्रेसके प्रतिनिधियोंमें अनेकरूपता थी। अपनी पराजयके कारण अर्थवादियोंके प्रतिनिधि खुले रूपसे शामिल न हो सके थे। लेकिन हारनेके बाद उन्होंने बड़ी चतुरतासे अपना भेष बदल लिया था और लुकाछिपीसे उनके कई प्रतिनिधि वहाँ पहुँच गये थे। इसके सिवा "बुन्द" के प्रतिनिधि कहनेको ही अर्थवादियोंसे भिन्न थे; वास्तवमें वे उनका समर्थन करते थे।

इस प्रकार कांग्रेसमें इस्क्राकी नीतिके समर्थक ही नहीं, विरोधी भी थे। उनमें से ३३ प्रतिनिधि इस्क्राके समर्थक थे, अर्थात बहुमत इस्क्रावादियोंका ही था। लेकिन इन लोगोंमें भी सब लेनिनके साथ कंधेसे कंधा मिलाकर चलनेवाले लोग न थे। इनमें भी छोटे-छोटे दल थे। लेनिनके समर्थकों अर्थात् इस्क्रा-नीतिके दृढ़ अनुयायियोंके २४ वोट थे। इस्क्रा-नीतिके समर्थकोंमें ९ मार्तोफ़के अनुयायी थे। इनका समर्थन कुछ डुलमुल-सा था।

कुछ प्रतिनिधि इस्क्रा और उसके विरोधियोंके बीचमें फिसल रहे थे। इन मध्य-वर्तियोंके १० वोट थे। इस्क्राके खुले विरोधियोंके, (३ अर्थवादियोंके और ५ "बुंद वालों" के) ८ वोट थे। इस्क्राके समर्थकोंमें ज़रा-सा भी मतभेद होनेसे विरोधियोंकी बन आती।

कांग्रेसमें परिस्थिति कितनी उलझी हुई थी, यह स्पष्ट हो गया होगा। इस्क्रा-नीतिकी विजयके लिये लेनिनको काफ़ी परिश्रम करना पड़ा।

कांग्रेसमें सबसे महत्वपूर्ण कार्य पार्टी-प्रोग्रामकी स्वीकृति थी। इस सम्बन्धमें जब वाद-विवाद हुआ तो कांग्रेसके अवसरवादी दलने "सर्वहारा वर्गके एकाधिपत्य" को लेकर बड़ा गुल मचाया। प्रोग्रामकी दूसरी बातोंके बारेमें भी ये लोग कांग्रेसके क्रांतिकारी दलसे एकमत न थे। लेकिन उन्होंने सोचा कि इस सर्वहारा-शासनके प्रश्नपर ही डट कर लड़ेंगे और यह तर्क पेश करेंगे कि जब विदेशकी और कई सामाजिक-जनवादी पार्टियोंके प्रोग्राममें यह प्रश्न नहीं उठाया गया, तब रूसकी पार्टीके प्रोग्राममें भी हम उसके बिना काम चला सकते हैं।

ये अवसरवादी चाहते थे कि पार्टी-प्रोग्राममें किसानोंकी मांगोंका भी ज़िक्र न हो। ये लोग क्रान्ति नहीं चाहते थे; इसलिये मज़दूरोंके सहायक किसानोंके संपर्कसे झिझकते थे और उनके प्रति एक अनुदार नीति बरतते थे।

बुन्द वाले और पोलैंडके सामाजिक-जनवादी प्रतिनिधि अल्प-संख्यक जातियोंको आत्म-निर्णयका अधिकार न देना चाहते थे। लेनिनने हमेशा यही कहा था कि मज़दूरोंको जातीय पीड़नका विरोध करना चाहिये। इस अधिकारके विरोध करनेका अर्थ सर्वहारा वर्गकी अन्तर-राष्ट्रीयताको छोड़ कर राष्ट्रीय उत्पीड़नमें सहायक होना था।

लेनिनने छुई-मुईकी तरह इन विरोधोंको दूर कर दिया।

कांग्रेसने इस्क्राके कार्यक्रमको स्वीकार कर लिया।

इस प्रोग्रामके दो अंग थे; एकका सम्बन्ध अंतिम ध्येयोंसे था, दूसरेका तात्कालिक उद्देश्योंसे। मज़दूर-वर्गकी पार्टीका चरम लक्ष्य सामाजिक क्रान्ति द्वारा पूँजीवादी शासनका अन्त करके सर्वहारा वर्गका एकाधिपत्य स्थापित करना था। पूँजीवादी व्यवस्थाके ध्वंस होने और सर्वहारा शासन स्थापित करनेके पूर्व पार्टीके तात्कालिक उद्देश्य थे,—ज़ारशाहीका नाश करना, एक जनवादी शासन-तंत्रकी स्थापना करना, मजूरी के दिनको आठ घंटेका बनाना, गाँवोंमें सामन्तवादके शेष चिन्होंका नाश करना, और कटौतीके द्वारा ज़मींदारोंने किसानोंसे जो ज़मीन छीन ली थी, उसे उन्हें वापस दिलाना।

आगे चल कर कटौतीकी भूमिके बदले बोल्शेविकोंने सभी जागीरों और ज़मींदारियोंकी भूमिको ज़ब्त कर लेनेकी माँग की।

दूसरी कांग्रेसने जो प्रोग्राम स्वीकृत किया, वह मज़दूर-वर्गकी पार्टीका क्रान्तिकारी प्रोग्राम था।

सर्वहारा-क्रान्तिकी विजयके बाद पार्टीकी आठवीं कांग्रेस तक यही प्रोग्राम रहा।

उसके बाद पार्टीने एक नया कार्यक्रम स्वीकार किया।

कार्यक्रम स्वीकृत करनेके बाद दूसरी कांग्रेसने पार्टीकी नियमावली पर बहस शुरू की। कार्यक्रम स्वीकृत करके कांग्रेसने पार्टीकी सैद्धान्तिक एकताकी नींव डाल दी थी; इसलिये स्थानीय दलोंके संकुचित दृष्टिकोण, उनकी संगठन-सम्बन्धी शिथिलता, अनुशासनके अभाव और नौसिखियापनका अन्त करनेके लिये पार्टीकी नियमावली स्वीकृत करना आवश्यक था।

प्रोग्रामकी स्वीकृति तो कुछ सहूलियतसे हो गयी थी, परंतु नियमावलीपर भयानक विवाद उठ खड़ा हुआ। सबसे तीव्र मतभेद पार्टी-सदस्यता वाले नियमावली के पहले पैराग्राफ़ पर था। पार्टीका सदस्य कौन हो सकता है? पार्टीकी रूपरेखा क्या हो? पार्टीका संगठन कैसा हो? खूब गठा हुआ या शिथिलता लिये हुए?—इस तरह के प्रश्नोंपर उस पैराग्राफ़को लेकर विवाद हुआ। इस सम्बन्धमें दो प्रस्ताव थे, एक लेनिन का, जिसका समर्थन दृढ़ **इस्क्रावादी** और प्लेखानौफ़ कर रहे थे; और दूसरा मार्तौफ़का, जिसका समर्थन ऐक्सेलरोद, सासूलिच, ढुलमुल **इस्क्रावादी**, त्रात्स्की और कांग्रेसके अन्य खुले अवसरवादी कर रहे थे।

लेनिनके प्रस्तावके अनुसार जो पार्टीके प्रोग्रामको स्वीकार करे, पार्टीकी आर्थिक सहायता करे और जो किसी पार्टी-संगठनमें हो, वह पार्टीका सदस्य हो सकता था। मार्तौफ़ने यह तो माना था कि पार्टीकी सदस्यताके लिये आर्थिक सहायता और प्रोग्राम की स्वीकृति अनिवार्य होनी चाहिये, फिर भी वह इस शर्तको माननेके लिये तैयार न था कि पार्टीके प्रत्येक सदस्यको पार्टी-संगठनमें भी होना चाहिये। उसका कहना था कि पार्टी मेम्बरके लिये यह आवश्यक नहीं है कि वह पार्टी संगठनमें भी हो।

लेनिनके लिये पार्टी एक **संगठित** सैन्य-दलकी तरह थी जिसमें यों ही भर्ती न हो सकती थी। किसी पार्टी-संगठन द्वारा ही लोग उसके सदस्य बन सकते थे; इसलिये उन्हें पार्टीका अनुशासन भी मानना होगा। इसके विपरीत मार्तौफ़के लिये संगठनकी दृष्टिसे पार्टी एक काफ़ी ढीली-ढाली चीज थी जिसमें लोग भरती हो सकते थे लेकिन पार्टी-संगठनमें न होनेसे जिनपर पार्टीका अनुशासन लागू न हो सकता था।

इस प्रकार लेनिनके प्रस्तावके विपरीत मार्तौफ़का प्रस्ताव ऐसे लोगोंके लिये पार्टी का दरवाजा खोलता था जो सर्वहारा वर्गके नहीं थे और जिनपर भरोसा नहीं किया जा सकता था। पूँजीवादी-जनवादी क्रान्तिके अवसरपर पूँजीवादी शिक्षित-वर्गमें ऐसे लोग निकल आये जिन्हें कुछ देरके लिये क्रान्तिसे सहानुभूति हो गयी थी। समय-समयपर वे पार्टीकी थोड़ी-बहुत सहायता भी कर सकते थे। लेकिन ऐसे लोग पार्टी-संगठनमें भर्ती होने, पार्टीका अनुशासन मानने, पार्टीके बताये हुए कामको पूरा करने और साथकी मुसीबतें झेलनेके लिये तैयार न थे। फिर भी मार्तौफ़ और दूसरे मेन्शेविक यह प्रस्ताव कर रहे थे कि ऐसे लोगोंको पार्टी-मेम्बर मान लिया जाय और उन्हें पार्टीकी कार्यवाहीको प्रभावित करनेका अवसर तथा अधिकार दिया जाय। उनका

तो यहाँ तक कहना था कि किसी भी हड़ताल करनेवालेको पार्टीमें "भर्ती" होनेका अधिकार होना चाहिये यद्यपि हड़तालोंमें अराजकतावादी, सामाजिक-क्रान्तिकारी और ग़ैर-समाजवादी लोग भी भाग लेते थे।

लेनिन और उनके अनुयायी कांग्रेसमें इस बातके लिये लड़े थे कि पार्टी एक सूत्रमें बँधी हुई एक सुगठित और सुदृढ़ सैन्य-दलकी भाँति हो। इसके बदले मार्तोफ़-पन्थी एक बहुरंगी, शिथिल और अस्पष्ट रूपरेखावाली पार्टी चाहते थे जो और नहीं तो केवल अपने बहुरंगी होनेके नाते दृढ़ अनुशासन माननेवाली सुगठित सेना न बन सकती थी।

ढुलमुल **इस्क्रा**-वादी **इस्क्रा**के दृढ़ समर्थकोंसे नाता तोड़कर मध्य-वर्तियों और उनके खुले अवसरवादी सहयोगियोंसे जा मिले। इसलिये इस पार्टी-संगठनके मामलेमें बहुमत मार्तोफ़के पक्षमें हो गया। एक तटस्थ रहा; २८-२२ वोटोंके अनुपातसे कांग्रेस ने नियमावलीके पहले पैराग्राफ़के मार्तोफ़ द्वारा प्रस्तावित रूपको स्वीकार किया।

नियमावलीके पहले पैराग्राफ़पर **इस्क्रा-वादियों**में फूट पड़ जानेसे कांग्रेसमें और भी गरमागरमी बढ़ गयी। कांग्रेस अब अपना अंतिम कार्य, पार्टीकी प्रमुख संस्थाओं—**इस्क्रा**के सम्पादक-मंडल और केन्द्रीय समितिका चुनाव करनेवाली थी। लेकिन चुनाव तक पहुँचनेके पहले ही कुछ घटनाएँ ऐसी हो गयीं जिनसे दलबन्दीकी रूपरेखा बदल गयी।

नियमावलीके सम्बन्धमें कांग्रेस को "बुन्द" का मसला भी लेना पड़ा। "बुन्द" वाले पार्टीके भीतर अपना एक विशिष्ट स्थान चाहते थे। उनकी माँग थी कि रूसके यहूदी मजदूरोंका एकमात्र प्रतिनिधि उन्हींको माना जाय। इस माँगको स्वीकार करने का मतलब था, पार्टीमें मजदूरोंको जातियोंके हिसाबसे बाँट देना और उनके सामान्य प्रादेशिक वर्ग-संगठनोंको छोड़ देना। कांग्रेसने बुन्दकी इस जातीय नीतिके अनुसार पार्टीका संगठन करना अस्वीकार कर दिया। इस पर बुन्दवाले कांग्रेस छोड़कर चले गये। कांग्रेसने दो "अर्थवादियों" की इस माँगको भी स्वीकार न किया कि उनके "वैदेशिक संघ" को ही विदेशमें पार्टीका एकमात्र प्रतिनिधि माना जाय। और वे भी कांग्रेससे चले गये।

इन सात अवसरवादियोंके चले जानेसे कांग्रेसका बहुमत अब लेनिनके पक्षमें हो गया।

आरंभसे ही लेनिनने पार्टीकी केन्द्रीय संस्थाओंके निर्माणकी ओर विशेष ध्यान दिया। वह इस बातको आवश्यक समझते थे कि केन्द्रीय समितिमें समर्थ और अविचल क्रान्तिकारी हों। मार्तोफ़-पन्थी चाहते थे कि केन्द्रीय समितिमें प्राधान्य अस्थिर और अवसरवादी लोगोंका हो। इस प्रश्नपर कांग्रेसका बहुमत लेनिनका समर्थक था। निर्वाचित केन्द्रीय समितिमें लेनिनके अनुयायी ही आये।

लेनिनके प्रस्तावपर लेनिन, प्लेखानोफ़ और मार्तोफ़ **इस्क्रा**के सम्पादक-

मंडलमें चुने गये । मार्तौफ़ने इस बातकी मांग की थी कि इस्क्राके सम्पादकीय विभागमें पहलेके छहों आदमी चुने जायें, जिनमेंसे अधिकांश उसके समर्थक थे। इस मांगको कांग्रेसने बहुमतसे अस्वीकार कर दिया। लेनिन द्वारा प्रस्तावित तीन संपादक चुन लिये गये। इसपर मार्तौफने संपादकीय विभागमें रहना अस्वीकार कर दिया।

इस प्रकार पार्टीकी केन्द्रीय संस्थाओंके निर्वाचनमें अपना मत प्रकट करके कांग्रेसने लेनिन–वादियोंकी विजय और मार्तौफ़–पन्थियोंकी पराजय निश्चित कर दी।

तबसे लेनिनके अनुयायी जिन्हें कांग्रेसके निर्वाचनमें बहुमत प्राप्त हुआ था **बोल्शेविक** (बोलशिन्स्त्वो=बहुसंख्यक) और लेनिनके विरोधी जिन्हें अल्पमत प्राप्त हुआ था, मेन्शेविक (मेनशिन्स्त्वो=अल्पसंख्यक) कहलाते हैं। दूसरी कांग्रेसकी कार्यवाहीसे संक्षेपमें निम्नलिखित निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं:——

(१) कांग्रेसने "अर्थवाद" और खुले अवसरवादपर मार्क्सवादकी विजय निश्चित कर दी।

(२) कांग्रेसने पार्टीका **कार्यक्रम** और उसकी **नियमावली** स्वीकृत की, सामाजिक–जनवादी पार्टीका निर्माण किया, और इस प्रकार एक शृंखला–बद्ध पार्टीका ढाँचा तैयार किया।

(३) कांग्रेसने संगठनके प्रश्नपर पारस्परिक मतभेदको स्पष्ट कर दिया। बोल्शेविक दल क्रान्तिकारी सामाजिक–जनवादके संगठन–संबंधी सिद्धान्तोंका समर्थक था; और मेन्शेविक दल संगठन–सम्बन्धी शिथिलता और अवसरवादके दलदलमें फँस गया था।

(४) कांग्रेसने यह स्पष्ट कर दिया कि पार्टीमें हार खाये हुए "अर्थवादी" नामके पुराने अवसरवादियोंकी जगह अब "मेन्शेविक" नामके अवसरवादी ले रहे हैं।

(५) संगठन–संबंधी प्रश्नोंपर कांग्रेस अपना उत्तरदायित्व निभा नहीं सकी। इस संबंधमें उसने अस्थिरताका परिचय दिया और कभी–कभी मेन्शेविकोंकी ओर भी झुक गयी। बैठकके अन्त तक उसने अपना रवैया बहुत कुछ बदल लिया, फिर भी संगठन–संबंधी प्रश्नोंपर वह मेन्शेविकोंके अवसरवादको स्पष्ट नहीं कर सकी; उन्हें पार्टीके भीतर निःसहाय और निरुपाय नहीं बना सकी, पार्टीके सामने उसने इस कार्यको रक्खा भी नहीं।

यही मुख्य कारण था जिससे कांग्रेसके बाद बोल्शेविक और मेन्शेविक दलोंका द्वंद्व शान्त होनेके बदले और भी ज़ोर पकड़ता गया।

४. मेन्शेविक नेताओंकी विग्रह-नीति और दूसरी कांग्रेसके बाद पार्टीके आन्तरिक द्वंद्वकी तीव्रता--मेन्शेविकोंका अवसरवाद--लेनिनकी पुस्तक-"एक क़दम आगे, तो दो क़दम पीछे"--मार्क्सवादी पार्टीके संगठन-सिद्धान्त।

दूसरी कांग्रेसके बाद पार्टीका आन्तरिक द्वंद्व और भी तीव्र हो गया। पार्टीकी केन्द्रीय संस्थाओंमें दखल जमाने और दूसरी कांग्रेसके प्रस्तावोंको असफल बनानेमें मेन्शेविकोंने अपनी ओरसे कुछ उठा नहीं रखा। उन्होंने यह माँग पेश की कि केन्द्रीय समिति और इस्क्राके सम्पादक-मंडलमें उनके इतने प्रतिनिधि लिये जाएँ कि केन्द्रीय समितिमें उनका बहुमत हो और सम्पादक-मण्डलमें वे बोल्शेविकोंके बराबर हो जायँ। यह माँग कांग्रेसके प्रस्तावोंके विरुद्ध थी, इसलिये बोल्शेविकोंने उसे अस्वीकार कर दिया। इसपर मेन्शेविकोंने पार्टीसे छिपकर मार्तोफ़, त्रात्स्की और ऐक्सेलरोदके नेतृत्वमें, एक पार्टी-विरोधी गुट बना लिया और मार्तोफ़के शब्दोंमें "लेनिनवादका विरोध शुरू कर दिया।" पार्टीका विरोध करनेके लिये वे कूटनीतिसे काम लेते थे। लेनिनके अनुसार उनकी नीति "*पार्टीकी सम्पूर्ण कार्यवाहीको अव्यवस्थित करने, रूसके मूल ध्येयको क्षति पहुचाने और सब कहीं अड़चन पैदा करने की*" थी। उन्होंने रूसी सामाजिक-जनवादियोंके वैदेशिक संघको अपना गढ़ बनाया जिसके ९० फ़ीसदी सदस्य भगोड़े बुद्धिजीवी थे और इसलिये रूसके काममे पूरी तरह अनभिज्ञ थे। उस गढ़से मेन्शेविकोंने लेनिन और उनके समर्थकोंपर आक्रमण करना आरंभ किया।

मेन्शेविकोंको प्लेखानोफ़से यथेष्ट सहायता मिली। दूसरी कांग्रेसमें प्लेखानोफ़ने लेनिनका साथ दिया था। लेकिन उसके बाद वह मेन्शेविकोंकी फूटकी धमकीसे डर गया। उसने किन्हीं भी शर्तोंपर मेन्शेविकोंसे "सुलह कर लेनेका" विचार किया। अपनी पहलेकी भयानक अवसरवादी भूलोंके कारण प्लेखानोफ़ मेन्शेविकोंकी ओर खिंचता गया। अवसरवादी मेन्शेविकोंसे सुलहकी बात करते-करते वह स्वयं उन अवसरवादियोंमें जा मिला। उसने माँग की कि इस्क्राके भूतपूर्व संपादक, जिन्हें कांग्रेसने इस बार नहीं चुना था, पुनः प्रतिष्ठित किये जायँ। लेनिन इस प्रस्तावसे कैसे सहमत होते? इसलिये संपादक-मंडलसे त्यागपत्र देकर उन्होंने केन्द्रीय समितिमें जमकर वहाँसे अवसरवादियोंपर आक्रमण करनेका निश्चय किया। कांग्रेसके निर्णयको ठुकराकर प्लेखानोफ़ने स्वेच्छासे इस्क्राके भूतपूर्व मेन्शेविक सम्पादकोंको वापस बुला लिया। उस समयसे, इस्क्राके ५२ वें अंकसे लगाकर, मेन्शेविकोंने उसे अपना पत्र बना

लिया और धूमसे उसमें अपना प्रचार करने लगे।

तबसे पार्टीमें लेनिनके बोल्शेविक **इस्क्रा**को **पुराना इस्क्रा** और मेन्शेविकोंके अवसरवादी **इस्क्रा**को **नया इस्क्रा** कहा जाता है।

मेन्शेविकोंके हाथमें आकर **इस्क्रा** लेनिन और बोल्शेविकोंसे लड़नेका एक साधन बन गया; वे उसमें अवसरवादका, विशेषकर संगठनके प्रश्नोंपर जी भरकर प्रचार करने लगे। अर्थवादियों और 'बुंद' वालोंसे मेल करके उन्होंने, जैसा कि वे कहते थे, **इस्क्रा**में लेनिनवादके विरुद्ध आन्दोलन आरंभ कर दिया। प्लेखानौफ़ संधिकर्ताका बाना फेंक कर उस आन्दोलनमें भाग लेने लगा। ऐसा तो होना ही था; अवसरवादियोंसे समझौतेकी जिद करनेका मतलब स्वयं अवसरवादके दलदलमें फँसना था। कल्पवृक्षकी भाँति **नये इस्क्रा**में अवसरवादी लेख फलने-फूलने लगे। उनमें कहा जाता था कि पार्टीको सुगठित न होना चाहिये; उसमें स्वाधीन विचारोंके गुटों और व्यक्तियोंको बने रहने देना चाहिये और उनपर पार्टी-कमिटियोंके निर्णयोंका बन्धेज न होना चाहिये। पार्टीसे सहानुभूति रखनेवाले हर शिक्षित व्यक्तिको, "हर हड़तालिये" और "प्रदर्शनमें भाग लेनेवाले" हर आदमी को पार्टी-मेम्बर कहलानेका अधिकार होना चाहिये। "हम" पार्टीके सभी निर्णय मानें, इस बातमें "झूठा कानूनीपन" है; उसपर नौकरशाहीकी छाप है। अल्पमतके लोग पार्टीका बहुमत स्वीकार करें, यह तो उन पर "जब्र करना" है। सभी पार्टी-मेम्बर,—क्या नेता और क्या उनके अनुयायी—सामान्य रूपसे पार्टीका अनुशासन मानें, इस बातकी माँग करनेका मतलब है पार्टीमें "दास-प्रथा" को जन्म देना। "हमें" पार्टीमें केन्द्रीयता नहीं, अराजकतावादी "स्वायत्तवाद" चाहिये जिससे कि व्यक्ति और पार्टी-संगठन पार्टीके निर्णयोंकी अवहेलना कर सकें।

संगठनात्मक स्वेच्छाचारिताके लिये इस निर्द्वंद प्रचारका घातक प्रभाव पार्टीके अनुशासन और पार्टी-सत्ता के सिद्धान्तपर ही पड़ता था। इस प्रकार मेन्शेविक अनुशासनके संबंधमें अराजकवादियोंकी तिरस्कार-भावनाको न्यायपूर्ण ठहरा रहे थे और बुद्धिजीवियोंके व्यक्तिवादका गीत गा रहे थे।

यह स्पष्ट था कि मेन्शेविक लोग पार्टीको दूसरी कांग्रेसके निश्चयोंसे खींच कर पीछेकी संगठनात्मक शिथिलता, गुटोंके संकुचित दृष्टिकोण और पुराने नौसिखियापन की ओर ले जाना चाहते थे।

मेन्शेविकोंपर एक जोरदार रद्दा जमाना जरूरी था। अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "**एक क़दम आगे, तो दो क़दम पीछे**"में, जो मई १९०४ में प्रकाशित हुई, लेनिनने यह रद्दा जमाया।

लेनिनने संगठन-सम्बन्धी निम्नलिखित मूल सिद्धांतोंका अपनी पुस्तकमें प्रतिपादन किया और आगे चलकर उन्हींके आधार पर बोल्शेविक पार्टीका संगठन हुआ।

(१) मार्क्सवादी पार्टी मजदूर-वर्गका एक अंग, उसका एक दल है। परन्तु श्रमिक

वर्गके बहुतसे दल हैं; इसलिये उन सभी दलोंको मजदूरोंकी पार्टी नहीं कहा जा सकता। पार्टी मजदूर-वर्गके अन्य दलोंसे इसलिये भिन्न है कि वह साधारण दल न हो कर श्रमिक-वर्गका **अग्र दल** है, मजदूरोंका ऐसा **मार्क्सवादी** दल है जिसमें **वर्गचेतना** का विकास हो चुका है; उसे सामाजिक जीवनका ज्ञान है, समाजके विकास और वर्ग-संघर्षके नियमोंका पता है, और इसलिय वह मजदूर-वर्गका नेतृत्व कर सकता है और उनके संघर्षको आगे बढ़ा सकता है। इसलिये मजदूर-वर्गके एक अंगको पूरा वर्ग समझ बैठना भ्रान्ति होगी। किसीको भी यह माँग करनेका अधिकार नहीं है कि हरेक हड़-तालिया अपनेको पार्टी मेम्बर कह सके, क्योंकि पूरे वर्गको पार्टी समझनेका अर्थ होगा कि हम पार्टी-चेतनाके स्तरको नीचा करके उसे जिस किसी भी हड़तालियेके धरातल तक ले आयें। इससे पार्टी मजदूर-वर्गका एक जागरूक अग्रदल न रह सकेगी। पार्टीका यह काम नहीं है कि वह अपने धरातलको **नीचा करके** हर किसी हड़तालियेके धरातल तक पहुँचे, वरन् उसका काम है कि वह श्रमिक-समुदायको, हर किसी हड़तालियेको ऊपर **उठाकर** पार्टीके धरातल तक लाये।

लेनिनने लिखा था,

" हम एक वर्गकी पार्टी हैं, इसलिये **लगभग संपूर्ण वर्ग**को (और युद्धकाल तथा गृह-युद्धके समयमें **संपूर्ण वर्ग**को) पार्टीके यथासंभव निकट आकर उसके नेतृत्वमें काम करना चाहिये। लेकिन यह समझना कि पूँजीवादी व्यवस्थामें कभी भी संपूर्ण वर्ग, अथवा लगभग संपूर्ण वर्ग अपने अग्रदलकी, सामाजिक-जनवादी पार्टी की क्रियाशीलता और चेतनाके स्तर तक पहुँच सकेगा, पिछलगुआपन और मन बहलानेका एक बहाना भर (मानीलोविज़्म=झूठा आत्म-संतोष) है। किसी भी समझ-दार सामाजिक-जनवादीको इस बातमें कभी सन्देह नहीं हुआ कि पूँजीवादी व्यवस्थामें ट्रेड-यूनियन-संगठन भी (जो ज़्यादा पिछड़े हुए हैं और इसलिये पिछड़े हुए मजदूरों के ज़्यादा नज़दीक हैं) संपूर्ण अथवा लगभग संपूर्ण वर्गको अपने भीतर नहीं ला सकते। यदि हम अग्रदल और उसकी ओर खिंचनेवाले जनसमूहका भेद भूल जाते हैं, और उस अग्रदलके इस सतत कर्तव्यको भूल जाते हैं कि वह अधिकसे अधिक लोगोंको उच्चतम धरातलकी ओर **खींचे**, तो हम अपनेको धोखा देते हैं, अपने कार्योंकी महत्ताको आँखोंकी ओट कर देते हैं, और उन कार्योंको संकुचित कर देते हैं।" (**लेनिन-ग्रंथावली— रूसी संस्करण, खंड ४ पृ. २०५-६**)

(२) पार्टी मजदूर-वर्गका एक सचेत अग्रदल ही नहीं है, वह एक **संगठित** दल है जिसके अपने अनुशासनके नियम हैं जो उसके सदस्यों पर लागू होते हैं। इस लिये पार्टीके मेम्बरोंको पार्टीके किसी न किसी संगठनका सदस्य होना ही चाहिये। यदि पार्टी अपने वर्गका एक **संगठित दल न हो, एक नियमित संगठन** न होकर वह उन सभी लोगोंका समूह हो जो अपनेको पार्टी मेम्बर कहते हों लेकिन जो किसी

पार्टी-संगठनमें न होनेसे असंगठित हों, और इसलिये जो पार्टीके निर्णय माननेके लिये बाध्य न हों, तो पार्टी एकमत न हो सकेगी, उसके सदस्य संगठित होकर एक नीतिके अनुसार कार्य न कर सकेंगे और इसलिये वह मजदूर-वर्गके संघर्षका निर्देश न कर सकेगी। मजदूर-वर्गके संघर्षको पार्टी तभी एक ध्येयकी ओर आगे बढ़ा सकती है जब उसके सभी सदस्य एक ही सैन्य-दलमें **संगठित** हों, एक मत और धारणाके बन्धनमें बँधे हों और जिनमें अनुशासन और कार्योंकी एकता हो।

मेन्शेविकोंका कहना था कि ऐसा करने पर बहुतसे बुद्धिजीवी लोग--जैसे कालेजोंके प्रोफेसर और युनिवर्सिटी और हाई स्कूलोंके विद्यार्थी--पार्टीके बाहर रहेंगे क्योंकि वे किसी भी पार्टी-संगठनमें आना पसन्द न करेंगे। इसके दो कारण थे,--या तो उन्हें पार्टीके अनुशासनसे भय था या जैसा कि प्लेखानोफ़ने दूसरी कांग्रेसमें कहा था,--वे "किसी स्थानीय पार्टी-संगठनमें शामिल होना अपनी शानके खिलाफ़ समझते थे।" मेन्शेविकोंको अपनी इस आपत्तिसे ही करारा जवाब मिल जाता था; क्योंकि पार्टीको ऐसे मेम्बरोंकी जरूरत नहीं है जो पार्टीके अनुशासनसे झिझकते हैं और पार्टी-संगठनमें शामिल होनेसे डरते हैं। मजदूर अनुशासन और संगठनसे नहीं डरते और पार्टीमें भर्ती होनेका निश्चय करने पर वे खुशीसे संगठनमें शामिल हो जाते हैं। व्यक्तिवादी बुद्धिजीवी ही अनुशासन और संगठनसे डरते हैं और वे सचमुच पार्टीके बाहर रहेंगे। लेकिन यह तो अच्छा ही है, क्योंकि इससे पार्टीमें उन अस्थिर लोगोंकी भरमार न हो सकेगी जो पूँजीवादी-जनवादी क्रान्तिके उठानके अवसरपर पार्टीमें विशेषरूपसे आ रहे थे।

लेनिनने लिखा था--

"जब मैं कहता हूँ कि पार्टीको **संगठनोंका जोड़** होना चाहिये (और गणितका जोड़ नहीं वरन् परस्पर-सम्बद्ध संस्थाओंका जोड़ होना चाहिये)...तब मैं असन्दिग्ध और स्पष्ट रूपसे अपनी इस माँगको व्यक्त कर देता हूँ कि वर्गके अग्रदलकी हैसियतसे पार्टीको यथासंभव **संगठित** होना चाहिये और पार्टीमें ऐसे ही लोगोंको आने देना चाहिये **जो उसके अल्पतम संगठनको स्वीकार कर सकें।**" (उपरोक्त—पृ. २०८)

और आगे लिखा था—

"ऊपरसे देखनेमें मार्तोफ़का मसौदा बहुसंख्यक मजदूरोंके हितोंकी रक्षा करता है परन्तु **वास्तवमें** वह उन **पूँजीवादी बुद्धिजीवियोंके** हितोंकी ही रक्षा करता है जो सर्वहारा-अनुशासन और संगठनसे दूर भागते हैं। इस बातसे कोई इनकार न करेगा कि आधुनिक पूँजीवादी समाजमें **अपने व्यक्तिवादके कारण ही** और अनुशासन तथा संगठन-सम्बन्धी अपनी अक्षमताके कारण ही **बुद्धिजीवी-वर्ग एक वर्ग-विशेषके रूपमें** स्थित है। (उपरोक्त—पृ. २१२)

और भी,

"सर्वहारा वर्ग संगठन और अनुशासनसे नहीं डरता।...जो सम्मानित प्रोफ़ेसर और हाई स्कूलके विद्यार्थी संगठनके नियंत्रणसे भय खाकर उसमें नहीं शामिल होना चाहते, उन्हें पार्टी-मेम्बर बनानेके लिये सर्वहारा वर्ग प्रयत्न नहीं करेगा।... सर्वहारा वर्गमें नहीं, हमारी पार्टीके **कुछ बुद्धिजीवी** लोगोंमें ही संगठन तथा अनुशासन-सम्बन्धी **आत्म-शिक्षा**का अभाव है।" (**उपरोक्त—पृ. ३०७**)

(३) पार्टी एक संगठित दल ही नहीं, मजदूर-वर्गके "**संगठनोंमें सर्वोच्च**" है और उसका काम यह है कि वह मजदूर-वर्गके अन्य संगठनोंका पथ-निर्देश करे। संगठनका सर्वोच्च रूप पार्टी है; उसमें वर्गके सर्वश्रेष्ठ सदस्य हैं; उसके पास प्रगतिशील सिद्धांत हैं, वर्ग-संघर्षके नियमोंका उसे ज्ञान है और क्रांन्तिकारी आन्दोलनका उसे अनुभव है; इसलिये मजदूर वर्गके अन्य संगठनोंका पथ-निर्देश करनेका उसे हर तरहसे अवसर है और ऐसा करनेके लिये वह बाध्य भी है। पार्टीके नेतृत्वको निर्महत्व और क्षुद्र सिद्ध करनेके मेन्शेविकोंके प्रयाससे पार्टी द्वारा संचालित मजदूर-वर्गके अन्य संगठन भी कमजोर पड़ सकते थे, जिससे सर्वहारा वर्ग निर्बल और निःशस्त्र हो जाता; क्योंकि "शासन-सत्ताके लिये युद्ध करते समय सर्वहारा वर्गके पास संगठनको छोड़कर दूसरा अस्त्र नहीं है।" (**संक्षिप्त लेनिन-ग्रंथावली—अंग्रेजी संस्करण, खंड २, पृ. ४६६**).

(४) पार्टी **लाखों मज़दूरों** और उनके अग्रदलके **परस्पर-सम्बन्धका मूर्त स्वरूप** है। चाहे जितना अच्छा अग्रदल हो और चाहे जितना अच्छा उसका संगठन हो, वह पार्टीसे बाहरके जन-साधारणसे सम्बन्ध बनाये बिना जीवित नहीं रह सकता और न विकसित हो सकता है। जनतासे दूर हटकर जो पार्टी अपनेको घोंघेके भीतर बन्द कर लेती है, और अपने वर्गसे अपने सम्बन्ध-सूत्रोंको तोड़ देती है अथवा ढीला ही कर देती है, वह अवश्य जनताके विश्वास और उसकी सहायतासे हाथ धो बैठती है। इसलिये ऐसी पार्टीकी मृत्यु भी निश्चित है। पार्टीके अक्षुण्ण जीवन और विकासके लिये यह आवश्यक है कि वह जनतासे अपने सम्बन्ध-सूत्र बढ़ाये और अपने वर्गके लाखों-करोड़ों लोगोंकी विश्वासपात्र बने।

लेनिनने लिखा था—

"सामाजिक-जनवादी **पार्टी** बननेके लिये हमें **अपने वर्गका विश्वास-पात्र** बनकर उससे बल पाना चाहिये।" (**लेनिन-ग्रंथावली—रूसी संस्करण, खंड ६, पृ. २०८**)

(५) सही ढंगसे काम करनेके लिये और जनताका नियमित रूपसे पथ-प्रदर्शन करनेके लिये पार्टीको **केन्द्रीयता**के सिद्धान्तपर संगठित होना चाहिये। उसके एक ही नियम और एकही अनुशासन होना चाहिये। उसकी एक प्रमुख संस्था होनी चाहिये—पार्टी-कांग्रेस, और दो कांग्रेसोंके बीचमें पार्टीकी केन्द्रीय समिति। अल्पमतको बहुमतके आगे झुकना चाहिये; विभिन्न संस्थाओंको केन्द्रीय समिति द्वारा अनुशासित होना

चाहिये और निम्न संगठनोंको अपनेसे ऊँचे संगठनोंकी बात माननी चाहिये। इन शर्तोंके पूरे हुए बिना मजदूर-वर्गकी पार्टी एक वास्तविक पार्टी नहीं बन सकती और अपने वर्गके मार्ग-दर्शनके कर्तव्यको भी पूरा नहीं कर सकती।

ज़ारशाहीके शासनमें पार्टी गैर-क़ानूनी थी; इसलिये यह जरूर था कि उन दिनों नीचेसे चुनावके सिद्धान्तपर पार्टी-संगठन न बन सकते थे। इसका फल यह हुआ कि पार्टीकी कार्यवाही सब गुप्तरूपसे होती थी। लेकिन लेनिनका विचार था कि पार्टीके जीवनमें यह एक **अस्थायी** बात थी जो ज़ारशाहीके ध्वंसके साथ समाप्त हो जायगी। तब पार्टी क़ानूनी होकर खुले तौरपर काम कर सकेगी और पार्टी-संगठन जनवादी निर्वाचनके सिद्धान्तोंपर—**जनवादी केन्द्रीयता**के सिद्धान्तपर निर्मित हो सकेंगे।

लेनिनने लिखा था—

> "**पहले** हमारी पार्टी एक नियमपूर्वक संगठित दल न होकर विभिन्न गुटों का जमघट थी; इसलिये इन गुटोंमें विचार-साम्यको छोड़कर और कोई सम्बन्ध संभव न था। अब हम एक संगठित पार्टी हैं, जिसका अर्थ है, हम अनुशासन-सूत्रमें बँधे हैं। विचारोंकी शक्ति अनुशासनमें बदल गयी है। पार्टीकी निम्न संस्थाओंको उच्चतर संस्थाओंसे अनुशासित होना होगा।" (**उपरोक्त-पृ.२९१**)

पार्टीका अधिकार और अनुशासन माननेमें अमीराना मनमौजीपन और संगठनमें अराजकतावाद दिखलानेका दोष मेन्शेविकोंपर लगाते हुए लेनिनने लिखा था—

> "यह राजसी अराजकतावाद रूसी निहिलिस्टों (ध्वंसवादियों) की विशेषता है। पार्टी-संगठनको वे एक भयानक 'फैक्टरी' समझते हैं; उनके विचारसे पार्टीके विभिन्न अंगों तथा अल्पमतका पूरी पार्टीसे अनुशासित होना "दासता" है। कुछ करुण और कुछ हास्यास्पद स्वरमें वे केन्द्रकी देखरेखमें कामके बँटवारेके लिये कहते हैं कि इससे लोग मशीनके "कल-पुर्जे" बन जाते हैं। (संपादकोंका संवाददाता बनना उनकी दृष्टिमें इस तरहके परिवर्तनका एक विशेष रूपसे जघन्य उदाहरण है।) पार्टीके संगठन-संबंधी नियमोंपर वे मुँह बिचकाते हैं और ('नियमवादियों' के लिये) बड़ी घृणासे वे कहते हैं कि बिना नियमोंके ही काम चल सकता है। (**संक्षिप्त लेनिन-ग्रंथावली—अं. सं., खंड २, पृ. ४४२-३**)

(६) अपने क्रियात्मक जीवनमें यदि पार्टीको अपनी एकता बनाये रखना है तो उसे **समान रूपसे**—क्या नेता और क्या उनके अनुयायी—सभीपर एक ही सर्वहारा-अनुशासन लागू करना होगा। इसलिये पार्टीमें कोई ऐसा भेद-भाव न होना चाहिये कि "कुछ श्रेष्ठ लोगोंपर" अनुशासन लागू न हो और शेष अश्रेष्ठ लोगोंपर लागू हो। बिना इस शर्तको निबाहे पार्टीकी एकता और उसकी दृढ़ता बनी नहीं रह सकती।

लेनिनने लिखा था—

> "कांग्रेस द्वारा नियुक्त संपादक-मंडलके विरुद्ध मार्तोफ़ और उनके साथियों के प्रचारमें कितना कुतर्क है, इसका सबसे अच्छा प्रमाण उन्हींका यह नारा

है कि 'हम गुलाम नहीं हैं!' पूँजीवादी बुद्धिजीवी जो अपनेको सामूहिक संगठन और सामूहिक अनुशासनके ऊपर कुछ गिने-चुने श्रेष्ठ लोगोंमें समझता है, यहाँ अपनी मनोवृत्तिका बहुत स्पष्टतासे परिचय देता है।...व्यक्तिवादी बुद्धिजीवीको सभी सर्वहारा-संगठन और अनुशासन '**दासता**' मालूम पड़ता है।" (**लेनिन-ग्रंथावली—रूसी सं., खंड ६, पृ. २८२**)

और भी

"जैसे-जैसे हम एक **वास्तविक** पार्टीके निर्माण-कार्यमें आगे बढ़ेंगे, वैसे-वैसे एक सचेत मजदूरको सर्वहारा-सेनाके सिपाही और अराजकतावादी व्याख्यान झाड़ने वाले पूँजीवादी बुद्धिजीवीकी मनोवृत्तियोंका अन्तर समझना होगा। उसे सीखना होगा कि वह इस बातकी **माँग करे** कि पार्टी-मेम्बरके कर्तव्य साधारण सदस्य ही नहीं वरन् 'ऊपरके लोग भी' पूरा करेंगे।" (**संक्षिप्त लेनिन-ग्रंथावली—अं. सं., खंड २, पृ. ४४५-६**)

मेन्शेविकोंसे मतभेदकी छानबीन समाप्त करते हुए लेनिनने कहा था कि "संगठनके मामलेमें वे अवसरवादी" थे। उनके बहुतसे दोषोंमें सबसे घातक दोष यह था कि वे सर्वहारा वर्गके स्वाधीनताके संघर्षमें पार्टी-**संगठन**के महत्वको कम करके आँकते थे। व समझते थे कि क्रांतिकी सफलताके लिये सर्वहारा वर्गकी पार्टीका **संगठन** विशेष महत्व न रखता था। उनके विरुद्ध, लेनिनका कहना था कि सर्वहारा वर्गकी **सैद्धान्तिक** एकता ही सफलताके लिये **यथेष्ट नहीं** है; सफलताके लिये सैद्धान्तिक एकताको सर्वहारा वर्गके "**संगठन**की वास्तविक एकतासे **दृढ़ करना होगा**।" इसी शर्तपर लेनिनके अनुसार, सर्वहारा-शक्ति अजेय हो सकती थी।

लेनिनने लिखा था—

"अधिकार पानेके लिये अपने संघर्षमें सर्वहाराके पास संगठन छोड़ दूसरा अस्त्र नहीं है। पूँजीवादी संसारकी अराजकतावादी स्पर्द्धाके कारण मजदूरोंमें फूट है; पूँजीकी गुलामीमें बेगार करते हुए वे पिस जाते हैं; पतन, असभ्यता और बेकारीके गर्तमें वे बारबार 'नीचे' ढकेले जाते हैं; ऐसी दशामें मजदूर एक अजेय शक्ति तभी बन सकते हैं—और अंतमें अनिवार्य रूपसे वे ऐसी शक्ति बनकर रहेंगे—जब मार्क्सवादसे उत्पन्न उनकी सैद्धान्तिक एकता एक ऐसे संगठनकी वास्तविक एकतासे दृढ़ हो जाय जिसमें लाखों मेहनत-कशोंने भर्ती होकर उसे मजदूरोंकी एक जबरदस्त फ़ौज बना दिया हो। इस फ़ौजका सामना न तो रूसकी बूढ़ी जारशाही कर सकेगी न अन्तरराष्ट्रीय पूँजीका निर्बल शासन ही उसे कुचल सकेगा।" (**उपरोक्त—पृ. ४६६**)

इस महान् भविष्यवाणीके साथ लेनिनने इस पुस्तकको समाप्त किया था।

अपनी प्रसिद्ध पुस्तक—"**एक क़दम आगे तो दो क़दम पीछे**"में लेनिनने संगठनके इन्हीं मूल सिद्धान्तोंका प्रतिपादन किया था।

इस पुस्तकका महत्व मुख्यतः इस बातमें है कि उसमें लेनिनने पार्टी-संगठनके सिद्धान्तका सफलतापूर्वक प्रतिपादन किया और संगठनके विरोधियोंके विपरीत पार्टीका समर्थन किया। उन्होंने यह दिखलाया कि छिट-पुट गुटों और असम्बन्ध गोष्टियोंके स्थानपर मजदूरोंकी एक संगठिक पार्टी होनी चाहिये। इस पुस्तक द्वारा लेनिनने संगठनके प्रश्नोंपर मेन्शेविकोंके अवसरवादका ध्वंस कर दिया और बोल्शेविक पार्टीके संगठनकी नींव डाली।

लेकिन उसका महत्व इतना ही नहीं है। उसका ऐतिहासिक महत्व इस बातमें है कि उसमें लेनिनने मार्क्सवादके इतिहासमें पहली बार इस सिद्धांतकी व्याख्याकी कि **पार्टी** सर्वहारा वर्गका **प्रमुख संगठन** है। वह सर्वहारा वर्गका प्रमुख **शस्त्र** है जिसके बिना सर्वहारा वर्गके एकाधिपत्यकी लड़ाई जीती नहीं जा सकती।

पार्टीके कार्यकर्ताओंमें लेनिनकी पुस्तक (**एक क़दम आगे तो दो क़दम पीछे**) के प्रचारसे अधिकांश स्थानीय संस्थाएँ लेनिनकी समर्थक बन गयीं।

जितनाही ये संस्थाएँ बोल्शेविकोंकी ओर झुकीं, उतना ही मेन्शेविक नेताओंका व्यवहार और भी द्वेष-पूर्ण होता गया।

१९०४ की ग्रीष्म ऋतुमें प्लेखानौफ़की सहायता और क्रासिन और नौस्कौशे नाम के दो पतित बोल्शेविकोंके विश्वासघातके कारण केन्द्रीय समितिमें मेन्शेविकोंने अपना बहुमत बना लिया। यह स्पष्ट था कि मेन्शेविक पार्टीके अन्दर फूट पैदा करनेकी कोशिश कर रहे थे।

केन्द्रीय समिति और **इस्क्रा**के हाथसे निकल जानेसे बोल्शेविकोंकी स्थिति संकट-पूर्ण हो गयी। उनके लिये अपना एक बोल्शेविक पत्र निकालना आवश्यक हो गया। पार्टीकी तीसरी कांग्रेसके लिये भी तैयारी करना आवश्यक था जिससे कि एक नयी केन्द्रीय समिति बनायी जा सके और मेन्शेविकोंसे निपट लिया जाय।

लेनिनके नेतृत्वमें बोल्शेविकोंने यही करना आरंभ किया।

तीसरी पार्टी-कांग्रेस बुलानेके लिये बोल्शेविकोंने आन्दोलन करना आरंभ कर दिया। अगस्त १९०४ में लेनिनकी देखरेखमें स्वीजरलैंडमें २२ बोल्शविकोंकी एक सभा हुई। सभामें "पार्टीके नाम" एक अपील स्वीकृत हुई। यह अपील तीसरी कांग्रेस बुलानेके बोल्शेविक-आन्दोलनका कार्यक्रम बन गयी।

दक्षिण, कॉकेशस और उत्तरमें बोल्शेविक कमिटियोंने तीन प्रादेशिक सभाएँ कीं और बोल्शेविक कमिटियोंका एक कार्यकारी मंडल चुना जिसने तीसरी कांग्रेसके लिये आवश्यक तैयारियाँ करनेका भार उठाया।

४ जनवरी, १९०५ को बोल्शेविक पत्र **व्पेयोंद (आगेबढ़ो)** का पहला अंक निकला।

इस प्रकार पार्टीमें दो विभिन्न दल पैदा हो गये, एक तो बोल्शेविक, दूसरा मेन्शेविक। दोनोंकी अपनी-अपनी केन्द्रीय समितियाँ थीं और अलग-अलग पत्र निकलते थे।

सारांश

१९०१ से ४ तक जैसे-जैसे मजदूरोंका क्रान्तिकारी आन्दोलन बढ़ा वैसे-वैसे रूसके मार्क्सीय सामाजिक-जनवादी संगठन भी बढ़े और पहलेसे मजबूत हुए। "अर्थवादियों" के विरुद्ध कठिन सैद्धान्तिक संग्राममें लेनिनके इस्क्राकी क्रान्तिकारी नीतिकी विजय हुई और "काम करनेके नौसिखिया तरीक़े" और विचारोंकी उलझन दूर कर दी गयीं।

सामाजिक-जनवादियोंके बिखरे हुए दल और गुट **इस्क्रा** द्वारा संयुक्त हुए और दूसरी पार्टी-कांग्रेसके अधिवेशनके लिये मार्ग प्रशस्त हुआ। १९०३ में दूसरी पार्टी-कांग्रेस हुई जिसमें रूसकी सामाजिक-जनवादी पार्टीका निर्माण हुआ, पार्टीका कार्यक्रम और नियमावली स्वीकृत हुई और पार्टीकी प्रमुख केन्द्रीय संस्थाओंका चुनाव हुआ।

दूसरी कांग्रेसमें रूसी सामाजिक-जनवादी पार्टीमें इस्क्रा-नीतिकी पूर्ण विजयके लिये जो संग्राम हुआ, उसमें दो दलोंकी उत्पत्ति हुई—एक तो बोल्शेविक, दूसरा मेन्शेविक।

दूसरी कांग्रेसके बाद बोल्शेविकों और मेन्शेविकोंके मतभेदकी जड़ संगठनका प्रश्न था।

मेन्शेविक "अर्थवादियों"के निकट आते गये, और उन्होंने पार्टीमें उनकी जगह ले ली। कुछ समयके लिये मेन्शेविकोंका अवसरवाद संगठनके प्रश्नोंके रूपमें सामने आता रहा। वे उस तरहकी कर्मठ क्रान्तिकारी पार्टीका विरोध करते थे जिस तरहकी पार्टी लेनिन बनाना चाहते थे। वे एक शिथिल और असंगठित **पिछलगुआ** पार्टी बनाना चाहते थे। पार्टीमें फूट डालनेके काम उन्होंने किये। प्लेखानोफ़की सहायतासे उन्होंने **इस्क्रा** और केन्द्रीय समितिपर अधिकार जमा लिया और इन केन्द्रीय संस्थाओं का प्रयोग अपनी लक्ष्य-सिद्धि अर्थात् पार्टीमें फूट डालनेके लिये किया।

मेन्शेविकोंकी फूटका हामी देखकर बोल्शेविकोंने उनकी रोक थाम करनेके उपाय किये। तीसरी कांग्रेस बुलानेके लिये उन्होंने स्थानीय संस्थाओंमें आन्दोलन किया और **व्पेर्योद** नामका अपना पत्र निकाला।

इस प्रकार जब पहली रूसी क्रान्तिको दो दिन रह गये थे और रूस-जापानकी लड़ाई छिड़ चुकी थी, तब बोल्शेविक और मेन्शेविक लोग दो भिन्न राजनीतिक दलोंके रूपमें कार्य कर रहे थे।

☆

तीसरा अध्याय

रूस-जापान युद्ध और पहली रूसी क्रान्तिके समय बोल्शेविक और मेन्शेविक

(१९०४-१९०७)

१. रूस-जापान युद्ध -- रूसमें क्रान्तिकारी आन्दोलनका उठान--सेंट-पीटर्सबर्गकी हड़तालें--९ जनवरी १९०५ को ज़ारके शिशिर प्रासाद (विंटर पैलेस) के सामने मज़दूरोंके प्रदर्शन--जुलूसपर गोलियोंकी बौछार--क्रान्ति की लपटें।

१९ वीं शताब्दीके अन्तमें साम्राज्यवादी राष्ट्र प्रशान्त महासागरपर अधिकार जमाने और चीनको बाँट-चूँट लेनेके लिये जूझने लगे। ज़ारके रूसने भी इस लड़ाईमें हिस्सा लिया। १९०० में जापानी, जर्मन, ब्रिटिश और फ्रेंच फ़ौजोंकी सहायतासे ज़ारकी सेनाने विदेशी साम्राज्यवादियोंके विरुद्ध चीनी जनताके विद्रोहको अभूतपूर्व बर्बरतासे दबा दिया। इसके पहले भी ज़ारकी सरकारने चीनको आर्थर बंदरगाहके साथ लिआओतुंगका प्रायद्वीप देनेके लिये बाध्य किया था। उत्तरी मंचूरियामें चीनकी पूर्वी रेलवे (चाइनीज़ ईस्टर्न रेलवे) बनायी गयी और उसकी रक्षाके लिये रूसी फ़ौज रखी गयी। ज़ारका पंजा कोरियाकी तरफ़ बढ़ रहा था। रूसका पूँजीवादी वर्ग मंचूरियामें एक "पीला रूस" बनानेकी साज़िश कर रहा था।

सुदूर पूर्वमें ज़ारशाहीके इस प्रसारसे उसकी मुठभेड़ एक दूसरे डाकू जापानसे हो गयी जो बहुत तेज़ीसे एक साम्राज्यवादी राष्ट्र बन बैठा था और एशियाके महाद्वीपमें, विशेष रूपसे चीनमें, अपना राज्य-विस्तार करनेपर तुला हुआ था। ज़ारशाही रूसकी तरह जापान भी मंचूरिया और कोरियाको अपने क़ब्ज़ेमें कर लेना चाहता था। उस समय भी जापान साखालिन और उसके सुदूर पूर्वके भागको हड़प लेनेके स्वप्न देख रहा था। ग्रेट ब्रिटेनको सुदूर पूर्वमें रूसकी बढ़ती हुई शक्तिसे भय था। इस लिये वह गुप्त रूपसे जापानकी सहायता कर रहा था। रूस और जापानमें लड़ाई, अब हो तब हो की बात हो रही थी। ज़मींदार-वर्गके अधिक प्रतिक्रियावादी लोगोंने

तथा उन बड़े पूँजीवादियोंने जो अपने लिये नये बाजार खोज रहे थे, जारकी सरकारको युद्धकी ओर ढकेल दिया।

रूसी सरकारके लड़ाई शुरू करनेकी राह न देख कर जापानने स्वयं ही पहलेसे युद्ध छेड़ दिया। रूसमें जापानी गुप्तचरोंका अच्छा जाल फैला हुआ था; इसलिये जापानको मालूम था कि दुश्मन इस समय लड़ाईके लिये तैयार नहीं है। जनवरी १९०४ में बिना लड़ाईका ऐलान किये ही जापानने अचानक पोर्ट आर्थरके रूसी क़िले पर हमला कर दिया और बन्दरगाहमें पड़े हुए रूसी जहाज़ी बेड़ेको भारी नुक़सान पहुँचाया।

इस तरहसे रूस–जापान युद्ध आरंभ हुआ।

जारशाही सरकारने सोचा था कि लड़ाईसे उसकी राजनीतिक स्थिति दृढ़ हो जायगी और क्रान्ति रुक जायगी। लेकिन उसका ख़याल ग़लत था। जारशाहीकी नीवें लड़ाईसे और भी ज़्यादा हिल गयीं।

रूसी फ़ौज अच्छी तरह हथियारोंसे लैस न थी; उसके सेना-नायक निकम्मे और बेईमान थे। इसलिये वह हार पर हार खाती गयी।

पूँजीवादी सेठ, सरकारी अफ़सर और फ़ौजके जनरल रक़में खा-खाकर लड़ाईसे और मोटे हो गये। सट्टेबाजीका बाजार गर्म था। फ़ौजको सामान न पहुँचता था। जब युद्ध–सामग्रीकी कमी होती थी, तब मानो फ़ौजको चिढ़ानेके लिये उसे गाड़ियों मूर्तियाँ भेज दी जाती थीं। सिपाही मन मसोसकर कहते—"जापानी हमपर गोले बरसाते हैं; हम मूर्तियाँ भेंट करके उनका स्वागत करेंगे।" स्पेशल गाड़ियोंमें घायल सिपाहियोंको ले जानेके बदले जारके सेनापतियोंका लूटका माल लादकर भेजा जाता था।

जापानियोंने पोर्ट आर्थरको घेर लिया और बादमें उसे ले भी लिया। जारकी फ़ौजको कई बार हराकर अंतमें उन्होंने उसे मुक्देनके पास मैदानसे खदेड़ दिया। इस लड़ाईमें जारकी ३,००,००० की फ़ौजमेंसे १,२०,००० सैनिक काम आये, घायल हुए या बन्दी बना लिये गये। इसके बाद सुशीमाके जल-डमरूमध्यमें पोर्ट आर्थरकी सहायताके लिये बाल्टिक समुद्रसे भेजा हुआ जारका जहाज़ी बेड़ा भी नष्ट कर दिया गया। सुशीमाकी पराजय घातक थी; जारके भेजे हुए २० युद्ध-पोतोंमेंसे १३ डुबाये या नष्ट कर दिये गये और ४ बन्दी बना लिये गये। जारशाही रूस निश्चित रूपसे युद्धमें पराजित हो चुका था।

जार–सरकारको जापानसे अपमानजनक सन्धि कर लेनी पड़ी। जापानने कोरिआ पर दखल कर लिया और रूससे पोर्ट आर्थर तथा आधा साखालिनका द्वीप ले लिया।

जनताने युद्ध न चाहा था; उसे मालूम था कि युद्धसे देशको कितना नुक़सान पहुँचेगा। उसे जारशाही रूसके पिछड़े होनेका भारी मूल्य चुकाना पड़ा।

युद्धके बारेमें बोल्शेविकों और मेन्शेविकोंके दो मत थे। मेन्शेविक, जिनमें त्रात्स्की भी था, इस नीतिकी ओर ढुलक रहे थे कि जार, जमींदारों और पूँजीवादियों की "पितृभूमि" की रक्षा की जाय।

इसके विपरीत लेनिनके नेतृत्वमें बोल्शेविकोंका कहना था कि इस दस्यु–संग्राममें जार–सरकारकी पराजय शुभ होगी क्योंकि उससे जारशाही निर्बल होगी और क्रान्तिको बल मिलेगा।

जारकी फ़ौजोंकी हारसे जनताकी आँखें खुल गयीं और जारशाहीके खोखले-पनका उसे पता लग गया। जार–शासनके लिये उसकी घृणा दिन पर दिन बढ़ती गयी। लेनिनके शब्दोंमें पोर्ट आर्थरकी पराजयसे एकतंत्र शासन–सत्ताकी पराजय का श्रीगणेश होता है।

युद्धसे जार क्रान्तिकी रोक–थाम करना चाहता था। हुआ इसका उल्टा ही। रूस–जापान युद्धसे क्रान्तिकी आग और जल्दी भड़क उठी।

जारके रूसमें पूँजीवादी शासनके अंकुशपर जारशाहीका बोझ रखा था। मजदूरोंको पूँजीवादी शोषणमें दम–तोड़ मेहनत ही न करनी पड़ती थी वरन् संपूर्ण जनताके साथ वे सभी प्रकारके अधिकारोंसे भी वंचित थे। इसीलिये राजनीतिक रूपसे सचेत मजदूरोंने गांव और शहरके सभी जनवादी लोगोंके क्रान्तिकारी आन्दोलनको जारके विरुद्ध आगे बढ़ानेका प्रयत्न किया। किसानोंके पास जमीनकी कमी थी; दास-प्रथा अब भी तरह–तरहसे भेस बदलकर उनमें चली जा रही थी। वे जमींदारों और धनी किसानोंके गुलाम–से बनकर रहते थे। इसलिये जारशाहीमें रूसके किसान तबाह थे। और जारशाही रूसमें रहनेवाली अन्य जातियाँ दो अंकुशोंके नीचे छटपटा रही थीं—एक तो अपने ही पूँजीवादियों और जमींदारोंका अंकुश था और दूसरा रूसी पूँजीवादियों और जमींदारोंका। १९००–०३ के अर्थ–संकटसे जाँगर चलानेवाली कोटि–कोटि जनताके जो कष्ट बहुत बढ़ गये थे, वे युद्धसे और भी असहनीय बन गये। जारके प्रति जनताकी तीव्र घृणामें युद्धकी पराजयने घीका काम किया। लोग अब धीरज खो रहे थे।

इस तरहसे, जैसा कि हम देख सकते हैं, क्रान्तिके लिये यथेष्ट कारण थे। दिसंबर १९०४ में बाकूकी बोल्शेविक कमिटीके नेतृत्वमें वहाँके मजदूरोंकी एक भारी सुसंगठित हड़ताल हुई। हड़तालमें तेलके मजदूरोंकी विजय हुई और रूसी मजदूर–आन्दोलनके इतिहासमें पहली बार मजदूरों और मालिकोंमें यहाँ एक सामूहिक समझौता हुआ।

बाकू–हड़तालसे कॉकेशस प्रदेश और रूसके अन्य भागोंमें क्रान्तिकी लहर दौड़ गयी।

> "बाकू हड़ताल एक संकेत थी जिससे जनवरी और फरवरीमें सारे रूसमें शानदार हड़तालें आरंभ हो गयीं।"—(स्तालिन)

बाकूकी यह हड़ताल क्रान्तिके झंझावातका अग्रिम वज्रघोष थी।

९ जनवरी (नयी शैलीसे २२ जनवरी) १९०५ को सेंट–पीटर्सबर्गमें क्रान्तिके बादल बरस पड़े।

३ जनवरी १९०५ को सेंट-पीटर्सबर्गकी सबसे बड़ी मिल पुतिलोफ़ (अब किरोफ़) के

कारखानेमें हड़ताल शुरू हो गयी। चार मजदूरोंको निकाल देनेसे हड़ताल शुरू हुई थी, लेकिन वह बहुत तेजीसे सब तरफ फैल गयी और उसमें सेंट-पीटर्सबर्गकी दूसरी मिलों और कारखानोंके मजदूर भी शामिल हो गये। अब यह एक आम हड़ताल बन गयी। आन्दोलन बढ़ता गया। जार-सरकारने उसे आरंभ कालमें ही दबा देनेका निश्चय किया।

पुतिलोफ़ कारखानेकी हड़तालके पहले १९०४ में पुलिसने अपने एक गुप्तचर, पादरी गैपनसे मजदूरोंकी एक सभा बनवा ली थी जिसका नाम रखा गया था "रूसके मिल-मजदूरोंकी सभा"। इस सभाकी शाखाएँ सेंट-पीटर्सबर्गके सभी जिलोंमें थीं। हड़ताल शुरू हो जानेपर पादरी गैपनने अपनी सभाके आगे एक विश्वासघाती योजना रखी। सब मजदूर ९ जनवरीको इकट्ठा हों और जारकी तस्वीरें और धार्मिक झंडे लेकर शांतिपूर्ण जुलूस बनाकर जारके शिशिर-प्रासादके सामने पहुँचें और वहाँ अपनी माँगोंका चिट्ठा पेश करें। जार प्रजाके सामने निकलकर उनकी बातें सुनेगा और उनकी माँगें पूरी करेगा। गैपनने जारकी खुफिया पुलिस **ओखराना**को यह अवसर देनेका भार उठाया कि मजदूरोंपर गोली चलायी जा सके और मजदूर-आन्दोलन मजदूरोंके ही खूनमें डुबो दिया जाय। लेकिन पुलिसके षड्यंत्रका यह घड़ा जार-सरकारके सिरपर ही फूटा।

मजदूरोंकी सभाओंमें माँगोंका यह चिट्ठा पढ़ा गया जहाँ संशोधन पेश किये गये। इन सभाओंमें बिना अपनेको जाहिर किये बोल्शेविक भी बोले। उनके प्रभावसे चिट्ठेमें ये माँगें भी जोड़ दी गयीं कि प्रेस और भाषणकी स्वाधीनता हो; मजदूरोंको सभाएँ करनेका अधिकार हो; रूसकी राजनीतिक व्यवस्थाको बदलनेके लिये एक सार्वजनिक विधान-सभा बुलायी जाय; क़ानून सबको बराबर समझे; धार्मिक संस्थाओं (चर्च) और शासन-सत्ताको अलग कर दिया जाय; युद्ध बंद किया जाय; मजदूरोंके कामके घंटे प्रति दिन ८ से ज्यादा न हों और जमीन किसानोंको दी जाय।

इन सभाओंमें बोल्शेविकोंने मजदूरोंको समझाया कि जारके पास अर्जियाँ भेजने से आजादी नहीं मिल सकती; आजादी मिलेगी सशस्त्र विद्रोहसे। बोल्शेविकोंने मजदूरोंको चेतावनी दी कि उनपर गोली चलायी जायगी परंतु वे जुलूसको शिशिर-प्रासादकी ओर जानेसे न रोक सके। मजदूरोंके एक बहुत बड़े हिस्सेको अब भी विश्वास था कि जार उनकी सहायता करेगा। साधारण मजदूर इस आन्दोलनसे बहुत ज्यादा प्रभावित हो चुके थे।

सेंट-पीटर्सबर्गके मजदूरोंके चिट्ठेमें लिखा था:—

"हम सेंट-पीटर्सबर्गके मजदूर, हमारी बीवियाँ, बच्चे और हमारे बेबस माता-पिता, आपके पास, अपने सम्राटके पास, आसरा खोजने और न्यायकी माँग करनेके लिये आये हैं। हम लोग ग़रीबीकी चक्कीमें पिस रहे हैं, दमतोड़ मेहनत करते हैं, और जुल्म सहते हैं; दर-दर हमारी बेइज्जती होती है और हमारे साथ

इंसानका-सा बर्ताव नहीं किया जाता। ... हम लोग धीरजसे सब कुछ सहत आये हैं लेकिन दिन पर दिन हमारी हालत बदतर होती जाती है। हमारे कोई हक़ नहीं हैं; निर्धनता और अज्ञानके गढ़ेमें हम और गहरे गिरते चले जा रहे हैं। जुल्म और तानाशाही हमारा गला घोंट रहे हैं। .. हमारे धीरजका अन्त हो चुका है। जिसकी हमें शंका थी, अब वही समय आ पहुँचा है जब हम यह सब जुल्म और ज्यादती सहनेसे मर जाना ज़्यादा पसंद करेंगे। ... "

९ जनवरी १९०५ को सवेरे मज़दूर ज़ारके शिशिर-प्रासादकी ओर चल दिये जहाँ वह उन दिनों रहता था। वे बीबी-बच्चों और बूढ़ोंके साथ पूरे कुटुंब लेकर आये। ज़ारकी तस्वीरोंके साथ वे धार्मिक झंडे लिये थे और चलते समय धार्मिक गीत गा रहे थे। हथियार किसीके पास न थे। इस तरहसे १,४०,००० से ऊपर आदमी सड़कोंपर इकट्ठा हुए थे।

ज़ार निकोलस द्वितीय दुश्मनकी तरह उनसे पेश आया। निहत्थे मज़दूरोंपर उसने फ़ौजको गोली चलानेका हुक्म दे दिया। उस दिन एक हज़ारसे ऊपर मज़दूर मारे गये और दो हज़ारसे ऊपर घायल हुए। सेंट-पीटर्सबर्गकी सड़कें मज़दूरोंके खूनसे लाल हो गयीं।

बोल्शेविक मज़दूरोंके साथ गये थे। उनमें बहुतसे मारे गये या पकड़ लिये गये। मज़दूरोंके खूनमें डूबी हुई सड़कोंपर बोल्शेविकोंने बाक़ी मज़दूरोंको समझाया कि यह खून किसके सिरपर है और उससे कैसे लड़ना चाहिये।

९ जनवरीका नाम "खूनी इतवार" पड़ गया। उस दिन मज़दूरोंको एक खूनी सबक सिखाया गया। उस दिन ज़ारमें उनके अगाध विश्वासपर ही गोलियोंकी बौछार हुई। उन्होंने इस बातका अनुभव किया बिना लड़ाईके वे अपने हक़ नहीं पा सकते। उसी दिन शामको मज़दूर बस्तियों मोर्चेबन्दी होने लगी थी। मज़दूर कहते थे,- "ज़ारको जो देना था उसने दे दिया है; अब हमारी बारी है!"

ज़ारके खूनी ज़ुल्मका रोमाञ्चकारी समाचार दूर-दूर तक फैल गया। सारा देश क्रोध और घृणासे सिहर उठा। सभी शहरोंमें मज़दूरोंने हड़ताल की और राजनीतिक माँगें पेश कीं। अब मज़दूर सड़कोंपर नारा लगाने लगे-"तानाशाहीका नाश हो!" जनवरीमें हड़तालियोंकी संख्या बढ़ते-बढ़ते चार लाख चालीस हज़ार तक पहुँच गयी। जितने मज़दूरोंने पिछले दस सालमें हड़ताल न की थी, उतने एक महीनेमें कारख़ाने छोड़कर बाहर निकल आये। मज़दूर-आन्दोलन पिछली सभी सीमाएँ तोड़कर बहुत आगे निकल गया।

रूसमें क्रान्तिका आरंभ हो गया।

२. मज़दूरोंकी राजनीतिक हड़तालें और जुलूस—किसानोंमें क्रान्तिकारी आन्दोलनका उठान—(पोतेम्किन) नामक युद्ध-पोतपर विद्रोह।

९ जनवरीके बाद मजदूरोंके क्रान्तिकारी संघर्षने और उग्र रूप धारण किया और उसपर राजनीतिका रंग चढ़ने लगा। अपनी आर्थिक माँगों या दूसरे मजदूरोंसे सहानुभूति दिखानेके लिये ही हड़तालें न करके मजदूर अब राजनीतिक हड़तालें करने लगे और जुलूस निकालने लगे। कहीं-कहींपर जारकी फौजका वे हथियारबन्द होकर मुक़ाबला भी करने लगे। सेंट-पीटर्सबर्ग, मॉस्को, वार्सा, रीगा और बाकू जैसे बड़े-बड़े शहरोंमें विशेष रूपसे सुसंगठित और दृढ़ हड़तालें हुई। इस सर्वहारा-पल्टनके आगे-आगे धातुके कारखानोंमें काम करनेवाले मजदूर थे। मजदूर-वर्गके इस अग्रदलने अपनी हड़तालोंसे कम सचेत मजदूरोंमें स्फूर्ति भर दी और सारे मजदूर-वर्गको संघर्षमें भाग लेनेके लिये प्रेरित किया। सामाजिक-जनवादियोंका प्रभाव बड़ी शीघ्रतासे चारों ओर फैलने लगा।

मई-दिवस मनाते समय कई शहरोंमें मजदूरों और पुलिस तथा जारकी फ़ौजमें मुठभेड़ हुई। वार्सामें मजदूरोंके जुलूसपर गोलियाँ चलायी गयीं और कई सौ मजदूर मारे गये या घायल हुए। पोलैंडके सामाजिक-जनवादियोंके आह्वानपर मजदूरोंने इस गोली-कांडका जवाब एक आम हड़तालसे दिया। मई भर हड़तालों और जुलूसोंका दौरदौरा रहा। संपूर्ण रूसमें कुल मिलाकर दो लाख मजदूरोंने उस महीनेमें हड़तालकी। बाकू, लोत्स, और ईवानोवो-वोत्स्नेसेंस्क में आम हड़तालें हुईं। जुलूस और हड़तालोंमें हिस्सा लेने वाले मजदूर जारकी फ़ौजसे अब अधिकाधिक भिड़ने लगे। ओदेसा, वार्सा, रीगा, लोत्स और दूसरे शहरोंमें इस तरह की मुठभेड़ें हुई।

पोलैंडके विशाल औद्योगिक केन्द्र लोत्समें लड़ाईने और भी जोर पकड़ा था। शहरकी सड़कोंपर मजदूरोंने बीसों जगह मोर्चाबन्दी की थी। २२ जून से २४ जून (१९०५) तक तीन दिन मजदूर जारकी फ़ौजका मुक़ाबला करते रहे। यहाँ हड़तालने सशस्त्र विद्रोहका रूप धारण कर लिया था। लेनिनका कहना था कि रूसमें मजदूरोंका यह पहला सशस्त्र विद्रोह था।

उस समयकी मुख्य हड़ताल ईवानोवो-वोत्स्नेसेंस्कके मजदूरोंकी थी। मईके अन्त से अगस्त १९०५ के आरंभ तक यह हड़ताल लगभग ढाई महीने तक जारी रही। लगभग ७०,००० मजदूरोंने, जिनमें बहुत-सी स्त्रियाँ भी थीं, इस हड़तालमें भाग लिया। हड़ताल बोल्शेविकोंकी उत्तरी समितिकी देखरेखमें हुई थी। ताल्का नदीके किनारे प्रायः प्रतिदिन हजारों मजदूर इकठ्ठा होते थे। इन सभाओंमें वे अपनी

आवश्यकताओं पर विचार करते थे। बोल्शेविक इन सभाओंमें बोलते थे। हड़तालको दबा देनेके लिये अधिकारियोंने फ़ौजको आज्ञा दी कि वह गोली चलाये और मज़दूरोंको तितर-बितर कर दे। बहुत-से मजदूर मारे गये और कई सौ घायल हुए। शहरमें विशेष क़ानून जारी कर दिये गये। लेकिन मज़दूर डटे रहे और कामपर आनेसे उन्होंने इनकार किया। वे और उनके कुटुंब भूखों मरने लगे लेकिन हार माननेका वे नाम न लेते थे। अन्तमें बिल्कुल बेबसीकी हालतमें उन्हें मजबूर होकर कामपर लौटना पड़ा। हड़तालसे मज़दूरोंमें दृढ़ता आयी। मज़दूरोंके साहस और धैर्य, उनकी वीरता और एकताका निदर्शन इस हड़तालमें मिला। ईवानोवो-वोत्स्नेजेंस्कके मज़दूरोंको उससे वास्तविक राजनीतिक शिक्षा मिली।

हड़तालमें ईवानोवो-वोत्स्नेजेंस्कके मज़दूरोंने अपने प्रतिनिधियोंकी एक समिति बनायी जो असलमें मज़दूरोंके प्रतिनिधियोंका पहला सोवियत था जो रूसमें बना था।

मज़दूरोंकी राजनीतिक हड़तालोंसे सारा देश आन्दोलित हो उठा।

शहरोंके बाद गाँवोंमें भी आन्दोलन फैलने लगा। वसंतऋतुमें किसानोंमें हलचल शुरू हुई। झुंडके झुंड किसान जमींदारोंके विरुद्ध उठ खड़े हुए। वे उनकी रियासत पर हमला करते, शक्कर और शराबके कारखानोंपर धावा बोल देते और उनके महलों और बंगलोंमें आग लगा देते। कई जगह उन्होंने ज़मीन छीन ली और जंगलके जंगल काट डाले और यह माँग पेश की कि ज़मीदारोंकी रियासतें जनताके हवाले करदी जायँ। ज़मींदारोंकी नाज और दूसरे सामानकी कोठियोंपर क़ब्ज़ा जमाकर उन्होंने भूखोंमें वह सामान बाँट दिया। ज़मींदार दहशतमें शहरोंकी ओर भागे। ज़ार-सरकारने किसानों को दबानेके लिये अपने हथियारबन्द सिपाही और कज़्ज़ाक भेजे। सिपाहियोंने किसानों पर गोली चलायी; उनके "नेताओं" को पकड़कर उन्हें पीटा और दूसरी तरहसे उन्हें यंत्रणा दी। लेकिन किसानोंने अपनी लड़ाई बन्द नहीं की।

किसान-आन्दोलन मध्य रूस, वोल्गा प्रदेश और कॉकेशसके इलाक़ोंमें, विशेष कर जॉर्जियामें फैलता ही गया।

सामाजिक-जनवादी दूर-दूरके गाँवों तकमें पहुँच गये। केन्द्रीय समितिने किसानोंके नाम अपील निकाली—"किसान-भाइयो, हमारी बात सुनो।" त्वेर, सारोतोफ़, पोल्तावा, चेर्नीगोफ़, एकातेरीनोस्लाफ़, तिफ़्लिस और दूसरे सूबोंकी सामाजिक-जनवादी कमिटियोंने किसानोंके नाम अपीलें निकालीं। सामाजिक-जनवादी गाँवोंमें सभाएँ करते, किसानोंमें गुट बनाते और किसान-कमिटियाँ स्थापित करते। १९०५ की ग्रीष्म ऋतुमें सामाजिक-जनवादियों द्वारा संगठित खेतिहर मज़दूरोंकी कई जगह हड़तालें हुईं।

लेकिन यह तो किसान-आन्दोलनका अभी श्रीगणेश मात्र था। इस आन्दोलन का क्षेत्र केवल ८५ ज़िले (उयेज़्द) या ज़ारशाही रूसके योरपीय प्रदेशोंके लगभग १/७ भागमें सीमित था।

किसान-मजदूरोंके आन्दोलन और रूस-जापान युद्धमें रूसी फ़ौजोंकी हारका प्रभाव सैनिकोंपर भी पड़ा। जारशाहीकी यह महान् आधार-शिला भी डगमगाने लगी।

जून १९०५ में काले समुद्रके जहाजी बेड़ेके एक युद्ध-पोत **पोतेम्किन**पर विद्रोह हुआ। उस समय यह जहाज ओदेसाके पास था जहाँ मजदूरोंकी एक आम हड़ताल जारी थी। विद्रोही मल्लाहोंने चुने हुए अफ़सरोंसे बदला लिया और वे जहाजको ओदेसा ले आये। **पोतेम्किन** क्रान्तिकी ओर आ गया था।

लेनिनने इस विद्रोहको बहुत महत्वपूर्ण माना। उन्होंने यह आवश्यक समझा कि बोल्शेविक इस आन्दोलनका नेतृत्व करें और उसे किसानों, मजदूरों और स्थानीय सैनिक दस्तोंके आन्दोलनसे मिला दें।

पोतेम्किनके विरुद्ध जारने कई लड़ाईके जहाज भेजे, लेकिन इन जहाजोंके मल्लाहोंने अपने विद्रोही साथियोंपर गोली चलानेसे इनकार कर दिया। कई दिन तक **पोतेम्किन**के मस्तूलपर क्रान्तिका लाल झंडा लहराता रहा। लेकिन उस समय, १९०५ में, १९१७ की भांति क्रांन्तिका नेतृत्व अकेली बोल्शेविक पार्टीके ही हाथमें न था। **पोतेम्किन**में बहुतसे मेन्शेविक, सामाजिक-क्रान्तिकारी और अराजकतावादी भी थे। इसलिये यद्यपि इस विद्रोहमें इक्का-दुक्का सामाजिक-जनवादियोंने हिस्सा लिया, फिर भी उसमें योग्य और यथेष्ट रूपसे अनुभवी नेतृत्वकी कमी थी। मौक़ा पड़नेपर बहुतसे मल्लाह डाँवाडोल भी हो जाते थे। काले समुद्रके बेड़ेके दूसरे जहाज विद्रोहसे अलग रहे। कोयला और सामानकी कमीसे क्रान्तिकारी युद्ध-पोतको रूमानियन समुद्र तटसे लगकर अधिकारियोंके हाथ आत्म-समर्पण करना पड़ा।

"**पोतेम्किन**" के मल्लाहोंका विद्रोह असफल रहा। जो मल्लाह बादमें जार सरकारके हाथ आ गये, उनपर मुक़दमा चला और कुछको प्राणदंड मिला तथा दूसरोंको काला पानी और कठिन परिश्रमकी सजाएँ मिलीं। लेकिन उस विद्रोहका होना ही अत्यंत महत्वपूर्ण था। **पोतेम्किन**का विद्रोह स्थल और जल सेनामें सामूहिक क्रांतिकारी युद्धका पहला निदर्शन था। यह पहला अवसर था जब कि जारकी सेनाके एक बड़े टुकड़ेने क्रान्तिका पक्ष लिया था। इस विद्रोहसे किसान और मजदूर, विशेषकर खुद सिपाही और मल्लाह इस बातको समझ सके और उसे अपने दिलमें बिठा सके कि स्थल और जल-सेना मजदूर-वर्ग और जनताका साथ दे सकती है।

मजदूरोंके राजनीतिक हड़तालों और जुलूसोंका रास्ता पकड़नेसे, किसानोंमें आन्दोलनकी बढ़तीसे, जनता और पुलिस तथा फ़ौजकी सशस्त्र मुठभेड़से और अंतमें काले समुद्रके बेड़ेमें विद्रोहसे यह सिद्ध हो रहा था कि जनताके सशस्त्र विद्रोहका उपयुक्त समय निकट आ रहा है। इससे उदार-पंथी पूँजीवादियोंमें भी कुछ सरगर्मी पैदा हुई। क्रान्तिसे डरकर और साथही जारको क्रान्तिसे डराकर वे क्रान्तिके विरुद्ध जारसे अपना सौदा ठीक करनेकी सोचने लगे। उन्होंने "जनताके लिये" मामूली सुधारों की माँग की जिससे जनता "शान्त" हो जाय, क्रान्तिकी शक्तियोंमें फूट पड़ जाय,

और इस तरहसे "क्रान्तिके हाहाकार" से देशकी रक्षा हो सके। उदार पंथी जमींदार कहने लगे-"कल सिर देनेसे आज कुछ जमीन दे देना ही अच्छा है।" उदार पंथी पूँजीवादी जारकी शासन-सत्तामें आधा-साझा करनेकी सोच रहे थे। मजदूरों और उदार पंथी पूँजीवादियोंकी नीतिकी विवेचना करते हुए लेनिनने लिखा था,—"मजदूर लड़ रहे हैं; और पूँजीवादी अधिकार पानेकी घातमें हैं।"

जार-सरकार पाशविक बर्बरतासे किसान-मजदूरोंका दमन करती रही। लेकिन उसे यह भी साफ़ दीख रहा था कि केवल दमनके सहारे वह क्रान्तिसे पार नहीं पा सकती। इसलिये दमन बंद किये बिना उसने कूटनीतिका भी आश्रय लिया। एक ओर अपने गुप्तचरोंकी सहायतासे उसने रूसकी अल्पसंख्यक जातियोंको एक दूसरेके विरुद्ध उभारा; यहूदियोंका नरमेध हुआ और तातार और आर्मीनियन आपसमें कट मरे। दूसरी ओर उसने **ज़ेम्स्की सोबोर** या राज्य परिषद् (स्टेट दूमा) के रूपमें एक "प्रतिनिधि संस्था" बुलानेका वचन दिया और मंत्री बुलीगिनको इस तरहकी दूमाके लिये एक योजना तैयार करनेकी आज्ञा दी। ये सब दाँव-पेंच क्रान्तिकारी शक्तियोंमें फूट डालने और नरम विचारोंकी जनताको उनसे अलग करनेके लिये थे।

सार्वजनिक प्रतिनिधित्वके इस ढोंगकी जड़ काटनेके लिये बोल्शेविकोंने बुलीगिनकी दूमाके बायकाटका ऐलान किया।

इसके विपरीत मेन्शेविकोंने दूमाकी जड़ काटना अनुचित ठहराया और उसमें भाग लेना आवश्यक समझा।

३. बोल्शेविकों और मेन्शेविकोंकी विभिन्न कार्यनीति—तीसरी पार्टी-कांग्रेस—लेनिनकी पुस्तिका, "जनवादी क्रान्तिमें सामाजिक-जनवादकी दो कार्यनीतियाँ"-मार्क्सवादी पार्टीकी कार्यनीतिके आधार।

क्रान्तिसे समाजके सभी वर्गोंमें चहल-पहल पैदा हो गयी थी। देशके राजनीतिक जीवनने क्रान्तिके कारण जो पल्टा खाया था, उससे उनके पुराने आसन डोल उठे थे। नयी परिस्थितिके अनुकूल उन्हें नयी तरहसे संगठित होनेके लिये बाध्य होना पड़ा। हर वर्ग और हर पार्टीने अपनी कार्यनीति, अपना कार्यक्रम और दूसरे वर्गों तथा सरकारके प्रति अपना रवैया निश्चित करनेका प्रयत्न किया। यहाँ तक कि जार-सरकारको भी नये और बे-पहचाने दाँव-पेंचोंका सहारा लेना पड़ा जिसके उदाहरण स्वरूप उसने बुलीगिन-दूमा नामकी "प्रतिनिधि-संस्था" बुलानेका वचन दिया।

सामाजिक-जनवादियोंको भी अपनी कार्यनीति निर्धारित करनी थी। क्रान्तिके उभारने यह अनिवार्य कर दिया था। सर्वहारा वर्गके सामने नित नये प्रश्न आते थे : जैसे सशस्त्र विद्रोहका संगठन, ज़ार-सरकारका ध्वंस, अस्थायी क्रांतिकारी सरकारका निर्माण, इस सरकारमें सामाजिक-जनवादियोंका भाग, किसानों और उदारपंथी पूंजीवादियों के प्रति उनका रुख, इत्यादि। ये क्रियात्मक प्रश्न ऐसे थे जो तुरंत ही अपना निदान चाहते थे। सामाजिक-जनवादियोंको अपने लिये खूब सोच विचारकर एक मार्क्सवादी कार्यनीति बनानी थी।

लेकिन मेन्शेविकोंके अवसरवाद और उनकी विग्रह-नीतिके कारण रूसकी सामाजिक-जनवादी पार्टी उस समय दो दलोंमें बँटी हुई थी। यह दल-भेद अभी पूरा न हो पाया था; **नियमानुसार** ये दो दल अभी दो पार्टी न बने थे। परंतु वास्तवमें वे बहुत कुछ दो जुदा पार्टियोंसे मिलते-जुलते थे। क्योंकि दोनोंकी केन्द्रीय समिति और मुख-पत्र अलग-अलग थे।

जिस बातसे दोनोंके बीचकी खाई और गहरी होती गयी, वह यह थी कि **संगठन-सम्बंधी** प्रश्नोंपर बहुमतवाले दलसे अपने पुराने मतभेदके साथ मेन्शेविकोंने **कार्यनीति-सम्बंधी** प्रश्नों पर उनसे नये मतभेद खड़े कर दिये।

संयुक्त पार्टी न होनेसे एकरस कार्य-नीति न बन सकी।

इस दिक़्क़तका सामना करनेकी एक सूरत यह हो सकती थी कि तुरंत ही एक दूसरी कांग्रेस बुलायी जाती जो सामान्य कार्यनीति निश्चित करती और अल्प-मतको इसके लिये बाध्य करती कि वह कांग्रेसके, बहुमतके निर्णयोंका ईमानदारीसे पालन करे। बोल्शेविकोंने मेन्शेविकोंके सामने यही बात रखी। लेकिन मेन्शेविक तीसरी कांग्रेसकी बात सुननेके लिये तैयार न थे। पार्टीकी निश्चित की हुई और सभी पार्टी-मेंबरों पर लागू होनेवाली कार्यनीतिके बिना पार्टीको और देर तक छोड़ना भयंकर अपराध समझकर बोल्शेविकोंने खुद ही पहलक़दमी करके तीसरी कांग्रेस बुलानेका निश्चय किया।

बोल्शेविक और मेन्शेविक, पार्टीकी दोनों प्रकारकी सभी संस्थाएँ कांग्रेसमें निमंत्रित की गयीं। लेकिन मेन्शेविकोंने तीसरी पार्टी-काँग्रेसमें भाग लेनेसे इनकार किया और अपनी एक अलग कांग्रेस करनेका विचार किया। उनकी काँग्रेसमें प्रतिनिधियोंकी संख्या कम रही, इसलिये उन्होंने उसे कान्फ्रेंसका नाम दिया। परंतु वास्तवमें वह एक कांग्रेस थी—मेन्शेविकोंकी पार्टी-कांग्रेस, जिसके निर्णय सभी मेन्शेविकोंके लिये मान्य थे।

रूसी सामाजिक-जनवादी पार्टीकी तीसरी कांग्रेस अप्रैल १९०५ में लंदनमें हुई। इसमें २० बोल्शेविक कमिटियोंका प्रतिनिधित्व करनेवाले २४ डेलीगेट (प्रतिनिधि) सम्मिलित हुए। पार्टीकी सभी बड़ी संस्थाओंके प्रतिनिधि इसमें आये थे।

काँग्रेसने मेन्शेविकोंको "पार्टी छोड़कर जानेवाला गुट" कह कर उनकी भर्त्सना-

की और फिर पार्टीकी कार्यनीति निश्चत करनेका जरूरी काम हाथमें लिया।

इसी समय जेनीवामें मेन्शेविकोंने भी अपनी कान्फ्रेंस की।

"दो कांग्रेसें, दो पार्टियाँ"—इस तरहसे लेनिनने परिस्थितिका वर्णन किया।

कान्फ्रेंस और कांग्रेसने वस्तुतः कार्यनीतिके एक हीसे प्रश्नोंपर विचार किया, लेकिन दोनोंके निर्णय एकदम अलग-अलग थे। उन दोनोंके अलग-अलग प्रस्तावोंसे कांग्रेस और कान्फ्रेंसका बोल्शेविक और मेन्शेविक दलोंका कार्यनीति-सम्बन्धी भारी मतभेद स्पष्ट हो गया।

यह मतभेद मुख्यतः इन बातोंपर था।

तीसरी पार्टी-कांग्रेसकी कार्यनीति—कांग्रेसका विचार था कि जो क्रान्ति हो रही है वह पूँजीवादी-जनवादी है और पूँजीवादी व्यवस्थाकी संभावनाओंके बाहर निकलना उसके लिये इस समय संभव नहीं है; फिर भी इस क्रान्तिकी सफलतामें सबसे ज्यादा दिलचस्पी मजदूरोंको है क्योंकि उसकी सफलतासे मजदूरोंको संगठित होनेका, राजनीतिक दृष्टिसे विकसित होनेका और मेहनतकश जनताका राजनीतिक नेतृत्व करनेकी योग्यता और अनुभव प्राप्त करनेका अवसर मिलता है। इस अवसरसे लाभ उठाकर सर्वहारा वर्ग पूँजीवादी क्रान्तिसे समाजवादी क्रान्तिकी ओर बढ़ सकता है।

पूँजीवादी-जनवादी क्रान्तिकी पूर्ण सफलताके लिये सर्वहारा वर्गकी निश्चितकी हुई कार्यनीतिमें केवल किसानोंसे सहायता मिल सकती है; क्योंकि क्रान्तिकी पूर्ण सफलताके बिना न तो किसानोंको भूमि मिल सकती है और न जमींदारोंसे वे पूरी तरह निवट ही सकते हैं। इसलिये किसान सर्वहारा वर्गके स्वाभाविक सहायक हैं।

उदारपंथी पूँजीवादी क्रान्तिकी पूर्ण सफलता नहीं चाहते, क्योंकि उन्हें सबसे ज्यादा डर किसान-मजदूरोंसे है। जार-सरकार इनपर नियंत्रण रखनेके लिये एक अंकुशकी तरह है, इसलिये वे इस बातकी जरूर कोशिश करेंगे कि जार-सरकार बनी रहे; केवल उसके अधिकार कुछ सीमित हो जायँ। इसलिये वैधानिक राजतंत्रके आधारपर वे जारसे समझौता करके बखेड़ेका अन्त कर देनेकी सोचेंगे।

क्रान्ति तभी सफल होगी जब उसका नेतृत्व सर्वहारावर्गके हाथमें हो; सर्वहारा-वर्ग क्रान्तिके नेताकी हैसियतसे किसानोंकी सहायता प्राप्त करे; उदारपंथी पूँजीवादियोंको जनतासे अलग कर दिया जाय और जारशाहीके विरुद्ध जनताके विद्रोहके संगठनमें सामाजिक-जनवादी पार्टी क्रियात्मक भाग ले; सफल विद्रोहके परिणाम-स्वरूप एक अस्थायी क्रान्तिकारी सरकार बनायी जाय, जो क्रान्ति-विरोधी शक्तियोंको समूल नष्ट करके समग्र जनताका प्रतिनिधित्व करनेवाली एक विधान-सभा बुला सके; और क्रान्तिको चरम लक्ष्य तक पहुँचानेके लिये अस्थायी क्रान्तिकारी सरकारमें भाग लेनेसे—परिस्थिति अनुकूल होनेपर—समाजवादी-जनवादी पार्टी इनकार न करे। इन शर्तोंके पूरा होनेपर ही क्रान्ति सफल हो सकेगी।

मेन्शेविक कान्फ्रेंसकी कार्यनीति—यह क्रान्ति एक पूँजीवादी क्रान्ति है, इसलिये केवल उदारपंथी पूँजीवादी उसका नेतृत्व कर सकते हैं। सर्वहारा वर्गको किसानोंके बदले इन्हीं पूँजीवादियोंसे निकट संपर्क बढ़ाना चाहिये। खास बात यह है कि क्रान्तिकारी जोश दिखाकर इन पूँजीवादियोंको डरा न देना चाहिये; क्रान्ति से हाथ खींच लेनेका उन्हें बहाना न मिलने देना चाहिये; क्योंकि उनके हाथ खींच लेनेसे क्रान्ति निर्बल हो जायगी।

यह संभव है कि विद्रोह सफल हो जाय, परंतु विद्रोहकी सफलताके बाद सामाजिक-जनवादी पार्टीको अलग हट जाना चाहिये जिससे कि उदारपंथी पूँजीवादी ख़ौफ़ न खायें। यह भी संभव है कि विद्रोहके परिणाम-स्वरूप एक अस्थायी क्रान्तिकारी सरकार बनायी जाय, लेकिन किसी भी परिस्थितिमें सामाजिक-जनवादी पार्टीको उसमें भाग न लेना चाहिये क्योंकि यह सरकार समाजवादी न होगी, और सबसे बड़ी बात यह है कि ऐसी सरकारमें भाग लेकर सामाजिक-जनवादी पार्टी अपने क्रान्तिकारी जोशसे उदारपंथी पूँजीवादियोंको डरा सकती है और इस तरह क्रान्तिको निर्बल बना सकती है।

क्रान्तिके हितोंको दृष्टिमें रखते हुए यह ज्यादा अच्छा होगा कि **ज़ेम्स्की सोबोर** या राज्य परिषद (स्टेट-दूमा) के ढंगकी कोई प्रतिनिधि-सभा बुलायी जाय जिस पर बाहरसे मजदूरोंका दबाव डाला जाय। इस दबावसे या तो वह परिषद स्वयं विधान-सभामें परिवर्तित हो जायगी या ऐसी विधान-सभा बुलानेके लिये बाध्य होगी।

सर्वहारा वर्गके अपने विशिष्ट और मजदूरीसे संबंध रखने वाले हित हैं, और क्रान्तिका नेता बननेके बदले उसे इन्हीं हितोंकी चिन्ता करनी चाहिये। पूँजीवादी क्रान्ति एक आम राजनीतिक इनक़लाब है; इसलिये उसका सम्बन्ध अकेले सर्वहारा वर्गसे ही नहीं सभी वर्गोंसे है।

संक्षेपमें रूसकी सामाजिक-जनवादी मजदूर पार्टीके दो दलोंकी ये दो कार्य-नीतियाँ थीं।

"जनवादी क्रांतिमें सामाजिक-जनवाद की दो कार्य-नीतियाँ" नामक अपनी ऐतिहासिक पुस्तकमें लेनिनने मेन्शेविकोंकी कार्यनीतिकी अद्वितीय आलोचना की है और बोल्शेविकोंकी कार्यनीतिका चमत्कार-पूर्ण समर्थन किया है।

तीसरी पार्टी-कांग्रेसके दो महीने बाद जुलाई १९०५ में यह पुस्तक प्रकाशित हुई थी। पुस्तकके नामसे ऐसा लगता है कि लेनिनने पूँजीवादी-जनवादी क्रान्तिके समयके कार्यनीति-सम्बन्धी प्रश्नोंपर ही इसमें प्रकाश डाला होगा और उनका ध्यान केवल रूसके मेन्शेविकोंकी ओर रहा होगा। परन्तु वास्तवमें मेन्शेविकोंकी कार्यनीतिकी आलोचना करते समय उन्होंने अन्तरराष्ट्रीय अवसरवादकी कार्यनीतिका भी पर्दाफ़ाश कर दिया था। और जब उन्होंने पूँजीवादी क्रान्तिके समय मार्क्सवादी कार्यनीतिका प्रतिपादन किया था और पूँजीवादी और समाजवादी क्रान्तियोंका भेद बतलाया था,

उस समय उन्होंने पूँजीवादी क्रान्तिसे समाजवादी क्रान्ति तक आनेके संक्रान्ति-कालमें मार्क्सवादी कार्यनीतिके मूल सिद्धान्तोंका भी प्रतिपादन किया था।

'जनवादी क्रान्तिमें सामाजिक-जनवादकी दो कार्यनीतियाँ' नामक अपनी पुस्तकमें लेनिनने कार्यनीति-सम्बन्धी जिन मूल सिद्धान्तोंका प्रतिपादन किया था वे इस प्रकार हैं :—

(१) कार्यनीति-सम्बन्धी एक मुख्य सिद्धान्त जो पुस्तकमें सर्वत्र विद्यमान है, यह है कि सर्वहारावर्ग पूँजीवादी-जनवादी क्रान्तिका **नेता** बन सकता है और उसे बनना चाहिये; रूसकी पूँजीवादी-जनवादी क्रान्तिका उसे **पथ-दर्शक** होना चाहिये।

लेनिनने इस क्रान्तिके पूँजीवादी रूपको स्वीकार किया था क्योंकि, जैसा कि उन्होंने कहा था, "यह क्रान्ति एक साधारण जनवादी क्रान्तिकी सीमाओंसे एकाएक आगे नहीं बढ़ सकती। फिर भी उनका कहना था कि यह उच्चवर्गोंकी क्रान्ति नहीं है वरन् जनताकी क्रान्ति है जो सारी जनताको, सभी मजदूरों और किसानोंको गतिशील बनायेगी। इसलिये सर्वहारा वर्गके लिये पूँजीवादी क्रान्तिका महत्त्व कम करने, उस क्रान्तिमें सर्वहारा वर्गकी भूमिकाको न्यून करके दिखाने और सर्वहारा वर्गको क्रान्तिसे अलग रखनेका मेन्शेविकोंका प्रयत्न लेनिनकी दृष्टिमें सर्वहारावर्गके हितोंके प्रति विश्वासघात था।

लेनिनने लिखा था—

> "मार्क्सवाद सर्वहारा वर्गको यह सिखाता है कि वह पूँजीवादी क्रान्तिसे अलग न रहे, उससे उदासीन न रहे और उसका नेतृत्व पूँजीवादियोंके हाथमें न चला जाने दे। इसके विपरीत उसे ऐसी क्रान्तिमें अपनी पूरी शक्तिसे भाग लेना चाहिये और सुसंगत सर्वहारा-जनवादकी प्राप्तिके लिये तथा क्रान्तिको चरम लक्ष्य तक पहुँचानेके लिये पूर्ण दृढ़तासे लड़ना चाहिये।"

(संक्षिप्त लेनिन-ग्रंथावली--अं. सं., खंड ३, पृ. ७७)

लेनिनने आगे लिखा था—

> "हमें यह न भूलना चाहिये कि वर्तमान समयमें जनवादी शासन-तंत्र तथा पूर्ण राजनीतिक स्वाधीनताको छोड़कर समाजवादको और निकट लानेका न तो कोई दूसरा साधन है, न हो सकता है।" **(उपरोक्त—पृ. १२२)**

लेनिनकी दृष्टिमें क्रान्तिके दो परिणाम संभव थे:—

(अ) या तो जारशाहीके ऊपर पूर्ण विजय होगी, जारशाहीका ध्वंस होगा और एक जनवादी शासन-तंत्र स्थापित होगा;

(ब) या क्रान्तिकारी शक्तियाँ पर्याप्त न होनेसे जन-हितोंका बलिदान करके जार और पूँजीवादियोंमें समझौता हो जायगा और किसी तरहका सीमित विधान स्थापित होगा, या बहुत संभव है, विधानके नाम पर जो मिलेगा वह विधानकी नकल भर होगा।

सर्वहारावर्गकी दिलचस्पी क्रान्तिकी अधिक हितकर परिणाम, अर्थात् जारशाही पर असंदिग्ध विजयमें थी। लेकिन यह परिणाम तभी संभव था जब सर्वहारा वर्ग क्रान्तिका नेता और पथ-दर्शक बन सके।

लेनिनने लिखा था—

" क्रान्तिका परिणाम इस बात पर निर्भर है कि मजदूर-वर्ग पूँजीवादियोंके नीचे रहकर क्रान्तिमें एक ऐसे सहायकके रूपमें भाग लेता है जो स्वच्छेचारी राजतंत्र पर आक्रमण करनेमें सशक्त हो परंतु राजनीतिक दृष्टिसे पंगु हो, या वह उसमें जन-क्रान्तिके नेताके रूपमें भाग लेता है।" (**उपरोक्त—पृ. ४१**)

लेनिनका कहना था कि मजदूर-वर्ग पूँजीवादियोंके नीचे एक सहायक मात्र न रह कर पूँजीवादी-जनवादी क्रान्तिका नेता बन जाय, यह बहुतही **संभव** है। संभव होने के कई कारण हैं।

पहले तो,

" सर्वहारावर्ग अपनी वर्ग-स्थितिके कारण ही सबसे आगे बढ़ा हुआ और एक मात्र सुसंगत रूपसे क्रान्तिकारी वर्ग है। इस तरहका वर्ग होनेसे ही उसे रूसकी जनवादी क्रान्तिके सार्वजनिक आन्दोलनमें अगुआ बनना होगा।

(लेनिन-ग्रंथावली—रूसी सं., खंड ८, पृ. ७५)

दूसरे सर्वहारावर्गकी अपनी एक राजनीतिक पार्टी है जो पूँजीवादियोंसे स्वतंत्र है और जो सर्वहारावर्गको "एक संयुक्त और स्वाधीन राजनीतिक शक्ति बननेमें" मदद देती है। (**उपरोक्त—पृ. ७५**)

तीसरे, क्रान्तिकी पूर्ण विजयमें पूँजीवादियोंसे अधिक मजदूरोंको दिलचस्पी है जिसे देखते हुए यह भी कहा जा सकता है कि "**एक तरहसे** पूँजीवादी क्रांति पूँजीवादियोंसे **अधिक** सर्वहारावर्गके लिये **हितकर** है।" (**उपरोक्त—पृ. ५७**)

लेनिनने लिखा था:—

" राजतंत्र, स्थायी सेना आदि पुरातनके अवशिष्ट चिन्होंका सहारा लेनेमें सर्वहारा वर्गके विपरीत पूँजीवादियोंका ही अधिक हित है। यदि पूँजीवादी क्रान्ति पुरातनके सभी अवशिष्ट चिन्होंका बहुत दृढ़तासे नाश नहीं करती, वरन् उनमेंसे कुछको रहने देती है तो इसमें पूँजीवादियोंका ही हित है। अर्थात् यदि क्रान्ति पूरी नहीं होती, वह *सुसंगत* नहीं रह पाती, और *दृढ़ता और अथक अविराम गतिसे* उसका परिचालन नहीं होता तो इसमें पूँजीवादियोंका हित है। ......यदि पूँजीवादी-जनवादकी प्राप्तिके लिये आवश्यक परिवर्तन क्रमशः, धीरे-धीरे, सहेज-सहेजकर, कुछ ढिलाईके साथ, और क्रान्तिके बदले सुधारोंसे ही होते हैं तो इसमें पूँजीवादियोंका हित है। *साधारण जनता अर्थात्* किसानों और विशेषकर मजदूरोंकी स्वतंत्र क्रान्तिकारी कार्यवाही, स्वयंप्रेरणा और शक्ति इन परिवर्तनोंसे यथासंभव कम विकसित हो तो इसमें पूँजीवादियोंका हित है; क्योंकि फ्रेंच कहावतके अनुसार 'बंदूकको इस कंधेसे उठाकर उसपर

रखते क्या देर लगती है'; पूँजीवादी क्रान्तिसे मजदूरोंको जो स्वाधीनता मिलेगी दास-प्रथाके दूर होनेसे जो जनवादी संस्थाएँ बनेंगी, ये सब शस्त्र मजदूर, पूँजीवादियोंके विरुद्ध काममें ला सकेंगे। इसके विपरीत यदि पूँजीवादी-जनवादके लिये आवश्यक परिवर्तन सुधारोंके बदले क्रान्तिसे हों तो इसमें मजदूरोंका विशेष हित है। सुधारोंका अर्थ है, आजका काम कलपर छोड़ना, विलंब करना, राष्ट्रीय जीवनके विगलित तत्वोंका दुखदायी विलंबके साथ धीरे-धीरे नष्ट होना। इन तत्वोंके धीरे-धीरे गलनेसे सबसे पहले और सबसे ज्यादा तकलीफ़ मजदूरों और किसानोंको होती है। क्रान्तिका अर्थ है, इन सड़े-गले हिस्सोंको तुरंत काटकर फेंक देना। विगलित तत्वोंको एकबारगी निकाल फेंकनेकी प्रणाली सर्वहारा वर्गके लिये सबसे कम कष्टदायक है। इस प्रणालीमें राजतंत्र और उसके साथकी घृणित, त्याज्य, सड़ी-गली और छूत संस्थाओं पर रहम करने और उन्हें सुविधाएँ देनेकी गुंजाइश कमसे कम है।"

(संक्षिप्त लेनिन-ग्रंथावली—अं. सं., खंड ३, पृ. ७५-६)

लेनिनने आगे लिखा था—

"इसीलिये जनतंत्रके युद्धमें सर्वहारावर्ग सबसे आगे होकर लड़ता है और इस सलाहको कि पूंजीवादियोंको भड़का न देना, वह मूर्खतापूर्ण और अपने अयोग्य समझकर घृणासे ठुकरा देता है।" **(उपरोक्त—पृ. १०८)**

क्रान्तिके सर्वहारा-नेतृत्वकी **संभावना**को **वास्तविकता**में परिणत करनेके लिये और पूंजीवादी क्रान्तिमें सर्वहारावर्गको **सचमुच** उसका नेता और पथ-दर्शक बना देनेके लिये लेनिनके अनुसार कमसे कम दो शर्तें पूरी होनी चाहिये थीं।

पहले तो सर्वहारा वर्गको एक ऐसा सहायक ढूंढ़ना था जो ज़ारशाहीकी पूर्ण पराजयमें दिलचस्पी रखता हो और जो सर्वहारा वर्गका नेतृत्व स्वीकार कर सके। यह बात नेतृत्वकी भावनासे ही उत्पन्न होती है क्योंकि बिना अनुयायियोंके कोई नेता नहीं बन सकता और राहपर चलने वाले न हुए तो पथ-दर्शक रास्ता किसे दिखायेगा। लेनिनका विचार था कि किसान ऐसे ही साथी हैं।

दूसरी बात यह कि, जो वर्ग क्रांतिके नेतृत्वके लिये सर्वहारा वर्गसे लड़ रहा था और एकमात्र नेता बननेका प्रयत्न कर रहा था, उसे नेतृत्वके मैदानसे बाहर करके अकेला और निःसहाय बना दिया जाय। यह विचार भी नेतृत्वकी भावनासे ही उत्पन्न होता है जिसमें क्रान्तिके दो नेतृत्व होनेकी गुंजाइश नहीं है। लेनिनके विचार से ऐसा वर्ग उदारपंथी पूंजीवादियोंका था।

लेनिन ने कहा था:—

"केवल सर्वहारावर्ग जनवादके लिये सुसंगत रूपसे लड़ सकता है। और जनवादके युद्धमें वह तभी विजयी हो सकता है जब उसके क्रान्तिकारी संग्राम में किसान भी सम्मिलित हो जायँ। **(उपरोक्त—पृ. ८६)**

और भी आगे,–

" किसानोंमें बहुत-से अर्द्ध–सर्वहारा और मध्य-वर्गके लोग हैं। इससे उनमें अस्थिरता उत्पन्न होती है और सर्वहारावर्गको एक संकुचित वर्ग-पार्टीके रूपमें संगठित होनेके लिये बाध्य होना पड़ता है। लेकिन किसानोंकी अस्थिरता पूंजी-वादियोंकी अस्थिरतासे मूलतः भिन्न है। वर्तमान समयमें किसानोंको इस बातमें इतनी दिलचस्पी नहीं है कि व्यक्तिगत सम्पत्ति सर्वथा अक्षुण्ण रहे, जितनी इस बातमें कि जमींदारोंसे उनकी वे बड़ी–बड़ी रियासतें छीन ली जायँ जो व्यक्ति-गत सम्पत्तिका एक मुख्य रूप हैं। इससे किसान समाजवादी नहीं हो जाते न उनकी निम्न-पूंजीवादी मनोवृत्तिका अन्त हो जाता है, फिर भी वे हृदयसे जन-वादी क्रातिके अत्यंत उग्र समर्थक बन सकते हैं। किसान अनिवार्य रूपसे ऐसे समर्थक तभी बन सकते हैं जब उन क्रांतिकारी घटनाओंका तारतम्य जो उन्हें सजग कर रहा है, पूंजीवादियोंके विश्वासघात और सर्वहारा वर्गकी पराजय से बहुत जल्दी ही भंग न हो जाय। इसी शर्तके पूरा होनेपर किसान अनिवार्य रूपसे क्रान्तिकारी और जनतंत्रके दृढ़ समर्थक बन जायेंगे क्योंकि पूर्ण रूपसे सफल होने वाली क्रांतिसे ही कृषि–सुधारके क्षेत्रमें किसानोंको **सभी** सुविधाएँ मिल सकती हैं,–वे सभी सुविधाएँ जिन्हें किसान चाहते हैं, जिनका वे स्वप्न देखते हैं और जिनकी उन्हें वास्तवमें आवश्यकता है।" **(उपरोक्त—पृ.१०८-०९)**

मेन्शेविकोंका कहना था कि बोल्शेविकोंकी यह कार्यनीति "पूँजीवादी-वर्गको क्रान्ति–पक्षसे दूर हटने और फलतः उसका क्षेत्र सीमित करनेके लिये बाध्य करेगी।" लेनिनने मेन्शेविकोंकी आपत्तियोंकी विवेचना की और कहा कि यह उनकी "क्रान्तिके प्रति विश्वासघात करनेकी कार्यनीति है", और "इस कार्यनीतिसे सर्वहारावर्ग पूँजीवादियोंका तुच्छ अनुगामी मात्र रह जायगा।"

लेनिनने लिखा था:—

"जो लोग रूसकी विजयी क्रान्तिमें किसानोंकी भूमिकाको सचमुच समझते हैं, वे स्वप्नमें भी यह न कहेंगे कि पूँजीवादियोंके हाथ खींच लेनेसे उसकी गति धीमी पड़ जायगी। क्योंकि वास्तवमें रूसी क्रान्तिकी सच्ची गति तब आरंभ होगी, पूँजीवादी--जनवादी क्रान्तिके युगमें उसकी तीव्रतम गति तभी संभव होगी जब पूँजीवादी वर्ग पीछे क़दम हटायेगा और सर्वहारा वर्गके साथ लाखों किसान सक्रिय क्रान्तिकारी बनकर आगे बढ़ेंगे। क्रान्तिको सुसंगत रूपसे उसके चरम लक्ष्य तक पहुँचानेके लिये हमारी जनवादी क्रान्तिको ऐसी शक्तियोंपर निर्भर रहना होगा जो पूँजीवादियोंकी अनिवार्य अस्थिरताको व्यर्थ बना दें अर्थात् जो असलमें पूँजीवादियोंको क्रान्तिसे हाथ खींचनेपर बाध्य कर सकें।"

(उपरोक्त—पृ. ११०)

जनवादी क्रान्तिमें सर्वहारावर्गकी मुख्य भूमिका और उस क्रांतिमें सर्वहारा वर्गके नेतृत्वके सम्बन्धमें लेनिनने इसी कार्यनीतिके मूल सिद्धान्तका प्रतिपादन अपनी पुस्तक "**जनवादी क्रान्तिमें सामाजिक-जनवादकी दो कार्यनीतियाँ**"में किया है।

पूँजीवादी-जनवादी क्रान्तिमें कार्यनीतिके प्रश्नोंपर मार्क्सवादी पार्टीकी यह एक नयी लीक थी,—ऐसी लीक जो मार्क्सीय दर्शनमें अब तकके कार्यनीति-सम्बन्धी बताये हुए मार्गोंसे नितान्त भिन्न थी। इसके पहले परिस्थिति यह थी कि पूँजीवादी क्रान्तिमें—जैसे पश्चिमी योरपमें—क्रान्तिका नेतृत्व पूँजीवादी वर्ग करते थे और सर्वहारा वर्गसे बस एक अनुगामीका ही कार्य बन पड़ता था; किसान पूँजीवादी वर्गोंकी एक रिजर्व शक्ति थे जिससे अवसर आनेपर वे सहायता ले सकते थे। मार्क्सवादियोंका विचार था कि इस तरहका सहयोग बहुत कुछ अनिवार्य है यद्यपि सर्वहारा वर्गको यथासंभव अपनी तात्कालिक वर्ग-विशेष की माँगोंके लिये लड़ना चाहिये और अपनी राजनीतिक पार्टी संगठित करनी चाहिये। अब नयी ऐतिहासिक परिस्थितियोंमें लेनिनके कथनानुसार यह दशा इस तरह बदल रही थी कि सर्वहारा वर्ग पूँजीवादी क्रान्तिका पथ-दर्शक बन रहा था, क्रान्तिकी बागडोर पूँजीवादियोंके हाथसे बाहर जा रही थी और किसान सर्वहारा वर्गकी रिजर्व फ़ौज बन रहे थे।

यह दावा कि प्लेखानौफ़ भी सर्वहारा वर्गके एकाधिपत्यके "पक्षमें था," भ्रांति-मूलक है। प्लेखानौफ़ने सर्वहारा-एकाधिपत्यके सिद्धान्तके साथ कुछ दिन खिलवाड़ किया था और यह सच है कि एकाधिपत्यके सिद्धान्तको शब्दोंमें स्वीकार करनेमें भी उसे आपत्ति न थी। परंतु वास्तवमें सार-रूपमें वह इस सिद्धान्तका विरोधी था। सर्वहारा-एकाधिपत्यका अर्थ है पूँजीवादी क्रान्तिमें सर्वहारा वर्गकी प्रमुख भूमिका, जिसके साथ किसानोंसे **मेल** करने और उदारपंथी पूँजीवादियोंको क्रांतिसे **अलग** कर देने की नीति भी चरितार्थ हो। लेकिन जैसा कि हम जानते हैं, प्लेखानौफ़ उदारपंथी पूँजी-वादियोंको अलग करनेकी नीतिके **विरुद्ध** था, वह उनके साथ **समझौता** करनेकी नीतिके **पक्षमें** था और सर्वहारा वर्ग और किसानोंमें मेल करनेकी नीतिके **विरुद्ध** था। वस्तुतः प्लेखानौफ़की कार्यनीति मेन्शेविकोंकी ही कार्यनीति थी जो सर्वहारा वर्गके एकाधिपत्यको अस्वीकार करती थी।

(२) लेनिनका विचार था कि जारशाहीका तख्ता उलटने और जनवादी प्रजातंत्र स्थापित करनेका सबसे अव्यर्थ उपाय जनताका सफल सशस्त्र विद्रोह है। मेन्शेविकोंके विपरीत लेनिनका कहना था कि, "साधारण जनवादी क्रान्तिकारी आन्दोलन की प्रगतिसे सशस्त्र विद्रोहकी **आवश्यकता उत्पन्न हो चुकी है**", विद्रोहके लिये सर्वहारा वर्गका संगठन" पार्टीका **अपरिहार्य**, मुख्य और अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य समझकर उसके तात्कालिक कार्यक्रममें रखा जा चुका है, और सर्वहारा वर्गको हथियार-बंद करने और विद्रोहका प्रत्यक्ष रूपसे नेतृत्व करनेकी संभावनाको निश्चित बनानेके लिये **अत्यन्त समर्थ उपाय** करना आवश्यक है।" (**लेनिन-ग्रंथावली—रू. सं., खंड ८, पृ. ७५**)

जनसाधारणको विद्रोहकी ओर लाने और उस विद्रोहको एक सार्वजनिक विद्रोहका रूप देनेके लिये लेनिनकी दृष्टिमें ऐसे नारे लगाना और जनताके प्रति ऐसी अपीलें निकालना आवश्यक था जिनसे उसका क्रान्तिमें हाथ बटानेका हौसला बढ़े, वह विद्रोहके लिये संगठित हो सके और जारशाहीका शक्ति-यंत्र छिन्न-भिन्न हो जाय। लेनिनका विचार था तीसरी पार्टी-कांग्रेसके कार्यनीति-सम्बन्धी निर्णयोंमें इस तरहके नारे दिये गये थे। इन्हीं निर्णयोंका समर्थन लेनिनने **जनवादी क्रान्तिमें सामाजिक-जनवादकी दो कार्यनीतियाँ,** नामक अपनी पुस्तकमें किया था।

लेनिनके अनुसार वे नारे इस प्रकार थे :—

(क) " आम राजनीतिक हड़तालें, जो आरंभमें और विद्रोहके दौरानमें भी अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकती हैं।" (**उपरोक्त—पृ. ७५**)

(ख) " दिनमें आठ घंटे काम तथा मजदूर-वर्गकी अन्य तात्कालिक माँगोंको तुरंत क्रान्तिकारी ढंगसे प्राप्त कर लेना।" (**उपरोक्त—पृ. ४७**)

(ग) क्रान्तिकारी ढंगसे " सभी जनवादी परिवर्तन करनेके लिये "— जिनमें जमींदारोंकी रियासतोंका छीनना भी शामिल है—" क्रान्तिकारी किसान-समितियोंका तुरंत संगठन।" (**उपरोक्त—पृ. ८८**)

(घ) मजदूरोंको हथियार-बन्द करना।

यहाँ पर दो बातें विशेष ध्यान देने योग्य हैं:—

पहली बातका संबंध **क्रान्तिकारी ढंगसे** शहरोंमें मजदूरोंके लिये आठ घंटेका दिन निश्चित करने और गाँवोंकी जनताके लिये जनवादी अधिकार प्राप्त करनेकी कार्यनीतिसे है। यह ढंग ऐसा था जो क़ानून और अधिकारियोंकी अवहेलना तथा अवज्ञा करता था और प्रचलित क़ानून तोड़ कर ग़ैर-कानूनी कार्योंसे एक नयी व्यवस्था की स्थापना कर देता था। कार्यनीतिका यह एक नया ढंग था जिसके प्रयोगने जारशाहीके शक्ति-यंत्रको पंगु बना दिया और जन-साधारणकी रचनात्मक स्वयंप्रेरणा और कार्यशीलताके द्वार खोल दिये। इस नीतिके फलस्वरूप शहरोंमें क्रान्तिकारी हड़ताल-समितियाँ बनीं और गाँवोंमें क्रान्तिकारी किसान-समितियाँ बनीं। हड़ताल-समितियोंने आगे चलकर मजदूर प्रतिनिधियोंके सोवियतोंका रूप लिया और किसान-समितियोंसे किसान-प्रतिनिधियोंके सोवियत बने।

दूसरी बातका संबंध **आम राजनीतिक हड़तालों**से है। क्रान्तिमें आगे चलकर जन-साधारणके क्रान्तिकारी संगठनके लिये ये हड़तालें अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्ध हुईं। सर्वहारा वर्गके हाथमें यह एक नया और बहुत कारगर हथियार आ गया था जिसका प्रयोग मार्क्सवादी पार्टियोंने अपनी कार्यवाहीमें अभी तक न सीखा था परंतु आगे चल कर जिसकी खूबीको लोगोंने पहचाना।

लेनिनका कहना था कि जनताके सफल विद्रोहके बाद जार-सरकारकी जगह

एक अस्थायी क्रान्तिकारी सरकार क़ायम की जानी चाहिये। इस सरकारका यह काम होगा कि वह क्रान्तिमें मिली हुई सफलताओंको स्थायी बनाये, क्रान्ति-विरोधी शक्तियोंको कुचल दे और रूसकी सामाजिक-जनवादी मजदूर-पार्टीके अल्पतम कार्यक्रमको पूरा करे। लेनिनका कहना था कि बिना ये काम पूरे किये जारशाहीकी पूर्ण पराजय असंभव होगी; और इन कामोंको पूरा करने और जारशाही पर पूर्ण विजय पानेके लिये अस्थायी क्रान्तिकारी सरकार कोई मामूली सरकार न होगी वरन् वह विजयी वर्गों, किसानों और मजदूरोंके एकाधिपत्यकी सरकार होगी। सर्वहारा वर्ग और किसानोंका वह क्रान्तिकारी एकाधिपत्य होगा। मार्क्सकी प्रसिद्ध धारणाको उद्धृत करते हुए कि "क्रान्तिके बाद राज्यके हर अस्थायी संगठनको डिक्टेटरशिप (एकाधिपत्य) और एक जबर्दस्त डिक्टेटरशिपकी जरूरत होती है", लेनिनने यह परिणाम निकाला कि जारशाहीपर अपनी विजय निश्चित करनेके लिये अस्थायी क्रान्तिकारी सरकारको मजदूरों और किसानोंकी डिक्टेटरशिपका ही रूप धारण करना पड़ेगा।

लेनिनने कहा था,

> "जारशाहीपर क्रान्तिकी पूर्ण विजयका अर्थ है, **किसानों और मज़दूरोंकी क्रान्तिकारी-जनवादी डिक्टेटरशिप** की स्थापना...इस तरहकी विजयका अर्थ ही डिक्टेटरशिप है अर्थात् उसे जैसी-तैसी 'शान्तिपूर्ण' और 'क़ानूनी' संस्थाओंके भरोसे न रहकर अनिवार्य रूपसे सैनिक-शक्ति, जनताके शस्त्र-धारण करने और विद्रोह करनेकी शक्तिपर निर्भर रहना पड़ेगा। बिना डिक्टेटरशिपके काम नहीं चल सकता; क्योंकि सर्वहारा वर्ग और किसानोंके लिये जिन परिवर्तनोंकी तुरंत आवश्यकता होगी उनका जारशाही, बड़े पूँजीपति और जमींदार प्राणपणसे विरोध करेंगे। बिना डिक्टेटरशिपके उस विरोधको तोड़ना और क्रान्ति-विरोधी प्रयत्नोंको विफल करना असंभव होगा। लेकिन यह मानी हुई बात है कि वह जनवादी डिक्टेटरशिप होगी समाजवादी नहीं। (क्रान्तिकारी विकासकी कुछ बीचकी सीढ़ियोंको बिना पार किये हुए) वह पूँजीवादकी नींवको न हिला सकेगी। अधिकसे अधिक हम उससे यह आशा कर सकते हैं कि किसानोंके हितमें वह एक नये सिरेसे भूमि का विभाजन करेगी, एक सुसंगत और पूर्ण जनवादी प्रजातंत्रकी स्थापना कर देगी, इस एशियाई दासताके सभी दुखदायी स्वरूपोंको गाँवोंसे ही नहीं, बल्कि कारखानोंसे भी निकाल बाहर करेगी, मजदूरोंकी दशामें व्यापक सुधार करके उनके जीवनको अधिक सुखी और समृद्ध बनाने का प्रयत्न करेगी, और अन्तमें क्रान्तिकी लपटोंको योरप तक पहुँचा देगी। यह अंतिम कार्य भी कम महत्वपूर्ण न होगा। फिर भी यह विजय किसी भी तरहसे हमारी पूँजीवादी क्रान्तिको समाजवादी क्रान्ति न बना देगी। जनवादी क्रान्ति एकाएक पूँजीवादी व्यवस्थाके सामाजिक और आर्थिक सम्बन्धोंको तोड़कर आगे न बढ़ सकेगी। तथापि रूस और सारी दुनियाके

भावी विकासके लिये ऐसी विजयका बहुत बड़ा महत्व होगा। रूसमें जो क्रांति आरंभ हुई है, संसारके मजदूरोंकी शक्तिको उभारनेमें उससे अधिक मदद दूसरी कोई चीज नहीं करेगी, न उनकी विजयको ही निकट लानेमें कोई दूसरी चीज इससे अधिक सहायता पहुँचायगी।"

(संक्षिप्त लेनिन-ग्रंथावली—खंड ३, पृ. ८२-३)

अस्थायी क्रान्तिकारी सरकारकी ओर सामाजिक-जनवादियोंका क्या रुख होना चाहिये और उसमें उन्हें भाग लेना चाहिये या नहीं, इस प्रश्नपर लेनिनने पूर्णरूपसे तीसरी पार्टी-कांग्रेसके प्रस्तावका समर्थन किया। प्रस्तावमें लिखा था:—

"विभिन्न शक्तियोंके पारस्परिक संबंधों और परिस्थितिकी उन विशेषताओंको ध्यानमें रखते हुए जिनकी निश्चित रूपसे पूर्वकल्पना कर सकना असंभव है, हमारी पार्टीके प्रतिनिधि सभी क्रान्ति-विरोधी प्रयत्नोंसे अनवरत युद्ध करनेके लिये और मजदूर-वर्गके स्वतंत्र हितोंकी रक्षा करनेके लिये अस्थायी क्रान्तिकारी सरकारमें भाग ले सकते हैं। भाग लेनेमें एक जरूरी शर्त यह है कि पार्टी अपने प्रतिनिधियोंपर कठोर नियंत्रण रखे; और चूँकि सामाजिक-जनवादी पार्टी एक पूर्ण समाजवादी क्रान्तिके लिए प्रयत्न कर रही है जिसकी वजहसे सभी पूंजीवादी पार्टियोंसे उसका कट्टर विरोध है, इसलिये उसकी स्वतंत्र सत्ता सदैव *अक्षुण्ण* रहनी चाहिये। अस्थायी क्रान्तिकारी सरकारमें सामाजिक-जनवादी पार्टी चाहे भाग ले सके चाहे न ले सके, हमें मजदूरोंमें इस बातका व्यापक आन्दोलन करना चाहिये कि क्रान्तिमें सर की हुई जमीनकी मोर्चा-बन्दी करनेके लिये, उसकी रक्षा और उसका विस्तार करनेके लिये यह आवश्यक है कि अस्थायी सरकारके ऊपर सामाजिक-जनवादी पार्टीके नेतृत्वमें सशस्त्र सर्वहारा वर्गका दबाव बराबर बना रहे।" **(उपरोक्त—पृ. ४६-७)**

मेन्शेविकोंका कहना था, अस्थायी सरकार एक पूंजीवादी सरकार ही होगी; ऐसी सरकारमें सामाजिक-जनवादी पार्टी भाग लेकर वही गलती करेगी जो फ्रांसके समाजवादी मिलेराँद ने वहाँकी पूंजीवादी सरकारमें भाग लेकर की थी। इसलिये अस्थायी क्रान्तिकारी सरकारमें सामाजिक-जनवादी पार्टीका भाग लेना अनुचित होगा। लेनिन ने इस आपत्तिका यह कहकर उत्तर दिया कि मेन्शेविक दो **अलग-अलग** चीजोंमें घपला कर रहे हैं और इस प्रश्नपर मार्क्सवादियोंकी तरह विचार करनेमें अपनेको अक्षम सिद्ध कर रहे हैं। फ्रांसमें प्रश्न यह था कि समाजवादी एक **प्रतिक्रियावादी** पूँजीवादी सरकारमें भाग लें या नहीं जब कि देशमें क्रान्तिकारी परिस्थितिका **अभाव** था। इसलिये फ्रांसमें समाजवादियोंका कर्तव्य था कि वे उस सरकारमें भाग न लें। इसके विपरीत रूसमें प्रश्न यह है कि समाजवादी एक **क्रान्तिकारी** पूँजीवादी सरकारमें भाग लें या नहीं जब कि यह सरकार **क्रान्तिकी विजय**के लिये लड़ रही है और ऐसे समयमें लड़ रही है जब कि

क्रान्ति अपने **पूरे उभारपर** है। परिस्थितिकी इस विशेषतासे ही सामाजिक-जनवादियोंका इस तरहकी सरकारमें भाग लेना **उचित** हो जाता है और परिस्थितिके अधिक अनुकूल होनेपर उनका **कर्तव्य** होजाता है कि वे क्रान्ति-विरोधी शक्तियोंपर बाहर और "नीचेसे" ही नहीं वरन् "ऊपरसे", शासन–तंत्रके भीतरसे भी प्रहार करनेके लिये ऐसी सरकारमें भाग लें।

(३) पूँजीवादी क्रान्तिकी विजय और जनवादी शासन-तंत्रके निर्माणका समर्थन करनेमें लेनिनका यह मंतव्य कदापि न था कि जनवादी पर्वका आरंभ होते ही क्रान्तिका महाभारत समाप्त कर दिया जाय और क्रान्तिकारी आन्दोलनका उपयोग केवल पूँजीवादी–जनवादी कार्योंकी पूर्तिके लिये ही किया जाय। इसके विपरीत लेनिनका कहना था कि जनवादी कार्योंकी पूर्ति होनेपर सर्वहारा और अन्य शोषित वर्गोंको इस बार **समाजवादी** क्रान्तिके लिये संघर्ष आरंभ करना पड़ेगा। लेनिन यह सब जानते थे, इसलिये उनकी दृष्टिमें सामाजिक–जनवादियोंका यह कर्तव्य था कि वे इस बातके लिये हर तरहसे प्रयत्न करें कि पूँजीवादी क्रांति समाजवादी क्रान्तिमें **परिवर्तित** हो जाय। लेनिनका विचार था कि किसान–मजदूरोंकी डिक्टेटरशिप इसलिये जरूरी न थी कि जारशाहीपर क्रांतिकी विजय पूर्ण होते ही उसका अंत कर दिया जाय, वरन् इसलिये कि उसे यथासंभव दीर्घजीवी बनाया जाय जिससे कि क्रान्ति–विरोधी शक्तियोंके अवशिष्टोंका भी ध्वंस हो सके, क्रान्तिकी लपटें सारे योरपमें फैल जाँय—और इसी बीच सर्वहारा वर्गको इस बातका अवसर देकर कि वह राजनीतिक शिक्षा प्राप्त करे और एक विशाल सेनाके रूपमें संगठित हो सके, समाजवादी क्रान्तिके लिये अविकल परिवर्तन आरंभ कर दिया जाय।

पूँजीवादी क्रान्तिकी रूपरेखा क्या होगी और मार्क्सवादी पार्टी उसे कैसा रूप देगी, इसके बारेमें लेनिनने लिखा था:—

> "कृषक जन-समूहका सहयोग प्राप्त करके सर्वहारा वर्गको जनवादी क्रान्तिको उसके चरम लक्ष्य तक पहुँचाना चाहिये, जिससे कि निरंकुश-शासनके विरोधको बलपूर्वक दबाया जा सके और पूँजीवादियोंकी अस्थिरताको पंगु बना दिया जाय। जनतामेंसे अर्द्ध–सर्वहारा स्तरके लोगोंका सहयोग प्राप्त करके सर्वहारा वर्गको समाजवादी क्रान्ति पूर्ण करनी चाहिये जिससे कि पूँजीवादियोंका विरोध बलपूर्वक दबाया जा सके और किसानों और निम्न पूँजीवादियोंकी अस्थिरताको पंगु बना दिया जाय। सर्वहारा वर्गको यही सब काम करने हैं जिन्हें क्रान्तिकी रूपरेखा–सम्बन्धी अपने विवाद और प्रस्तावोंमें नये इस्क्रा-वादी (अर्थात् मेन्शेविक—सं.) **सदैव** इतने संकुचित रूपमें रखते हैं।" (**उपरोक्त०—पृ.** ११०–११) और आगे,—

पूर्ण स्वाधीनताके लिये, एक सुसंगत जनवादी क्रान्तिके लिये, प्रजातंत्रकी स्थापनाके लिये, सारी जनताके विशेषकर किसानोंके आगे रहना; समाजवादी

क्रान्तिके लिये सभी पीड़ितों और मेहनतकशोंके आगे रहना; कार्यरूपमें क्रान्तिकारी सर्वहारा वर्गकी यही नीति होनी चाहिये, यही उसका अपने वर्गविशेषका नारा है जिससे उसे कार्य-नीति संबन्धी हर गुत्थीको सुलझाना चाहिये, जिससे क्रान्ति-कालमें मजदूरोंकी पार्टीको कार्यक्षेत्रमें अपना हर क़दम आगे बढ़ाना चाहिये।" (**उपरोक्त —पृ० १२४**)

कोई भी बात अस्पष्ट न रह जाय, इसलिये "**दो कार्यनीतियों**"के प्रकाशनके दो महीने बाद लेनिनने "किसान आन्दोलनके प्रति सामाजिक जनवादियोंका रुख" नामका एक लेख लिखा। इसमें उन्होंने इस बातको और भी स्पष्ट करते हुए लिखा,—

"अपनी शक्तिके अनुसार, श्रेणी-सजग और संगठित सर्वहारा वर्गकी शक्तिके अनुसार हम जनवादी क्रान्तिको समाजवादी क्रान्ति बनानेके लिये तुरंत कार्य आरंभ कर देंगे। हम अविराम क्रांतिके समर्थक हैं। हम आधी दूर जाकर न रुक जायँगे।" (**उपरोक्त—पृ० १४५**)

पूँजीवादी और समाजवादी क्रान्तियोंके परस्पर सम्बन्धके विषयमें यह एक नयी लीक थी; पूँजीवादी क्रान्तिकी अन्तिम अवस्थामें उसे तुरंत समाजवादी क्रान्तिमें बदलनेके लिये सर्वहारा वर्गके साथ तमाम जनताको संगठित करनेका यह नवीन सिद्धान्त था; यह पूँजीवादी-जनवादी क्रान्तिके समाजवादी क्रान्तिमें **संक्रमणका** सिद्धान्त था।

अपनी यह नयी लीक बनानेमें लेनिनने पहले तो अविराम क्रान्तिके उस सुपरिचित सिद्धान्तका आश्रय लिया जिसका १८५० के लगभग मार्क्सने कम्युनिस्ट लीग के लिये अपने भाषणमें प्रतिपादन किया था। इसके अतिरिक्त उन्होंने सर्वहारा-क्रान्तिसे किसानोंके क्रान्तिकारी आन्दोलनको मिलानेकी आवश्यकताके उस सुपरिचित विचारका सहारा लिया जिसे १८५६ में मार्क्सने एंगेलसके नाम अपने एक पत्रमें व्यक्त किया था। मार्क्सने लिखा था,—"जर्मनीमें सब कुछ इस बातपर निर्भर है कि सर्वहारा-क्रान्तिका समर्थन पुराने कृषक-विद्रोह जैसे किसी विद्रोहसे किया जा सकता है या नहीं।" फिर भी मार्क्सके इन उत्कृष्ट विचारोंकी मार्क्स और एंगेल्सकी रचनाओंमें आगे विशेष व्याख्या नहीं की गयी। और दूसरे इंटरनेशनल (अन्तरराष्ट्रीय संघ—सं.) के शास्त्रकारोंने उन्हें विस्मृतिके अंधकूपमें डाल देनेके लिये कुछ उठा नहीं रखा। मार्क्सके इन भुलाये हुए विचारोंको प्रकाशमें लाने और उन्हें उचित प्रतिष्ठा देनेका भार लेनिनपर पड़ा। लेकिन इन मार्क्सीय विचारोंको पुनः प्रतिष्ठित करनेके लिये लेनिनने उनकी पुनरावृत्ति मात्र नहीं की, न ऐसा करना उनके लिये संभव था। उन्होंने उन विचारोंको विकसित किया और एक नयी धारणाके सन्निवेशसे उन्हें समाजवादी क्रान्तिके सम्यक सिद्धान्तका रूप दिया। वह धारणा यह थी कि सर्वहारा-क्रान्तिकी विजयके लिये यह एक शर्त है कि गाँव और शहरके सर्वहारा और अर्द्ध-सर्वहारा वर्गोंमें **सहयोग** हो। समाजवादी क्रान्तिके लिये यह सहयोग **अनिवार्य** है।

लेनिनकी व्याख्याने पश्चिमी योरपके सामाजिक-जनवादियोंकी इस धारणाका खंडन

किया कि पूँजीवादी क्रान्तिके बाद सभी किसान, क्या धनी क्या निर्धन, अवश्य ही क्रान्तिसे पीठ दिखायेंगे; और उसके परिणाम-स्वरूप पूँजीवादी क्रान्तिके बाद अधिक नहीं तो पचास या सौ बरसका एक लंबा अवकाश होगा, एक शान्तिका युग होगा जिसमें मजदूरोंका " शान्तिपूर्ण उपायोंसे " शोषण होगा और एक नयी क्रान्ति, समाजवादी क्रान्तिके आने तक पूँजीवादी " वाजिब तरीकेसे " अपनी मुट्ठी गरम करते रहेंगे।

लेनिनका नया सिद्धान्त यह था कि **संपूर्ण** पूँजीवादी वर्गके विरुद्ध सर्वहारा वर्ग अकेले रहकर समाजवादी क्रान्ति न कर सकेगा, वरन् सर्वहारा वर्ग इस क्रान्तिका नेतृत्व करेगा; जनताके अर्द्ध-सर्वहारा स्तरके लोग, लाखों-करोड़ों " शोषित-दलित लोग " उसके सहायक होंगे। इस सिद्धान्तके अनुसार पूँजीवादी क्रान्तिके कालका सर्वहारा-नेतृत्व ही आगे चलकर समाजवादी क्रान्तिमें भी सर्वहारा वर्गके नेतृत्वका रूप ले लेगा। पूँजीवादी क्रान्तिके कालमें किसान सर्वहारा वर्गके साथ होंगे, समाजवादी क्रान्तिमें सर्वहारा वर्गको दूसरे सताये हुए मेहनतकशोंका सहयोग प्राप्त होगा। किसानों और मजदूरोंकी जनवादी डिक्टेटरशिप सर्वहारा वर्गकी समाजवादी डिक्टेटरशिपके लिये जमीन तैयार करेगी।

लेनिनकी व्याख्याने पश्चिमी योरपके सामाजिक-जनवादियोंमें प्रचलित इस धारणाका खंडन किया कि गाँव और शहरकी अर्द्ध-सर्वहारा जनतामें क्रान्ति करनेकी क्षमताका नितान्त अभाव है। उनके लिये यह ध्रुव सत्य बन गया था कि " पूँजीवादी और सर्वहारा वर्गको छोड़कर हम अपने देशमें ऐसी कोई सामाजिक शक्ति नहीं देखते जिससे विरोधात्मक या क्रान्तिकारी सहयोगका संबन्ध स्थापित करनेकी गुंजाइश हो। " (ये प्लेखानोफ़के शब्द हैं और पश्चिमी योरपके सामाजिक-जनवादियोंकी धारणाको अच्छी तरह प्रकट करते हैं।)

पश्चिमी योरपके सामाजिक-जनवादियोंका विचार था कि समाजवादी क्रान्तिमें सर्वहारा वर्गको **अकेले, बिना** किसी सहायकके, **संपूर्ण** पूंजीवादी वर्ग और सर्वहारा वर्गसे इतर **सभी** श्रेणियों और स्तरोंका विरोध करना पड़ेगा। वे इस तथ्यकी ओर ध्यान न दे रहे थे कि पूंजी सर्वहारा वर्ग ही नहीं, गाँव और शहरकी कोटि-कोटि अर्द्ध-सर्वहारा जनताका भी शोषण करती है। पूंजीवादकी चक्कीमें यह जनता पिस रही है और इस चक्कीसे छुटकारा पानेके लिये, समाजकी स्वाधीनताके लिये सर्वहारा वर्गके संग्राममें वह उसकी सहायक हो सकती है। इसलिये पश्चिमी योरपके समाजवादियोंका कहना था कि योरपमें समाजवादी क्रान्तिके लिये उपयुक्त परिस्थिति अभी नहीं बनी। परिस्थिति उपयुक्त तभी समझी जायगी जब समाजका अधिक आर्थिक विकास हो चुकेगा और उसके परिणाम-स्वरूप जब सर्वहारा वर्ग समाज और राष्ट्रका सबसे बड़ा भाग बन जायगा।

पश्चिमी योरपके सामाजिक-जनवादियोंकी यह सर्वहारा-विरोधी मिथ्या धारणा लेनिनके इस समाजवादी क्रान्तिके सिद्धान्तसे ढह गयी।

किसी एक देशमें, अकेले उसीको लेकर, समाजवादी क्रान्ति संभव है, ऐसा कोई परिणाम अभी स्पष्ट रूपसे लेनिनकी विवेचनामें न आया था। लेकिन उस विवेचनामें वे सभी अथवा प्रायः सभी मूल तत्व वर्तमान थे, जिनसे आगे-पीछे यह परिणाम निकाला जा सके।

जैसा कि विदित है, लेनिनने दस वर्ष बाद १९१५ में यही परिणाम निकाला।

कार्यनीति-सम्बन्धी इन्हीं मूल-सिद्धांतोंका विवेचन लेनिनने अपनी ऐतिहासिक पुस्तक '**जनवादी क्रान्तिमें सामाजिक-जनवाद की दो कार्यनीतियाँ**' में किया।

इस पुस्तकका ऐतिहासिक महत्व सबसे अधिक इस बातमें है कि इसमें लेनिन ने विचार-क्षेत्र में मेन्शेविकोंकी निम्न-पूंजीवादी कार्यनीतिको ध्वस्त कर दिया। पूंजीवादी-जनवादी क्रान्तिके अधिक विकासके लिये और जारशाहीपर एक नये आक्रमणके लिये लेनिनने रूसके मजदूर-वर्गको सैद्धान्तिक शस्त्र दिये, और रूसी सामाजिक-जनवादियोंके सामने यह स्पष्ट करके रखा कि पूंजीवादी क्रान्तिका समाजवादी क्रांतिमें संक्रमण होना आवश्यक है।

लेकिन लेनिनकी पुस्तकका महत्व इन्हीं बातोंसे नहीं समाप्त हो जाता। उसका अमूल्य महत्व इस बातमें है कि उसने क्रांतिके एक नये सिद्धांतसे मार्क्सवादको भरा-पूरा बनाया और बोल्शेविक पार्टीकी उस कार्यनीतिको आधार दिया जिसकी सहायता से १९१७ में हमारे देशका सर्वहारा वर्ग पूँजीवादपर विजयी हुआ।

४. क्रान्तिके वेगमें प्रखरता—अक्तूबर १९०५ की अखिल रूसी राजनीतिक हड़ताल—ज़ारशाहीका पीछे हटना—ज़ारका ऐलान—मज़दूर-प्रतिनिधियोंके सोवियतोंका अभ्युदय।

१९०५ की शरदऋतु तक क्रान्तिकी लहर सारे देशमें दौड़ गयी थी और अब उसका वेग अत्यंत प्रखर हो उठा था।

१९ सितम्बरको मॉस्कोमें प्रेस-कर्मचारियोंकी हड़ताल हुई। यह हड़ताल सेंट-पीटर्सबर्ग और दूसरे शहरोंमें भी फैल गयी। स्वयं मॉस्कोमें दूसरे उद्योग-धंधोंके मजदूरों ने उसका समर्थन किया और वह एक आम राजनीतिक हड़ताल बन गयी।

अक्तूबरके आरंभमें मॉस्को-कज़ान रेलवेमें हड़ताल शुरू हुई। दो दिनमें ही मॉस्को रेलवे जंक्शनके सभी रेलवे-कर्मचारी उसमें शामिल हो गये और शीघ्र ही सारे देशके रेलवे-कर्मचारी हड़तालकी ओर बढ़ आये। तार और डाकघरोंका काम ठप हो गया। रूसके अनेक शहरोंमें मजदूरोंने बड़ी-बड़ी सभाएँ कीं और हड़ताल करनेका निश्चय

किया। हड़ताल कारखानोंसे मिलों, मिलोंसे शहरों और शहरोंसे प्रान्तोंमें फैलती गयी। मजदूरोंके साथ लघु कर्मचारी तथा विद्यार्थी, वकील, इंजीनियर, डाक्टर आदि बुद्धिजीवी वर्गके लोग शामिल हो गये।

अक्तूबरकी राजनीतिक हड़ताल एक अखिल रूसी हड़ताल बन गयी। वह सारे देशमें, देशके दूर-दूरके जिलों तकमें फैल गयी और लगभग सभी मजदूरोंने, यहाँ तक कि बिल्कुल पिछड़े हुए मजदूरोंने भी उसमें भाग लिया। रेलवे, तार, डाकके कर्मचारियों और दूसरे लोगोंकी एक बड़ी संख्याको निकालकर इस राजनीतिक हड़तालमें भाग लेने वाले उद्योग-धंधोंके मजदूरोंकी ही संख्या दस लाखके क़रीब थी। देशके संपूर्ण जीवनकी गति बन्द हो गयी। सरकार पंगु बनकर रह गयी।

मजदूर-वर्गने निरंकुश शासनके विरुद्ध जन-संघर्षका नेतृत्व किया।

बोल्शेविकोंने आम राजनीतिक हड़तालोंके लिये नारा लगाया था। वह नारा लगाना सफल हुआ।

अक्तूबरकी आम राजनीतिक हड़तालसे सर्वहारा-आन्दोलनकी क्षमता और उसके बलका पता लग गया। भयसे काँपते हुए जारको १७ अक्तूबर १९०५ को अपना ऐलान जारी करना पड़ा। इस ऐलानमें जनताको वचन दिया गया कि उसे " नागरिक स्वाधीनताके दृढ़ आधार—अर्थात् व्यक्ति की वास्तविक स्वाधीनता तथा मिलने, बोलने, उपासना करने और सभाएँ करनेकी स्वतंत्रता " दी जायगी। धारा सभा बुलाने और जनताके सभी वर्गोंको मताधिकार देनेका भी वचन दिया गया।

इस प्रकार बुलीगिनकी अधिकार-हीन विचार-सभा (दूमा) क्रान्तिकी लपटोंमें स्वाहा हो गयी। बुलीगिनकी विचार-सभाका बहिष्कार करनेकी बोल्शेविक नीति कारगर साबित हुई। फिर भी १७ अक्तूबरका यह ऐलान जनताकी आखोंमें केवल धूल फेंकनेके लिये था। यह जारकी चाल थी जिससे कुछ भोले-भाले लोग चकमेमें आ जाते और जारको अपनी बिखरी शक्तियोंको बटोरकर क्रान्तिपर आघात करनेका अवकाश मिलता। कहनेको जार-सरकारने स्वाधीनताका वचन दिया परंतु वास्तवमें उसने दिया-लिया कुछ भी नहीं। अभी तक मजदूरों और किसानोंको सरकार वचन ही देती रही थी और यही उनके पल्ले पड़े थे। लोग आशा लगाये बैठे थे कि राजनीतिक बंदियोंकी आम रिहाई होगी लेकिन २१ अक्तूबरको उनमेंसे बहुत कम लोग छोड़े गये। साथ-साथ जनतामें फूट डालनेके उद्देश्यसे जार-सरकारने कई जगह यहूदियोंका क़त्लेआम करनेके लिये लोगोंको भड़काया और इस तरह लाखों आदमी कट मरे। क्रान्तिको दबानेके लिये उसने पुलिसके इशारेपर चलनेवाली गुंडा-संस्थाएँ बनवा दीं जिनका नाम रखा गया " रूसी जनताका संघ " और " फरिश्ते माइकेलका संघ "। इन संघोंमें प्रतिक्रियावादी जमींदारों, सौदागरों, पंडे-पुजारियों और उचक्के और आवारा क़िस्मके जरायम-पेशा लोगोंका बोलबाला था। जनता इन संघोंको " यमराजकी सभा " (ब्लैक हण्ड्रेड्स) कहती थी। पुलिसकी सहायतासे इन यमदूतोंने राजनीतिमें आगे

बढ़े हुए मजदूरों, क्रान्तिकारी बुद्धिजीवियों और विद्यार्थियोंपर खुलेआम हमले किये और उनकी हत्या की। इन्होंने पंडालोंमें आग लगा दी और जन-समूहपर गोलियोंकी बाढ़ दागी। ज़ारके ऐलानका अभी तक जनताको यही फल मिला।

उस समय एक लोकप्रिय गीत बनाया गया था जिसकी दो पंक्तियाँ ये थीं:—

" ज़ारने डरकर एक ऐलान किया :
मुर्दोंको आज़ादी मिले, ज़िन्दोंको जेल।"

बोल्शेविकोंने जनताको समझाया कि १७ अक्तूबरका ऐलान एक जाल था। उन्होंने कहा कि ऐलान जारी करनेके बाद सरकारका व्यवहार आगमें घी छिड़कने जैसा रहा है। इसलिये मजदूरोंको हथियार लेकर सशस्त्र विद्रोहकी तैयारी करनी चाहिये।

मजदूर और ज्यादा सरगर्मीसे अपने लड़ाकू जत्थे बनाने लगे। वे यह अच्छी तरह समझ गये कि आम राजनीतिक हड़तालसे उन्होंने १७ अक्तूबरको जो विजय प्राप्त की थी, उसका तक़ाजा है कि वे अपनी कोशिशें जारी रखें और अपनी लड़ाईको आगे बढ़ाकर ज़ारशाहीका ख़ात्मा ही कर दें।

लेनिनके अनुसार १७ अक्तूबरके घोषणा-पत्रसे यह प्रकट होता था कि दोनों ओरकी सामाजिक शक्तियाँ कुछ समयके लिए बराबर काँटेकी होगयी हैं। मजदूरों और किसानोंने ज़ारसे यह घोषणा-पत्र ऐंठ लिया था, फिर भी **अभी वे इतने शक्तिशाली** न हो गये थे कि ज़ारशाहीका नाश कर सकते। दूसरी ओर ज़ारशाही भी **अब इतनी शक्तिशाली** न रह गयी थी कि पुराने अस्त्रोंसे ही जनतापर शासन करती रहती। उसे भी " नागरिक स्वाधीनता " और दूमा " धारासभा "के कागज़ी वायदे करने ही पड़े थे।

अक्तूबर की राजनीतिक हड़तालके अशान्त दिनोंमें ज़ारशाहीके विरुद्ध इस समराग्निमें मजदूर जन-समूहकी क्रांतिकारी रचनात्मक प्रेरणाने एक नया और प्रचंड अस्त्र गढ़ा। यह अस्त्र था—मजदूर-प्रतिनिधियोंका सोवियत।

विभिन्न मिलों और कारखानोंके मजदूर प्रतिनिधियोंके ये सोवियत—पंचायतें—मजदूरोंके एक नये ढंगके सामूहिक संगठन थे जिनको पहले दुनियाने कभी देखा-सुना न था। १९०५ में जिन सोवियतोंका अभ्युदय हुआ, वे उस सोवियत-शक्ति के प्राथमिक स्वरूप थे जो १९१७ में बोल्शेविक पार्टीके नेतृत्वमें सर्वहारा द्वारा स्थापित हुई। ये सोवियत जनताकी रचनात्मक प्रेरणाका एक क्रान्तिकारी रूप थे। ज़ारशाहीके क़ानून-क़ायदोंको लात मारकर जनताके क्रांतिकारी भागने अकेले इन्हें स्थापित किया था। ज़ारशाहीसे युद्ध करनेके लिये जो जनता उठकर खड़ी हो रही थी, ये सोवियत उसकी स्वाधीन कार्यवाहीका प्रमाण थे।

बोल्शेविकोंका कहना था कि इन सोवियतोंमें क्रांतिकारी शक्ति बीजरूपसे वर्तमान है। वे कहते थे कि विद्रोहकी शक्ति और सफलतापर ही सोवियतोंकी शक्ति और महत्ता निर्भर करेगी।

मेन्शेविकोंकी दृष्टिमें सोवियतोंमें न तो बीजरूप से क्रांतिकारी शक्ति वर्तमान थी, न वे विद्रोहका साधन बन सकते थे। उनके विचारसे इन्हें स्थानीय स्वायत्त-शासनका साधन बनना चाहिये था जैसे कि म्युनिसिपल शासनकी जनवादी संस्थाएँ होती हैं।

१३ अक्तूबर (नयी शैली, २६ अक्तूबर) १९०५ को सेंट–पीटर्सबर्गकी सभी मिलों और कारखानोंमें मजदूर–प्रतिनिधियोंके सोवियतोंके चुनाव हुए। उसी रातको सोवियतकी बैठक हुई। मजदूर–प्रतिनिधियोंके सोवियत बनानेमें मॉस्कोने सेंट–पीटर्सबर्ग का अनुसरण किया।

सेंट–पीटर्सबर्गके मजदूर–प्रतिनिधियोंके सोवियतको १९०५ की क्रान्तिमें महत्व-पूर्ण भाग लेना चाहिये था, क्योंकि सेंट–पीटर्सबर्गका सोवियत जारशाही रूसकी राजधानी और उसके सबसे बड़े औद्योगिक और क्रान्तिकारी केन्द्रका सोवियत था। परन्तु मेन्शेविकोंके अक्षम नेतृत्वके कारण उसने अपना कार्य पूरा नहीं किया। जैसा कि विदित है, लेनिन अब भी विदेशमें थे और सेंट–पीटर्सबर्ग न आये थे। लेनिनकी अनुपस्थितिसे लाभ उठाकर मेन्शेविक वहाँके सोवियतमें घुस गये और उसके नेता बन बैठे। ऐसी परिस्थितिमें यदि ख्रुस्तालेफ़, त्रॉत्स्की, पार्वुस, आदि मेन्शेविकोंने सेंट-पीटर्स-बर्गके सोवियतको विद्रोहकी नीतिके विरुद्ध मोड़ दिया, तो इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं। सैनिकोंको सोवियतके निकट संपर्कमें लाने और उन्हें सार्वजनिक संघर्षमें साझी-दार बनानेके बदले उन्होंने इस बातकी माँग की कि सैनिक सेंट–पीटर्सबर्गसे बाहर बुला लिये जायँ। मजदूरोंको हथियार देने और उन्हें विद्रोहके लिये तैयार करनेके बदले वहाँका सोवियत दिन गिनता रहा और विद्रोहकी तैयारी करनेके विपक्षमें रहा।

मॉस्कोके मजदूर-प्रतिनिधियोंके सोवियतने क्रान्तिमें जो भाग लिया, वह इससे बिल्कुल भिन्न था। प्रारंभसे ही मॉस्को-सोवियतने पूर्ण क्रान्तिकारी नीतिका पालन किया। मॉस्को-सोवियतका नेतृत्व बोल्शेविकोंके हाथमें था। उन्हींके उद्योगके फलस्वरूप मजदूर-प्रतिनिधियोंके सोवियतके साथ-साथ मॉस्कोमें एक सैनिक प्रतिनिधियोंका सोवियत भी बन गया। मॉस्को-सोवियत सशस्त्र विद्रोहका एक साधन बना।

अक्तूबरसे दिसम्बर १९०५ की अवधिमें अनेक बड़े-बड़े नगरोंमें और मजदूर-वर्गके प्रायः सभी केन्द्रोंमें मजदूर-प्रतिनिधियोंके सोवियत स्थापित हो गये। मल्लाहों और सैनिकोंके प्रतिनिधियोंके सोवियत संगठित करने और उन्हें मजदूर-प्रतिनिधियोंके सोवियतोंसे मिला देनेके प्रयत्न किये गये। कुछ स्थानोंमें मजदूरों और किसानोंके प्रतिनिधियोंके सोवियत बनाये गये।

सोवियतोंका बहुत बड़ा प्रभाव था। उनकी उत्पत्ति बहुधा अपने आप हुई थी; उनका संगठन शिथिल और उनकी रूपरेखा अनिश्चित थी; फिर भी उन्होंने शासन-संस्थाओंका कार्य किया। क़ानूनी ताक़तके बिना ही उन्होंने मजदूरीके आठ घण्टे बाँध दिये और समाचारपत्रोंको स्वतंत्र कर दिया। उन्होंने जनतासे अपील की कि वह जारशाही सरकारको टैक्स न दे। कहीं-कहीं उन्होंने सरकारी रोकड़ भी हथिया ली और उसे क्रान्तिके कामोंमें लगाया।

दिसम्बरका सशस्त्र विद्रोह--विद्रोहकी असफलता--क्रान्तिका पीछे हटना--प्रथम राजकीय धारा-सभा--चौथी (सम्मिलित) पार्टी-कांग्रेस।

अक्तूबर और नवम्बर १९०५ में जनताका क्रान्तिकारी संघर्ष तीव्र वेगसे बढ़ता गया। मजदूरोंकी हड़तालें जारी रहीं।

१९०५ की शरद ऋतुमें जमींदारोंके विरुद्ध किसानोंकी लड़ाईने बहुत व्यापक रूप धारण कर लिया। देशके एक तिहाई जिलोंमें किसान-आन्दोलन फैल गया। सारोतौफ़, ताम्बौफ़, चेर्नीगौफ़, तिफ़्लिस, कुर्तेस तथा अन्य प्रान्तोंमें किसानोंने अच्छी खासी बग़ावत कर दी। फिर भी किसानोंका यह आक्रमण यथेष्ट रूपसे शक्तिशाली न था। किसान आन्दोलनमें संगठन और नेतृत्वका अभाव था।

तिफ़्लिस, ब्लादिवोस्तौक, ताशकन्द, समरकन्द, कुर्स्क, सुखुम, वार्सा, कियेफ़ और रीगाके सैनिकोंमें भी असन्तोष बढ़ चला। क्रौंस्तातमें विद्रोहकी ज्वाला फैल गयी और नवंबर १९०५ में काले सागरके जहाजी बेड़ेके मल्लाहोंने सेवास्तोपोलमें बलवा कर दिया। परन्तु ये विद्रोह बिखरे हुए थे; इसलिये जार-सरकार उन्हें दबा सकी।

जल और स्थल सेनाके दस्तोंमें अफ़सरोंका जंगली वर्ताव, रद्दी खाना और ऐसी ही दूसरी बातें विद्रोहका कारण होती थीं। मल्लाहों और सिपाहियोंमेंसे अधिकांशने जार-सरकारका तख़्ता उलटने और जमकर सशस्त्र विद्रोह करनेकी आवश्यकताका स्पष्ट रूपसे अनुभव न किया था। वे अब भी शान्तिपूर्ण बने हुए संतोषकी साँस ले रहे थे। विद्रोहके आरंभमें पकड़े हुए अफ़सरोंको छोड़ देनेकी वे अक्सर ग़लती कर बैठते थे और अपने ऊपरके लोगोंकी चिकनी-चुपड़ी बातों और उनके मीठे-मीठे वादोंसे शान्त हो जाते थे।

क्रान्तिकारी आन्दोलन अब सशस्त्र विद्रोहकी सीमाओंको छू रहा था। बोल्शेविकोंने जनतासे जार और जमींदारोंके प्रति सशस्त्र विद्रोह करनेके लिये कहा और समझाया कि यह अवश्यंभावी था। सशस्त्र विद्रोहकी तैयारी करनेके लिये बोल्शेविकोंने अथक परिश्रम किया। सिपाहियों और मल्लाहोंमें क्रान्तिकारी काम किया गया और सेनामें पार्टीके सैनिक संगठन क़ायम किये गये। कई शहरोंमें मजदूरोंके लड़ाकू जत्थे बनाये गये और उन्हें अस्त्र-शस्त्रोंका प्रयोग सिखाया गया। विदेशमें हथियार खरीदने और गुप्त रूपसे उन्हें रूसमें लानेका प्रबन्ध किया गया। पार्टीके प्रमुख सदस्योंने उन्हें जहाँ-तहाँ ले जानेके प्रबन्धमें भाग लिया।

नवंबर १९०५ में लेनिन रूस लौट आये। जारके गुप्तचरों और सिपाहियोंकी

आँख बचाते हुए लेनिनने सशस्त्र विद्रोहकी तैयारियोंमें हाथ बँटाया था। बोल्शेविक पत्र **नोवाया झिन** (नवजीवन) में उनके लेखोंने आये दिनके कार्योंमें पार्टीका मार्ग-दर्शन किया।

इस समय कॉमरेड स्तालिन कॉकेशस प्रदेशमें महान् क्रान्तिकारी कार्यका संचालन कर रहे थे। क्रान्ति और सशस्त्र विद्रोहके शत्रु मेन्शेविकोंकी उन्होंने खूब खबर ली। जारकी निरंकुशतासे निपटारेकी लड़ाई करनेके लिये उन्होंने दृढ़तासे मजदूरोंको तैयार किया। जिस दिन जारने अपना ऐलान जारी किया था, उसी दिन तिफ्लिसके मजदूरोंकी एक सभामें कॉमरेड स्तालिनने कहा था,—" सचमुच जीतनेके लिये हमें क्या चाहिये ? हथियार, हथियार, हथियार और हजार बार सिर्फ़ हथियार ! "

दिसम्बर १९०५ में फिनलैंडके तामेरफोर्स नामक नगरमें एक बोल्शेविक कान्फ्रेन्स हुई। यद्यपि बोल्शेविक और मेन्शेविक दल विधानके अनुसार एक ही सामाजिक-जनवादी पार्टीमें थे परन्तु वास्तवमें उनकी अब दो अलग-अलग पार्टियाँ बन गयी थीं। जिनके नेतृत्वके केन्द्र अलग-अलग थे। इस कान्फ्रेन्समें लेनिन और स्तालिनकी पहली बार भेंट हुई। इसके पहले उन्होंने दूसरे साथियों तथा पत्र-व्यवहार द्वारा ही संपर्क स्थापित किया था।

तामेरफोर्स-कान्फ्रेन्सके निर्णयोंमेंसे दोपर ध्यान देना आवश्यक है। पहला पार्टीमें एकता स्थापित करनेके सम्बन्धमें था। पार्टी वस्तुतः दो पार्टियोंमें विभक्त हो चुकी थी। दूसरा निर्णय पहली दूमाके जिसे " विते दूमा " कहा जाता था, बहिष्कारके सम्बन्धमें था।

उस समय मॉस्कोमें सशस्त्र विद्रोह प्रारंभ हो चुका था, इसलिये लेनिनकी सलाहसे कान्फ्रेंसने जल्दी ही अपना काम समाप्त कर दिया जिससे प्रतिनिधि स्वयं जाकर उस विद्रोहमें भाग ले सकें।

लेकिन जार-सरकार भी पिनकमें न थी। वह भी अन्तिम लड़ाईकी तैयारी कर रही थी। जापानसे संधि करके उसने अपनी कठिनाइयोंको कम कर लिया था; इसलिये अब उसने मजदूरों और किसानोंसे लड़ाई छेड़ दी। कई प्रांतोंमें जहाँ मजदूरों और किसानोंकी बगावत जोरोंपर थी, उसने फ़ौजी क़ानून जारी कर दिया। सिपाहियोंको यह क्रूर आज्ञा दी गयी—" गिरफ्तार मत करो, " " कारतूस खर्च करनेमें न हिचको "। क्रान्तिकारी आन्दोलनके नेताओंको पकड़ लेने और मजदूर-प्रतिनिधियोंके सोवियतोंको भंग कर देनेकी भी आज्ञा दी गयी।

इसके उत्तरमें मास्कोके बोल्शेविकोंने और उनके नेतृत्वमें चलने वाली मजदूर-प्रतिनिधियोंकी मॉस्को-सोवियतने, जिसका मजदूर जन-समूहसे निकट सम्पर्क था, सशस्त्र विद्रोहके लिये तत्काल तैयारी करनेका निश्चय किया। दिसम्बर ५ को (नयी शैली १८) मॉस्कोकी बोल्शेविक कमिटीने यह निर्णय किया कि सोवियतसे आम राजनीतिक हड़ताल करनेको कहा जाय। उद्देश्य यह था कि संघर्षके दौरानमें वह हड़ताल सशस्त्र

विद्रोहमें परिणत कर दी जायगी। मजदूरोंकी आम सभाओंमें इस निर्णयका समर्थन किया गया था। मॉस्को-सोवियतने मजदूर-वर्गकी प्रेरणाको स्वीकार किया और एकमतसे आम राजनीतिक हड़ताल शुरू कर देनेका निश्चय किया।

मॉस्कोके मजदूरोंने जब विद्रोह आरंभ किया तब लगभग एक हजार लड़ाकोंका उनका तैयार संगठन था; इनमें आधेसे ज्यादा बोल्शेविक थे। इसके सिवा मॉस्कोके अनेक कारखानोंमें लड़ाकू जत्थे थे। कुल मिलाकर विद्रोहियोंके पास दो हजार लड़ाके थे। मजदूरोंको आशा थी कि वे सैनिकोंको तटस्थ बना सकेंगे और उनमेंसे कुछको अपनी तरफ़ मिला भी लेंगे।

७ दिसम्बरको (नयी शैली २०) मास्कोमें राजनीतिक हड़ताल आरंभ हुई। फिर भी उसे देश-व्यापी बनानेके सभी प्रयत्न विफल हुए। सेंट-पीटर्सबर्गमें उसे बहुत कम सहायता मिली और इससे श्रीगणेश होते ही उसकी सफलताकी बहुत कम आशा रह गयी। निकोलायेव्स्काया (अब अक्तूबर) रेलवे जार-सरकारके हाथमें ही बनी रही। यह लाईन बराबर चालू रही; इसलिये सरकार विद्रोहको दबानेके लिये सेंट पीटर्सबर्गसे मॉस्कोके फ़ौजी दस्ते भेज सकी।

मॉस्कोके फ़ौजी दस्ते आगा-पीछा करते रहे। मजदूरोंने कुछ-कुछ इन दस्तोंकी भी मददके भरोसे विद्रोह आरंभ किया था। लेकिन क्रान्तिकारियोंने बहुत देर लगा दी थी और सरकार फ़ौजी दस्तोंकी हलचलको संभाल ले गयी।

९ दिसम्बरको (नयी शैली २२) मॉस्कोमें पहली मोर्चाबन्दी हुई। देखते-देखते शहरकी सड़कोंपर मोर्चे तैयार हो गये। जार-सरकार तोपें ले आयी। विद्रोहियोंकी शक्तिसे कई गुना अधिक शक्ति उसने एकत्र कर ली। लगातार नौ दिन तक कई हजार हथियारबन्द मजदूरोंने वीरतासे युद्ध किया। सेंट-पीटर्सबर्ग, त्वेर, और पच्छिमी भागोंसे फ़ौज बुलाकर ही जार-सरकार विद्रोहको दबा सकी। बगावतके ऐन मौक़ेपर विद्रोहियोंके कुछ नेता तो पकड़ लिये गये और कुछ दूर हटा दिये गये। मॉस्कोकी बोल्शेविक-कमिटीके सदस्य पकड़ लिये गये। सशस्त्र विद्रोहकी यह दशा हुई कि अलग-अलग मोहल्लोंकी बगावत अलग-अलग ही रही, उसे मिलाया न जा सका था। केन्द्रीय नेतृत्व और पूरे शहरके लिये समान कार्यक्रमके अभावमें मोहल्लोंका कार्य मुख्यतः आत्म-रक्षाके लिये ही रहा। मॉस्को-विद्रोहकी निर्बलताका मूल कारण यही था और यही उसकी पराजयका भी एक कारण था, जैसा कि बादमें लेनिनने बताया।

मॉस्कोके क्रास्नाया-प्रेन्स्या जिलेमें विद्रोहियोंने पूरी शक्तिसे अपनी जानको हथेलीपर लेकर युद्ध किया। विद्रोहका यही मुख्य गढ़ और केन्द्र था। बोल्शेविकोंके नेतृत्वमें सबसे अच्छे लड़ाकू जत्थे यहीं इकट्ठे हुए थे। लेकिन क्रास्नाया-प्रेस्न्याको सरकार मजदूरोंके खूनसे तर करके और तोपोंके गोलोंसे उसे भूनकर ही सर कर सकी। मॉस्कोका विद्रोह दबा दिया गया।

विद्रोहकी आग मॉस्को ही में न भड़की थी। और भी कई शहरों और जिलोंने सरगर्मी दिखायी थी। क्रोस्नोयार्स्क, मोतोविलीखा (पर्म), नोवोरोसिस्क, सोर्मोवो, सेवास्तोपोल और क्रोन्स्तातमें सशस्त्र विद्रोह हुआ था।

रूसकी पीड़ित अल्प-संख्यक जातियोंने भी लड़ाई छेड़ दी थी। प्रायः सम्पूर्ण जॉर्जियाने बगावत कर दी थी। यूक्राइनमें भी दोन्येत्स प्रदेशके गोरलोव्का, अलेग्जान्द्रोव्स्क और लुगान्स्क (अब वोरोशिलोफ़ग्राद) नामक शहरोंमें भारी विद्रोह हुआ था। लैटवियामें जमकर लड़ाई हुई। फ़िनलैण्डमें मजदूरोंने अपने लाल दस्ते बनाये और बगावत की।

लेकिन मॉस्कोके विद्रोहकी तरह इन बगावतोंको भी ज़ार सरकारने अमानुषीय बर्बरतासे दबा दिया।

दिसम्बर विद्रोहका मूल्यांकन बोल्शेविकों और मेन्शेविकोंने अलग-अलग तरहसे किया।

विद्रोहके बाद मेन्शेविक प्लेखानौफ़ने पार्टीको यह फटकार बतायी कि "अभी सशस्त्र विद्रोह करना ही न था।" मेन्शेविकोंका तर्क था कि विद्रोह हानिकारक और अनावश्यक था; क्रान्तिमें उसके बिना भी काम चल सकता था; और सफलता मिलेगी शान्तिपूर्ण युद्ध-नीतिसे, न कि सशस्त्र विद्रोहसे।

बोल्शेविकोंने इस विचार-धाराको विश्वासघातक बताया। उनका कहना था कि मॉस्कोके सशस्त्र विद्रोहके अनुभवसे यह बात और पक्की हो गयी थी कि मजदूर सशस्त्र संग्राममें सफल हो सकते हैं। "अभी सशस्त्र विद्रोह करना ही न था", प्लेखानौफ़की इस फटकारका लेनिनने उत्तर दिया :—

> "इसके विपरीत हमें और दृढ़ता, निर्भीकता और साहससे सशस्त्र विद्रोह करना था। हमें जनताको यह समझाना चाहिये था कि अपनी कार्यवाहीको शांतिपूर्ण हड़ताल तक ही सीमित रखना असंभव है और निर्भय होकर अविरत सशस्त्र संग्राम करना अनिवार्य है।"

(संक्षिप्त लेनिन-ग्रंथावली—अं. सं., खं. ३, पृ. ३४८)

दिसम्बर १९०५ के विद्रोहमें क्रान्ति अपनी चरम सीमाको पहुँच गयी। ज़ार-सरकारने विद्रोहको दबा दिया। उसके बाद क्रान्तिने पलटा खाया और अब धारा उल्टी बहने लगी। धीरे-धीरे क्रान्तिका ज्वार शान्त हो गया।

ज़ार-सरकारने तुरंत ही इस पराजयसे लाभ उठाकर क्रान्तिको सदाके लिये कुचल देनेका विचार किया। ज़ारके जेलर और जल्लाद अपने खूनी धन्धोंमें लग गये। पोलैंड लैटविया, एस्टोनिया, कॉकेशस प्रदेश और साइबेरियामें विद्रोहियोंको दंड देनेके लिये सिपाहियोंके जत्थे दौड़ पड़े।

लेकिन क्रान्तिकी आग अभी ठंडी न हुई थी। मजदूर और क्रान्तिकारी किसान बराबर लड़ते हुए बहुत धीरे-धीरे पीछे हटे। दूसरे नये स्तरोंके मजदूर लड़ाईमें हिस्सा

लेने लगे। १९०६ में दस लाखसे ऊपर मजदूरोंने और १९०७ में ७,४०,००० मजदूरोंने हड़तालमें भाग लिया। १९०६ के पूर्वार्द्धमें जारशाही रूसके आधे जिले किसान-आन्दोलनकी लपेटमें आगये थे; उस वर्षके उत्तरार्द्धमें आन्दोलनमें भाग लेनेवाले जिले कुल रूसका १/५ थे। जल और स्थल सेनाओंमें असंतोष सुलगता रहा।

क्रान्तिसे लोहा लेनेमें जार-सरकार दमनके भरोसे ही नहीं रही। दमनसे प्राथमिक सफलता प्राप्त करके उसने नयी दूमा, एक "धारा-सभा" बुलाकर क्रान्तिपर फिर एक प्रहार करनेका निश्चय किया। उसे आशा थी कि इससे किसान क्रान्तिका पल्ला छोड़ देंगे और फिर क्रान्ति खतम ही हो जायगी। दिसम्बर १९०५ में जार सरकारने एक नयी "धारा-सभा-दूमा" बुलानेका क़ानून बनाया; यह "धारा-सभा-दूमा" बुलीगिनकी उस "विचार-सभा-दूमा"से भिन्न थी जिसकी वोल्शेविकोंके बहिष्कारसे अकाल मृत्यु हो गयी थी। कहना न होगा जार-सरकारने चुनाव का जो क़ानून बनाया था वह जनवादके विरुद्ध था। मताधिकार सभीके लिये न था। उदाहरणके लिये स्त्रियों और बीस लाखसे ऊपर मजदूरोंको—इस प्रकार सब मिलाकर आधीसे अधिक जनताको मताधिकार दिया ही न गया था। निर्वाचन-प्रथामें भी सर्वत्र समानता न थी। मत देने वाली जनताके चार 'क्यूरिआ' अथवा विभाग किये गये थे, (१) ग्राम-विभाग (जमींदार), (२) नगर-विभाग (पूँजीपति), (३) किसान और [४] मजदूर। चुनाव भी सीधे न होता था, वरन उसमें कई घुमाव-फिराव थे। वास्तवमें गुप्त रूपसे वोट देनेकी व्यवस्था की ही न गयी थी। निर्वाचन प्रथासे यह निश्चित था कि दूमामें लाखों मजदूरों और किसानोंके सिरपर मुट्ठी भर पूँजीपति और जमींदार ही जोर-शोरसे अपनी डफली बजायेंगे।

जारने सोचा कि दूमाके अंकुशसे जन-साधारणको क्रान्तिसे मोड़ दिया जायगा। उन दिनों बहुतसे किसानोंको यह विश्वास था कि दूमा उन्हें जमीन दिला देगी। वैधानिक-जनवादी, मेन्शेविक और सामाजिक-क्रान्तिकारी जनताको यह कहकर धोखा देते थे कि जनताको जिस व्यवस्थाकी आवश्यकता है, वह विद्रोह और क्रान्तिके बिना ही मिल जायगी। जनताके साथ इस धोखेबाजीका भंडाफोड़ करनेके लिये वोल्शेविकोंने इस दूमाका बहिष्कार करनेकी नीति घोषित की और उसका अनुसरण किया। यह नीति तामेरफोर्स-कान्फ्रेन्सके निर्णयके अनुकूल ही थी।

जारशाहीके विरुद्ध अपनी लड़ाईमें मजदूरोंने माँग की कि पार्टीके दल एक हों, सर्वहारा वर्गकी पार्टी संयुक्त हो। तामेरफोर्स-कान्फ्रेन्सके एकता-सम्बन्धी निर्णयके बल पर वोल्शेविकोंने मजदूरोंकी इस माँगका समर्थन किया और मेन्शेविकोंके आगे यह प्रस्ताव रखा कि पार्टीकी एक सम्मिलित कांग्रेस बुलायी जाय। मजदूरोंके दबावसे मेन्शेविकोंको पार्टीमें एका करनेके लिये बाध्य होना पड़ा।

लेनिन एकताके पक्षमें थे लेकिन वह चाहते थे कि यह ऐसी एकता हो कि उससे क्रांति-सम्बन्धी समस्याओंपर आपसके मतभेदपर पर्दा न पड़ जाय। वोग्दा-

नौफ़, क्रासिन और दूसरे समझौता कराने वालोंने यह सिद्ध करनेका प्रयत्न किया कि बोल्शेविकों और मेन्शेविकोंमें कोई गहरा मतभेद नहीं है। इससे पार्टीको काफ़ी नुक्सान पहुँचा। लेनिनने इन विचवानियोंसे कहा कि बोल्शेविक अपनी स्पष्ट नीति लेकर ही कांग्रेसमें जायँ जिससे कि मजदूर उनकी बातको साफ़–साफ़ समझ सकें और यह जान सकें कि किस आधार पर एका हो रहा है। बोल्शेविकोंने अपनी नीति निर्धारित की और पार्टी–मेम्बरोंके सामने विचार करनेके लिये उसे रखा।

रूसी सामाजिक–जनवादी मजदूर–पार्टीकी चौथी "सम्मिलित" कांग्रेस अप्रैल १९०६ में स्टॉकहोम (स्वीडेन) में हुई। पार्टीके ५७ स्थानीय संगठनोंके १११ प्रतिनिधि एकत्र हुए। इन्हें वोट देनेका अधिकार था: इनके सिवा जातीय सामाजिक–जनवादी पार्टियोंके प्रतिनिधि भी आये—३ बुंदसे, ३ पोलैंड की सामाजिक–जनवादी पार्टीसे और ३ लैटवियाके सामाजिक जनवादी संगठनसे।

दिसम्बरके विद्रोहमें और उसके बाद बोल्शेविक–संगठन छिन्न–भिन्न हो गये थे; इसलिये उनमेंसे सभी अपने प्रतिनिधि न भेज सके थे। इसके सिवा १९०५ के "आजादीके दिनों" में मेन्शेविकोंने अपने दलमें बहुतसे निम्न–पूँजीवादी बुद्धिजीवियोंको मिला लिया था जो क्रान्तिकारी मार्क्सवादसे कोसों दूर थे। परिस्थितिका अनुमान इसीसे हो जायगा कि तिफ़्लिससे, जहाँ कल-कारखानोंमें काम करने वाले बहुत कम मजदूर थे, मेन्शेविकोंने उतने ही प्रतिनिधि भेजे थे जितने कि सर्वहारा संगठनोंमें सबसे बड़े, सेंट–पीटर्सबर्गके संगठनसे भेजे थे। इसका फल यह हुआ कि स्टॉकहोम कांग्रेसमें मेन्शेविकोंका बहुमत रहा यद्यपि यह सही है कि पासंग बराबर बोझसे ही उनका पलड़ा भारी हुआ।

कई प्रश्नोंके सम्बन्धमें कांग्रेसके निर्णयोंपर जो मेन्शेविक नीतिकी छाप थी, उसका यही कारण था।

कांग्रेसमें "ऊपरी" एकता ही क़ायम हुई। वास्तवमें बोल्शेविकों और मेन्शेविकोंने अपनी विचार-धाराओं और अपने स्वतंत्र संगठनोंको बनाये रखा।

चौथी कांग्रेसमें जिन मुख्य प्रश्नोंपर विचार किया गया, वे किसानोंके सम्बन्धमें, वर्तमान परिस्थिति और मजदूरोंके वर्ग-गत कर्तव्यके सम्बन्धमें, दूमाके प्रति नीति और संगठनके सम्बन्धमें थे।

यद्यपि कांग्रेसमें मेन्शेविकों का बहुमत था, फिर भी मजदूरोंके विरोधको बचानेके लिये लेनिन द्वारा प्रस्तावित पार्टी-नियमावलीके पहले पैराग्राफ़से उन्हें सहमत होना पड़ा।

किसान-सम्बन्धी प्रश्नपर लेनिनका कहना था कि भूमिपर प्रजाका अधिकार (उसका राष्ट्रीयकरण) होना चाहिये। और भूमिपर प्रजाका अधिकार तभी हो सकता है जब क्रान्ति सफल हो और जारशाहीका तख़्ता उलट जाय। ऐसी परिस्थिति होनेपर गरीब किसानोंके सहयोगसे सर्वहारा वर्गके लिये समाजवादी क्रान्तिकी ओर

अभिसंक्रमण करना सरल हो जायगा। भूमिके राष्ट्रीयकरणका अर्थ यह था कि जमींदारोंसे बिना उन्हें मुआविज़ा दिये उनकी रियासतें छीनकर किसानोंको दे दी जायँ। बोल्शेविकोंका किसान-सम्बधी कार्यक्रम जार और जमींदारोंके विरुद्ध किसानोंसे क्रान्ति करनेको कहता था।

मेन्शेविकोंकी राय दूसरी थी। राष्ट्रीयकरणके बदले वे **म्युनिसिपल-करण**के हामी थे। उनका कार्यक्रम यह था कि रियासती भूमि किसानोंको न तो सौंपी जाय न उससे काम लेनेकी ही उन्हें छूट दी जाय, वरन् यह भूमि म्युनिसिपैलिटियों (अर्थात् स्वायत्त-शासनकी केन्द्रीय संस्थाओं या जेम्स्त्वो) को सौंप दी जाय और किसान इसमेंसे जितनी भूमि चाहें **किरायेपर** ले लें।

म्युनिसिपल-करणका यह मेन्शेविक प्रोग्राम समझौतेका था, इसलिये क्रान्तिके लिये अनिष्टकर था। इससे किसानोंमें क्रान्तिकारी संग्रामके लिये आन्दोलन न हो सकता था और न उससे भूमि-सम्बन्धी रियासती हक़ोंका ही ख़ातमा हो सकता था। मेन्शेविकोंने ऐसा प्रोग्राम बनाया था कि क्रान्ति अधबिचमें ठप हो जाय।

मेन्शेविक-प्रोग्राम कांग्रेसके बहुमतसे पास हुआ।

मेन्शेविकोंने वर्तमान परिस्थिति और दूमा-सम्बन्धी प्रस्तावपर विवाद करते हुए अपनी सर्वहारा-विरोधी अवसरवादी मनोवृत्तिको विशेष रूपसे प्रकट कर दिया। क्रान्तिमें सर्वहारा वर्गके आधिपत्यका मेन्शेविक मार्तिनोफ़ने खुले रूपमें विरोध किया। मेन्शेविकोंको उत्तर देते हुए कॉमरेड स्तालिनने बातका यों खुलासा कर दिया कि, "आधिपत्य सर्वहारा-वर्गका हो या जनवादी पूँजीपतियोंका,—पार्टीके सामने यही मूल प्रश्न है और इसीपर हमारा मतभेद है।"

दूमाके बारेमें मेन्शेविकोंका विचार था कि क्रान्तिकी समस्याओंको सुलझानेका वह सबसे सुन्दर साधन है; उससे जनताको जारशाहीसे स्वाधीनता भी मिल जायगी, इसलिये उन्होंने अपने प्रस्तावमें उसकी जी खोलकर प्रशंसा की। इसके विपरीत बोल्शेविकोंका कहना था कि दूमा जारशाहीका निर्जीव पुछल्ला है; वह एक पर्दा है जिससे जारशाही अपने दोषोंको छिपाना चाहती है और सुविधा होते ही जिसे वह उतार फेंकेगी।

चौथी कांग्रेसमें जो केन्द्रीय समिति चुनी गयी, उसमें तीन बोल्शेविक थे और छः मेन्शेविक। केन्द्रीय पत्रके सम्पादक-मंडलमें सभी मेन्शेविक रखे गये।

ज़ाहिर था कि पार्टीकी भीतरी लड़ाई जारी रहेगी।

चौथी कांग्रेसके बाद बोल्शेविकों और मेन्शेविकोंके द्वन्द्वमें और भी तेज़ी आ गयी। स्थानीय संगठनोंमें, जो ऊपरसे संयुक्त दिखते थे, कांग्रेसकी रिपोर्ट बहुधा दो वक्ता सुनाते थे,—एक बोल्शेविकोंमेंसे, दूसरा मेन्शेविकोंमेंसे। दोनों विचारधाराओं पर विवादका फल अधिकांश बार यह निकलता था कि संगठनोंका बहुमत बोल्शेविकों की ओर हो जाता था।

घटना-क्रमने सिद्ध कर दिया कि बोल्शेविक सही रास्तेपर थे। चौथी कांग्रेसमें जो मेन्शेविक केन्द्रीय समिति चुनी गयी थी वह अधिकाधिक अपना अवसरवाद प्रकट करने लगी और जनताके क्रान्तिकारी संग्रामका नेतृत्व करनेमें अपनेको नितान्त अक्षम सिद्ध करने लगी। १९०६ की ग्रीष्म और शरद् ऋतुओंमें जनताकी क्रान्तिकारी लड़ाई ने नया जोर पकड़ा। क्रोन्स्तात और स्वीआवर्गमें मल्लाहोंने बगावत कर दी और किसान जमींदारोंसे विद्रोह करने लगे। फिर भी मेन्शेविक केन्द्रीय समिति अवसरवादी नारे लगाते रही। जनताने उसके स्वरमें स्वर मिलानेसे इनकार किया।

६. पहली राज-दूमाका भंग होना—दूसरी राज-दूमाका आयोजन—पाँचवीं पार्टी-कांग्रेस—दूसरी राज-दूमाका भंग होना—पहली रूसी राज्य-क्रान्तिकी असफलताके कारण।

पहली राज-दूमा जारके लिये काफ़ी हाँ–हुजूरी करनेवाली साबित न हुई; इसलिये जार-सरकारने १९०६ की गर्मीमें उसे भंग कर दिया। जनतापर और भी घनघोर दमन होने लगा; सारे देशमें जल्लाद-जत्थोंके अत्याचारसे हाहाकार मच गया। सरकारने शीघ्र ही दूसरी राज दूमा बुलानेका अपना निश्चय घोषित किया। जार-सरकारकी धृष्टता खुलासा बढ़ती जा रही थी। अब उसे क्रान्तिसे डर न लगता था क्योंकि उसे दीख रहा था कि क्रान्तिकी लहर किनारा छोड़कर पीछे हट रही है

बोल्शेविकोंको निर्णय करना था कि दूसरी दूमामें भाग लें या उसका बहिष्कार करें। बहिष्कारसे बोल्शेविक यह न समझते थे कि चुनावमें वोट न देकर निष्क्रिय रूपसे बैठ जायँ, वरन् बहुधा उनका यह अर्थ होता था कि बहिष्कारको सक्रिय बनाया जाय।

बोल्शेविकोंकी दृष्टिमें सक्रिय बहिष्कार जनताको इस बातकी ओर सजग करनेका एक क्रान्तिकारी ढंग था कि जार उसे क्रान्तिकी राहसे हटाकर जारशाही "विधान-वाद"के दलदलमें फँसाना चाहता है। सक्रिय बहिष्कारसे जारकी चालें विफल हो सकती थीं और नया जन-संगठन करके फिर जारशाहीपर धावा बोला जा सकता था।

बुलीगिन–दूमाके बहिष्कारके अनुभवने यह दिखा दिया था कि बहिष्कारकी नीति ही "एक सही कार्यनीति थी, जैसा कि घटनाक्रमने पूरी तरहसे सिद्ध कर दिया था।" (**संक्षिप्त लेनिन-ग्रंथावली—अं. सं., खं. ३, पृ. ३९३**)। यह बहिष्कार सफल हुआ था क्योंकि इसने जारशाही विधानवादके दलदलके प्रति जनताको सजग

ही न किया था वरन् दूमाके जन्मपर ही कुठाराघात किया था। यह वहिष्कार इस लिये सफल हुआ था कि वह क्रान्तिके **उठते हुए ज्वार**के समय किया गया था; उसे इस ज्वारसे सहायता मिली थी। वहिष्कार तव न किया गया था जव लहरें किनारा छोड़कर पीछे हट रही थीं। क्रान्तिके **पूरे ज्वार**के समय ही दूमाके आयोजनको विफल किया जा सकता था।

वित्ते-दूमा या पहली दूमाका वहिष्कार तव किया गया था, जव दिसम्वरका विद्रोह विफल कर दिया गया था, जव विजय ज़ारके हाथमें थी अर्थात् वहिष्कार तव हुआ जव यह समझनेके लिये यथेष्ट प्रमाण थे कि क्रान्तिकी लहरें पीछे लौट रही हैं।

लेनिनने लिखा था,

"लेकिन यह कहनेकी जरूरत नहीं है कि उस समय इस (ज़ारकी-सं.) विजय को निर्णयात्मक समझनेके लिये कोई प्रमाण न थे। दिसम्वर १९०५ के विद्रोहके उपसंहार रूपमें १९०६ की ग्रीष्म ऋतुमें विखरे हुए आंशिक सैनिक-विद्रोह और हड़तालें हुईं। वित्ते-दूमाका वहिष्कार करनेकी पुकारका अर्थ था कि, इन विखरे हुए विद्रोहोंको समेटा जाय और उन्हें एक सार्वजनिक विद्रोहका रूप दिया जाय।" (**लेनिन-ग्रंथावली—रूसी सं. खंड १२, पृ. २०**)

वित्ते-दूमाके वहिष्कारसे उसकी आयोजनाको व्यर्थ न किया जा सका परन्तु इससे उसके गौरवको काफ़ी क्षति पहुँची और जनताके कुछ अंशोंकी उसपरसे श्रद्धा हट गयी। वहिष्कार दूमाकी आयोजनाको विफल इसलिये न कर सका कि उस समय क्रान्ति अपने उतारपर थी, उसकी दिशा ह्रासकी ओर थी जैसा कि वादमें स्पष्ट हो गया था। इस कारणसे १९०६ में पहली दूमाका वहिष्कार असफल रहा था। लेनिनने अपनी प्रसिद्ध पुस्तिका '**उग्रपंथी कम्युनिज़्मः बालव्याधि**'में इस सम्वन्धमें लिखा था:-

"१९०५ में वोल्शेविकों द्वारा 'पार्लियामेंट'के वहिष्कारसे क्रान्तिकारी सर्वहारावर्गको वहुमूल्य राजनीतिक अनुभव प्राप्त हुआ। उससे यह विदित हो गया कि लड़ाईके क़ानूनी और ग़ैर-क़ानूनी तथा पार्लियामेंटके भीतर और वाहरके लड़ाइयोंके तरीक़ोंको मिलानेमें यह वात लाभप्रद ही नहीं कभी-कभी अत्यावश्यक हो जाती है कि पार्लियामेंटके भीतरके लड़ाईके तरीक़ोंको ताकपर रख दिया जाय। ...१९०६ में वोल्शेविकों द्वारा दूमाका वहिष्कार करना ग़लती थी यद्यपि यह यह एक मामूली ग़लती थी और आसानीसे सुधारी जा सकती थी।... जो वात व्यक्ति पर लागू होती है वह थोड़े वहुत आवश्यक हेरफेरसे राजनीति और पार्टियों पर भी लागू हो सकती है। वुद्धिमान वह नहीं है जो कभी ग़लती करताही नहीं है। संसारमें न तो ऐसे आदमी हैं और न हो ही सकते हैं। वुद्धिमान वह है जो वहुत वड़ी ग़लतियाँ नहीं करता और जो जानता है कि जल्दी और आसानीसे उन्हें कैसे सुधार लेना चाहिये।"

(**लेनिन-ग्रंथावली—रू. सं., खं. २५, पृ. १८२—८३**)

दूसरी राज-दूमाके बारेमें लेनिनका कहना था कि भिन्न परिस्थिति और क्रान्तिके ह्रासको दृष्टिमें रखते हुए बोल्शेविकोंको बहिष्कारके प्रश्नपर पुनर्विचार करना चाहिये ”

(संक्षिप्त लेनिन-ग्रंथावली—अं. सं., खं. २, पृ. ३९२)

लेनिनने लिखा था :

“ इतिहासने दिखा दिया है कि दूमाकी आयोजना होनेपर उसके भीतर, और उसके सम्बन्धमें उसके बाहर भी लाभप्रद आन्दोलन करनेके अवसर आते रहते हैं, और यह भी कि वैधानिक-जनवादियोंके विरुद्ध क्रान्तिकारी किसानोंका साथ देनेकी कार्यनीति दूमामें भी चरितार्थ की जा सकती है।” (उपरोक्त—पृ. ३९६)

इस सबसे प्रकट होता था कि हमारे लिये यही जानना आवश्यक नहीं है क्रान्तिके उठानके समय दृढ़तासे और सबके आगे कैसे बढ़ा जाय, वरन् यह भी जानना आवश्यक है कि क्रांति जब उठानपर न हो तब कैसे क़ायदेसे पीछे हटा जाय, सबके बादमें हटा जाय और परिस्थितिमें परिवर्तन होनेपर अपनी कार्यनीतिमें भी परिवर्तन करते हुए पीछे हटा जाय। हटा जाय तो भगदड़में नहीं वरन् संगठित तरीक़ेसे, शांतिसे, बिना दहशतके; और दुश्मन की गोलाबारीसे अपने सिपाहियोंको बचानेके लिये छोटेसे अवसरका भी उपयोग किया जाय, अपनी सफ़ें दुरुस्त की जायँ और सेनाको संगठित करके शत्रुपर नये आक्रमणकी तैयारी की जाय।

बोल्शेविकोंने दूसरी दूमाके निर्वाचनमें भाग लेनेका निश्चय किया।

लेकिन बोल्शेविक दूमामें इसलिये नहीं गये कि वहाँ वे मेन्शेविकोंकी तरह वैधानिक-जनवादियोंके साथ दल बनाकर रचनात्मक ढंगसे “ क़ानून ” बनायें, वरन् वे वहाँ इसलिये गये कि क्रान्तिके हितोंके लिये वे उसका प्रचार मंचके रूपमें उपयोग कर सकें।

इसके विपरीत मेन्शेविक केन्द्रीय समिति इस बातपर जोर दे रही थी कि निर्वाचन-कालमें वैधानिक-जनवादियोंसे बात पक्की कर ली जाय और दूमामें उनका समर्थन किया जाय। उनकी दृष्टिमें दूमा एक ऐसी व्यवस्थापिका सभा थी जो ज़ारकी नकेल थाम सकती थी।

पार्टी-संगठनोंमेंसे अधिकांशने मेन्शेविक केन्द्रीय समितिकी नीतिके विरुद्ध अपना मत प्रकट किया।

बोल्शेविकोंने माँग की कि एक नयी पार्टी-कॉंग्रेस बुलायी जाय।

मई १९०७ में लन्दनमें पांचवी पार्टी-कॉंग्रेस हुई। इस कॉंग्रेसके अवसरपर (जातीय सामाजिक-जनवादी संगठनोंको मिलाकर) रूसकी सामाजिक-जनवादी पार्टीके मेम्बरोंकी संख्या १,५०,००० के लगभग थी। कुल मिलाकर ३३६ प्रतिनिधि कॉंग्रेसमें शामिल हुए; इनमें १०५ बोल्शेविक थे, और ९७ मेन्शेविक। शेष प्रतिनिधि जातीय सामाजिक-जनवादी संगठनोंकी ओरसे—पोलैंड और लैटवियाके सामाजिक-जनवादियों और बुन्दकी ओरसे—आये थे। ये संगठन पिछली कांग्रेसमें रूसी सामाजिक-जनवादी पार्टीमें मिला लिये गये थे।

कांग्रेसमें त्रात्स्कीने भी अपना एक मध्यवादी (सेन्ट्रिस्ट) या अर्द्ध-मेन्शेविक दल बनानेका प्रयत्न किया लेकिन कोई अनुयायी न मिला।

पोलैंड और लैटविआके प्रतिनिधियोंका सहयोग मिलनेसे कांग्रेसमें बोल्शेविकोंका एक स्थायी बहुमत हो गया।

कांग्रेसमें एक प्रमुख विवादास्पद प्रश्न यह था कि पूँजीवादी पार्टियोंके प्रति किस नीतिका पालन किया जाय। दूसरी कांग्रेसमें ही इस प्रश्नपर बोल्शेविकों और मेन्शेविकोंमें झड़प हो चुकी थी। पाँचवीं कांग्रेसने सर्वहारा वर्गसे इतर सभी पार्टियोंका बोल्शेविक ढंगसे मूल्यांकन किया। ये पार्टियाँ थीं,—यमदूत-सभाएँ (ब्लैक हंड्रेड्स), अक्तूबरवादी (१७ वीं अक्तूबरका संघ), वैधानिक-जनवादी और सामाजिक-क्रान्तिकारी। कांग्रेसने इन पार्टियोंके सम्बन्धमें बोल्शेविकोंकी कार्यनीतिको अपनाया।

कांग्रेसने बोल्शेविकोंकी नीतिको स्वीकार किया और इन सभी पार्टियोंसे डटकर युद्ध करनेका निर्णय किया। यमदूत-सभाओंमें रूसी जनताकी लीग, सम्राटवादी (मोनार्किस्ट), और संयुक्त सरदार-मंडल (काउंसिल ऑव दि युनाइटेड नोबीलिटी) सम्मिलित थे। इनके साथ अक्तूबरवादी, सौदागरों और मिलमालिकोंकी पार्टी तथा शांतिमय परिवर्तन वालोंकी पार्टियाँ भी थीं। ये सभी पार्टियाँ खुले रूपमें क्रान्ति-विरोधी थीं।

उदारपंथी पूँजीवादियोंकी पार्टी, वैधानिक-जनवादी पार्टीकी ओर कांग्रेसने यह नीति स्वीकार की कि बिना किसी मेल-मुलाहजेके उनका भंडाफोड़ किया जाय। वैधानिक-जनवादियोंके झूठे और बने हुए जनवादका पर्दाफ़ाश किया जाय। उदारपंथी पूँजीवादी किसान-आन्दोलनपर हावी होनेकी कोशिश कर रहे थे; उनकी इन कोशिशोंको बेकार करना था।

पौपुलर सोशलिस्ट, त्रुदोविक गुट और सामाजिक-क्रान्तिकारियोंको त्रुदोविक, नारोद्निक या लोकवादी पार्टी कहा जाता था। ये तथाकथित लोकवादी समाजवादका बाना पहने हुए थे; कांग्रेसने तै किया कि इनकी भी क़लई खोली जाय। साथ ही कांग्रेसने इस बातको भी उचित ठहराया कि जारशाही और वैधानिक-जनवादी पूँजीपतियोंपर एक साथ सम्मिलित आक्रमण करनेके लिये इनके साथ कभी-कभी समझौता भी कर लिया जाय, क्योंकि उस समय ये पार्टियाँ जनतांत्रिक थीं और ग्राम और नगरके निम्न-पूँजीवादियोंके हितोंका प्रतिनिधित्व करती थीं।

इस कांग्रेसके पहले भी मेन्शेविकोंने यह प्रस्ताव किया था कि एक तथाकथित "मजदूर-कांग्रेस" बुलायी जाय। उनका विचार था कि एक ऐसी कांग्रेस की जाय जिसमें सामाजिक-जनवादी, सामाजिक-क्रान्तिकारी और अराजकतावादी, सभी अपने प्रतिनिधि भेजें। यह "मजदूर कांग्रेस" एक ऐसी पार्टी हो जो और "सभी पार्टियों से ऊपर" हो या बिना किसी कार्यक्रमके एक "व्यापक" निम्न-पूँजीवादी मजदूर-पार्टी हो। लेनिनने इस चालकी धूर्तताको स्पष्ट कर दिया। इससे सामाजिक-जनवादी पार्टी निर्बल हो जाती और मजदूर-वर्गका अग्रदल निम्न-पूँजीवादियोंके दलदलमें नष्ट

हो जाता । मेन्शेविकोंके "मज़दूर-कांग्रेस" बुलानेके प्रस्तावका कांग्रेसने जोरदार विरोध किया ।

कांग्रेसमें ट्रेड-यूनियनों (मज़दूर-सभाओं—सं.) के प्रश्नपर विशेष ध्यान दिया गया । मेन्शेविकोंका कहना था कि ट्रेड-यूनियन "तटस्थ" रहें; दूसरे शब्दोंमें वे इस बातका विरोध करते थे कि पार्टी उनका नेतृत्व करे । कांग्रेसने मेन्शेविकोंके प्रस्तावको रद कर दिया और बोल्शेविकोंके इस प्रस्तावको स्वीकार किया कि पार्टीको उनका सैद्धान्तिक और राजनीतिक नेतृत्व अवश्य ग्रहण करना चाहिये ।

मज़दूर-आन्दोलनमें पाँचवीं कांग्रेस बोल्शेविकोंकी एक महान विजय थी । लेकिन बोल्शेविक इस विजयसे न तो संतुष्ट होकर बैठ रहे; और न उन्होंने उससे अपना सिर फिर जाने दिया । लेनिनने उन्हें यह न सिखाया था । वे जानते थे कि मेन्शेविकोंसे अभी और लड़ना बाक़ी है ।

"एक प्रतिनिधिके नोट" नामक अपने एक लेखमें, जो १९०७ में प्रकाशित हुआ था, कॉमरेड स्तालिनने कांग्रेसके परिणामोंका इस प्रकार मूल्यांकन किया था:—

> **क्रान्तिकारी** सामाजिक-जनवादके झंडेके नीचे रूसके आगे बढ़े हुए मज़दूरोंमें वास्तविक एकताकी स्थापना हुई—यही लन्दन-कांग्रेसका महत्व है, यही उसकी मूल विशेषता है ।"

इस लेखमें कॉ. स्तालिनने प्रतिनिधियोंके बारेमें आँकड़े दिये थे । इनसे मालूम हो जाता है कि बोल्शेविक प्रतिनिधि मुख्यतः बड़े औद्योगिक केन्द्रोंसे भेजे गये थे । ये केन्द्र सेंट-पीटर्सबर्ग, मॉस्को, यूराल, ईवानोवो-वोज़्नेसेंस्क, आदि बड़े-बड़े शहर थे । मेन्शेविक प्रतिनिधि उन ज़िलोंसे आये थे जहाँ उद्योग-धंधे छोटे पैमानेपर चालू थे, जहाँ कारीगरों और अर्द्ध-सर्वहारा स्तरके लोगोंका प्राधान्य था । उनमेंसे कुछ ठेठ देहाती इलाक़ोंसे भी आये थे ।

कांग्रेसके परिणामोंके निवेचनके अंतमें कॉ. स्तालिनने लिखा था:—

> "यह स्पष्ट है कि बोल्शेविकोंकी कार्यनीति बड़े उद्योग-धंधोंके सर्वहारा वर्गकी कार्यनीति है । यह कार्यनीति उन इलाकोंकी है जहाँ वर्ग-विरोध खूब स्पष्ट है और वर्ग-संघर्ष विशेष रूपसे तीव्र है । बोल्शेविज़्म वास्तविक सर्वहारा वर्गकी कार्यनीति है । इसके विपरीत, यह कम स्पष्ट नहीं है कि मेन्शेविकोंकी कार्यनीति हाथके कारीगरों और अर्द्ध-सर्वहारा स्तरके किसानोंकी कार्यनीति है । यह कार्यनीति उन इलाक़ोंकी है जहाँ वर्ग-विरोध अच्छी तरह स्पष्ट नहीं हुआ और वर्ग-संघर्ष छिपा हुआ है । मेन्शेविकोंकी कार्यनीति उन मज़दूरोंकी है, जो निम्न-पूँजीवादी स्तरके हैं । आँकड़ोंसे यही सिद्ध होता है ।"
> **(पाँचवीं कांग्रेसकी शब्दशः रिपोर्ट:—रूसी सं., १९३५., पृ. ११-१२)**

ज़ारने जब पहली दूमाको भंग किया था, तब उसे आशा थी कि दूसरी दूमा उसके अधिक अनुकूल होगी । लेकिन दूसरी दूमाने भी उसकी आशापर पानी फेर

दिया। तब ज़ारने उसे भी भंग कर देनेका निश्चय किया और मताधिकारको और सीमित करके उसने तीसरी दूमा बुलानेका विचार किया। उसे आशा थी कि यह दूमा जी-हुजूरी करने वाली होगी।

पाँचवीं कांग्रेसके कुछ समय बाद ही ज़ारने दूसरी दूमाको भंग कर दिया। इसे ३ जून १९०७ का "राजकीय बलात्कार" कहते हैं। दूमाके ६५ सदस्य जो सामाजिक-जनवादी दलके थे, पकड़ लिये गये और उन्हें साइबेरियामें देश-निकाला दे दिया गया। निर्वाचनका एक नया क़ानून जारी हुआ। किसानों और मजदूरोंके अधिकारोंको और भी कम कर दिया गया। ज़ार-सरकारने अपना आक्रमण जारी रखा।

ज़ारके मंत्री स्तोलीपिनने मज़दूरों और किसानोंको बर्बरतापूर्वक दंड देनेकी मुहीम और तेज़ की। दंड देने वाले जत्थोंने हज़ारों क्रान्तिकारी मज़दूरों और किसानों को गोलियोंसे भून डाला या फाँसीपर लटका दिया। ज़ारकी काल-कोठरियोंमें क्रान्तिकारियोंको अपार शारीरिक और मानसिक यंत्रणा दी गयी। मज़दूर-संगठनों और उनमें भी विशेष रूपसे बोल्शेविकोंपर जुल्म करनेमें सरकारने कुछ उठा न रखा। खुफ़िया कुत्ते लेनिनका सुराग़ पानेके लिए हैरान थे। लेनिन उस समय गुप्त रूपसे फ़िनलैंडमें थे। सरकार क्रान्तिके नेताको पकड़कर उसपर अपना गुस्सा उतारना चाहती थी। दिसम्बर १९०७ में लेनिनने बड़ी जोखिमका सामना करके विदेशकी राह ली और फिर प्रवासी हो गये।

स्तोलीपिनके काले कारनामोंके दिन शुरू हुए।

इस प्रकार पहली रूसी क्रान्तिका अन्त पराजयमें हुआ।

क्रान्तिकी विफलताके ये कारण थे—

(१) क्रान्तिमें ज़ारशाहीके विरुद्ध किसानों और मजदूरोंमें अभी कोई स्थायी सहयोग न क़ायम हो पाया था। किसानोंने ज़मींदारोंसे बग़ावतकी और उनके विरुद्ध वे मज़दूरोंसे सहयोग करने को तैयार थे। लेकिन अभी उन्होंने इस बातका अनुभव न किया था कि जब तक ज़ारका पतन नहीं होता, तब तक ज़मींदारोंका भी पतन नहीं हो सकता; और न इस बातका अनुभव किया था कि ज़ार और ज़मींदारोंकी दाँतकाटी रोटी है, वे दोनों ही मिलकर काम करते हैं। बहुतसे किसानोंको ज़ारमें अब भी विश्वास था और वे ज़ारकी राज-दूमासे कुछ पानेकी आशा लगाये थे। इसीलिये किसानोंकी एक अच्छी खासी तादाद ज़ारशाहीके ध्वंसके लिये मजदूरोंसे सहयोग करनेके लिये तैयार न थी। किसानोंको सच्चे क्रान्तिकारी बोल्शेविकोंकी अपेक्षा समझौतावादी सामाजिक-क्रान्तिकारियोंकी पार्टीपर अधिक भरोसा था। इसका फल यह हुआ कि ज़मींदारोंके विरुद्ध किसानोंकी लड़ाई काफ़ी संगठित रूपसे नहीं हुई। लेनिनके शब्दोंमें:—

> "किसानोंका विद्रोह बहुत बिखरा हुआ, बहुत असंगठित और काफ़ी कमजोर था। क्रान्तिकी पराजयका यह एक मुख्य कारण था।" (**लेनिन-ग्रंथावली—रू. सं., खंड १९, पृ. ३५४**)

(२) जारशाहीका ध्वंस करनेके लिये बहुतसे किसानोंने मजदूरोंसे सहयोग करनेमें जो आनाकानी की, उसका फ़ौजपर भी प्रभाव पड़ा क्योंकि उसमें अधिकतर फ़ौजी पोशाकमें किसानोंके ही लड़के थे। जारकी सेनाके कुछ दस्तोंमें हलचल और विद्रोह हुआ लेकिन अधिकांश सैनिकोंने अब भी मजदूरोंके विद्रोह और हड़तालोंका दमन करनेमें जारकी सहायता की।

(३) मजदूरोंका विद्रोह भी यथेष्ट रूपसे सूत्र-बद्ध न था। मजदूर-वर्गके अग्रिम विभागने १९०५ में शूरतापूर्ण क्रान्तिकारी संघर्ष आरंभ कर दिया था। उन प्रांतोंमें जहाँ उद्योग-धन्धोंका विकास कम हुआ था, और गांवोंमें रहनेवाले मजदूर पिछड़े हुए थे; वे लड़ाईमें देरसे शामिल हुए। उन्होंने क्रान्तिकारी संघर्षमें १९०६ में विशेष सरगर्मी दिखायी लेकिन तब तक मजदूर-वर्गका अग्रदल यथेष्ट रूपसे क्षीण हो चुका था।

(४) मजदूर-वर्ग क्रांतिकी प्रमुख और अग्रगामी शक्ति था लेकिन उस वर्गकी पार्टीमें आवश्यक एकता और दृढ़ताका अभाव था। रूसी सामाजिक-जनवादी पार्टी, जो मजदूर-वर्गकी पार्टी थी, बोल्शेविक और मेन्शेविक दलोंमें बँटी हुई थी। बोल्शेविकों का मार्ग सुसंगत क्रान्तिका मार्ग था; उन्होंने मजदूरोंसे जारशाहीका नाश करनेको कहा। मेन्शेविकोंने अपने समझौतेके दाँवपेचोंके कारण क्रान्तिके मार्गमें रोड़े बिछाये; बहुतसे मजदूरोंके दिमागमें उन्होंने उलझन पैदा कर दी और मजदूर-वर्गमें फूट डाली इसलिये मजदूर भी क्रांतिमें हमेशा क़दम मिला कर न चले थे। अपने वर्गमें ही एकता न होनेसे वे क्रांतिके सच्चे नेता न बन सके।

(५) १९०५ की क्रान्तिको दबानेमें जारशाहीको पच्छिमी योरपके साम्राज्य-वादियोंसे भी सहायता मिली। विदेशी पूँजीपतियोंने रूसमें बड़ी-बड़ी रक़में फँसा रखी थीं जिनसे उन्हें भारी मुनाफ़ा होता था। उन्हें डर था कि उनकी पूँजी न डूब जाय। इसके सिवा उन्हें यह भय भी था कि यदि रूसी क्रान्ति सफल हो गयी, तो दूसरे देशोंके मजदूर भी क्रान्ति करनेके लिये उठ खड़े होंगे। इसलिये जार-जल्लादकी सहायता करनेके लिये पच्छिमी साम्राज्यवादी दौड़ पड़े। फ्रांसके साहूकारोंने क्रान्तिको दबानेके लिये जारको एक भारी रक़म उधार दी। जर्मन क़ैसरके पास रूसी जारकी मददके लिये एक विशाल सेना तैयार थी।

(६) सितम्बर १९०५ में जापानसे सन्धि कर लेनेसे भी जारके हाथ काफ़ी मजबूत हो गये। युद्धमें पराजय और क्रान्तिके बढ़ते वेगके कारण जारने सन्धि करनेमें जल्दी की। युद्धमें पराजयसे उसकी शक्ति क्षीण हुई थी; संधि करनेसे उसे नया बल मिला।

सारांश

पहली रूसी क्रान्तिका समय देशके विकासमें एक पूर्ण ऐतिहासिक युग बन गया। इस युगके दो भाग थे। पूर्वार्द्धमें अक्तूबरकी राजनीतिक हड़तालसे आरंभ होकर क्रान्तिका ज्वार दिसम्बरके सशस्त्र विद्रोहमें फूट पड़ा। मञ्चूरियाकी युद्ध-भूमिमें जार पराजित हुआ था; जारकी कमजोरीका फ़ायदा उठाया गया। बुलीगिन दूमा कब्रसे काट दी गयी और एकके बाद एक जारसे माँगें स्वीकार करायी गयीं। उत्तरार्द्धमें जापानसे सन्धि करके जारने अपने हाथ मजबूत किये। उदारपंथी पूँजीवादी क्रान्तिसे डरते थे; किसान अभी आगा-पीछा कर रहे थे। जारने इन बातोंका फ़ायदा उठाया। वित्ते दूमाके रूपमें उन्हें एक टुकड़ा फेंककर जारने क्रान्ति और मजदूर-वर्गपर आक्रमण आरंभ कर दिया।

१९०५ से १९०७ तक क्रान्तिके इन तीन वर्षोंकी थोड़ी अवधिमें मजदूरों और किसानोंको ऐसी राजनीतिक शिक्षा प्राप्त हुई जैसी शान्तिपूर्ण विकासके तीस वर्षोंमें भी उन्हें सुलभ न होती। शान्तिपूर्ण विकासके बीसों वर्षोंमें जो बातें स्पष्ट न होतीं, वे क्रान्तिके तीन वर्षोंमें खुलासा हो गयीं।

क्रान्तिने यह दिखा दिया कि जारशाही जनताकी कट्टर दुश्मन है। जारशाही उस कुबड़ेकी तरह थी जिसका कूबड़ क़ब्रमें दफ़नानेसे ही अच्छा हो सकता था।

क्रान्तिने दिखा दिया कि उदारपंथी पूँजीवादी जनतासे नहीं, जारसे सहयोग करनेकी फिराक़में हैं। उनकी शक्ति क्रान्ति–विरोधी है और उनसे समझौता करनेका अर्थ जनताके प्रति विश्वासघात करना है।

क्रान्तिने दिखा दिया कि मजदूर-वर्ग ही पूँजीवादी क्रान्तिका नेतृत्व कर सकता है। यही वर्ग उदारपंथी, वैधानिक-जनवादी पूँजीपतियोंको क्रान्तिकी राहसे हटा सकता है, किसानोंपर उनके प्रभावको नष्ट कर सकता है और जमीदारोंको खदेड़ कर क्रान्तिको उसके अंतिम लक्ष्य तक ले जा सकता है; और इस प्रकार समाजवादके लिये मार्ग प्रशस्त कर सकता है।

अंतमें क्रान्तिने यह दिखा दिया कि जाँगर चलानेवाले किसानोंने यद्यपि आगा-पीछा किया था, फिर भी उन्हींकी एक ऐसी महत्वपूर्ण शक्ति थी, जो मजदूरोंसे सहयोग कर सकती थी।

क्रान्तिके समय रूसी सामाजिक–जनवादी पार्टीमें दो विचार-धाराओंकी कशमकश चल रही थीं। एक विचारधारा बोल्शेविकोंकी थी; दूसरी मेन्शेविकोंकी। बोल्शेविकोंकी नीति क्रान्तिका प्रसार करनेकी थी। वे सशस्त्र विद्रोह करके जारशाहीका ध्वंस करना चाहते थे, मजदूर-वर्गका एकाधिपत्य स्थापित करना चाहते थे, पूँजिपति

वैधानिक-जनवादियोंको जनतासे अलग करके किसानोंसे सहयोग करना चाहते थे और किसानों और मजदूरोंके प्रतिनिधियोंकी एक अस्थायी क्रान्तिकारी सरकार बनाकर क्रान्तिको सफलतापूर्वक पूर्ण करना चाहते थे। इसके विपरीत मेन्शेविकोंकी नीति थी, क्रान्तिकी जड़ काटनेकी। सशस्त्र विद्रोह करके जारशाहीका नाश करनेके बदले उनके विचारसे उसका सुधार करके उसे "उन्नत" बनाना चाहिये था। सर्वहारा वर्गके एकाधिपत्यके बदले उनके मतसे उदारपंथी पूँजीवादियोंका एकाधिपत्य होना चाहिये था। किसानोंसे सहयोग करनेके बदले वे वैधानिक-जनवादी पूँजीपतियोंसे सहयोग करना चाहते थे। अस्थायी सरकारके बदले वे राज-दूमाके पक्षमें थे जो देशकी "क्रान्तिकारी शक्तियों"का केन्द्र बनती।

इस प्रकार मेन्शेविक समझौतेके दलदलमें फँस गये। वे मजदूर-वर्गपर पूँजीवादी प्रभाव फैलानेके साधन बन गये। मजदूर-वर्गमें वे एक तरहसे पूँजीवादियोंके एजेंट बन गये।

पार्टीमें और देशमें एकमात्र क्रान्तिकारी मार्क्सवादी शक्ति बोल्शेविक थे,—यह भी सिद्ध हो गया।

ऐसा गहरा मतभेद होनेपर यह स्वाभाविक था कि रूसी सामाजिक-जनवादी पार्टी दो दलोंमें विभक्त हो जाय—एक दल बोल्शेविकोंका, दूसरा मेन्शेविकोंका। चौथी पार्टी-कांग्रेससे पार्टीकी आन्तरिक स्थितिमें कोई परिवर्तन न हुआ। उसने पार्टीकी **ऊपरी** एकताको क़ायम रखा और उसे कुछ दृढ़ किया। पाँचवी पार्टी-कांग्रेसने पार्टीकी **वास्तविक** एकताकी ओर क़दम बढ़ाया। यह एकता बोल्शेविज्मके झंडेके नीचे प्राप्त हुई।

क्रांतिकारी आन्दोलनपर विचार करते हुए पांचवीं पार्टी-कांग्रेसने मेन्शेविकों की नीतिको समझौतेकी नीति कहकर उसका खंडन किया। उसने बोल्शेविकोंकी नीतिको क्रांतिकारी मार्क्सीय नीति कहकर उसे उचित ठहराया। ऐसा करके उसने उन बातोंका पुनः समर्थन किया जिनका पहली रूसी क्रांतिके संपूर्ण घटना-क्रमने पहले ही समर्थन किया था।

क्रांतिने दिखा दिया कि परिस्थिति अनुकूल होनेपर बोल्शेविक बढ़ना जानते हैं और सबसे आगे बढ़ना और आक्रमणमें सारी जनताको साथ लेकर बढ़ना जानते हैं। लेकिन क्रांतिने यह भी दिखा दिया कि परिस्थितिके प्रतिकूल होनेपर और क्रांतिके ह्रासोन्मुखी होने पर वे संयत ढंगसे पीछे हटना भी जानते हैं; वे बिना दहशत और घबराहटके, बिना अपनी सफ़ें तोड़े हुए, इस तरह पीछे हटना भी जानते हैं कि उनके सिपाही बचे रहें, वे अपने जत्थोंको समेट सकें, और नयी परिस्थितिके अनुकूल अपनी सफ़ें दुरुस्त करके दुश्मनपर फिर हमला कर सकें।

हमला करनेका सही तरीक़ा जाने बिना शत्रुको परास्त करना असंभव है।

बिना दहशत और उलझनके, क़ायदेसे पीछे हटना सीखे बिना पराजय हो जानेपर भगदड़से बच सकना भी असंभव है।

★

चौथा अध्याय

प्रतिक्रियावादी स्तोलीपिनके शासन-कालमें बोल्शेविक और मेन्शेविक—बोल्शेविकों द्वारा एक स्वतंत्र मार्क्सवादी पार्टीका निर्माण।

(१९०८-१२)

१. प्रतिक्रियावादी स्तोलीपिनका शासन-काल—सरकार-विरोधी बुद्धिजीवी-वर्गमें फूट—पतन—पार्टीके कुछ बुद्धिजीवियोंका मार्क्सवादके शत्रुओंसे मेल और मार्क्सवादका संशोधन करनेका प्रयास—लेनिनकी पुस्तक "भौतिकवाद और अनुभव-सिद्ध आलोचना"में संशोधनवादियोंका खंडन और मार्क्सवादके दार्शनिक आधारका समर्थन।

३ जून १९०७ को जार-सरकारने दूसरी राज-दूमाको भंग कर दिया। इसे इतिहासमें साधारणतः तीसरी जूनका "**राजकीय बलात्कार**" कहा जाता है। तीसरी दूमाके निर्वाचनके लिये जारने एक नया क़ानून बनाया। इस तरह जारने १७ अक्तूबर १९०५ के अपने ही घोषणापत्रका उल्लंघन किया जिसमें कहा गया था कि दूमाकी स्वीकृतिसे ही नये क़ानून बन सकेंगे। दूसरी दूमाके सामाजिक-जनवादी प्रतिनिधि अभियुक्त बनाकर अदालतके सामने पेश किये गये। मज़दूरोंके प्रतिनिधियोंको कालापानी और कड़ी मेहनतकी सज़ाएँ दी गयीं।

नया क़ानून ऐसा बनाया गया कि दूमामें जमींदारों, सौदागरों और मिल मालिकोंके प्रतिनिधि काफ़ी हो जायँ। मज़दूरों और किसानोंके लिये एक तो पहले ही कम प्रतिनिधित्वकी गुंजाइश रखी गयी थी; अब उसको और काट-छाँटकर उसके भी सही-बटे बना दिये गये।

तीसरी दूमामें यमदूत-सभाओं और वैधानिक-जनवादी पार्टीके प्रतिनिधियोंका बोलबाला था। कुल मिलाकर दूमामें ४४२ प्रतिनिधि थे; इनमें १७१ यमदूत-सभा वाले थे, ११३ अक्तूबर-वादी या वैसे ही गुटोंके, १०१ वैधानिक-जनवादी पार्टी या वैसे ही दलोंके, १३ त्रुदोविकी (या कथित लोकवादी) और १८ सामाजिक-जनवादी थे।

दूमामें दाहिने हाथकी बेंचोंपर यमदूत-सभावाले जमींदार और ताल्लुक़ेदार

बैठते थे। इसलिये ये ' दक्षिणपंथी " कहलाते थे। ये किसानों और मजदूरोंके सबसे कट्टर दुश्मन थे। किसान-आन्दोलनके दमनके समय इन्होंने झुंडके झुंड किसानोंको कोड़े लगवाये थे और उनपर गोली चलवायी थी। यहूदियोंके क़त्लेआम कराने वाले ये ही लोग थे। जुलूस निकालनेवाले मज़दूरोंको इन्होंने मारा-पीटा था और क्रान्तिके दिनोंमें जहाँ सभाएँ होती थीं, वहाँ निर्दयतासे इन्होंने आग लगा दी थी। ये " दक्षिणपंथी " ज़ारके लिये अपरिमिति अधिकारका समर्थन करते थे और मज़दूरोंको निर्ममतासे एकदम कुचल देनेके पक्षमें थे। १७ अक्तूबर १९०५ को ज़ारने जो घोषणापत्र जारी किया था, उसके ये विरुद्ध थे।

इन्हींके पीछे चलनेवाले " अक्तूबर-पंथी " या १७ अक्तूबरके संघके लोग थे। ये बड़े-बड़े कल-कारखानोंके मालिकों और पूँजीवादी प्रणालीपर अपनी रियासतें चलाने वाले तालुक़दारोंके प्रतिनिधि थे। (१९०५ की क्रान्तिके आरंभमें बहुतसे तालुकेदार वैधानिक-जनवादी पार्टी छोड़कर अक्तूबरवाले संघमें जा मिले थे।) " दक्षिणपंथी " और अक्तूबर-संघमें कहनेको इतना ही अंतर था कि अक्तूबर-संघ १७ अक्तूबरके घोषणापत्रको स्वीकार करता था। लेकिन यह स्वीकृति भी कहनेको ही थी।

पहली और दूसरी दूमाकी अपेक्षा तीसरी दूमामें वैधानिक-जनवादियोंकी संख्या कम थी। इसका कारण यह था कि बहुतसे जमींदारों और तालुकेदारोंने वैधानिक-जनवादियोंके बदले इस बार अक्तूबर-संघवालोंको वोट दिया था।

तीसरी दूमामें निम्न-पूँजीवादी जनवादियोंका एक छोटा-सा गुट था जिसका नाम था त्रुदोविकी। इसकी स्थिति यह थी कि कभी तो यह वैधानिक-जनवादियोंकी ओर ढुलक जाता था और कभी मजदूर-जनवादियों (बोल्शेविकों) की ओर। लेनिनका कहना था कि यद्यपि ये लोग दूमामें बहुत कमजोर है फिर भी वे जनता, किसान-जनताके प्रतिनिधि हैं। वे जो वैधानिक और मजदूर जनवादियोंके बीच झोंका खाते हैं, वह साधारण संपत्तिवालोंकी वर्ग-स्थितिका अनिवार्य परिणाम है। लेनिनने बोल्शेविक प्रतिनिधियों, मजदूर-जनवादियोंके सामने यह काम रखा कि वे—

> " कमजोर निम्न पूँजीवादी जनवादियोंकी मदद करें, उनपरसे उदार-पंथियोंके प्रभावको दूर करें और " दक्षिणपंथियोंके " विरुद्ध ही नहीं, क्रान्ति-विरोधी वैधानिक-जनवादियोंके विरुद्ध भी जनवादी मोर्चेको संगठित करें।..."
>
> (लेनिन-ग्रंथावली--रू. सं., खंड १५, पृ. ४८६)

१९०५ की क्रान्तिमें और विशेष रूपसे उसके बाद वैधानिक-जनवादियोंने अपनेको अधिकाधिक क्रान्ति-विरोधी सिद्ध किया। धीरे-धीरे अपनी "जनवादी" वेश-भूषा उतारकर वे असली राजसत्तावादियों और ज़ारशाहीके समर्थकों जैसे काम करने लगे। १९०९ में कुछ प्रसिद्ध वैधानिक-जनवादी लेखकोंने वेखी (मार्गचिन्ह) नामका एक लेख-संग्रह प्रकाशित किया। उसमें पूँजीपतियोंकी ओरसे ज़ारको इस बातके लिये धन्यवाद दिया गया था कि उसने क्रान्तिको दबा दिया है। फाँसीके फन्दे और

चाबुकके बलपर हुकूमत करने वाली सरकारके आगे दुम हिलाकर इन वैधानिक-जनवादियोंने खुले शब्दोंमें लिख दिया था कि "हमें इस सरकारकी बढ़ती मनानी चाहिये जो अपनी संगीनों और जेलोंके सहारे हमें (उदारपंथी पूँजीपतियोंको) जनताकी क्रोधाग्निसे बचाती है।"

दूसरी राज-दूमाको भंग करके और उसके सामाजिक-जनवादी गुटको ठिकाने लगाकर ज़ार-सरकार बड़े जोश-ख़रोशसे मज़दूरोंके आर्थिक और राजनीतिक संगठनों को बरबाद करनेमें लगी। बंदी-गृह, क़िले और निर्वासन-केन्द्र क्रान्तिकारियोंसे ठसाठस भर गये। क्रांतिकारियोंको वहाँ बुरी तरह पीटा जाता था। और उनके शरीर को तरह-तरहसे यंत्रणा दी जाती थी। यमदूत-सभा वाले बेरोक-टोक मनमानी करने लगे। ज़ारके मंत्री स्तोलीपिनने सारे देशमें फाँसीके तख्ते खड़े कर दिये। कई हज़ार क्रांतिकारी इन तख्तोंसे झूल गये। उस समय फाँसी को "स्तोलीपिनकी नेकटाई" कहा जाता था।

किसानों और मज़दूरोंके क्रान्तिकारी आंदोलनको कुचलनेके प्रयासमें ज़ार-सरकार दमन, जेल, निर्वासन, गोलीकांड और दौरा करने वाले फ़ौजी जत्थोंपर ही निर्भर न रह सकती थी। उसने शंकित मनसे देखा कि "परम पिता ज़ार" में किसानोंकी सहज आस्था क्रमशः मिटती जा रही है। इसलिये उसने एक गहरी चाल चलनेका विचार किया। उसने सोचा कि ग्राम-पूँजीपतियों या धनी किसानोंके प्रशस्त वर्गसे उसे सहायता मिल सकती है।

९ नवंबर १९०६ को स्तोलीपिनने किसानोंके लिये एक नया क़ानून बनाया। इसके अनुसार किसान ग्राम-पंचायतसे अलग होकर अपनी खेती कर सकते थे। स्तोलीपिनके क़ानूनसे खेतोंपर पंचायती अधिकारकी प्रथाका अंत हो गया। किसानोंसे कहा गया कि वे अपनी भूमिको निजी सम्पत्ति समझकर उसपर अधिकार जमा लें और पंचायतोंसे अलग हो जायँ। अब वे अपने खेतोंको बेच भी सकते थे जैसा कि पहले उनके लिये संभव न था। किसानके पंचायतसे अलग होनेपर पंचायत उसे एक ही चक या पट्टी (खुतोर, ओत्रुब) में खेत देनेके लिये बाध्य थी।

धनी किसानोंको अब अवसर मिला कि वे ग़रीब किसानोंकी ज़मीन थोड़े दामोंमें ख़रीद लें। क़ानून जारी होनेके बाद कुछ ही वर्षोंमें दस लाखसे ऊपर निर्धन किसान अपनी ज़मीनसे हाथ धो बैठे और एकदम तबाह हो गये। जैसे-जैसे इनके हाथसे ज़मीन निकलती गयी वैसे-वैसे धनी किसानोंकी ज़मींदारी भी बढ़ती गयी। कभी-कभी इन ज़मींदारियोंमें तालुकेदारी क़ायदेसे एक बड़े पैमानेपर खेत-मज़दूर काम करते थे। सरकारने किसानोंको बाध्य किया कि वे पंचायतोंकी सबसे अच्छी भूमि धनी किसानोंको दे दें।

किसानोंकी "मुक्ति"के समय ज़मींदारोंने उनकी ज़मीन छीन ली थी; अब धनी किसान पंचायतोंसे अच्छी-अच्छी ज़मीन हथियाने लगे और कम क़ीमतपर ग़रीब किसानोंसे उनके खेत मोल लेने लगे।

जमीन और खेतीके औजार खरीदनेके लिये जारने धनी किसानोंको भारी रक़में उधार दीं। स्तोलीपिनकी इच्छा थी कि धनी किसानोंको छोटे-छोटे जमींदार बना कर उन्हें जारशाहीका अडिग आधार बना दिया जाय।

१९०६ से १९१५ तकके ९ वर्षोंमें ही बीस लाखसे ऊपर कुटुम्ब पंचायतोंसे अलग हो गये।

स्तोलीपिनकी नीतिके फलस्वरूप जिन किसानोंको बहुत थोड़ी भूमि मिली थी और जो निर्धन थे, उनकी दशा दिन प्रति दिन खराब होती गयी। किसानोंमें श्रेणी-विभाजन और तीव्र हो गया। साधारण और धनी किसानोंमें मुठभेड़ होने लगी।

साथ ही किसान यह भी अनुभव करने लगे कि जब तक जमींदारों तथा वैधानिक-जनवादियोंकी राज-दूमा और जार-सरकार बनी रहेंगी, तब तक इन रियासतोंकी भूमि उनके हाथ न लगेगी।

१९०७ से १९०९ तक, जब धनी किसानोंकी संख्या तेजीसे बढ़ रही थी, उन दिनों किसान-आन्दोलन मद्धिम पड़ रहा था। लेकिन उसके बाद शीघ्र ही १९१०-११ और बादमें पंचायती और धनी किसानोंकी मुठभेड़के कारण जमींदारों और धनी किसानोंके विरुद्ध किसान-आन्दोलन जोर पकड़ने लगा।

क्रान्तिके बाद उद्योग-धन्धोंमें भी महान परिवर्तन हुए। ये उद्योग-धन्धे और तेजीसे उन पूँजीपति-गुटोंके हाथोंमें सिमटने लगे जो दिनपर दिन अधिकाधिक शक्तिशाली होते जा रहे थे। १९०५ की क्रान्तिके पहले भी पूँजीपति इस उद्देश्यसे अपने संघ बनाने लगे थे कि वे देशमें चीजोंका भाव तेज कर सकें और इस अधिक लाभसे विदेशमें ज्यादा माल भेजकर उसे सस्ते दामोंमें बेचकर वहाँके बाजारपर कब्जा कर लें। अपना एकाधिकार बनाये रखनेवाले इन पूंजीवादी संघों (एकाधिकारी संघों)को ट्रस्ट या सिंडीकेट कहा जाता था। क्रान्तिके बाद उनकी संख्या और भी बढ़ गयी। बड़े-बड़े बैंकोंकी तादाद भी बढ़ी और उद्योग-धन्धोंमें इनका महत्व भी पहलेसे ज्यादा हो गया। रूसमें विदेशी पूँजी और भी खिंचकर आने लगी।

इस प्रकार रूसमें पूँजीवाद चढ़ते हुए पैमानेपर एकाधिकारी पूँजीवाद, साम्राज्य-वादी पूँजीवादमें परिणत होता जा रहा था। कई वर्षोंके गतिरोधके उपरांत उद्योग-धन्धोंमें नया जीवन आ रहा था। कोयला, धातु, तेल, सूती कपड़ा और शक्कर, आदिकी पैदावारमें वृद्धि हुई। अनाजका निर्यात-व्यापार बहुत अधिक बढ़ गया।

यद्यपि रूसने इस समय उद्योग-धन्धोंमें कुछ उन्नति की, फिर भी पश्चिमी योरपकी तुलनामें वह अब भी पिछड़ा हुआ था। वह अब भी विदेशी पूँजीपतियोंपर निर्भर था। मशीनें और मशीनोंके कल-पुर्जे रूसमें न बनते थे वरन् बाहरसे मँगाये जाते थे। रूसमें मोटरों और रसायनके उद्योग-धन्धोंका विकास न हुआ था; नकली खाद भी वहाँ अभी तैयार न होती थी। लड़ाईका सामान तैयार करनेमें रूस दूसरे पूँजीवादी देशोंसे पिछड़ा हुआ था।

रूसमें धातुओंके कम खर्चको देशके पिछड़े होनेका चिन्ह बताते हुए लेनिनने लिखा था,—

> " किसानोंकी मुक्तिके बाद ५० वर्षोंमें रूसमें लोहेका खर्च पाँच-गुना बढ़ा है; फिर भी रूस इतना पिछड़ा हुआ, निर्धन और असंस्कृत है कि उसपर सहसा विश्वास नहीं होता। उसके पास उत्पादनके जो आधुनिक यंत्र हैं वे इंग्लैंडके चतुर्थांश, जर्मनीके पंचमांश और अमरीकाके दशमांश हैं।" (**लेनिन-ग्रंथावली—रूसी सं., खंड १६, पृ. ५४३**)

आर्थिक और राजनीतिक दृष्टिसे रूसके पिछड़े होनेका एक प्रत्यक्ष परिणाम तो यह था कि रूसका पूँजीवाद और खुद जारशाही पश्चिमी योरपके पूंजीवादपर निर्भर थी।

यह पर-निर्भरता इस रूपमें प्रकट हुई कि उद्योग-धंधोंकी ऐसी महत्वपूर्ण शाखाएँ—जैसे कोयला, तेल, बिजलीका सामान और धातुओंका उत्पादन—विदेशी पूँजीपतियोंके हाथमें थीं। जारशाही रूसको अपनी प्रायः सभी मशीनें और कल-पुर्जे बाहरसे मँगाने पड़ते थे।

इस पर-निर्भरताका दूसरा रूप यह था कि जारको भारी-भारी रक़मोंका देनदार बनना पड़ा। इन सब रक़मोंका ब्याज जुटानेके लिये वह हर साल लाखों-करोड़ों रूबल प्रजासे वसूल करता था।

उसका एक तीसरा रूप यह भी था कि जारको अपने "मित्रों" से गुप्त सन्धियाँ करनी पड़ीं। इन संधियोंमें जारने वादा किया कि लड़ाई छिड़नेपर वह अपने उन "मित्रों" की मददके लिये लाखों रूसी सैनिक साम्राज्यवादी मोर्चोंपर भेजेगा और ब्रिटेन तथा फ्रांसके पूँजीपतियोंके भारी मुनाफ़ोंकी रक्षा करेगा।

प्रतिक्रियावादी स्तोलीपिनके शासन-कालमें जारके गुर्गों, यमदूत–सभाके गुंडों और हथियारबन्द तथा सादी पुलिसके सिपाहियोंने मजदूरोंपर बर्बरतासे आक्रमण किये। लेकिन जारके इन लगुओं-भगुओंने ही मजदूरोंपर तबाही बरपा नहीं की। इस मामलेमें मिलों और कारखानोंको कम दिलचस्पी न थी। औद्योगिक संकट और बढ़ती हुई बेकारीके दिनोंमें मजदूरोंके खिलाफ़ उन्होंने और भी सरगर्मी दिखायी। कारखानोंके मालिक सामुदायिक रूपसे एक बार ही घोषित कर देते थे कि कारखानोंमें ताला पड़ गया है। जो सचेत मजदूर हड़तालोंमें भाग लेते थे उनका नाम वे अपनी काली किताबमें लिख लेते थे। एक बार उस किताबमें नाम चढ़ जानेसे उस मजदूरको उसी धंधेके उन सभी कारखानोंमें कहीं भी काम न मिल सकता था, जो मिल-मालिक-संघके हाथमें थे। १९०८ में ही मजदूरीमें दससे पंद्रह फ़ी सैकड़ा तक कटौती हो चुकी थी। मजदूरीके घंटे बढ़ाकर दस और बारह तक कर दिये गये थे। जुर्मानेके नामपर फिर लूट मचने लगी थी।

१९०५ की क्रान्तिकी पराजयसे क्रान्तिके सहचारियोंमें ह्रास और विच्छिन्नताका प्रवेश हो चुका था। ह्रासोन्मुखी और पतन-कालीन प्रवृत्तियाँ बुद्धिजीवी वर्गमें विशेष रूपसे उभर आयीं। क्रान्तिके उठानके समय जो सहचारी पूँजीवादी पक्षसे आन्दोलन

में भाग लेने आये थे, वे प्रतिक्रियाके दिनोंमें पार्टी छोड़कर भाग खड़े हुए। उनमेंसे कुछ क्रान्तिके खुले विरोधियोंसे जा मिले; कुछ ऐसी क़ानूनी मजदूर-सभाओंमें जम गये जो अभी साँस ले रही थीं। वहाँसे वे मजदूरोंकी क्रान्तिकारी पार्टीपर कीचड़ उछालने लगे और कोशिश करने लगे कि मजदूरोंको क्रान्तिके मार्गसे विचलित कर दें। क्रान्तिसे पीठ दिखाकर सहचारियोंने प्रतिक्रियावादियोंके प्रीति-भाजन बननेकी चेष्टा की और ज़ारशाहीसे शान्ति-सम्बन्ध स्थापित करके वे जीवन बितानेका प्रयास करने लगे।

ज़ार-सरकारने क्रान्तिकी पराजयसे लाभ उठाकर क्रान्तिके सहचारियोंमेंसे जो अधिक स्वार्थी और कायर थे, उन्हें अपना गुर्गा बना लिया। ये मीर जाफ़र और जयचंद ज़ारकी खुफ़िया पुलिस ओखरानाकी आज्ञासे मजदूरों और पार्टी-संगठनोंमें घुस आये और अन्दरसे भेद लेकर क्रान्तिकारियोंको पकड़वाने लगे।

क्रान्ति-विरोधी शक्तियोंका आक्रमण विचार-क्षेत्रमें भी हुआ। मार्क्सवादकी "आलोचना" करने वाले और उसका "खंडन" करने वाले फैशनेबल लेखकोंका एक सम्प्रदाय बन गया। ये क्रान्तिका मजाक बनाते थे, विश्वासघातकी प्रशंसा करते थे, "व्यक्तित्वकी उपासना" के नामपर काम-सम्बन्धी विकृतियोंकी पूजा करते थे।

दर्शनके क्षेत्रमें मार्क्सवादकी "आलोचना" और उसका संशोधन करनेके बराबर प्रयत्न किये गये। अर्द्ध-वैज्ञानिक सिद्धान्तोंका पानी चढ़ाये हुए तरह-तरहके धार्मिक मत-मतान्तर भी प्रचलित हो गये।

मार्क्सवादकी "आलोचना" करना एक फ़ैशन हो गया। इन सज्जनोंकी वेश-भूषा भिन्न-भिन्न थी परंतु उन सब का उद्देश्य एक ही था,—जनताको क्रांतिसे विमुख करना।

संशय और पतनका प्रभाव पार्टीके कुछ बुद्धिजीवियोंपर भी पड़ा जो अपनेको मार्क्सवादी समझते थे परंतु जिन्होंने मार्क्सवादको दृढ़तासे न अपनाया था। इनमें इस तरहके लेखक थे जैसे बोग्दानोफ़, बाजारोफ़, लूनाचारस्की (जिसने १९०५ में बोल्शेविकोंका साथ दिया था) तथा यूस्केविच और वालेन्तीनोफ़ (मेन्शेविक)। मार्क्सवादके दार्शनिक आधार, द्वंद्वात्मक भौतिकवाद और इतिहास-विज्ञानके मूल मार्क्सीय सिद्धांत, ऐतिहासिक भौतिकवादके विरुद्ध उन्होंने एक साथ ही "समालोचनात्मक" आक्रमण आरंभ किया। मार्क्सवादकी साधारण विरोधी आलोचनासे यह समालोचना इस बातमें भिन्न थी कि यह सामने मैदानमें ईमानदारीसे न की गयी थी, वरन् मार्क्सवादके मूलतत्वोंका "मंडन" करनेके बहाने छिपकर और धूर्ततासे की गयी थी। इन लोगों का कहना था, हम प्रधानतः मार्क्सवादी हैं, लेकिन मार्क्सवादके कुछ आधारभूत सिद्धान्तोंसे उसका पिंड छुड़ाकर हम उसे "उन्नत" बनाना चाहते हैं। वास्तवमें ये मार्क्सवादके विरोधी थे क्योंकि वे मार्क्सवादके सैद्धांतिक आधारोंपर कुठाराघात करना चाहते थे, यद्यपि वे धूर्ततावश मार्क्सवादका विरोधी होना स्वीकार न करते थे और एक मुँहसे अपनेको मार्क्सवादी भी कहते आते थे। इस पाखंडी आलोचनासे खतरा

यह था कि पार्टीके साधारण सदस्य धोखा खाकर गुमराह न हो जायँ। मार्क्सवादके सैद्धांतिक आधारोंपर कुठाराघात करनेके उद्देश्यसे यह आलोचना जितना ही अधिक धूर्तता-पूर्ण होती जा रही थी, उतना ही वह पार्टीके लिये अधिक भयसूचक बन रही थी, क्योंकि क्रांति और पार्टी दोनोंके ही विरुद्ध प्रतिगामियोंके आन्दोलनसे मिलकर अब वह एक होती जा रही थी।

मार्क्सवादसे विमुख होनेवाले बुद्धिजीवियोंमें कुछ तो इस हद तक पहुँच गये कि वे एक नया धर्म चलानेकी बातें करने लगे। (इनका नाम "देव-स्रष्टा" या "देव-शोधक" पड़ गया।)

मार्क्सवादियोंके लिये आवश्यक हो गया कि मार्क्सवादको पीठ दिखानेवाले इन दगाबाजोंकी तुरंत खबर लें और उचित उत्तर देकर उनका पर्दाफ़ाश कर दें; और अच्छी तरहसे उनकी क़लई खोलकर मार्क्सवादी पार्टीके सैद्धान्तिक आधारोंकी रक्षा करें।

प्लेखानौफ़ और उसके साथी अपनेको "उच्च कोटिका मार्क्सवादी दार्शनिक" मानते थे। उनसे आशा की जा सकती थी कि यह खंडन-मंडनका कार्य वही करेंगे। लेकिन उन्होंने यों ही दो एक अखबारी ढंगके आलोचनात्मक नोट लिखना ही काफ़ी समझा और इसके बाद मैदानसे हट गये।

इस कार्यको लेनिनने १९०९ में प्रकाशित अपनी पुस्तक **भौतिकवाद और अनुभव-सिद्ध आलोचनामें** संपन्न किया।

लेनिनने लिखा था,—

"छः महीनेसे कममें ही चार किताबें ऐसी निकली हैं जिनमें मुख्यतः और प्रायः आदिसे लेकर अंत तक द्वन्द्वात्मक भौतिकवादपर आक्षेप ही किये गये हैं। इनमेंसे प्रथम और प्रमुख बाजारौफ़, बोग्दानौफ़, लूनाचार्स्की, बर्मन, हेल्फौंड, युश्केविच और सूवोरौफ़का लेख-संग्रह है, जिसका नाम है **मार्क्सीय दर्शन-सम्बन्धी निबन्ध** ("सम्बन्धी" के बदले विरोधी शब्द अधिक संगत होता)। यूश्केविचने **भौतिकवाद और आलोचनात्मक यथार्थवाद**पर लिखा है; बर्मनने **आधुनिक ज्ञान-मीमांसाके प्रकाशमें द्वन्द्ववाद**पर, और वालेन्तीनौफ़ने मार्क्सवादकी **दार्शनिक रूपरेखा**पर, लिखा है।... जहाँ तक राजनीतिक विचारोंका सम्बन्ध है, इन लेखकोंमें तीव्र मतभेद है लेकिन द्वन्द्वात्मक भौतिकवादका विरोध करनेमें वे सब एक हैं। फिर भी वे मार्क्सवादी दर्शनके समर्थक ही बनते हैं। बर्मनका कहना है कि एँगेल्सका द्वन्द्ववाद "रहस्यवाद" है। एँगेल्सके विचार "पुराने" पड़ गये हैं,—इस बातको बाजारौफ़ने ऐसी बेफिक्रीसे कह दिया है, मानों अब उसे साबित करने की कोई जरूरत ही नहीं रह गयी। ऐसा मालूम होता है कि इन वीर आलोचकों ने भौतिकवादका पूरी तरह खंडन कर दिया है। वे बड़ी विद्वत्तासे "आधुनिक ज्ञान-मीमांसा", "नवीन दर्शन", (अथवा "नवीन अस्तित्ववाद")

"आधुनिक पदार्थ-विज्ञानका दर्शन" अथवा "बीसवीं शताब्दीके पदार्थ-विज्ञानका दर्शन" का भी उल्लेख करते हैं।"

(संक्षिप्त लेनिन-ग्रंथावली—अं. सं., खं. ११, पृ. ८९)

लूनाचार्स्कीने अपने संशोधनवादी मित्रोंके समर्थनमें लिखा था, "शायद हम गुमराह हो गये हैं, फिर भी हम राह ढूँढ़ रहे हैं"। लूनाचार्स्कीको उत्तर देते हुए लेनिनने लिखा था,—

"जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, मैं भी दर्शनमें कुछ "ढूँढ़" रहा हूँ। इस टीका-टिप्पणीमें (अर्थात् **'भौतिकवाद और अनुभव-सिद्ध आलोचना'** में—सं.) मैंने यह ढूँढ़नेका निश्चय किया है कि ये लोग मार्क्सवादके नामपर जो कुछ लिख रहे हैं, वह किस बाधाके कारण ऐसा प्रतिक्रियावादी, उलझा हुआ और इतना बेसिर-पैरका है कि उसपर विश्वास नहीं होता।"

(उपरोक्त—पृ. ९०)

लेकिन वास्तवमें लेनिनकी पुस्तकमें इस साधारण छान-बीनके सिवा और भी बहुत सी बातें थीं। उसमें बोग्दानौफ, युश्केविच, बाजारोफ और वालेन्तीनौफ तथा उनके दर्शन-गुरु अवेनारियस और माखकी आलोचना ही नहीं है;—इन दोनोंने मार्क्सीय भौतिकवादके विरुद्ध अपनी रचनाओंमें एक सुघर और सँवारे हुए आदर्शवाद का प्रतिपादन करनेका प्रयत्न किया था। लेनिनकी पुस्तकमें मार्क्सवादके सैद्धान्तिक आधार—द्वन्द्वात्मक और ऐतिहासिक भौतिकवादका समर्थन भी है। एँगेल्सकी मृत्यु से लेकर लेनिनकी पुस्तक **भौतिकवाद और अनुभव-सिद्ध आलोचना**के प्रकाशन तक—इस एक पूर्ण ऐतिहासिक युगमें विज्ञानने और विशेष रूपसे पदार्थ-विज्ञानने जो कुछ भी महत्वपूर्ण और आवश्यक ज्ञान अर्जित किया था, उस सबका भौतिकवादी-दृष्टिकोणसे सार निकालकर लेनिनने इस पुस्तकमें संचित कर दिया है।

रूसके अनुभव-सिद्ध-आलोचनावादियों और उनके विदेशी गुरुजनोंकी अच्छी तरहसे खबर लेकर लेनिनने अपनी पुस्तकमें दार्शनिक और सैद्धान्तिक संशोधनवादके बारेमें ये परिणाम निकाले थे:—

(१) "अर्थशास्त्रमें, कार्यनीति-सम्बन्धी प्रश्नोंमें और साधारण रूपसे दर्शनमें आधुनिक संशोधनवादका विशेष लक्षण यह है कि मार्क्सवादके नामपर मार्क्सवादको और भी चतुराईसे भ्रष्ट किया जाता है और भौतिकवाद-विरोधी सिद्धान्तोंको और भी चतुराईसे मार्क्सवाद कहकर उनका प्रतिपादन किया जाता है।"

(उपरोक्त—पृ. ३८१)

(२) "माख और अवेनारियसका पूरा संप्रदाय आदर्शवादकी ओर बढ़ रहा है।" (उपरोक्त—पृ. ४०५)

(३) "हमारे देशमें माखके सभी अनुयायी आदर्शवादके दलदलमें फँस गये हैं।" (उपरोक्त—पृ. ३९५)

(४) "अनुभव-सिद्ध आलोचनाकी अध्यात्मज्ञान वाली मीमांसाके पीछे विचार-क्षेत्रमें पार्टियोंके संघर्षको न देखना असंभव है। इस संघर्षकी छानबीन करनेपर अंतमें परिणाम यही निकलता है कि यह संघर्ष आधुनिक समाजके विरोधी वर्गोंकी विचारधारा और प्रवृत्तियोंको व्यक्त करता है।" (**उपरोक्त—पृ. ४०६**)

(५) "श्रद्धावादी (प्रतिक्रियावादी जो श्रद्धाको विज्ञानसे बढ़कर मानते थे—सं.) साधारण रूपसे भौतिकवाद और विशेष रूपसे ऐतिहासिक भौतिकवादके विरुद्ध संघर्ष कर रहे हैं। अनुभव-सिद्ध आलोचनाकी वास्तविक वर्ग-भूमिका इन श्रद्धावादियोंके सेवा-कार्यके अतिरिक्त और कुछ नहीं है।" (**उपरोक्त—पृ. ४०६**)

(६) "दार्शनिक आदर्शवाद वह **मार्ग** है जिसका अंत पुरोहितोंके अन्धकूपमें होता है।" (**उपरोक्त—पृ. ८४**)

हमारी पार्टीके इतिहासमें लेनिनकी पुस्तककी कौनसी महत्वपूर्ण भूमिका है, स्तोलीपिनके काले कारनामोंके दिनोंमें संशोधनवादियों और दूसरे पथ-भ्रष्ट लोगोंके गंगा-जमुनी संप्रदायसे लेनिनने किस सैद्धान्तिक कोषकी रक्षा की थी, यह जाननेके लिये हमें चाहे संक्षेपहीमें, द्वन्द्वात्मक और ऐतिहासिक भौतिकवादके मूल तत्वोंसे परिचित हो जाना चाहिये।

यह इसलिये और भी आवश्यक है कि कम्युनिज्मका सैद्धान्तिक आधार द्वन्द्वात्मक और ऐतिहासिक भौतिकवाद ही है। मार्क्सवादी पार्टीका सैद्धातिक आधार यही है; इसलिये हमारी पार्टीके हर क्रियाशील मेंबरका कर्त्तव्य है कि वह इन सिद्धान्तोंको जाने और उनका अध्ययन करे।

तब (१) द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद और (२) ऐतिहासिक भौतिकवाद क्या हैं?

२. द्वन्द्वात्मक और ऐतिहासिक भौतिकवाद

संसारके प्रति मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टीका दृष्टिकोण है द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद। यह द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद इसलिये कहलाता है कि प्राकृतिक घटनाओंको देखने, परखने और पहचाननेका इसका ढंग **द्वन्द्वात्मक** है तथा इन प्राकृतिक घटनाओंकी इसकी व्याख्या, कल्पना और सिद्धान्त-विवेचना **भौतिकवादी** है।

सामाजिक जीवनका अध्ययन करनेके लिये द्वन्द्वात्मक भौतिकवादके सिद्धान्तोंका विस्तार किया गया है; समाज और उसके इतिहासके अध्ययन तथा सामाजिक जीवन की घटनाओंपर द्वन्द्वात्मक भौतिकवादके सिद्धान्त लागू किये गये हैं। द्वन्द्वात्मक भौतिकवादका यह विस्तार ही ऐतिहासिक भौतिकवाद है।

अपनी द्वन्द्वात्मक प्रणालीकी चर्चा करते हुए मार्क्स और एंगेल्स साधारणतः हेगेलका

नाम लेते हैं कि उसने द्वन्द्ववादके मुख्य लक्षणोंका प्रतिपादन किया था। परंतु इसका यह अर्थ नहीं है कि मार्क्स और एंगेल्सके द्वन्द्ववादका वही रूप है जो हेगेलके द्वन्द्ववाद का था। वास्तवमें मार्क्स और एंगेल्सने हेगेलके द्वन्द्ववादसे वह सार-तत्व ले लिया था जो "बुद्धि-संगत" था और उसका आगे इस तरह विकास किया था कि उसे एक आधुनिक वैज्ञानिक रूप मिल जाय। उस सार-तत्वका आदर्शवादी खोल उन्होंने फेंक दिया था।

मार्क्सने लिखा था,—

> "मेरी द्वन्द्वात्मक प्रणाली हेगेलसे मूलतः भिन्न ही नहीं है, वरन् उससे नितांत विरोधी दिशामें है। हेगेलके अनुसार वास्तविक जगत्का निर्माण चिन्तन-क्रियाकी प्रेरक-शक्तिसे हुआ है; विचार-क्रियाको विचार-तत्वका नाम देकर वह उसके स्वतंत्र अस्तित्वको स्वीकार करता है। वह कहता है कि यह "विचार-तत्व" ही वास्तविक जगतका निर्माण करता है। हेगेलके लिये वस्तु-जगत् विचार-तत्वका ही बाह्य घटनात्मक स्वरूप है। इसके विपरीत मेरी दृष्टिसे विचार मानव-चित्तमें प्रतिबिम्बित भौतिक संसारको छोड़कर और कुछ नहीं है; चिन्तन-क्रियामें भौतिक-संसारका ही वह रूपांतर है।" (**कार्ल मार्क्स, कैपिटल—खंड १, पृ. ३०; जार्ज एलन और अनविन, १९३८**)

अपने भौतिकवादका वर्णन करते हुए मार्क्स और एंगेल्स बहुधा फ़ायरबाख़का उल्लेख करते हैं कि उसने भौतिकवादको पुनः प्रतिष्ठित किया था। परंतु इसका यह अर्थ नहीं है कि मार्क्स और एंगेल्सके भौतिकवादका वही रूप है जो फ़ायरबाख़के भौतिकवादका है। वास्तवमें मार्क्स और एंगेल्सने फ़ायरबाख़के भौतिकवादसे उसका "सार तत्व" ले लिया था और उसे एक वैज्ञानिक-दार्शनिक सिद्धान्तके रूपमें विकसित किया था। उसके आदर्शवादी और धार्मिक-नैतिक खोलको उन्होंने फेंक दिया था। यह विदित है कि यद्यपि फ़ायरबाख़ भौतिकवादी था तथापि उसे भौतिकवाद नामसे चिढ़ थी। एंगेल्सने एकाधिक बार कहा भी था कि "भौतिकवादी आधार होनेपर भी फ़ायरबाख़ परंपरागत आदर्शवादी बन्धनोंसे जकड़ा रहा था।" औरभी—"फ़ायरबाख़के धर्म और नीति सम्बन्धी दर्शनको देखनेसे उसका वास्तविक आदर्शवाद प्रकट हो जाता था।" (**संक्षिप्त मार्क्स-ग्रंथावली—अं. सं., खं. १, पृ. ४३९, ४४२**)

डायलेक्टिक्स (द्वन्द्ववाद) शब्द ग्रीक दिआलेगोसे बना है जिसका अर्थ है चर्चा करना, विवाद करना। प्राचीन समय में द्वन्द्ववाद वह कला थी जिससे कोई वक्ता अपने विरोधीके तर्कमें असंगति दिखाकर और उसका निराकरण करके सत्यका प्रतिपादन कर सकता था। उस समय ऐसे दार्शनिक विद्यमान थे जिनका विश्वास था कि विचारोंमें परस्पर विरोधके प्रदर्शनसे और विरोधी मतोंके संघर्षको स्पष्ट कर देनेसे सत्य की प्रतिष्ठा हो सकती है और उसे प्रतिष्ठित करनेकी यह सर्वश्रेष्ठ प्रणाली है। यह द्वन्द्वात्मक प्रणाली विचार-क्षेत्रसे बाहर प्राकृतिक घटनाओंपर भी लागू की गयी। प्राकृतिक

बूझने-परखनेकी द्वन्द्वात्मक प्रणालीमें उसका विकास हुआ। इसके अनुसार प्रकृतिके बाह्य रूप सतत गतिशील हैं और उनमें निरंतर परिवर्तन हो रहा है; इसके अनुसार प्रकृतिकी शक्तियोंकी परस्पर क्रिया-प्रतिक्रियाके फलस्वरूप एवं प्रकृतिकी असंगतियोंके विकासके ही फलस्वरूप प्रकृतिका विकास हुआ है।

सारदृष्टिसे द्वन्द्ववाद अतिभूतवादका बिल्कुल उल्टा है।

(१) मार्क्सीय द्वन्द्वात्मक प्रणालीके मुख्य लक्षण ये हैं :—

(क) अतिभूतवादके प्रतिकूल द्वन्द्ववादके अनुसार प्रकृति ऐसे तत्वों एवं पदार्थों का आकस्मिक संघटन नहीं है जो परस्पर स्वतंत्र, विच्छिन्न और असम्बद्ध हैं। द्वन्द्ववादके अनुसार प्रकृति सम्बद्ध और पूर्ण इकाई है; उसके पदार्थ और बाह्य रूप एक दूसरेपर निर्भर हैं, एक दूसरेसे सजीव रूपसे सम्बद्ध हैं और परस्पर एक-दूसरेकी रूपरेखा निश्चित करते हैं।

इसलिये द्वन्द्वात्मक प्रणालीका यह सिद्धान्त है कि अपने चारों ओरके संघटनसे अलग करके कोई भी प्राकृतिक घटना अपने आपमें बूझी-परखी नहीं जा सकती। कारण यह कि उसके चारों ओरकी परिस्थितियोंसे उसे दूर करके और उनके प्रसंगमें उसका विचार न करके वह घटना—प्रकृतिके किसी भी प्रदेशकी घटना—हमारे लिये निरर्थक सिद्ध हो सकती है। फलतः हम प्रकृतिकी किसी भी घटनाको तभी समझ सकते हैं और तभी उसकी व्याख्या कर सकते हैं जब हम उसके चारों ओरके संघटनके अविभाज्य प्रसंगमें उसपर विचार करें; जब हम उसकी यह सोचकर व्याख्या करें कि उसकी रूपरेखा उसके चारों ओरके संघटनसे निश्चित हुई है।

(ख) अतिभूतवादकी तरह द्वन्द्ववादका यह सिद्धान्त नहीं है कि विराम और गतिहीनता एवं अचल जड़ता और स्थिरताका नाम प्रकृति है। प्रकृतिका लक्षण है अविराम गतिशीलता और परिवर्तन, नित्य नव-नवोन्मेष और विकास। इस परिवर्तन-क्रममें कुछ तत्वोंका उन्मेष और विकास होता रहता है तो कुछका ह्रास और निर्वाण भी होता जाता है।

इसलिये द्वन्द्ववादी प्रणालीके अनुसार प्राकृतिक घटनाओंकी परस्पर-निर्भरता और सम्बद्धताको ध्यानमें रखकर ही उनपर विचार करना यथेष्ट नहीं है। हमें उनकी गति, परिवर्तन, विकास तथा उनके निर्माण और निर्वाणको भी ध्यानमें रखकर उनपर विचार करना चाहिये।

द्वन्द्वात्मक प्रणालीके अनुसार मूलतः वह वस्तु महत्वपूर्ण नहीं है जो किसी समय स्थायी मालूम पड़ती है परंतु जिसका ह्रास तब भी आरंभ हो चुका है। महत्वपूर्ण वस्तु वह है जिसका अभ्युदय और विकास हो रहा है, चाहे उस समय वह अस्थायी ही प्रतीत होती हो; क्योंकि द्वन्द्वात्मक प्रणाली उसीको अजेय मानती है जिसका अभ्युदय और विकास हो रहा है।

एंगेल्सने लिखा था:—

"छोटीसे छोटी चीजसे लेकर बड़ीसे बड़ी चीज तक, बालूके एक कन से लेकर सूरज तक, लघुत्तम जीवकोषसे लेकर मनुष्य तक—संपूर्ण प्रकृति सतत गतिमय और परिवर्तनशील है; उसकी स्थिति निर्माण और निर्वाणके अविराम प्रवाहमें है।" (एंगेल्स—प्रकृति-सम्बन्धी द्वंद्ववाद)

इसलिये, एंगेल्सके ही शब्दोंमें, द्वन्द्ववाद "वस्तुओं और उनके गोचर आकारको अवश्यमेव उनकी परस्पर सम्बद्धता, गतिशीलता, तथा उनके संयोग, अभ्युदय और निर्वाणके प्रसंगमें ही बूझता-परखता है।" (उपरोक्त)

(ग) अतिभूतवादकी तरह द्वन्द्ववादका यह सिद्धान्त नहीं है कि विकसित होनेका अर्थ सीधे-सीधे बढ़ना है जब कि परिमाणमें परिवर्तन होनेसे गुणोंमें परिवर्तन नहीं होता। द्वन्द्ववादके अनुसार विकास-क्रममें हम अदृश्य और अकिंचन परिमाण-सम्बन्धी परिवर्तनोंसे स्पष्ट और मौलिक गुण-सम्बन्धी परिवर्तनों तक पहुँच जाते है। इस विकास-क्रममें गुण-सम्बन्धी परिवर्तन धीरे-धीरे न होकर हठात्, एक मंजिलसे दूसरी मंजिल तक छलाँग मारकर, शीघ्रतासे होते हैं। ये परिवर्तन आकस्मिक नहीं होते; वे धीरे-धीरे घटित होने वाले, प्रायः अदृश्य, परिणाम-सम्बन्धी परिवर्तनोंके संघटनका स्वाभाविक परिणाम हैं।

इसलिये द्वन्द्वात्मक प्रणालीके अनुसार विकास-क्रमका यह अर्थ नहीं है कि जो पहले हो चुका है अब वही सीधे-सीधे दोहराया जा रहा है; न कोल्हूके बैलकी तरह एक ही जगह चक्कर खानेका नाम विकास है। विकासकी गति ऊर्ध्वोन्मुख और अग्रसर होती है; पहलेकी गुणात्मक परिस्थितिसे दूसरी गुणात्मक परिस्थिति तक संक्रमणका नाम विकास है। विकास साधारणसे संश्लिष्ट और निम्नसे ऊर्ध्वकी ओर होता है।

एंगेल्सने लिखा था,—

"द्वन्द्ववादकी कसौटी प्रकृति है और आधुनिक प्रकृति-विज्ञानके बारेमें यह स्वीकार करना पड़ता है कि उसने इस कसौटीके लिये अत्यंत मूल्यवान सामग्री दी है जो प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है। इस प्रकार उसने सिद्ध कर दिया है कि अंततोगत्वा प्राकृतिक क्रम द्वन्द्वात्मक है, न कि अतिभूतवादी। यह क्रम किसी चिर-अपरिवर्तनशील वृत्तमें चक्कर काटनेकी गति नहीं बल्कि वास्तविक इतिहासके निर्माण की गति है। यहाँपर सबसे पहले डार्विनका उल्लेख करना चाहिये, जिसने प्रकृतिकी अतिभौतिक कल्पनापर दुःसह प्रहार किया था और सिद्ध किया था कि आजका चराचर विश्व—वनस्पति, जीव, और फलतः मनुष्य भी—सभी कुछ उस विकास-क्रमका परिणाम है जो करोड़ों वर्षोंसे लगातार होता चला आरहा है।" (एंगेल्स, ड्यूरिंग-मत-खंडन)

परिणाम-सम्बन्धी विकाससे गुण-संबंधी विकास तकके संक्रमणका नाम द्वन्द्वात्मक विकास है, इस सिद्धान्तकी व्याख्या करते हुए एंगेल्सने लिखा था,—

"भौतिक-विज्ञानमें ... प्रत्येक परिवर्तनका अर्थ है, परिमाणका गुणमें संक्रमण जो किसी भी वस्तुमें निहित अथवा प्रविष्ट गतिके परिमाण में परिवर्तन हो जानेसे ही होता है। उदाहरणके लिये पानीके तापमानका प्रभाव पहले उसके द्रव-गुणपर नहीं पड़ता। परंतु उस द्रव-जलका तापमान ज्यों-ज्यों चढ़ता या गिरता है, त्यों-त्यों वह क्षण निकट आता जाता है जब या तो पानी भाप बन जाता है या जम कर बर्फ़ हो जाता है; जलकी द्रव-स्थिति ज्यों की त्यों नहीं बनी रहती।... प्लेटिनमके तारको दहकानेके लिये एक निश्चित अल्पतम विद्युत्-प्रवाह आवश्यक होता है। प्रत्येक धातुका एक निश्चित तापमान होता है जब वह पिघलने लगती है। आवश्यक तापमान प्राप्त करनेके हमारे पास जो साधन हैं, उनसे प्रयोग करके प्रत्येक द्रव-पदार्थके शीतोष्ण-विन्दु निश्चित कर दिये गये हैं जब कि यथेष्ट शीतोष्ण प्रभावसे वह पदार्थ जमने लगता है या खौलने लगता है। अंतमें प्रत्येक गैसके लिये भी वह चरम-विन्दु निश्चित है जब यथावश्यक दबाव और शीतसे वह द्रव-पदार्थमें परिवर्तित किया जा सकता है।... भौतिक विज्ञानमें जिन्हें हम स्थिर-विंदु कहते है, (वे बिंदु जहाँसे पदार्थ की स्थिति बदलकर दूसरी हो जाती है—सं०) वे अधिकतर और कुछ नहीं, क्रान्ति--बिंदुओंके ही नाम हैं जहाँ गतिके परिमाण-संबंधी ह्रास किंवा वृद्धि (परिवर्तन) से उस पदार्थकी स्थितिमें एक गुणात्मक परिवर्तन हो जाता है। फलतः इन क्रांति-बिंदुओंपर परिमाणका गुणमें रूपान्तर हो जाता है।"

(एंगेल्स--प्रकृति-सम्बन्धी द्वंद्ववाद.)

आगे रसायनशास्त्रके बारेमें एंगेल्सने लिखा है,—

"पदार्थोंकी अणुबद्ध रचनामें परिवर्तन होनेसे गुणात्मक परिवर्तन संभव होते हैं; इन गुणात्मक परिवर्तनोंके विज्ञानको हम रसायन-शास्त्र कह सकते हैं। हेगेलको यह मालूम हो चुका था।... उदाहरणके लिये ऑक्सिजनके अणुमें दो परमाणु होते है। इन दोके बदले यदि तीन परमाणु कर दिये जायँ तो ओज़ोन बन जाता है जो गंध और प्रतिक्रियामें साधारण ऑक्सिजनसे नितान्त भिन्न होता है। और जब ऑक्सिजन विभिन्न अनुपातोंमें नाइट्रोजन या गंधकसे मिलाया जाता है तब तो उसका कहना ही क्या! हर अनुपातसे ऐसा पदार्थ बनता है जो गुणात्मक दृष्टिसे दूसरे पदार्थोंसे भिन्न होता है।" (**उपरोक्त**)

ड्यूरिंगने हेगेलको फटकारनेमें कुछ उठा न रखा था, परन्तु हेगेलसे ही उसने इस सुपरिचित सिद्धान्तको चुराया था कि अचेतनसे चेतनकी ओर निर्जीव पदार्थसे सजीव प्राणीकी अवस्थामें संक्रमण एक छलाँगमें एक नयी स्थितिमें पहुँच जानेके समान है। ड्यूरिंगकी आलोचना करते हुए एँगेल्सने लिखा था,—

"हेगेलकी परिमाण-सम्बन्धी क्रान्ति-रेखाको छोड़कर यह और कुछ नहीं है। वह वृद्धि या ह्रास जो विशुद्ध रूपसे परिमाण-सम्बन्धी है, कुछ क्रान्ति—

विन्दुओं तक पहुँचकर एक ऐसे **गुण-भेद**का कारण बन जाता है जो कई सीढ़ियों को एक साथ लाँघ जानेके समान है। उदाहरणके लिये गर्माये या ठंढाये पानीके वाष्प-विन्दु और हिम-विन्दु वे क्रान्ति-विन्दु हैं जहाँ तक साधारण दबावसे जलके ठंढा या गरम होनेपर एक साथ कई मंजिलें लाँघकर एक महान् परिवर्तन होता है, और एक नयी गुणात्मक स्थिति प्राप्त होती है। उस स्थितिमें परिमाण का गुणमें रूपान्तर हो जाता है।" (**एंगेल्स—ड्यूरिंग-मत-खंडन**)

(घ) अतिभूतवादके प्रतिकूल द्वन्द्ववादका सिद्धान्त है कि प्रकृतिके सभी वाह्य रूपों और पदार्थोंमें आन्तरिक असंगतियाँ सहज-रूपसे विद्यमान हैं। इन पदार्थों और रूपोंके भाव-पक्ष और अभाव-पक्ष दोनों हैं; उनका अतीत है तो अनागत भी; एक अंश मरणशील है तो दूसरा विकासोन्मुख है। इन दो विरोधी अंशोंका संघर्ष,—पुरातन और नवीन, मरणशील और विकासोन्मुख, निर्वाण और निर्माणका संघर्ष ही—विकास-क्रमकी आन्तरिक प्रक्रिया है। परिमाण-भेदके गुण-भेदमें परिवर्तित होनेकी यही आन्तरिक प्रक्रिया है।

इसलिये द्वन्द्वात्मक प्रणालीके अनुसार निम्नसे ऊर्ध्वकी ओर विकास इस क्रमसे नहीं होता कि प्रकृतिके स्तर एकके बाद एक सहज गतिसे खुलते जायँ। इसके प्रतिकूल विकास-क्रममें पदार्थों और प्रकृतिके वाह्य रूपोंमें सहज रूपसे विद्यमान असंगतियाँ ही खुलती जाती हैं; इन असंगतियोंके आधारपर जो विरोधी प्रवृत्तियाँ क्रियाशील हैं, उनका "संघर्ष" ही खुलता जाता है।

लेनिनके शब्दोंमें,—

> "वास्तवमें **पदार्थोंके सार-तत्वोंमें ही अन्तर्निहित** असंगतियोंके अध्ययनका नाम द्वन्द्ववाद है।"
>
> (**लेनिन, दर्शन-संबन्धी नोटबुक—रूसी संस्करण, पृ.२६३.**)

लेनिनने यह भी कहा था,—

> " विरोधी तत्वोंके संघर्षका नाम ही विकास है। "
>
> (**संक्षिप्त लेनिन-ग्रंथावली—अं. सं., खं. ११, पृ. ८१–८२**)

संक्षेपमें मार्क्सीय द्वन्द्वात्मक प्रणालीके यही मुख्य लक्षण हैं।

समाजके जीवन और इतिहासका अध्ययन करनेके लिये सामाजिक क्षेत्रमें द्वन्द्वात्मक प्रणालीके सिद्धान्तोंका प्रसार कितना महत्वपूर्ण है और समाजके इतिहास तथा सर्वहारा वर्गकी पार्टीकी प्रत्यक्ष कार्यवाहीपर उन सिद्धान्तोंका लागू करना क्या महत्व रखता है, यह सहज ही अनुमान किया जा सकता है।

यदि संसारमें कोई भी वस्तु विच्छिन्न और एकाकी नहीं है, यदि सभी वस्तुएं परस्पर निर्भर और सम्बद्ध हैं तो यह स्पष्ट है कि इतिहासकी किसी भी समाज-व्यवस्था या सामाजिक आन्दोलनका मूल्यांकन हम किसी भी "सनातन न्याय" अथवा पूर्व-कल्पित सिद्धान्तसे नहीं कर सकेंगे, [illegible]

इतिहासज्ञोंमें नितांत अभाव नहीं है। यह मूल्यांकन हम उन परिस्थितियोंपर विचार करके ही कर सकते हैं जिन्होंने उस समाज-व्यवस्था या सामाजिक आन्दोलनको जन्म दिया है और जिससे वे सम्बद्ध हैं।

वर्तमान परिस्थितियोंमें दास-प्रथा निरर्थक, अस्वाभाविक और मूर्खतापूर्ण होगी। परन्तु जब प्राचीन पंचायती व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो रही थी तब दास-प्रथाका होना अच्छी तरह समझमें आ सकता है। तबकी परिस्थितियोंमें वह एक स्वाभाविक घटना थी, क्योंकि प्राचीन समाजकी पंचायती व्यवस्थाको देखते हुए वह एक उन्नत व्यवस्था थी।

जब जारशाही और पूँजीवादी व्यवस्था विद्यमान थीं, तब,— उदाहरणके लिये १९०५ के रूसमें,—एक पूँजीवादी-जनवादी प्रजातंत्रकी मांग अच्छी तरहसे समझमें आ सकती थी। वह एक उचित और क्रान्तिकारी माँग थी, क्योंकि उस समय पूँजीवादी-जनवादी प्रजातंत्रकी प्राप्तिका अर्थ होता, प्रगतिकी राहपर एक क़दम आगे बढ़ना। परन्तु अब सोवियत संघकी परिस्थितियोंमें पूँजीवादी-जनवादी प्रजातंत्रकी माँग एक अर्थ-हीन और क्रान्ति-विरोधी माँग होगी, क्योंकि सोवियत प्रजातंत्रकी तुलनामें पूँजी-वादी प्रजातंत्र पिछली मंजिलकी तरफ़ लौटनेकी तरह होगा।

देश, काल और परिस्थितियोंके अनुसार ही प्रगति और प्रतिक्रियाका निर्णय हो सकता है।

यह स्पष्ट है कि सामाजिक घटनाओंके प्रति इस **ऐतिहासिक** दृष्टिकोणके बिना इतिहास-विज्ञानका अस्तित्व और विकास असंभव है। इतिहास-विज्ञान तारतम्य-हीन घटनाओंकी सूची और क्षुद्रतम भ्रान्तियोंका संकलन न बने, यह इस दृष्टिकोण द्वारा ही संभव है।

और भी, यदि संसार निरंतर गतिशील और विकासमान अवस्थामें है, यदि पुरातनका क्षय और नवीनका अभ्युदय विकासका एक नियम है, तो यह स्पष्ट है कि "चिरंतन" सामाजिक-व्यवस्थाएँ नहीं हो सकतीं, शोषण और व्यक्तिगत सम्पत्तिके "शाश्वत सत्य" नहीं हो सकते, किसानपर जमींदार और मजदूरपर पूँजीपतिके प्रभुत्वके "त्रिकाल-सत्य" नहीं हो सकते।

इसलिये पूँजीवादी व्यवस्थाकी जगह समाजवादी व्यवस्था क़ायम की जा सकती है, जैसे कि एक समय सामंतवादी व्यवस्थाकी जगह पूँजीवादी व्यवस्था क़ायम की गयी थी।

इसलिये हमें अपने भावी कार्यक्रमका फ़ैसला समाजके उन स्तरोंके आधारपर न करना चाहिये जिनका विकास बन्द हो चुका है चाहे अभी उन्हींकी तूती बोलती हो; हमें उन स्तरोंका आधार ग्रहण करना चाहिये जो विकासमान हैं और जिनका एक उज्ज्वल भविष्य है चाहे अभी तक वे प्रमुख शक्ति न बन पाये हों।

उन्नीसवीं शताब्दीके नवें दशकमें जब मार्क्सवादियों और लोकवादियोंका संग्राम

चल रहा था, रूसी सर्वहारा वर्ग साधारण जनताका एक क्षुद्र अल्प-भाग था। इसके विपरीत खेतिहर-किसान जनताका बहुसंख्यक भाग थे। परन्तु सर्वहारा वर्ग एक विकासमान वर्ग था जब कि वर्गके रूपमें किसान छिन्न-भिन्न हो रहे थे। और चूँकि सर्वहारा वर्ग एक विकासमान वर्ग था, इसलिये मार्क्सवादियोंने उसीके आधारपर अपनी नीति निर्धारित की। जैसा कि विदित है, उनकी यह धारणा भ्रान्त न थी, क्योंकि आगे चलकर यह सर्वहारा वर्ग एक क्षुद्र शक्तिसे विकसित होकर उच्च कोटिकी ऐतिहासिक और राजनीतिक शक्ति बन गया।

इसलिये अपनी नीतिमें भूलचूकसे बचनेके लिये यह आवश्यक है कि मनुष्य अतीतपर अपनी दृष्टि न जमाकर भविष्यकी ओर देखे।

और भी, यदि यह विकासका नियम है कि परिमाण-सम्बन्धी धीमे परिवर्तन अकस्मात् और शीघ्रतासे गुण-सम्बन्धी परिवर्तनोंका रूप धारण कर सकते हैं तो स्पष्ट है कि पीड़ित वर्गों द्वारा की गयी क्रान्ति भी एक अत्यंत स्वाभाविक और अनिवार्य घटना है।

इसलिये धीमे-धीमे परिवर्तनों और सुधारों द्वारा पूँजीवादसे समाजवादकी ओर संक्रमण करना असंभव है; इस ढंगसे पूँजीवादकी गुलामीसे मजदूर-वर्गको आजादी नहीं मिल सकती। यह तभी संभव है जब क्रान्ति द्वारा पूँजीवादी व्यवस्थामें एक गुणात्मक परिवर्तन किया जाय।

इसलिये नीतिमें भूल न करनेके लिये यह आवश्यक है कि मनुष्य सुधारवादी न होकर क्रान्तिकारी हो।

और भी, यदि विकासका यह क्रम है कि आन्तरिक असंगतियोंके खुलनेसे वह आगे बढ़ता है और इन असंगतियोंपर विजय पानेके लिये उन्हींके आधारपर विरोधी शक्तियोंमें संघर्ष होता है, तो यह स्पष्ट है कि मजदूरोंका वर्ग-संघर्ष एक अत्यंत स्वाभाविक और अनिवार्य घटना है।

इसलिये पूँजीवादी व्यवस्थाकी असंगतियोंपर पर्दा न डालकर उन्हें खुलासा करना चाहिये और सुलझाना चाहिये। वर्ग-संघर्षको रोकनेका प्रयास न करके हमें उसे उसके अन्तिम परिणाम तक ले जाना चाहिये।

इसलिये नीतिमें भूल न करनेके लिये यह आवश्यक है कि बिना किसी मेल-मुलाहजेके हम सर्वहारा-श्रेणीकी वर्ग-नीतिका पालन करें; न कि सर्वहारा और पूँजीवादी वर्गोंके हितोंमें सामञ्जस्य स्थापित करनेकी सुधारवादी नीतिका, और न "पूँजीवादके समाजवादमें विकसित होने" की समझौतावादियोंकी नीतिका।

समाजके जीवन और इतिहासपर लागू की जानेपर मार्क्सीय द्वन्द्वात्मक प्रणाली का ऐसा रूप होता है।

जहाँ तक मार्क्सवादियोंके दार्शनिक भौतिकवादका सम्बन्ध है, यह दार्शनिक आदर्शवादका एकदम उल्टा है।

(२) मार्क्सवादियोंके दार्शनिक **भौतिकवाद**के मुख्य लक्षण इस प्रकार हैं—

(क) आदर्शवादके अनुसार यह विश्व किसी "पूर्ण अध्यात्म तत्व", किसी " व्यापक आत्मा " किंवा " चेतना " का मूर्त स्वरूप है। इसके विपरीत मार्क्सके दार्शनिक भौतिकवादका कहना है कि संसार स्वभावसे ही **भौतिक** है; उसके अनेक रूप धारण करनेवाले दृश्य गतिशील पदार्थ (या भूत)के ही विभिन्न रूप हैं; ये रूप परस्पर निर्भर और सम्बद्ध हैं और जैसा कि द्वन्द्वात्मक प्रणालीने सिद्ध किया है, यह परस्पर निर्भरता और सम्बद्धता ही गतिशील पदार्थ (भूत) के विकासका नियम है; संसारको किसी "व्यापक आत्मा"की आवश्यकता नहीं है, उसका विकास पदार्थकी गतिशीलताके नियमोंके अनुकूल होता है।

एंगेल्सके शब्दोंमें,—

" यथार्थ प्रकृतिकी निस्संकोच कल्पना ही भौतिकवादकी विश्व-सम्बन्धी धारणा है।" (**एँगेल्स—" लुडविग फ़ायरबाख़ " की पाण्डुलिपि**)

प्राचीन ग्रीक दार्शनिक हिरैक्लाइटसके अनुसार " व्यष्टिमें समष्टिरूपी इस संसारको किसी देवता या मनुष्यने नहीं बनाया वरन् वह एक सप्राण ज्योति है, जो थी, है, और सदा रहेगी; वह नियमित रूपसे जल उठती है और नियमित रूपसे ही ठंडी हो जाती है।" हिरैक्लाइटसके भौतिकवादी विचारोंका उल्लेख करते हुए लेनिनने लिखा था,—" द्वन्द्वात्मक भौतिकवादके मूलतत्वोंकी यह बड़ी अच्छी व्याख्या है।"

(लेनिन, दर्शन सम्बंधी नोटबुक—रूसी सं., पृष्ठ ३१८)

(ख) आदर्शवाद केवल चित्तकी वास्तविक सत्ता स्वीकार करता है। उसके लिये प्रकृति या भौतिक जगत्की सत्ता केवल हमारे चित्तमें, इन्द्रिय-बोधमें, कल्पनाओं और संवेदनाओंमें है। इसके प्रतिकूल मार्क्सीय भौतिकवादी दर्शनका कहना है कि प्रकृति या भौतिक संसारकी सत्ता एक वैज्ञानिक वास्तविकता है जो हमारे चित्तसे बाहर और उससे स्वतंत्र है। पदार्थ (भूत) मूल है क्योंकि वही संवेदनाओं, कल्पनाओं और चित्तका उद्गम है; चित्त गौण और उसीसे उत्पन्न है क्योंकि वह पदार्थका, सत्ताका प्रतिबिम्ब है। पदार्थ (भूत) विकसित होकर उच्च अवस्थामें मस्तिष्कका रूप धारण करता है; विचारोंकी क्रिया मस्तिष्क द्वारा संपन्न होती है; इसलिए विचार पदार्थ-जन्य हैं। विचारोंको प्रकृति और पदार्थसे विच्छिन्न करना भारी भूल होगी।

एँगेल्सने लिखा था,—

" सत्ता और विचार (सत् और चित्), आत्मा और प्रकृतिके सम्बन्धका प्रश्न समग्र दर्शनका मूल प्रश्न है।... इस प्रश्नका उत्तर दार्शनिक दो प्रकारसे देते हैं जिससे उनकी दो विशाल श्रेणियाँ बन गयी हैं। जो प्रकृति की अपेक्षा आत्माको मूल स्वीकार करते हैं...वे **आदर्शवादी** श्रेणीमें हैं। इनसे भिन्न जो प्रकृतिको मूल मानते हैं, वे **भौतिकवाद**की शाखा-प्रशाखाओंके अंतर्गत आ जाते हैं।"

(संक्षिप्त मार्क्स-ग्रंथावली—अं. सं., खं. १, पृ. ४२०-२१)

और भी,—

"भौतिक और गोचर संसार, जिसमें हमारा भी समावेश है, एकमात्र सत्य है।...हमारी चेतना और हमारे विचार चाहे जितने गोतीत जान पड़ें, परन्तु वे वास्तवमें एक भौतिक, दैहिक इन्द्रिय, मस्तिष्ककी उपज हैं। पदार्थ (भूत) मनसे उत्पन्न नहीं हुआ वरन् मन ही पदार्थ (भूत) की सर्वोत्कृष्ट सृष्टि है।"

(उपरोक्त—पृ. ४३५)

पदार्थ और विचारके सम्बन्धमें मार्क्सका कहना है,—

"**चिन्तनसे चिन्तक वस्तुको, जो भौतिक है, अलग करना असंभव है।** सारे परिवर्तनोंका सूत्र पदार्थके हाथमें है।"

(उपरोक्त—पृ. ३९७)

भौतिकवादके मार्क्सीय दर्शनकी व्याख्या करते हुए लेनिनने लिखा था,—

"साधारणतः भौतिकवाद चेतना, संवेदना और अनुभवसे वास्तविक सत्ता (पदार्थ) की वस्तुगत स्वतंत्रता स्वीकार करता है।...चेतना केवल सत्ताका प्रतिविम्ब है, अधिकसे अधिक उसका यथासंभव निकटतम प्रतिविम्ब है, ऐसा प्रतिविम्ब जिसमें पर्याप्त विचार-मूलक एतादृशता है।" **(संक्षिप्त लेनिन-ग्रंथावली—अं. सं., खं. ११, पृ. ३७७)**

और भी,—

(अ) "पदार्थ (भूत) वह है जो हमारी ज्ञानेन्द्रियोंपर आघात करके संवेदना उत्पन्न करता है। पदार्थ वह वस्तुगत (वैज्ञानिक) सत्य है जो हमें संवेदनामें प्राप्त होता है...भौतिक जगत्, पदार्थ-सत्ता,—जो कुछ भी प्राकृतिक है वह मूल है; आत्मा, चेतना, संवेदना,—कुछ भी मानसिक है, वह गौण है।"

(उपरोक्त—पृ. २०७-२०८)

(आ) "सृष्टि-ज्ञानका अर्थ है पदार्थ (भूत) की गति और 'उसकी चिन्तनशीलता'का ज्ञान।" **(उपरोक्त—पृ. ४०२)**

(इ) "विचारोंकी इन्द्रिय मस्तिष्क है।" **(उपरोक्त—पृ. २१४)**

(ग) आदर्शवाद संसार और उसके नियमोंको जाननेकी संभावनाको अस्वीकार करता है। वह हमारे ज्ञानकी प्रामाणिकताको भी स्वीकार नहीं करता। उसके लिये वस्तुगत सत्य नामका कोई सत्य नहीं है। उसका विश्वास है कि संसारमें ऐसे 'वस्तु-सत्य' हैं जिनकी विज्ञानको कभी भी जानकारी नहीं हो सकती। मार्क्सीय दार्शनिक भौतिकवादका कहना है कि संसार और उसके नियम पूर्णरूपसे बोधगम्य हैं; अभ्यास और प्रयोगकी कसौटीपर परखा हुआ हमारा प्रकृतिके नियमोंका ज्ञान प्रामाणिक है और वैज्ञानिक सत्यके समान निर्भ्रान्त है। संसारमें अज्ञेय कहकर कोई वस्तु नहीं है; अज्ञात वस्तुएं अवश्य हैं जो विज्ञान और अभ्यास द्वारा प्रकट होंगी और तब वे ज्ञेय हो जायेंगी।

यह संसार अज्ञेय है, और उसमें ऐसे "वस्तु-सत्य" हैं जो अज्ञेय हैं,—ऐसा कहने

वाले काण्ट तथा दूसरे आदर्शवादियोंकी आलोचना करते हुए और हमारा ज्ञान प्रामाणिक ज्ञान है, इस सुपरिचित भौतिकवादी धारणाका समर्थन करते हुए, एंगेल्सने लिखा था,—

> "इस प्रकारकी तथा अन्य सभी दार्शनिक कल्पनाओंका उत्कृष्ट खंडन व्यवहार है,—व्यवहार अर्थात् प्रयोग और उद्योग। यदि हम भौतिक-क्रम स्वयं उत्पन्न कर सकते हैं, अर्थात् प्राकृतिक परिस्थितियोंको कृत्रिम रूपसे जुटा कर उससे किसी भौतिक क्रियाको दुहरा सकते हैं और, घातेमें, उससे लाभ भी उठा सकते हैं, तो भौतिक-क्रमकी हमारी धारणा तो सिद्ध हो ही जाती है, काण्टके 'वस्तु-सत्वों' का भी वहीं अन्त हो जाता है। वनस्पति और प्राणिमात्रके पिण्डोंमें जो रासायनिक द्रव्य बनते थे, वे ऐसे ही "वस्तु-सत्व" थे परन्तु जब सेन्द्रिय रसायन-शास्त्र (ऑर्गैनिक केमिस्ट्री) एकके बाद एक ये सत्व तैयार करने लगा, तो उनपर हमारा भी स्वत्व हो गया। उदाहरणके लिये अलीज़रित् या कुसुंभी रंगके लिये वनस्पतिका सहारा न लेकर हम उसे ज्यादा आसानीसे कोलतारसे बना लेते हैं जो सस्ता भी पड़ता है। तीन शताब्दियों तक कौपर्नीकसका सौर-सिद्धान्त एक प्रमेय रहा; यद्यपि उसके पक्षमें सौ, हजार और लाख बातें थीं तो विपक्षमें एक ही, फिर भी था तो वह प्रमेय ही। परन्तु जब लेवेरियेने इस सिद्धान्तसे प्राप्त सामग्रीके बलपर एक अज्ञात ग्रहकी आवश्यक सत्ता ही नहीं प्रतिपादित की, वरन् आकाशमें उसके अनिवार्य स्थानकी भी गणना कर ली और जब गालेने उस ग्रहका वास्तवमें अनुसन्धान कर लिया तो कौपर्नीकसका प्रमेय सिद्ध हो गया।"
>
> **(संक्षिप्त मार्क्स-ग्रंथावली,—अं. सं., खं. १, पृ. ४२२-२३)**

बोग्दानौफ़, बाज़ारौफ़, युश्केविच तथा मार्क्सके दूसरे अनुयाइयोंपर श्रद्धावादका आरोप लगाते हुए, और प्रकृतिके नियमोंका ज्ञान प्रामाणिक है तथा विज्ञानके नियम वस्तुगत सत्य हैं, इस सुपरिचित धारणाका समर्थन करते हुए लेनिनने लिखा था,—

> "आधुनिक श्रद्धावादी विज्ञानको अस्वीकार नहीं करते। उनकी समझमें केवल विज्ञानका यह "दावा बहुत बढ़ा-चढ़ा" है कि वह वस्तुगत सत्यको जान सकता है। किन्तु यदि वस्तुगत सत्य संभव है (जैसा कि भौतिकवादियोंका विचार है) और यदि बाह्य संसारको मानवीय "अनुभव" के दर्पणमें प्रतिबिम्बित करके प्रकृति-विज्ञान ही हमें वस्तुगत सत्य दे सकता है, तो श्रद्धावादका यहींसे समूल ध्वंस हो जाता है।" **(संक्षिप्त लेनिन-ग्रंथावली—अं. सं., खं. ११, पृ. १८८)**

संक्षेपमें मार्क्सीय भौतिकवादके यही मुख्य लक्षण हैं।

दार्शनिक भौतिकवादके सिद्धान्तोंका सामाजिक जीवन और इतिहासके क्षेत्रमें विस्तार कितना महत्वपूर्ण है और समाजके इतिहास और सर्वहारा वर्गकी पार्टीपर उन्हें लागू करना क्या महत्व रखता है, यह सब सहजही अनुमेय है।

यदि प्रकृतिके वाह्य रूपोंकी परस्पर निर्भरता और सम्बद्धता प्रकृतिके विकासका एक नियम है, तो सामाजिक जीवनकी घटनाओंकी परस्पर निर्भरता और सम्बद्धता भी कोई " घटना " नहीं है वरन् सामाजिक विकासका एक नियम है।

इसलिये सामाजिक जीवन और समाजका इतिहास " आकस्मिक घटनाओं " का संकलन मात्र नहीं रह जाता; इतिहास सुव्यवस्थित नियमोंके अनुसार होनेवाले समाजके विकासका इतिहास हो जाता है और समाजके इतिहासका अध्ययन विज्ञान बन जाता है।

इसलिये सर्वहारा वर्गकी पार्टीको अपनी नीति "महान् व्यक्तियों" की सद्भावनाओं या " अंतःप्रेरणा " या "संसारकी रीति–नीति " के अनुसार निर्धारित न करनी चाहिये; उसे सामाजिक विकासके नियमों और इन नियमोंके अध्ययनके बलपर अपनी नीति निर्धारित करनी चाहिये।

और भी, यदि संसार ज्ञेय है और यदि भौतिक विकासके नियमोंका ज्ञान प्रामाणिक है, जो वस्तुगत सत्यकी भाँति निर्भ्रान्त है, तो यह भी सिद्ध है कि सामाजिक जीवन और सामाजिक विकास भी ज्ञेय है; सामाजिक विकासके नियमोंके सम्बन्धमें विज्ञान जो सामग्री प्रस्तुत करता है, वह प्रामाणिक है और वस्तुगत सत्यके सामान ही निर्भ्रान्त है।

इसलिये यद्यपि सामाजिक जीवनकी घटनाएँ गहन रूपसे संश्लिष्ट हैं, फिर भी सामाजिक इतिहासका विज्ञान उतना ही नपा-तुला विज्ञान हो सकता है जितना कि, उदाहरणके लिये जीव-विज्ञान। अतएव यह विज्ञान व्यावहारिक उद्देश्योंकी पूर्तिके लिये सामाजिक विकासके नियमोंका उपयोग कर सकता है।

इसलिये सर्वहारा वर्गकी पार्टीको अपने प्रत्यक्ष व्यवहारमें आकस्मिक प्रयोजनों द्वारा प्रेरित न होकर सामाजिक विकासके नियमों और उन नियमोंसे निकाले हुए व्यावहारिक निष्कर्षों द्वारा अपना पथ निश्चित करना चाहिये।

इसलिये समाजवाद मानवजातिके उज्ज्वल भविष्यकी मधुर कल्पना मात्र न रहकर एक विज्ञान बन जाता है।

इसलिये विज्ञान और प्रत्यक्ष व्यवहारके अन्योन्याश्रय सम्बन्धको, सिद्धान्त और कर्म की एकताको, सर्वहारा वर्गकी पार्टीका पथनिर्देशक ध्रुवतारा होना चाहिये।

और भी, यदि प्रकृति, सत्ता, भौतिक संसार मूल हैं और मन, विचार उससे उत्पन्न और गौण हैं; यदि भौतिक संसार मनुष्यके मनसे स्वतंत्र एक वस्तुगत सत्य है, और मन इस वस्तुगत सत्यका प्रतिबिम्ब है; तो इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि समाजका भौतिक जीवन, उसकी सत्ता भी मूल है और उसका आध्यात्मिक जीवन, उससे उत्पन्न और गौण है। समाजका भौतिक जीवन एक वस्तुगत सत्य है जिसका अस्तित्व मनुष्यकी इच्छासे स्वतंत्र है; समाजका आध्यात्मिक जीवन इस वस्तुगत सत्यका, सत्ताका, प्रतिबिम्ब है।

इसलिये समाजके आध्यात्मिक जीवनके निर्माणके मूल-स्रोतों—सामाजिक विचारों, सिद्धान्तों, राजनीतिक मतों और संस्थाओंके उद्गमों—उन विचारों, सिद्धान्तों, मतों और

राजनीतिक संस्थाओंमें ही न खोजना चाहिये वरन् उन्हें समाजके भौतिक जीवनकी परिस्थितियोंमें, सामाजिक सत्तामें खोजना चाहिये जिसका कि ये विचार, सिद्धान्त, मत आदि प्रतिविम्व हैं।

इसलिये यदि सामाजिक इतिहासके विभिन्न युगोंमें विभिन्न सामाजिक विचार, सिद्धान्त, मत और राजनीतिक संस्थाएँ पायी जाती हैं; यदि दास-व्यवस्थामें हमें एक तरहके सामाजिक विचार, सिद्धान्त, मत और राजनीतिक संस्थाएँ मिलती हैं, सामन्तवादी व्यवस्थामें दूसरी तरह के, और पूँजीवादी व्यवस्थामें तीसरी तरहके, तो इसकी व्याख्या हम विचारों, सिद्धान्तों, मतों और राजनीतिक संस्थाओंके ही "स्वभाव", "गुणों" आदिके सहारे नहीं कर सकते वरन् हम इसकी व्याख्या सामाजिक विकासके विभिन्न युगोंमें समाजके भौतिक जीवनकी विभिन्न परिस्थितियोंके सहारे करेंगे।

जैसी समाजकी सत्ता होती है, समाजके भौतिक जीवनकी जैसी परिस्थितियाँ होती हैं, वैसे ही उसके विचार, सिद्धान्त, राजनीतिक मत और राजनीतिक संस्थाएँ होती हैं।

इस सम्वन्धमें मार्क्स का कहना है,—

"मनुष्यकी सत्ता उसकी चेतना द्वारा नहीं निश्चित होती, वरन् उसकी चेतना ही उसकी सामाजिक सत्ता द्वारा निश्चित होती है।"

(संक्षिप्त मार्क्स-ग्रंथावली,—अं. सं., खं. १, पृ. ३५६)

इसलिये नीतिमें भूल न करनेके लिये और मनोहारी स्वप्न-राज्यमें निरर्थक भ्रमण से वचनेके लिये यह आवश्यक है कि सर्वहारा वर्गकी पार्टी अपनी कार्यवाहीको "मानव-विवेकके सूक्ष्म सिद्धान्तों"से न निर्धारित करे वरन् समाजके भौतिक जीवनकी स्थूल परिस्थितियोंको सामाजिक विकासकी नियामक शक्ति समझकर, उन्हींके अनुसार, अपनी नीति निर्धारित करे। उसे "वड़े आदमियों"की शुभ कामनाओंकी चिन्ता न करके समाजके भौतिक जीवनके विकासकी वास्तविक आवश्यकताओंका ध्यान रखना चाहिये।

रूसके कल्पनावादियोंका—जिनमें लोकवादी, अराजकतावादी और सामाजिक-क्रान्तिकारी भी थे—पतन इसलिये हुआ कि और वातोंके साथ उन्होंने समाजके विकासमें समाजके भौतिक जीवनकी परिस्थितियोंकी प्रमुख भूमिकाको स्वीकार नहीं किया। आदर्शवादके दलदलमें फँसकर वे समाजके भौतिक जीवनके विकासकी आवश्यकताओंको भूल गये; उनकी अवहेलना करके, उनसे स्वतंत्र, समाजके वास्तविक जीवनसे दूर, उन्होंने अपनी कार्यवाहीका आधार वनाया "आदर्श योजनाओं"को, "व्यापक कार्यक्रम"को।

मार्क्सवाद-लेनिनवादकी शक्ति और सप्राणताका कारण यह है कि उसके क्रियात्मक व्यवहारका आधार समाजके भौतिक जीवनके विकासकी आवश्यकताएँ हैं। मार्क्सवाद-लेनिनवाद समाजके वास्तविक जीवनसे कभी दूर नहीं भागता।

परन्तु मार्क्सके शब्दोंसे यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि समाजके जीवनमें सामाजिक विचारों, सिद्धान्तों, राजनीतिक मतों और राजनीतिक संस्थाओंका कोई महत्व नहीं है और वे सामाजिक सत्ता तथा सामाजिक जीवनकी भौतिक परिस्थितियोंके विकासमें

सहायक नहीं होतीं। अभी तक हम इस बातकी विवेचना कर रहे थे कि सामाजिक विचारों, सिद्धान्तों, मतों और राजनीतिक संस्थाओंका "उद्गम" क्या है, वे **किस प्रकार फलती-फूलती हैं,** और कैसे समाजका आध्यात्मिक जीवन उसके भौतिक जीवनकी परिस्थितियोंका ही प्रतिविम्व है। जहाँ तक सामाजिक विचारों, सिद्धान्तों, मतों और राजनीतिक संस्थाओंके **महत्व** और इतिहासमें उनकी **भूमिका**का सम्बन्ध है, वहाँ उसे अस्वीकार करना तो दूर, ऐतिहासिक भौतिकवाद समाजके जीवन और इतिहासमें इन उपकरणोंकी भूमिका और उनके महत्वपर खास जोर देता है।

सामाजिक विचार और सिद्धान्त कई प्रकारके होते हैं। एक तो पुराने विचार और सिद्धान्त जिनका युग समाप्त हो गया है और जो समाजकी ह्रासोन्मुखी शक्तियोंके हितोंकी रक्षा करते हैं। उनका महत्व यही है कि वे समाजके विकास, उसकी प्रगतिमें वाधक हैं। इनके सिवा नये और प्रगतिशील विचार और सिद्धान्त हैं जो समाजकी प्रगतिशील शक्तियोंके हितोंके रक्षक हैं। उनका महत्व इस वातमें है कि वे समाजके विकास, उसकी प्रगतिमें सहायक होते हैं। जैसे-जैसे वे समाजके भौतिक जीवनके विकासकी आवश्यकताओंको अधिक सावधानीसे प्रतिविम्वित करते हैं, वैसे-वैसे उनका महत्व भी वढ़ता जाता है।

नये सामाजिक विचार और सिद्धान्त तभी उत्पन्न होते हैं जव समाजके भौतिक जीवनका विकास समाजके सामने नये काम रखता है। एक वार उत्पन्न हो जानेपर ये सिद्धान्त और विचार एक अत्यंत वलवती शक्ति वन जाते हैं। वे समाजके भौतिक जीवनके विकास द्वारा प्रस्तुत किये हुए कार्योंकी पूर्तिमें, समाजकी प्रगतिमें, सहायक होते हैं। इसी कार्यमें नये विचार, नये सिद्धान्त, नये राजनीतिक मत और नयी राजनीतिक संस्थाएँ अपना जौहर दिखाती हैं। सामाजिक शक्तियोंको समेटने, संगठित करने और उनमें परिवर्तन करनेकी उनकी अद्भुत क्षमता तभी प्रकट होती है। नये सामाजिक विचार इसीलिये उत्पन्न होते हैं कि वे समाजके लिये आवश्यक हैं; सामाजिक शक्तियोंको समेटने, संगठित करने और उनमें परिवर्तन करनेकी नये विचारोंकी क्षमताके विना समाजके भौतिक जीवनके विकासके अत्यावश्यक कार्योंको पूरा करना असंभव होगा। समाजके भौतिक जीवनके विकासने जो नये कार्य समाजके सामने रखे हैं, उनसे ये नये विचार और सिद्धांत उत्पन्न होकर मार्गकी विघ्न-वाधाओंको पार करते हुए जनताके पास तक पहुँचते हैं, पुनः जनताकी ही निधि वन जाते हैं, समाजकी ह्रासोन्मुखी शक्तियोंके विरुद्ध जनताको समेटते और संगठित करते हैं और इस प्रकार समाजके भौतिक जीवनके विकासमें वाधक इन शक्तियोंके नाशमें सहायक होते हैं।

इस प्रकार समाजके भौतिक जीवनके विकास, सामाजिक सत्ताके विकासके अत्यावश्यक कार्योंकी आधार-भूमिसे ही सामाजिक विचार, सिद्धान्त और राजनीतिक संस्थाएँ उत्पन्न होती हैं; आगे चलकर वे स्वयं सामाजिक सत्ता, समाजके भौतिक जीवनपर अपना क्रियात्मक प्रभाव डालती हैं और उन परिस्थितियोंका निर्माण करती हैं जो समाज

के भौतिक जीवनके अत्यावश्यक कार्योंकी सम्यक पूर्तिके लिये, उसके भावी विकासको संभव बनानेके लिये आवश्यक हैं।

इस सम्बन्धमें मार्क्सका कहना है,—

"जनताके हृदयमें घर कर लेनेपर सिद्धान्त एक भौतिक शक्ति बन जाते हैं।" (**हेगेलके दर्शनकी आलोचना**)

इसलिये समाजके भौतिक जीवनकी परिस्थितियोंपर अपना असर डालनेके लिये और उनके विकास तथा उन्नतिको गति देनेके लिये सर्वहारा वर्गकी पार्टीके लिये आवश्यक है कि वह ऐसी सामाजिक धारणा और सिद्धान्तका आश्रय ले जो समाजके भौतिक जीवनके विकास और सामाजिक शक्तियोंको समेटने और संगठित करनेकी आवश्यकताओंको ठीक-ठीक प्रतिविम्बित करता हो और जो सामाजिक शक्तियोंको समेट कर और संगठित करके तथा जन-साधारणको आगे बढ़नेकी प्रेरणा देकर सर्वहारा-पार्टीकी एक ऐसी शक्तिशाली सेना बनानेमें समर्थ हो जो प्रतिक्रियावादी शक्तियोंका ध्वंस करने और समाजकी अग्रगामी शक्तियोंका मार्ग प्रशस्त करनेमें सफल हो सके।

"अर्थवादियों" और मेन्शेविकोंका पतन और बातोंके अलावा इस कारण हुआ कि उन्होंने अग्रसर सिद्धान्तों और विचारोंकी इस क्षमताको नहीं पहचाना कि वे सामाजिक शक्तियोंको समेट सकते हैं, उन्हें संगठित कर सकते हैं और उनमें परिवर्तन कर सकते हैं। निम्न कोटिके और गँवारू भौतिकवादमें फँसकर उन्होंने इन उपकरणोंकी भूमिकाको नगण्य ठहराया और इस प्रकार पार्टीके लिये निष्क्रियता और निठल्लेपनका द्वार खोल दिया।

मार्क्सवाद-लेनिनवादकी शक्ति और सप्राणताका कारण यह है कि उसका आधार वे अग्रसर सिद्धान्त हैं जो समाजके भौतिक जीवनके विकासकी आवश्यकताओंको सही-सही प्रतिविम्बित करते हैं। मार्क्सवाद-लेनिनवाद सिद्धान्तोंको उनका योग्य उच्च आसन देता है और सामाजिक शक्तियोंको समेटने, संगठित करने और उनमें परिवर्तन करनेकी जो भी क्षमता इन सिद्धान्तोंमें है उसका रत्ती-रत्ती उपयोग करना वह अपना कर्तव्य समझता है।

सामाजिक सत्ता और सामाजिक चेतनाका क्या सम्बन्ध है, समाजके भौतिक जीवन और आध्यात्मिक जीवनके विकासके लिये आवश्यक परिस्थितियोंका परस्पर क्या सम्बन्ध है, इस प्रश्नका उत्तर ऐतिहासिक-भौतिकवाद उपरोक्त रीतिसे देता है।

एक प्रश्नका उत्तर अभी और देना है, और वह यह कि ऐतिहासिक भौतिकवादके दृष्टिकोणसे समाजके "भौतिक जीवनकी उन परिस्थितियों" से हमारा क्या तात्पर्य है जो अन्ततोगत्वा समाजके रूप, उसके विचारों, मतों, राजनीतिक संस्थाओं, आदिको निश्चित करती हैं?

ये "समाजके भौतिक जीवनकी परिस्थितियाँ" हैं क्या? उनके लक्षण क्या हैं?

"समाजके भौतिक जीवनकी परिस्थितियों" में सबसे पहले तो निस्सन्देह प्रकृति है जो समाजको घेरे हुए है, वह भौगोलिक परिस्थिति है जो समाजके भौतिक जीवनके

लिये अनिवार्य रूपसे निरन्तर आवश्यक है और जिसका समाजके विकासपर प्रभाव पड़ता ही है। समाजके विकासमें भौगोलिक परिस्थितिकी कौन सी भूमिका है ? क्या भौगोलिक परिस्थिति ही वह मुख्य शक्ति है जो समाजके रूप और सामाजिक व्यवस्थाके लक्षण निश्चित करती है, जिसके कारण एक व्यवस्थासे दूसरीकी ओर संक्रमण संभव होता है ?

ऐतिहासिक भौतिकवाद इस प्रश्नके उत्तरमें कहता है,—नहीं।

इसमें सन्देह नहीं कि समाजके भौतिक विकासके लिये और बातोंके साथ भौगोलिक परिस्थिति अनिवार्य रूपसे निरन्तर आवश्यक है और समाजके विकासपर उसका प्रभाव भी पड़ता है, वह उसके विकासकी गतिको मद्धिम या तीव्र करती है। परन्तु उसका प्रभाव **नियामक** नहीं है क्योंकि भौगोलिक परिस्थितिके विकास और उसके परिवर्तनोंकी अपेक्षा समाजके विकास और परिवर्तनोंकी गति कहीं अधिक तीव्र है। तीन हजार वर्षों की अवधिमें एकके बाद एक तीन सामाजिक व्यवस्थाएँ योरपमें आ जा चुकी हैं,—एक तो प्राचीन पंचायती व्यवस्था, दूसरी दास-व्यवस्था, तीसरी सामंतवादी व्यवस्था। योरपके पूर्वी भाग, सोवियत संघमें इन व्यवस्थाओंकी संख्या चार तक पहुँच गयी है। फिर भी इस अवधिमें या तो योरपकी भौगोलिक परिस्थितिमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ, या हुआ है तो वह ऐसा नगण्य है कि भूगोलने उसकी ओर ध्यान नहीं दिया। ऐसा होना स्वाभाविक था। भौगोलिक परिस्थितिमें ऐसे परिवर्तन, जिनका कुछ भी महत्व हो, लाखों वर्षमें होते हैं परन्तु मनुष्यकी सामाजिक व्यवस्थामें अत्यन्त महत्वपूर्ण परिवर्तनोंके लिये कुछेक शताब्दियाँ या एक दो सहस्राब्दियाँ ही पर्याप्त हैं।

इससे यह सिद्ध होता है कि भौगोलिक परिस्थिति सामाजिक विकासका ऐसा कारण नहीं है जिसे मुख्य या **नियामक** कहा जा सके। जो वस्तु स्वयं हजारों-लाखों वर्ष तक प्रायः अपरिवर्तित रहती है, वह कुछ शताब्दियोंमें आमूल परिवर्तित होने वाली वस्तुका मुख्य कारण नहीं बन सकती।

और भी, "समाजके भौतिक जीवनकी परिस्थितियों"में जनसंख्यामें वृद्धि, उसका न्यूनाधिक घनत्व भी निस्संदेह सम्मिलत है क्योंकि समाजके भौतिक जीवनका एक अपरिहार्य उपकरण जनता है। विना एक निश्चित अल्पतम जन-संख्याके समाजका भौतिक जीवन असंभव है। तब क्या जन-संख्यामें वृद्धि वह प्रमुख शक्ति है जो मनुष्यकी सामाजिक व्यवस्थाका रूप निश्चित करती है ?

ऐतिहासिक भौतिकवाद इस प्रश्नके उत्तर में भी कहता है—नहीं।

अवश्य ही समाजके विकासपर जन-संख्याकी वृद्धिका प्रभाव पड़ता है, वह उसकी गतिको मद्धिम या तीव्र करती है, परन्तु सामाजिक विकासमें वह प्रमुख शक्ति नहीं हो सकती। समाजके विकासपर उसका प्रभाव **नियामक** नहीं हो सकता। इसका कारण यह है कि जन-संख्यामें वृद्धि अकेले ही इस प्रश्नका उत्तर नहीं दे सकती कि एक सामाजिक व्यवस्थाकी जगह दूसरी सामाजिक व्यवस्था ही क्यों आ जाती है, और कोई तीसरी क्यों नहीं आ जाती; प्राचीन पंचायती व्यवस्थाकी जगह दास-व्यवस्था ही क्यों

आयी, दास-व्यवस्थाकी जगह सामन्तवादी व्यवस्था और सामंतवादी व्यवस्थाकी जगह पूँजीवादी व्यवस्था ही क्यों आयी, और कोई दूसरी व्यवस्था क्यों नहीं आ गयी ?

यदि जन-संख्यामें वृद्धि सामाजिक विकासकी नियामक शक्ति हो तो जन-संख्याके घनत्वके अनुपातसे उच्चतर सामाजिक व्यवस्थाका जन्म भी होना चाहिये परन्तु ऐसा तो होता नहीं है। चीनमें जन-संख्याका घनत्व अमरीकासे चौगुना है, फिर भी सामाजिक विकासमें अमरीका चीनसे कई सीढ़ियाँ ऊपर है। चीनमें अब भी एक अर्द्ध-सामन्तवादी व्यवस्थाका बोलबाला है जब कि अमरीकामें बहुत पहले ही पूँजीवादका चरम विकास हो चुका है। बेल्जियम में जन-संख्याका घनत्व अमरीकासे उन्नीस गुना और सोवियत संघसे छब्बीस गुना है। फिर भी सामाजिक विकासमें बेल्जियम अमरीकासे कई सीढ़ियाँ नीचे है। और सोवियत संघकी तुलनामें तो उसे अभी एक पूरा ऐतिहासिक युग पार करना है; क्योंकि बेल्जियममें अब भी पूँजीवादी व्यवस्थाका बोलबाला है जब कि सोवियत संघने उसे कभीका विदा कर दिया है और उसकी जगह समाजवादी व्यवस्था क़ायम कर ली है।

इससे सिद्ध होता है कि जन-संख्यामें वृद्धि सामाजिक विकासकी मुख्य शक्ति, समाजके रूप और सामाजिक व्यवस्थाके लक्षणोंकी **नियामक** शक्ति नहीं है और न हो सकती है।

तब समाजके भौतिक जीवनकी इन परिस्थितियोंके ऊहापोहमें वह कौनसी मुख्य शक्ति है जो समाजके रूप, और सामाजिक व्यवस्थाके लक्षणोंको निश्चित करती है, जिसके कारण एकसे दूसरी व्यवस्थामें समाजका संक्रमण संभव होता है ?

ऐतिहासिक भौतिकवादके अनुसार यह शक्ति मानवीय अस्तित्वके लिये आवश्यक **जीवन-साधनोंको प्राप्त करनेकी प्रणाली** है; समाजके विकास और जीवनके लिये अनिवार्य रूपसे आवश्यक खाना, कपड़ा, जूता, घर, ईंधन, पैदावारके साधन आदि **भौतिक मूल्योंके उत्पादनकी पद्धति** ही यह शक्ति है।

जीनेके लिये आदमीको खाना, कपड़ा, जूता, घर ईंधन वग़ैरह-वगैरह चीज़ें चाहिये। इन भौतिक मूल्यों (चीज़ों) को पानेके लिये यह ज़रूरी है कि आदमी इन्हें बनाये। उन्हें बनानेके लिये आदमीके पास पैदावारके वे सब साधन चाहिये जिनसे खाना, कपड़ा, जूता, घर, ईंधन वग़ैरह बन सकें अर्थात् यह ज़रूरी है कि आदमी इन सब साधनोंको बना सके और उनसे काम ले सके।

वे **पैदावारके साधन** जिनसे भौतिक मूल्योंका उत्पादन होता है, वे **आदमी** जो इन साधनोंसे काम लेते हैं और जो अपने **उत्पादनके अनुभव** और **श्रम-कौशल** से भौतिक मूल्योंका उत्पादन-कार्य जारी रखते हैं—ये सब उपकरण मिलकर समाजकी **उत्पादक शक्ति** कहलाते हैं।

परन्तु उत्पादक शक्ति उत्पादनका एक अंग है, उत्पादन-पद्धतिका एक ही पहलू है। भौतिक मूल्योंके उत्पादनके लिये मनुष्य प्रकृतिकी जिन शक्तियों और पदार्थोंका उपयोग

करता है, उनसे उसका क्या सवन्ध है, इसे यह पहलू प्रकट करता है। उत्पादनका एक दूसरा अंग है, उत्पादन–पद्धतिका एक दूसरा पहलू भी है; यह पहलू उत्पादन–क्रममें मनुष्योंका परस्पर सम्बन्ध है, यह अंग मनुष्योंका **उत्पादन–सम्बन्ध** है। मनुष्य प्रकृतिसे युद्ध करता है और भौतिक मूल्योंके उत्पादनके लिये उसका उपयोग करता है। परन्तु ऐसा वह व्यक्तिगत रूपसे, दूसरोंसे अलग रहकर नहीं करता। वह गुटोंमें, समाजमें, दूसरोंसे मिलकर ऐसा करता है। इसलिये हर समय और हर दशामें उत्पादन एक **सामाजिक** क्रिया है। भौतिक मूल्योंके उत्पादनमें मनुष्य उस उत्पादन–क्षेत्रमें ही एक या दूसरे तरहका परस्पर सम्बन्ध स्थापित करता है अर्थात् वह परस्परका कोई उत्पादन–संवन्ध जोड़ लेता है। ये सम्बन्ध शोषणमुक्त मनुष्योंमें परस्पर सहायता और सहकारिताके सम्बन्ध हो सकते हैं। वे सम्बन्ध दासत्व और प्रभुत्वके हो सकते हैं। अंतमें वे ऐसे भी हो सकते हैं जो उत्पादन–सम्बन्धोंके एक रूपसे दूसरे रूपकी ओर संक्रमणकी दशामें हों। इन उत्पादन–सम्बन्धोंका चाहे जो लक्षण हो, हर समय और हर सामाजिक व्यवस्थामें वे उत्पादनके उतने ही महत्वपूर्ण उपकरण होंगे जितनी महत्वपूर्ण कि समाजकी उत्पादन–शक्तियाँ होंगी।

मार्क्सने लिखा था:—

"उत्पादनमें मनुष्य अपना संवंध प्रकृतिसे ही नहीं वरन् एक दूसरेसे भी स्थापित करता है। एक प्रकारकी सहकारिता और कार्योंके परस्पर विनिमयसे ही उत्पादन संभव होता है। उत्पादन करनेके लिये मनुष्य परस्पर निश्चित संपर्क और सम्बन्ध स्थापित करता है; इस सामाजिक संपर्क और सम्बन्धकी परिधिमें ही प्रकृतिसे उसका प्रत्यक्ष व्यवहार, अर्थात् उत्पादन संभव होता है।" (**संक्षिप्त मार्क्स–ग्रंथावली—अं. सं., खं. १, पृ. २६४**)

फलतः उत्पादन या उत्पादन-पद्धतिमें समाजकी उत्पादक शक्तियाँ और मनुष्यके उत्पादन-संवन्ध दोनों ही सम्मिलित हैं; वह पद्धति भौतिक-मूल्योंके उत्पादन-क्रममें उत्पादक शक्तियों और सम्बन्धोंकी एकताका मूर्त स्वरूप है।

उत्पादनका **एक लक्षण** यह है कि वह किसी एक अवस्थामें देर तक स्थिर नहीं रहता, वरन् सदा परिवर्तन और विकासकी ही दशामें रहता है; उत्पादन-पद्धतिमें परिवर्तन होनेसे तमाम सामाजिक व्यवस्थामें, विचारों, राजनीतिक मतों और राजनीतिक संस्थाओंमें परिवर्तन अवश्यम्भावी होजाता है; उत्पादन–पद्धतिमें परिवर्तन होनेसे समग्र राजनीतिक एवं सामाजिक रचनामें नव–निर्माण अवश्यम्भावी हो जाता है। विकासकी विभिन्न अवस्थाओंमें मनुष्य विभिन्न उत्पादन–पद्धतियोंका उपयोग करते हैं; मोटे शब्दोंमें अलग–अलग तरहसे जिन्दगी वसर करते हैं। प्राचीन पंचायतमें एक तरहकी उत्पादन–पद्धति थी तो दास–व्यवस्थामें दूसरी तरहकी, सामंतवादमें तीसरी तरहकी, और इसी भाँति आगे भी; और उसी क्रमसे मनुष्यकी समाज–व्यवस्था, आध्यात्मिक जीवन, उसके मतों और राजनीतिक संस्थाओंमें भी परिवर्तन हुए।

समाजकी जैसी उत्पादन–पद्धति होती है, मुख्यतः वैसा ही समाज होता है, वैसेही उसके विचार और सिद्धान्त होते हैं, वैसे ही उसके राजनीतिक मत और संस्थाएँ होती हैं।

सीधे शब्दोंमें, जैसा मनुष्यका आचार होता है, वैसे ही उसके विचार होते हैं।

इसका अर्थ यह हुआ कि समाजके विकासका इतिहास मुख्यतः उत्पादनके विकास का इतिहास है; वह शताब्दियोंमें एक दूसरेका अनुसरण करने वाली उत्पादन–पद्धतियों का इतिहास है। समाजके विकासका इतिहास उत्पादन–सम्बन्धोंके विकासका इतिहास है।

इसलिये सामाजिक विकासका इतिहास भौतिक मूल्योंका उत्पादन करनेवालोंका भी इतिहास है क्योंकि वे उत्पादन–क्रममें मुख्य शक्ति हैं और समाजके जीवनके लिये आवश्यक भौतिक मूल्योंका उत्पादन जारी रखते हैं।

इसलिये यदि इतिहास–विज्ञानको वास्तविक विज्ञान बनना है तो वह सामाजिक इतिहासके विकासको सम्राटों और सेनापतियों या पर-राज्योंके "विजेताओं" और "शासकों" के कृत्योंमें सीमित नहीं कर सकता। इतिहास विज्ञानके लिये अवाश्यक है कि वह भौतिक मूल्योंके सिर्जनहार, लाखों–करोड़ों मजदूरोंके इतिहास, जन–साधारणके इतिहासको अपने चिंतनका मूल–विषय बनाये।

इसलिये सामाजिक इतिहासके नियमोंका सूत्र मनुष्यके मस्तिकमें या समाजके विचारों और मतोंमें नहीं मिल सकता; वह सूत्र मिलेगा उस ऐतिहासिक युगमें प्रचलित समाजकी उत्पादन–पद्धतिमें। उसे समाजके आर्थिक जीवनमें ढूँढ़ना होगा।

इसलिये ऐतिहासिक विज्ञानका प्रमुख कर्तव्य यह है कि वह उत्पादनके नियमोंका खुलासा करे, वह उत्पादन शक्तियोंके विकास और उत्पादन–सम्बन्धोंके नियमोंको स्पष्ट करे, वह समाजके आर्थिक विकासके नियमोंको स्पष्ट करे।

इसलिये यदि सर्वहारा वर्गकी पार्टीको एक वास्तविक पार्टी बनना है तो उसे उत्पादनके विकासके नियमोंका ज्ञान, समाजके आर्थिक विकासके नियमोंका ज्ञान प्राप्त करना चाहिये।

इसलिये नीतिमें भूल न करनेके लिये सर्वहारा वर्गकी पार्टीके लिये आवश्यक है कि वह अपनी प्रत्यक्ष कार्यवाहीमें और अपना कार्यक्रम बनानेमें मुख्यतः उत्पादनके विकासके नियमोंको, समाजके आर्थिक विकासके नियमोंको ध्यानमें रखे।

उत्पादनका **दूसरा लक्षण** यह है कि उसके विकास और परिवर्तनका आरंभ उत्पादक शक्तियोंके विकास और परिवर्तनसे होता है; उनमें भी सबसे पहले उत्पादनके साधनोंके विकास और परिवर्तनका प्रभाव उसपर पड़ता है। इसलिये उत्पादक शक्तियाँ उत्पादनका सबसे गतिशील और क्रान्तिकारी अंग हैं। पहले समाजकी उत्पादक शक्तियोंमें परिवर्तन और विकास होता है और तब इसी परिवर्तनपर **निर्भर** और **उसीके अनुकूल** मनुष्योंके उत्पादन–संबंधों या उनके आर्थिक संबंधोंमें भी परिवर्तन होता है। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि उत्पादक शक्तियोंके विकासपर उत्पादन–संबंधोंका प्रभाव

नहीं पड़ता और उत्पादक शक्तियाँ उत्पादन-संबंधोंपर निर्भर नहीं हैं। एक ओर उनके विकासपर उत्पादन-संबंधोंका विकास निर्भर है तो दूसरी ओर उनके विकासपर उत्पादन-संबंधोंकी प्रतिक्रिया भी होती है जो उस विकासकी गतिको मद्धिम या तीव्र कर देती है। इस संबंधमें यह याद रखना चाहिये कि उत्पादन-संबंध उत्पादक शक्तियों से पिछड़कर और उनके विरोधकी दशामें अधिक समय तक नहीं रह सकते; क्योंकि उत्पादक शक्तियोंका सहज विकास तभी संभव है जब उनकी दशाके और उन्हींके लक्षणों के अनुकूल उत्पादन-सम्बन्ध भी हों और उन्हें विकसित होनेका पूर्ण अवसर देते हों। इसलिये उत्पादन-सम्बन्ध उत्पादक शक्तियोंके विकासके चाहे जितना पीछे रह जायँ उन्हें उत्पादक शक्तियोंके विकासकी मंजिल तक आगे-पीछे पहुँचना ही पड़ेगा और उत्पादन शक्तियोंके अनुकूल बनना ही पड़ेगा। वास्तवमें वे यह अनुकूलता प्राप्त कर लेते हैं। ऐसा न होने से उत्पादन-क्रममें उत्पादक-शक्तियों और उत्पादन-सम्बन्धोंकी एकताका ही ध्वंस हो जायगा; एकताका आधार न रहनेसे सारे उत्पादनमें गड़बड़ी फैल जायगी, उसमें संकट उत्पन्न होगा और उत्पादक शक्तियाँ नष्ट हो जायेंगी।

उत्पादन-सम्बन्ध उत्पादक शक्तियोंके अनुकूल न हों वरन् उनसे टक्कर खाते हों,—इसका एक ज्वलंत उदाहरण पूँजीवादी देशोंके आर्थिक संकटोंमें मिलेगा, जहाँ उत्पादनके साधनोंपर पूँजीपतियोंका "व्यक्तिगत" अधिकार उत्पादन-क्रमकी "सामाजिकता" के एकदम विपरीत है; वह उत्पादक शक्तियोंके लक्षणोंसे बिल्कुल उल्टा पड़ता है। इसीके फलस्वरूप आर्थिक संकट उत्पन्न होते हैं जिनसे उत्पादक शक्तियोंका नाश होता है। और भी,—यह विषमता ही सामाजिक क्रान्तिका आर्थिक आधार है; सामाजिक क्रान्तिका ध्येय वर्तमान उत्पादन-सम्बन्धोंका ध्वंस करके उत्पादक शक्तियोंके लक्षणोंके अनुकूल नये उत्पादन-सम्बधोंका निर्माण करना होता है।

इसके विपरीत जहाँ उत्पादन-सम्बन्ध उत्पादक शक्तियोंके लक्षणोंके पूर्ण अनुकूल हों, इसका उदाहरण सोवियत संघकी समाजवादी राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्थामें मिलता है। यहाँ उत्पादनके साधनोंपर समाजका अधिकार उत्पादन-क्रमकी सामाजिकताके नितान्त अनुकूल है; इस कारण यहाँपर आर्थिक संकट और उत्पादक शक्तियोंका विनाश भी देखा-सुना नहीं जाता।

इससे यह निष्कर्ष निकला कि उत्पादक शक्तियाँ उत्पादनका सबसे गतिशील और क्रान्तिकारी अंग ही नहीं हैं वरन् उत्पादनके विकासमें ये शक्तियाँ ही नियामक हैं।

जैसी भी उत्पादक शक्तियाँ होंगी, वैसे ही उत्पादन-सम्बन्ध भी होंगे।

उत्पादक शक्तियोंकी अवस्थासे हमें इस प्रश्नका उत्तर मिलता है,—मनुष्य अपने आवश्यक भौतिक मूल्योंको उत्पादनके किन अस्त्रोंसे उत्पन्न करते हैं? इसके साथ उत्पादन-सम्बन्धोंकी अवस्थासे हमें दूसरे प्रश्नका उत्तर मिलता है,— **उत्पादनके साधनों** (जमीन, जंगल, नदी-नाले, खनिज द्रव्य, कच्चा माल, पैदावारकी मिल-मशीनें, कारखाने, आवाजाही और चिट्ठी-पत्रीके साधनों, आदि) पर किसका अधिकार है?

उत्पादनके साधनोंका संचालन किसके हाथमें है, सारे समाजके हाथमें या कुछ लोगों गुटों या वर्गोंके हाथमें जो इनका उपयोग दूसरे लोगों, गुटों या वर्गोंके शोषणके लिये करते हैं ?

प्राचीन समयसे लेकर आज तक उत्पादक शक्तियोंके विकासका एक मोटा सा नक्शा इस तरहका होगा। लोगोंने जब भोंड़े पत्थरके औज़ारोंको छोड़कर धनुष-बाणका उपयोग सीखा, तो इसके साथ शिकारियोंका जीवन छोड़कर उन्होंने जानवरोंको पालने और पुराने ढंगकी चरवाहीका जीवन भी अपनाया। पत्थरके हथियारोंके बाद जब लोगोंने कुल्हाड़ी, लोहेके फाल लगे हुए काठके हल आदि धातुके औज़ारोंका प्रयोग सीखा, तो इसके साथ उन्होंने खेती-किसानी करना भी सीख लिया। माल तैयार करनेके लिये धातुके औज़ार और अच्छे बनाये गये; लुहारकी धौंकनी और कुम्हारका आँवा भी मनुष्यके जीवनमें आया; इनके साथ दस्तकारीका विकास हुआ, किसानी और दस्तकारी दो अलग चीजें हो गयीं। दस्तकारीका एक उद्योगके रूपमें स्वतंत्र विकास हुआ और बादको इसके लिये कारखाने बने। दस्तकारीके औजारोंके बाद लोगोंने मशीनोंसे काम लेना सीखा; इसके साथ दस्तकारी और पुराने कारखानोंकी जगह यांत्रिक उद्योग-धन्धोंने ली। यांत्रिक व्यवस्था होनेपर आधुनिक विशाल परिमाणके यान्त्रिक उद्योग-धन्धोंका विकास हुआ। मानव-इतिहासमें समाजकी उत्पादक-शक्तियोंके विकासकी यह एक मोटी और अधूरी-सी रूपरेखा है। इससे यह स्पष्ट हो जायगा कि उत्पादनके अस्त्रोंमें विकास और उन्नति उन लोगोंने ही की जिनका उत्पादनसे संबन्ध था; यह विकास और उन्नति मनुष्योंसे स्वतंत्र नहीं हुई। फलतः उत्पादनके अस्त्रोंमें परिवर्तन और विकासके साथ उत्पादक शक्तियोंके सबसे महत्वपूर्ण अंग, मनुष्योंमें भी परिवर्तन और विकास हुआ; उनके उत्पादनके अनुभवमें, श्रम-कौशलमें, उत्पादनके अस्त्रोंसे काम लेनेकी योग्यतामें परिवर्तन और विकास हुआ।

मानव-इतिहासमें समाजकी उत्पादक शक्तियोंके परिवर्तन और विकासके अनुरूप मनुष्यके उत्पादन-सम्बन्धों किंवा आर्थिक सम्बन्धोंमें भी परिवर्तन और विकास हुआ है।

इतिहासमें **मुख्यत.** पाँच प्रकारके उत्पादन-सम्बन्धोंका उल्लेख किया जाता है,—प्राचीन पंचायती, दास-प्रधान, सामंतवादी, पूँजीवादी और समाजवादी।

प्राचीन पंचायती व्यवस्थामें उत्पादन-सम्बन्धोंका आधार उत्पादनके साधनोंपर समाजका अधिकार था। उस समयकी उत्पादक शक्तियोंके यह अधिकतर अनुरूप ही था। पत्थरके हथियारों और बादको धनुष-बाणका भरोसा करनेके कारण मनुष्य अकेले प्रकृतिकी शक्तियों और हिंस्र पशुओंका सामना करनेमें असमर्थ था। जंगलसे फल लेने, मछली पकड़ने या किसी तरहका झोंपड़ा या घर बनानेके लिये मनुष्योंके लिये आवश्यक था कि वे मिलकर काम करें; नहीं तो भूखसे, जंगली जानवरोंका शिकार होकर या पड़ोसी गणोंके हाथसे उन्हें मरना पड़ता। सम्मिलित श्रमके कारण उत्पादनके साधनोंपर सम्मिलित प्रभुत्व भी हुआ और उत्पादनसे जो कुछ मिला, वह भी बाँट—चूँट लिया गया। अभी तक उत्पादनके साधनोंपर व्यक्तिगत स्वामित्वकी कल्पनाका जन्म न हुआ था;

केवल उत्पादनके कुछ अस्त्र ही व्यक्तिगत थे जो हिंस्र पशुओंके विरुद्ध आत्म-रक्षाके काम भी आते थे। इस व्यवस्थामें न वर्ग थे, न शोषण था।

दास-व्यवस्थामें उत्पादन-सम्बन्धोंका आधार यह था कि गुलामोंका मालिक उत्पादन के साधनोंका स्वामी होता था। उसीके अधिकारमें उत्पादनमें काम करनेवाला मज़दूर या गुलाम भी होता था जिसे वह पशुकी तरह बेच सकता था, ख़रीद सकता था और उसकी जान भी ले सकता था। ये उत्पादन-सम्बन्ध उस समयकी उत्पादक शक्तियोंकी अवस्थाके अधिकतर अनुरूप ही थे। पत्थरके औज़ारोंके बदले लोगोंके पास अब धातुके अस्त्र थे। शिकारीकी आर्थिक व्यवस्था बर्बर और निम्न कोटिकी थी। उसे न किसानी आती थी न चरवाही। अब चरवाही, किसानी और दस्तकारीके साथ उत्पादनके इन अँगोंमें श्रम-विभाजन भी हो गया। गणों और व्यक्तियोंमें मालकी अदला-बदली होने लगी और कुछ लोगोंके हाथमें संपत्तिके इकट्ठा होनेकी संभावना उत्पन्न हुई। अल्पसंख्यक लोगोंके हाथमें उत्पादनके साधन आगये और इसलिये बहुसंख्यक लोगोंके गुलाम बनने की, उनपर अल्पसंख्यक लोगोंके प्रभुत्वकी संभावना भी उत्पन्न हुई। उत्पादनके कार्यमें समाजके सभी लोगोंके समान और स्वाधीनरूपसे भाग लेनेकी बात न रह गयी; अब गुलामोंसे बेगार करायी जाती थी और खुद मज़दूरी न करने वाले मालिक उनकी मेहनतसे नाजायज़ फ़ायदा उठाते थे। इसलिये इस व्यवस्थामें उत्पादनके साधनोंपर, और उत्पादनसे जो कुछ मिलता था उसपर, समाजका समान अधिकार न रह गया। सामाजिक अधिकारकी जगह व्यक्तिगत अधिकारने ले ली। यहां संपत्ति शब्दके भरे-पूरे अर्थमें, गुलामोंका मालिक संपत्तिका प्रथम और मुख्य स्वामी हो गया।

धनी और निर्धन, शोषक और शोषित, पूर्ण अधिकार वाले और बिल्कुल अधिकार-हीन, और इनके बीचमें भयानक वर्ग-संघर्ष,—यही दास-युगके समाजका चित्र है।

सामन्तवादी व्यवस्थामें उत्पादन-सम्बन्धोंका आधार यह है कि उत्पादनके साधनों पर सामन्तका अधिकार होता है परन्तु उत्पादनमें काम करने वाले मज़दूर या कम्मीपर पूरा अधिकार नहीं होता। वह उसे बेच सकता है, ख़रीद सकता है परन्तु उसे जानसे नहीं मार सकता। इस सामन्तवादी स्वामित्वके साथ किसानका कुछ व्यक्तिगत स्वामित्व भी रहता है और उसका और दस्तकारका अपने उत्पादनके औज़ारोंपर अधिकार रहता है। व्यक्तिगत परिश्रमके बूते चलनेवाला उसका धंधा भी उसका अपना होता है। इस तरहके उत्पादन-सम्बन्ध उस समयकी उत्पादन शक्तियोंकी अवस्थाके अधिकतर अनुरूप ही हैं। लोहेकी ढलाईमें और उसकी चीज़ें बनानेमें उन्नति होती है। लोहेका हल और कर्घा चालू होता है। किसानी, बागवानी, अंगूरबानी और घोसियोंका काम और आगे बढ़ता है। दस्त-कारोंकी दूकानोंके साथ कारख़ाने भी खुलने लगते हैं। उत्पादक शक्तियोंकी अवस्थाके ये मुख्य लक्षण हैं।

नयी उत्पादक शक्तियोंकी यह माँग होती है कि मज़दूर पैदावारमें थोड़ी-बहुत पहलक़दमी दिखायें, अपने काममें दिलचस्पी लें। इसलिए सामन्त गुलामोंको हटा

देता है क्योंकि गुलाम-मजदूरोंमें पहलक़दमी नहीं होती और वे अपने काममें दिलचस्पी नहीं लेते। गुलामकी जगह वह कम्मीसे काम लेना ज्यादा पसन्द करता है क्योंकि उसकी अपनी एक गिरस्ती होती है, पैदावारके औज़ार होते हैं; खेती करने और सामंतको फसलका एक हिस्सा देनेके लिये काममें जिस दिलचस्पीकी जरूरत है, वह भी उसमें होती है।

सामन्त-व्यवस्थामें व्यक्तिगत स्वामित्वका और भी विकास होता है। शोषण प्रायः उतना ही तीव्र होता है जितना दास-व्यवस्थामें, केवल उससे थोड़ा कम होता है। शोषक और शोषितके बीचका वर्ग-संघर्ष सामन्तवादी व्यवस्थाकी प्रमुख विशेषता है।

पूँजीवादी व्यवस्थामें उत्पादन-सम्बन्धोंका आधार यह है कि पूँजीपतिका अधिकार उत्पादनके साधनोंपर होता है परन्तु उत्पादनमें काम करनेवाले मजदूरोंपर नहीं होता। इन मज़दूरी करनेवालोंको वह जानसे मार नहीं सकता, न बेच सकता है, क्योंकि व्यक्तिगत रूपसे वे स्वाधीन हैं। उत्पादनके साधनोंसे वे वंचित हैं; इसलिये भूखों मरनेसे बचनेके लिये वे पूँजीपतिके हाथ अपनी श्रम-शक्ति बेच देते हैं और शोषणके शिकंजेमें कसे जानेपर मजबूर होते हैं। उत्पादनके साधनोंमें पूँजीवादी सम्पत्तिके साथ पहले-पहले दासतासे छूटे हुए किसानों और दस्तकारोंकी निजी सम्पत्ति भी एक बड़े पैमानेपर दिखाई देती है। इन किसानों और दस्तकारोंकी सम्पत्ति उनके निजी परिश्रमका फल होती है। दस्तकारीकी दूकानों और पुराने कारखानोंकी जगह मशीनोंसे सुसज्जित बड़ी-बड़ी मिलें और कारखाने दिखायी देने लगते हैं। पुरानी रियासती ज़मीनमें किसानके पुराने पैदावारके औज़ारोंसे खेती नहीं की जाती; अब पूँजीपतियोंके बड़े-बड़े फ़ार्मोंमें वैज्ञानिक ढंगसे मशीनोंसे खेती होती है।

नयी उत्पादक शक्तियोंकी यह माँग होती है कि उत्पादनमें काम करनेवाले मजदूर दलित और अशिक्षित कम्मियोंसे अधिक शिक्षित और चतुर हों जिससे कि मशीनोंको समझकर उन्हें ठीकसे चला सकें। इसलिये पूँजीपति पगार (मजूरी) लेने वाले ऐसे मज़दूरोंसे काम लेना ज़्यादा पसंद करते हैं जो दासत्वके बंधनोंसे मुक्त हों और मशीनें ठीकसे चला सकने भरको शिक्षित हों।

उत्पादक शक्तियोंको अत्यधिक विकसित कर चुकनेपर पूँजीवाद उन असंगतियोंमें फँस जाता है, जिन्हें वह सुलझा नहीं सकता। ज़्यादासे ज़्यादा तादादमें माल तैयार करके और उसकी क़ीमत कम करके पूँजीवाद होड़को तेज़ करता है, निम्न और मध्य कोटिके सभी कारख़ानेदारों और धन्धेवालोंको तबाह कर देता है, उन्हें सर्वहारा वर्गमें ठेलकर उनकी क्रय-शक्तिको कम कर देता है जिसका फल यह होता है कि तैयार किये हुए मालको निकाल सकना असंभव हो जाता है। दूसरी ओर उत्पादनका विस्तार करके और लाखों मज़दूरोंको मिलोंमें इकट्ठा करके पूँजीवाद उत्पादनको एक सामाजिक जामा पहना देता है जो उसीके लिये घातक होता है; क्योंकि यदि उत्पादन सामाजिक है, तो उत्पादनके साधनोंपर भी समाजका अधिकार होना चाहिये। फिर भी उत्पादनके साधन पूँजीपतियोंकी निजी सम्पत्ति बने रहते हैं। यह बात उत्पादनकी सामाजिकताके विरुद्ध पड़ती है।

उत्पादक शक्तियों और उत्पादन–सम्बन्धोंकी ये अनमिल असंगतियाँ बहु–उत्पादनके संकटोंके रूपमें समय–समयपर प्रकट होती रहती हैं। पूँजीपतियोंकी करतूतसे ही आम जनता तबाह हो चुकी होती है; इसलिये पूँजीपति यह देखकर कि इस जनता में माल की अच्छी खपत नहीं हो रही, मजबूरन अपना तैयार माल बरबाद कर देते हैं; उसे जला देते हैं, उत्पादन बंद कर देते हैं और उत्पादक शक्तियोंका नाश कर देते हैं। यह सब उस समय होता है जब लाखों करोड़ों आदमियोंको भूख और बेकारीका सामना करना पड़ता है, इसलिये नहीं कि काफ़ी माल नहीं है वरन् इसलिये कि माल बहुत ज़्यादा तैयार हो गया है।

उसका अर्थ यह हुआ कि पूँजीवादके उत्पादन–सम्बन्ध अब समाजकी उत्पादक शक्तियोंकी अवस्थाके अनुरूप नहीं हैं और अब दोनोंमें अनमिल असंगति पैदा हो गयी है।

इसका अर्थ यह हुआ कि पूँजीवादके गर्भमें क्रान्तिका पोषण हो रहा है जिसका ध्येय है कि उत्पादनके साधनोंपर पूँजीपतियोंके वर्तमान अधिकारके बदले समाजका अधिकार हो।

इसका अर्थ यह हुआ कि पूँजीवादी व्यवस्थाका मुख्य लक्षण शोषक और शोषितोंका अत्यन्त तीव्र वर्ग–संघर्ष है।

समाजवादी व्यवस्था अभी सोवियत संघमें ही स्थापित हुई है। उसमें उत्पादन–सम्बन्धोंका आधार यह है कि उत्पादनके साधनोंपर समाजका अधिकार है। यहाँपर शोषक और शोषित नहीं रह गये। जो माल तैयार होता है, वह मेहनतके हिसाबसे बाँट दिया जाता है। वितरणका सिद्धान्त है,—"जो काम न करेगा, उसे खानेको भी न मिलेगा।" यहाँपर उत्पादनके कार्यमें लोगोंके परस्पर सम्बन्ध भाईचारेके, सहयोगके हैं; शोषणसे मुक्त मजदूर समाजवादी ढंगसे एक दूसरे की सहायता करते हैं। यहाँपर उत्पादन–सम्बन्ध उत्पादक शक्तियोंकी अवस्थासे एकदम मेल खाते हैं। उत्पादन सामाजिक है; उत्पादनके साधनोंपर समाजका अधिकार होनेसे उसकी सामाजिकता और भी दृढ़ हो जाती है।

इस कारण सोवियत संघके समाजवादी उत्पादनमें समय–समय पर बहु–उत्पादनके संकट और उनके विनाशकारी प्रभाव उत्पन्न नहीं होते।

इस कारण यहाँ उत्पादक शक्तियोंका विकास तीव्र गतिसे होता है; उत्पादन-संबंध उन्हींके अनुरूप होते हैं, इसलिये विकासका उन्हें पूरा अवसर देते हैं। मानव-इतिहासमें मनुष्यके उत्पादन-संबंधोंके विकासकी यह रूप-रेखा है।

इस प्रकार उत्पादन–सम्बन्धोंका विकास समाजकी उत्पादक शक्तियोंके विकासपर निर्भर है। उत्पादन सम्बन्धोंका विकास सबसे पहले उत्पादनके अस्त्रोंके विकासपर निर्भर है। इस निर्भरताके फलस्वरूप उत्पादन शक्तियोंके विकास और उनके परिवर्तनके अनुरूप आगे-पीछे उत्पादन-सम्बंधोंका विकास और परिवर्तन भी होता जाता है।

मार्क्स ने लिखा था,—

"श्रम के अस्त्रोंका* प्रयोग और निर्माण बीज–रूपमें कुछ पशुओंमें भी विद्यमान होता है परन्तु विशेष रूपसे यह मानवीय श्रम-क्रियाका लक्षण है। इसलिये फ्रैंकलिनने मनुष्यको अस्त्र बनाने वाला जन्तु कहा है। समाजकी मृत आर्थिक व्यवस्थाओंकी खोज करनेवालोंके लिये श्रमके प्राचीन अस्त्रोंके अवशेष वही महत्व रखते हैं जो महत्व लुप्त पशु-जातियोंका निर्णय करनेके लिये पाषाणमय अस्थि-पंजरोंका होता है। विभिन्न आर्थिक युगोंका पता इससे नहीं लगता कि कौनसी चीज़ें बनायी गयीं थीं वरन् इससे लगता है कि वे कैसे और किन औजारोंसे बनायी गयी थीं।...श्रमके अस्त्रोंसे यही पता नहीं लगता कि मानवीय श्रम विकासकी किस मंजिल तक पहुँच चुका है वरन् उनसे यह भी पता चलता है कि किन सामाजिक परिस्थितियोंमें यह श्रम किया गया था।"

(कार्ल मार्क्स, कैपिटल—खंड १, पृ. १५९)

और भी,—

(क) "सामाजिक सम्बन्ध उत्पादक शक्तियोंसे जुड़े हुए हैं। नयी उत्पादक शक्तियोंके अर्जनमें मनुष्य अपनी उत्पादन-पद्धति बदल देते हैं। अपनी उत्पादन पद्धति बदलनेसे, अपनी जीविकोपार्जनकी प्रणाली बदलनेसे, वे अपने तमाम सामाजिक सम्बन्ध बदल देते हैं। हाथकी चक्की वह समाज बनाती है जिसमें प्रभुत्व सामंतका होता है; भापसे चलनेवाली चक्की वह समाज बनाती है जिसमें प्रभुत्व औद्योगिक पूंजीपतिका होता है।"

(कार्ल मार्क्स, दर्शन-शास्त्रकी दरिद्रता—अं. सं., पृ. ९२)

(ख) "उत्पादक शक्तियोंके विकासमें, सामाजिक सम्बन्धोंके विनाशमें, और विचारोंके निर्माणमें, अविराम गतिशीलताका परिचय मिलता है। यदि कोई वस्तु स्थिर है तो वह गतिशीलताकी कल्पना ही है।" **(उपरोक्त—पृ. ९३)**

कम्युनिस्ट घोषणापत्रमें प्रतिपादित ऐतिहासिक भौतिकवादकी चर्चा करते हुए एंगेल्सने लिखा था,—

"आर्थिक उत्पादनसे प्रत्येक ऐतिहासिक युगके समाजका ढाँचा बनता है। यह ढाँचा और आर्थिक उत्पादन, दोनों मिलाकर उस युगके राजनीतिक और बौद्धिक इतिहासका आधार बनते है।......इसलिये अतिप्राचीन भूमि-सम्बन्धी पंचायती व्यवस्थाके भंग होनेके कालसेही समग्र इतिहास वर्ग-संघर्षोंका इतिहास रहा है, सामाजिक विकासकी विभिन्न अवस्थाओंमें शोषक और शोषितोंका, प्रभु और सेवक-वर्गोंका संघर्ष रहा है।... ...परन्तु यह संघर्ष अब इस दशाको पहुँच गया है कि शोषित और पीड़ित (सर्वहारा) वर्गके अपने शोषकों और पीड़कों (पूँजी-पतियों) से मुक्ति पानेके साथ सारा समाज भी शोषण, पीड़न और वर्ग-संघर्षोंसे

---

* श्रमके अस्त्रोंसे मार्क्सका मुख्य अर्थ उत्पादन के अस्त्रोंसे है।—सं०

मुक्त हो जायगा ।" (**कम्युनिस्ट घोषणापत्रके जर्मन संस्करणकी भूमिका : संक्षिप्त मार्क्स-ग्रंथावली—अं. सं., खं. १, पृ. १९२-९३**)

उत्पादनका **तीसरा** लक्षण यह है कि पुरानी व्यवस्थाके समाप्त हो जानेपर, उससे अलग, नयी उत्पादक शक्तियाँ और उत्पादन-सम्बन्ध नहीं पैदा होते । उनका जन्म पुरानी व्यवस्थामें ही होता है । लेकिन आदमीके जानबूझकर काम करनेसे और कोशिश करनेसे ऐसा नहीं होता वरन् अपने-आप, विना जाने-बूझे, मनुष्यकी इच्छासे स्वाधीन, यह सव होता है । अपने आप और मनुष्यकी इच्छासे स्वाधीन होनेके दो कारण हैं ।

पहला यह कि मनुष्य उत्पादनकी पद्धति चुननेमें स्वतंत्र नहीं है । हर नयी पीढ़ी जीवनमें प्रवेश करनेपर पुरानी पीढ़ियोंकी कार्यवाहीके फलस्वरूप कुछ उत्पादक शक्तियों और उत्पादन-सम्बन्धोंको पाती है । भौतिक मूल्योंके उत्पादनके लिये इस क्षेत्रमें उसे जो कुछ मिलता है, उसे ही उसे ग्रहण करना पड़ता है और उससे अपना काम चलाना पड़ता है ।

दूसरा कारण यह कि जब मनुष्य उत्पादनके किसी अस्त्रको सुधारते हैं या उत्पादक शक्तियोंके किसी अंगको विकसित करते हैं, तो वे यह नहीं समझते या यह सोचनेके लिये नहीं थमते कि इस उन्नतिका **सामाजिक** परिणाम क्या होगा । वे अपने रोजमर्राके फ़ायदेकी बात सोचते हैं कि कैसे मेहनतका भार कुछ हलका हो, या कैसे उनके लाभका कोई सीधा-सच्चा रास्ता निकल आये ।

प्राचीन पंचायती व्यवस्थामें जब धीरे-धीरे टटोलते हुए कुछ आदमियोंने पत्थरके हथियार छोड़कर लोहेके अस्त्रोंसे काम लेना सीखा, तब वे यह न जानते थे और न उन्होंने यह सोचनेमें कुछ समय लगाया था कि इस परिवर्तनका **सामाजिक** परिणाम क्या होगा । उन्होंने इस बातको नहीं समझा या इसका अनुभव नहीं किया कि धातुके अस्त्रोंके प्रयोगसे उत्पादनमें एक क्रान्ति हो गयी है और आगे चलकर इससे दास-व्यवस्था उत्पन्न होगी । वे तो अपनी मेहनतका भार कुछ हलका करना चाहते थे और अपने लिये तुरंत एक सीधे-सच्चे लाभकी बात चाह रहे थे । रोजमर्राके फ़ायदोंके तंग घेरेसे उनके जाने-बूझे काम बाहर न जाते थे ।

सामन्तवादी व्यवस्थामें जब पुरानी दस्तकारीकी दूकानोंके साथ योरपके नये पूँजीपति बड़े-बड़े कारखाने खोलने लगे और जब इस प्रकार उन्होंने उत्पादक शक्तियोंको आगे बढ़ाया, तब अवश्य ही वह यह न जानते थे और न यह सोचनेके लिये वे थमे कि इस परिवर्तनका **सामाजिक** परिणाम क्या होगा । उन्होंने इस बातको नहीं समझा या इसका अनुभव नहीं किया कि इस "छोटे-से" परिवर्तनसे सामाजिक शक्तियोंमें एक नयी जत्थेबन्दी होगी । ये पूँजीपति राजाओंकी कृपाको अमूल्य समझते थे और उनमेंसे कुछ सरदारोंकी पाँतिमें बैठनेको भी उत्सुक रहते थे; मगर इन्हीं राजाओं और सरदारोंके विरुद्ध क्रान्ति होनेवाली थी, और उसी जत्थेबन्दीके फलस्वरूप, जिसे नये पूँजीपतियोंने कारखाने खोलकर विना जाने-समझे पैदा कर दिया था । नये पूँजीपति तो माल तैयार

करनेमें अपना खर्च कम करना चाहते थे। वे एशियाके बाज़ारमें और नये ढूँढ़े हुए अमरीकाके बाज़ारमें काफ़ी माल फैला देना चाहते थे और पहलेसे ज़्यादा नफ़ा खाना चाहते थे। साधारण व्यावहारिक उद्देश्योंके छोटे-से घेरेमें उनकी सचेत कार्यवाही बँधी हुई थी।

विदेशी पूँजीपतियोंके सहयोगसे जब रूसी पूँजीपतियोंने बड़े पैमानेपर माल तैयार करनेवाले यान्त्रिक उद्योग-धंधोंकी बड़ी मुस्तैदीसे रूसमें जड़ जमायी और ज़ारशाहीको ज्योंका त्यों छोड़कर किसानोंको ज़मींदारोंकी दयाके भरोसे छोड़ दिया, तब वे यह न जानते थे और न यह सोचनेके लिये वे थमे कि उत्पादक शक्तियोंकी इस बहु-वृद्धिका **सामाजिक** परिणाम क्या होगा। उन्होंने इस बातको नहीं समझा या उसका अनुभव नहीं किया कि समाजकी उत्पादक शक्तियोंके क्षेत्रमें इस छलाँग मारनेका परिणाम यह होगा कि सामाजिक शक्तियोंमें एक नयी जत्थेबंदी होगी और इस जत्थेबंदीसे मज़दूर किसानोंसे एका कर सकेंगे और इस प्रकार सफलतासे समाजवादी क्रांति कर सकेंगे। वे केवल औद्योगिक उत्पादनके विस्तारको सीमा तक पहुँचा देना चाहते थे; देशके भारी बाज़ारपर हावी होकर वे सर्वाधिकार सुरक्षित कर लेना चाहते थे। देशकी आर्थिक व्यवस्थासे जितना मुनाफ़ा निकल सके, वे निकाल लेना चाहते थे। साधारण और सर्वथा व्यावहारिक उद्देश्योंके घेरेसे बाहर उनकी जानी-बूझी कार्यवाही न फैलती थी।

इसीलिये मार्क्सने लिखा था,—

> "मनुष्य जो सामाजिक उत्पादन करते हैं (अर्थात् मानव-जीवनके लिये आवश्यक भौतिक मूल्योंका जो उत्पादन करते हैं—सं.) उसमें वे ऐसे निश्चित सम्बन्ध स्थापित करते हैं जो अनिवार्य और उनकी इच्छासे **स्वतंत्र** (विशेष टाइप हमारा—सं.) होते हैं। ये उत्पादन-संबंध उत्पादनकी भौतिक शक्तियोंके विकासकी एक निश्चित अवस्थाके अनुकूल ही होते हैं।"
>
> **(संक्षिप्त मार्क्स-ग्रंथावली—अं. सं., खं. १, पृ. ३५६)**

परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि उत्पादन-संबंधोंमें परिवर्तन और पुराने उत्पादन-सम्बन्धोंसे नये संबंधोंकी ओर संक्रमण शान्तिपूर्वक, बिना संघर्ष और विद्रोहके ही हो जाता है। इसके विपरीत साधारणतः पुराने उत्पादन-सम्बन्धोंके क्रान्तिकारी ध्वंस और नये सम्बंधोंकी स्थापनासे ही इस तरहका संक्रमण होता है। एक निश्चित समय तक उत्पादन शक्तियोंका विकास और उत्पादन-संबंधोंके क्षेत्रमें परिवर्तन अपने-आप, मनुष्य की इच्छासे स्वतंत्र हुआ करता है। परन्तु ऐसा एक निश्चित समय तक ही होता है—जब तक कि नयी और विकासमान उत्पादक शक्तियाँ बढ़कर अच्छी तरह पुष्ट नहीं हो जातीं। नयी उत्पादक शक्तियोंके पुष्ट हो जानेपर उनकी राहमें एक "हिमालय-जैसी" बाधा खड़ी हो जाती है। यह बाधा और कुछ नहीं, विद्यमान उत्पादन-सम्बन्ध और उनके समर्थक—शासक-वर्ग—हैं। नये वर्गोंकी सचेत क्रियासे, उनके बलपूर्वक कार्य करनेसे, अर्थात् क्रान्तिसे ही, यह हिमालय जैसी बाधा दूर की जा सकती है। यहाँपर

नये सामाजिक विचारोंकी, नयी राजनीतिक शक्तिकी,—जिसका ध्येय ही उत्पादनके पुराने सम्बन्धोंमें बलपूर्वक परिवर्तन करना हो—**महान् भूमिका** हमें बहुत स्पष्ट आकार-प्रकारमें दिखायी देने लगती है। नयी उत्पादक शक्तियों और पुराने उत्पादन-सम्बन्धोंके संघर्षसे और समाजकी नयी आर्थिक माँगोंसे नये सामाजिक विचारोंका जन्म होता है। ये नये विचार जन-साधारणको समेटते और संगठित करते हैं। जनता एक नयी राजनीतिक सेनामें संगठित हो जाती है और एक नयी क्रान्तिकारी शक्ति उत्पन्न करती है। इस शक्तिका उपयोग वह पुराने उत्पादन-सम्बन्धोंका बलपूर्वक नाश करनेके लिये और दृढ़तासे नयी व्यवस्था क़ायम करनेके लिये करती है। अपने आप होनेवाली प्रगतिकी जगह मनुष्योंकी सचेत कार्यवाही ले लेती है। शान्तिमय प्रगतिके बदले बलपूर्वक परिवर्तन किये जाते हैं। सामाजिक विकासकी शान्तिके बदले क्रान्तिकी ज्वाला धधक उठती है।

मार्क्सने लिखा था,—

"पूँजीपतियोंसे लड़ते समय सर्वहारा वर्गको परिस्थितियोंसे मजबूर होकर एक वर्गरूपमें संगठित होना पड़ता है।... क्रान्ति द्वारा सर्वहारा वर्ग शासक बनता है और शासक बनकर वह बलपूर्वक पुराने उत्पादन-सम्बन्धोंको दूर कर देता है।" (**कम्युनिस्ट घोषणापत्र, संक्षिप्त मार्क्स-ग्रंथावली—अं. सं., खंड १, पृ. २२८**)

और भी,—

(क) "सर्वहारा वर्ग अपने राजनीतिक प्रभुत्वका उपयोग इसलिये करेगा कि वह क्रमशः पूँजीपतियोंके हाथसे सभी पूँजी छीन ले, राज्य-सत्ताके हाथमें अर्थात् शासक रूपमें संगठित सर्वहारा वर्गके हाथमें उत्पादनके सभी अस्त्रोंको केन्द्रित करे और जितनी जल्दी हो सके, उत्पादक-शक्तियोंमें वृद्धि करे।"

(**उपरोक्त—पृ. २२७**)

(ख) "पुरानी समाज-व्यवस्थाके गर्भमें जब नयी समाज-व्यवस्था आ जाती है, तब उसके जन्मके लिये धायके रूपमें बल आवश्यक होता है।" (**कार्ल मार्क्स, कैपिटल—खंड १, पृ. ७७६**)

अपने प्रसिद्ध ग्रंथ **अर्थशास्त्रकी आलोचना**की ऐतिहासिक भूमिकामें मार्क्सने १८५९ में ऐतिहासिक भौतिकवादके सारको इस चमत्कारी ढंगसे व्यक्त किया था,—

"मनुष्य जो सामाजिक उत्पादन करते हैं, उसमें वे ऐसे निश्चित सम्बन्ध स्थापित करते हैं जो अनिवार्य और उनकी इच्छासे स्वतंत्र होते हैं। ये उत्पादन-सम्बन्ध उत्पादनकी भौतिक शक्तियोंके विकासकी एक निश्चित अवस्थाके अनुकूल ही होते हैं। इन उत्पादन-सम्बन्धोंका योग ही समाजका वह ढाँचा है, वह असली नींव है, जिसपर राजनीति और क़ानूनकी भारी इमारत खड़ी होती है; उसी ढाँचेके अनुरूप सामाजिक चेतनाके विभिन्न रूप भी निश्चित होते हैं। भौतिक जीवनमें

उत्पादनकी पद्धति साधारण रूपसे सामाजिक, राजनीतिक और वौद्धिक जीवन-क्रमको निश्चित करती है। मनुष्यकी चेतना उसकी सत्ताको निश्चित नहीं करती; इसके विपरीत उसकी सत्ता ही उसकी चेतनाको निश्चित करती है। अपने विकास की एक नियत अवस्था तक पहुँच जानेके वाद समाजमें पुराने उत्पादन-सम्बन्धोंसे उत्पादनकी भौतिक शक्तियोंकी मुठभेड़ होती है; इसी वातको क़ानूनी भाषामें यों कह सकते हैं कि सम्पत्तिके जिन सम्बन्धोंमें पहले वे शक्तियाँ काम करती रही हैं, उनसे उनकी मुठभेड़ होती है। ये उत्पादन-सम्बन्ध उत्पादक-शक्तियोंके विकासके विभिन्न रूप न रहकर अब उनके वन्धन हो जाते हैं। इसके वाद सामाजिक क्रान्तिका युग आरंभ होता है। आर्थिक ढाँचा वदलनेसे उसपर वनी हुई वह भारी-भरकम इमारत भी वहुत कुछ जल्दी ही वदल जाती है। इस तरहके परिवर्तनोंपर विचार करते हुए एक भेद अवश्य समझ लेना चाहिये। एक तो उत्पादनकी आर्थिक परिस्थितियोंमें भौतिक परिवर्तन होता है जिसे हम प्रकृति-विज्ञानकी सही नापतोलकी तरह आँक सकते हैं। दूसरा परिवर्तन क़ानूनी, राजनीतिक, धार्मिक, भाव-प्रधान या दार्शनिक—संक्षेपमें सैद्धान्तिक-रूपोंका होता है जिनमें ही मनुष्य संघर्षके प्रति सचेत होते हैं और निपटारेके लिये युद्ध करते हैं। किसी व्यक्तिके वारेमें हम अपनी धारणा इस वातसे नहीं वनाते कि वह अपने वारेमें क्या सोचता है; इसी तरह संक्रान्ति-युगकी अपनी चेतनाके वलपर हम उसे नहीं परख सकते। इसके विपरीत इस चेतनाकी व्याख्या हम भौतिक जीवनकी असंगतियोंके आधारपर करेंगे, उस विद्यमान संघर्षके वलपर करेंगे जो समाज की उत्पादक शक्तियों और उत्पादन-सम्बन्धोंमें हो रहा है। समाज-व्यवस्थामें उत्पादक शक्तियोंके विकासकी जितनी भी गुंजाइश होती है, उसके अनुसार जव तक वे विकसित नहीं हो लेतीं तव तक वह समाज-व्यवस्था समाप्त नहीं हो सकती। और उत्पादनके नये और उच्चतर सम्बन्ध तव तक प्रकट नहीं होते जव तक उनकी सत्ताके लिये आवश्यक भौतिक परिस्थितियाँ पुरानी समाज-व्यवस्थाके गर्भमें ही पुष्ट नहीं हो जातीं। इसलिये मानव-जाति अपने सामने ऐसे ही कार्य सदा रखती है जिन्हें वह कर सकती है; क्योंकि इस वातको और ध्यानसे देखें तो मालूम होगा कि ये कार्य तभी उत्पन्न होते हैं जव उनकी पूर्तिके लिये आवश्यक परिस्थितियाँ विद्यमान होती हैं या कमसे कम तैयारीमें होती हैं।" (**संक्षिप्त मार्क्स-ग्रंथावली—अं. सं., खं. १, पृ. ३५६-५७**)

सामाजिक जीवन और समाजके इतिहासपर लागू होने वाले मार्क्सीय भौतिकवाद की यह रूपरेखा है।

द्वन्द्वात्मक और ऐतिहासिक भौतिकवादकी ये मुख्य विशेषताएँ हैं।

३. स्तोलीपिनके काले कारनामोंके दिनोंमें बोल्शेविक और मेन्शेविक--विसर्जनवादियों और बहिष्कारवादियोंसे बोल्शेविकोंका संघर्ष।

क्रान्तिके उठानके दिनोंकी अपेक्षा दमनके समय पार्टी संगठनोंका कार्य बहुत कठिन था। पार्टी-मेंबरोंकी संख्या बहुत घट गयी थी। जार-सरकारके दमनके भयसे पार्टीके बहुतसे निम्न-पूँजीवादी सहचारियोंने, विशेषकर बुद्धिजीवियोंने उसका साथ छोड़ दिया था।

लेनिनका कहना था कि ऐसे समयमें क्रान्तिकारी पार्टियोंको अपना ज्ञान परिपूर्ण करना चाहिये। क्रान्तिके उठानके समय उन्होंने आगे बढ़ना सीखा था। प्रतिक्रियाके समय उन्हें यह भी सीखना चाहिये कि ढंग समेत पीछे कैसे हटा जाय, छिपकर कैसे रहा जाय, गैर-क़ानूनी पार्टीकी कैसे रक्षा की जाय और उसे कैसे मजबूत बनाया जाय; क़ानून जो भी अवसर दे, उससे कैसे फ़ायदा उठाया जाय और कैसे सभी क़ानूनी संगठनोंका विशेषकर जन-संगठनोंका, उपयोग इस तरह किया जाय कि जनतासे अपना संपर्क दृढ़ हो सके।

मेन्शेविक बेतरतीब पीछे हटे; उन्हें यह विश्वास न था कि क्रान्तिके ज्वारमें एक नया उठान भी आ सकता है। पार्टीके क्रान्तिकारी नारोंको और उसके कार्यक्रमकी क्रान्तिकारी माँगोंको उन्होंने बेशर्मीसे ठुकरा दिया। वे सर्वहारा वर्गकी गैर-क़ानूनी क्रान्तिकारी पार्टीको खतमकर देना चाहते थे, उसे विसर्जन कर देना चाहते थे। इस कारण, इस तरहके मेन्शेविक विसर्जनवादी कहलाये।

मेन्शेविकोंके विपरीत बोल्शेविकोंको विश्वास था कि अगले कुछ ही वर्षोंमें क्रान्तिके ज्वारमें फिर उठान आयेगा; इसलिये वे कहते थे कि यह पार्टीका कर्तव्य है कि वह जनताको इस नये उठानके लिये तैयार करे। क्रान्तिकी आधारभूत समस्याएँ अभी हल न हुई थी। किसानोंको जमींदारोंकी भूमि न मिली थी; मजदूरोंके दिनमें काम करनेके ८ घंटे तै न हुए थे; जिस जार-सरकारसे जनता इतनी घृणा करती थी, उसका अभी पतन न हुआ था और जनताने १९०५ में उससे जो दो-चार राजनीतिक सुविधाएँ प्राप्त की थीं, उन्हें उसने फिर जप्त कर लिया था। इसलिये जिन कारणोंसे १९०५ की क्रान्ति हुई थी, वे अब भी विद्यमान थे। इसीलिये बोल्शेविकोंको विश्वास था कि क्रान्तिकारी आन्दोलनमें अभी एक नयी लहर फिर आयेगी और इसलिये वे उसके लिये तैयार हो रहे थे, मजदूरोंकी शक्तिको बटोर रहे थे।

क्रांतिके आन्दोलनमें एक नयी लहर आयेगी ही, बोल्शेविकोंके इस विश्वासका एक कारण यह भी था कि १९०५ की क्रान्तिने मजदूरोंको अपने हकोंके लिये सामूहिक

रूपसे क्रान्तिकारी लड़ाई लड़ना सिखाया था। प्रतिक्रियाके दिनोंमें जब पूँजीपतियोंने हल्ला बोल रखा था, तब मज़दूर १९०५ के सबक़को भूल नहीं गये। लेनिनने मज़दूरोंके पत्रोंको उद्धृत किया जिनमें उन्होंने लिखा था कि मिल-मालिक उन्हें फिर सता रहे हैं और नीचा दिखा रहे हैं। इनमें मज़दूर लिखते थे,—

" सबर करो, १९०५ फिर आयेगा ! "

बोल्शेविकोंका मूल राजनीतिक ध्येय वही रहा जो १९०५ में था, अर्थात् ज़ार-शाहीका नाश करना, पूँजीवादी क्रान्तिको पार लगाना और उसके बाद समाजवादी क्रांति का आरंभ करना। बोल्शेविक इस ध्येयको एक क्षणके लिये भी नहीं भूले और जनताके सामने अपने मुख्य राजनीतिक नारे बराबर लगाते रहे—जनवादी प्रजातंत्र क़ायम हो, ज़मींदारोंकी रियासतें छीन ली जायँ, मज़दूरीके आठ घंटे तै हों।

लेकिन पार्टीकी **कार्यनीति** अब वही न हो सकती थी जो कि १९०५ में क्रान्तिके चढ़ते ज्वारमें रही थी। उदाहरणके लिये निकट भविष्यमें जनतासे आम राजनीतिक हड़ताल करनेके लिये या सशस्त्र विद्रोह करनेके लिये कहना भूल होती क्योंकि क्रान्ति-कारी आन्दोलन मद्धिम पड़ गया था, मज़दूर एक गहरी थकानकी हालतमें थे और प्रति-क्रियावादी वर्गोंका पाया अब काफ़ी मज़बूत हो गया था। पार्टीके लिये आवश्यक था कि वह इस नयी परिस्थितिको परखे। आक्रमणके बदले आत्म-रक्षाकी कार्यनीतिसे काम लेना था; इस कार्यनीतिका अर्थ यह था कि अपनी शक्ति बटोरी जाय, कार्यकर्ताओंको छिपा दिया जाय और पार्टीका काम सब गुप्त रीतिसे हो और क़ानूनी मज़दूर-संगठनोंके कामसे ग़ैर-क़ानूनी कामको मिला दिया जाय।

और बोल्शेविकोंने सिद्ध कर दिया कि वे यह सब कर सकते हैं।

लेनिनने लिखा था,—

" क्रान्तिके पहलेके लंबे वर्षोंमें कैसे काम करना चाहिये, यह हम जानते थे। लोग यों ही नहीं कहते कि हम चट्टानकी तरह दृढ़ हैं। सामाजिक-जनवादियोंने सर्वहारा वर्गकी ऐसी पार्टी संगठित की है जो पहले सशस्त्र विद्रोहकी असफलता से हताश न हो जायगी, इससे उसकी बुद्धि भ्रष्ट न हो जायगी और न वह यों ही जान-जोखिमके काममें हाथ डाल देगी। "

(लेनिन-ग्रंथावली, रूसी सं., खं. १२, पृ. १२६)

बोल्शेविकोंने ग़ैर-कानूनी पार्टी संगठनोंकी रक्षा करने और उन्हें मज़बूत बनानेकी कोशिश की। लेकिन इसके साथ ही उन्होंने यह भी आवश्यक समझा कि क़ानून जो भी अवसर दे, जनतासे संपर्क बढ़ाने और उसे बनाये रखनेकी ज़रा भी क़ानूनी गुंजाइश मिले, तो उससे लाभ उठाया जाय और इस तरह पार्टीको मज़बूत बनाया जाय।

" यह ऐसा समय था जब ज़ारशाहीके विरुद्ध खुली क्रान्तिकारी लड़ाई बन्द करके हमारी पार्टीने लड़ाईकी दूसरी छिपी राहें ढूंढ़ निकालीं; परस्पर-सहयोग-सभाओंसे लेकर दूमाके मंच तक क़ानूनसे जो भी अवसर मिला, उसका पार्टीने

उपयोग किया। १९०५ में क्रान्तिमें पराजित होनेके वाद यह पीछे हटनेका समय था। इस परिवर्तनके कारण हमारे लिये आवश्यक हो गया कि अपनी शक्तिको वटोरनेके लिये और ज़ारशाहीसे फिर खुली लड़ाई लड़नेके लिये हम लड़ाईके नये दाँव-पेंच रवाँ कर लें। "

(स्तालिन, १५ वीं पार्टी-कांग्रेसकी शब्दशः रिपोर्ट—रूसी सं., पृ. ३६६–६७; १९३५)

वचे-खुचे क़ानूनी संगठन एक तरहकी आड़ थे, जिनके पीछे पार्टीके गुप्त संगठन काम कर सकते थे। उनके द्वारा जनतासे संपर्क क़ायम रखा जा सकता था। जनतासे अपना संपर्क वनाये रखने के लिये वोल्शेविक ट्रेड यूनियन तथा दूसरी सार्वजनिक संस्थाओंका उपयोग करते थे, जैसे रोगी-सहायक सभा, मज़दूरोंकी सहयोग-सभा, क्लव, शिक्षा-सभाएँ और जन-गृह आदि। वैधानिक-जनवादियोंका पर्दाफ़ाश करनेके लिये और ज़ार-सरकारकी नीतिका भंडाफोड़ करनेके लिये, साथ ही सर्वहारा वर्गके लिये किसानोंका सहयोग पानेके लिये वोल्शेविकोंने राज-दूमा का उपयोग किया। ग़ैर-क़ानूनी पार्टी-संगठन की रक्षा की गयी और दूसरा सभी तरहका राजनीतिक कार्य उसीसे संचालित हुआ; इससे पार्टी सही नीतिके अनुसार चल सकी और क्रान्तिके ज्वारमें नये उठानके लिये वह अपनी शक्ति वटोरकर तैयार हो सकी।

वोल्शेविकोंने **दो मोर्चों**पर लड़कर अपनी क्रान्तिकारी नीतिका पालन किया; यह लड़ाई पार्टीके भीतर दो तरहके अवसरवादियोंसे थी। एक तो **विसर्जनवादी** थे जो पार्टीके खुले दुश्मन थे और दूसरे **वहिष्कारवादी** थे जो पार्टीके छिपे हुए दुश्मन थे।

विसर्जनवाद नामकी अवसरवादी प्रवृत्तिके जन्मसे ही वोल्शेविकोंने लेनिनके नेतृत्वमें उससे डटकर संग्राम किया था। लेनिनने वतला दिया था कि ये विसर्जनवादी पार्टीके भीतर उदारपंथी पूँजीवादियोंके दलाल हैं।

दिसम्वर १९०८ में रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर-पार्टीकी पाँचवीं अखिल-रूसी कान्फ्रेन्स पेरिसमें हुई। लेनिनके प्रस्तावपर इस कान्फ्रेन्सने विसर्जनवादकी निन्दा की अर्थात् पार्टी के कुछ वुद्धिजीवियों (मेन्शेविकों) के इस प्रयत्नकी निन्दा की कि " रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर-पार्टी के विद्यमान संगठनको तोड़ दिया जाय (उसका विसर्जन कर दिया जाय) और किसी भी मूल्यपर उसकी जगह क़ानूनी और भोंड़ा संगठन क़ायम किया जाय, चाहे इस कार्यमें पार्टीके कार्यक्रम, उसकी कार्यनीति और उसकी परंपराको ही तिलाञ्जलि देनी पड़े। " **(प्रस्तावोंमें : सोवियत यूनियनकी कम्युनिस्ट—वोल्शेविक—पार्टी, रूसी सं., भाग १, पृ. १२८)**

कान्फ्रेन्सने सभी पार्टी-संगठनोंको विसर्जनवादियोंके प्रयत्नोंके विरुद्ध डटकर संग्राम करनेका आदेश दिया।

परन्तु मेन्शेविकोंने इस निर्णयका पालन न किया। वे अधिकाधिक विसर्जनवाद, क्रान्तिके प्रति विश्वासघात और वैधानिक-जनवादियोंसे सहयोगकी नीतिके समर्थक वनते

गये। मेन्शेविक अधिकाधिक सर्वहारा वर्गकी पार्टीके क्रान्तिकारी कार्यक्रमको खुले रूपमें ठुकराने लगे; जनवादी प्रजातन्त्रकी माँग, मजदूरीके आठ घंटोंकी माँग और रियासती ज़मीनका छीननेकी माँगसे वे बराबर मुँह चुराने लगे। वे चाहते थे कि चाहे पार्टीका कार्यक्रम और उसकी कार्यनीति छोड़नी पड़े, लेकिन ज़ार-सरकारसे एक खुली, क़ानूनी और नामधारकी "मज़दूर" पार्टी बनानेकी आज्ञा मिल जाय। स्तोलीपिनके शासनसे वे सन्धि करनेपर तैयार थे और अपनेको उसके अनुकूल बनानेपर भी राजी थे। इसी कारणसे विसर्जनवादियोंको "स्तोलीपिनकी मज़दूर-पार्टी" भी कहा जाता था।

दैन, एक्सलेरोद, और पोत्रेसौफ़के नेतृत्वमें तथा मार्तौफ़, त्रात्स्की और दूसरे मेन्शेविकोंकी सहायतासे क्रान्तिसे खुली दुश्मनी निबाहने वाले विसर्जनवादियोंसे लड़नेके सिवा बोल्शेविकोंने उन दूसरे छिपे हुए विसर्जनवादियों अर्थात् बहिष्कारवादियों से भी डटकर मोर्चा लिया जो अपने अवसरवादपर गरम-दलकी शब्दावलीका पर्दा डाले हुए थे। बहिष्कारवादी उन लोगोंका नाम था जो पहले बोल्शेविक थे लेकिन बादको मज़दूर-प्रतिनिधियोंको राज-दूमासे वापस बुला लेना चाहते थे और सभी क़ानूनी संगठनों का बहिष्कार करके उनमें काम करना बंद कर देना चाहते थे।

१९०८ में कुछ बोल्शेविकोंने राज-दूमासे सामाजिक-जनवादी प्रतिनिधियोंको वापस बुला लेनेकी माँग की। राज-दूमाका बहिष्कार करनेके कारण वे बहिष्कारवादी कहलाये। इन लोगोंने अपना एक अलग गुट बना लिया और लेनिन और लेनिनकी नीतिके विरुद्ध संग्राम आरंभ कर दिया। इस गुटमें बोग्दानौफ़, लूनाचार्स्की, अलेक्जिन्स्की, पोक्रोव्स्की, बुब्नौफ़, इत्यादि थे। इन लोगोंने जिद की कि वे ट्रेड यूनियनों और दूसरी क़ानूनी संस्थाओंमें काम न करेंगे। इस जिदसे मज़दूर-हितोंको भारी धक्का लगा। ये बहिष्कारवादी, पार्टी और मजदूर-वर्गमें भेद डाल रहे थे जिससे पार्टीके बाहरकी जनतासे उसका सम्बन्ध-विच्छेद हो जाय। वे गुप्त संगठनमें ही एकान्तवास ले लेना चाहते थे; लेकिन इसके साथ कानूनी पर्दा डालनेका अवसर न देकर वे गुप्त संगठनकी जान भी खतरेमें डाल रहे थे। बहिष्कारवादी यह न समझते थे कि राज-दूमामें और उसके द्वारा, बोल्शेविक किसानोंपर अपना असर डाल सकते थे, वे ज़ार-सरकारकी नीतिका पर्दाफ़ाश कर सकते थे और उन वैधानिक-जनवादियोंकी नीतिका भंडाफोड़ कर सकते थे जो छल-कपटसे किसानोंको अपनी ओर कर लेना चाहते थे। क्रांतिके नवीन उत्थान के लिये शक्ति-संचय करनेमें बहिष्कारवादी बाधक बन रहे थे। इसलिये ये भीतर और बाहर, दोनों ओर "बाह्याभ्यंतरः शुचिः" करनेवाले थे; बाहर तो उन्होंने विद्यमान वैध संस्थाओंसे काम लेनेकी संभावनाका ही अंत कर देनेका प्रयत्न किया; भीतर उन्होंने ग़ैर-पार्टी जनताके सर्वहारा-नेतृत्वको सचमुच ही तिलांजलि दे दी अर्थात् उन्होंने क्रान्तिकारी कार्यको ही विसर्जन कर दिया।

१९०९ में बोल्शेविक पत्र **प्रोलेतरी** (सर्वहारा) के विस्तारित संपादक-मंडलकी बैठक हुई। इसने संशोधनवादियोंके कार्योंपर विचार किया और उनकी निन्दा की।

बोल्शेविकोंने घोषित कर दिया कि उनका बहिष्कारवादियोंसे कोई सम्बन्ध नहीं है और बोल्शेविक संगठनसे उन्हें निकाल बाहर किया।

विसर्जनवादी और बहिष्कारवादी, दोनों ही और कुछ नहीं, सर्वहारा वर्ग और उसकी पार्टी के निम्न–पूँजीवादी सहचारी थे। सर्वहारा वर्गके विपत्तिके दिनोंमें उनकी असलियत जाहिर हो गयी।

४. त्रात्स्कीवादसे बोलशेविकोंका संघर्ष — पार्टी-विरोधी अगस्त गुट।

जिस समय बोल्शेविक दो मोर्चोंपर विसर्जनवादियों और बहिष्कारवादियोंसे डटकर लड़ रहे थे और सर्वहारा वर्गकी पार्टीकी संगत नीतिकी रक्षा कर रहे थे, उस समय त्रात्स्की मेन्शेविक-विसर्जनवादियोंका समर्थन कर रहा था। इसी समय लेनिनने उसे "जूडास त्रात्स्की" (या विभीषण त्रात्स्की)का नाम दिया था। त्रात्स्कीने विएना (आस्ट्रिया) में लेखकोंका एक गुट बनाया और वहाँसे एक पत्र निकालने लगा जो कहनेको गुटबन्दीसे परे था परन्तु वास्तवमें जो एक मेन्शेविक पत्र ही था। लेनिनने उस समय लिखा था—

> "त्रात्स्कीका व्यवहार किसी निहायत गिरे हुए कमाऊ-खाऊ गुटबाज जैसा है...मुँहसे वह पार्टीका हिमायती बनता है लेकिन उसका व्यवहार दूसरे गुटबाजों से भी गया-बीता है।"

आगे चलकर १९१२ में लेनिन और बोल्शेविक पार्टीका विरोध करनेवाले सभी गुटों और प्रवृत्तियोंको जोड़-बटोरकर त्रात्स्कीने अगस्त-गुट बनाया। विसर्जनवादी और बहिष्कारवादी भी इस बोल्शेविक-विरोधी गुटमें शामिल हो गये और इस तरह उन्होंने अपनी बिरादरी जाहिर कर दी। सभी मूल-प्रश्नोंपर त्रात्स्की और त्रात्स्की–पंथियोंका दृष्टिकोण विसर्जनवादियोंका होता था। लेकिन त्रात्स्की अपने विसर्जनवादपर मध्यवाद अर्थात् मध्यस्थताका पर्दा डाले हुआ था। उसका कहना था कि वह न तो बोल्शेविक है, न मेन्शेविक; वह मध्यस्थ बनकर दोनोंमें मेल करना चाहता है। इस सम्बन्धमें लेनिनने कहा था कि त्रात्स्कीकी दुष्टता खुले विसर्जनवादियोंसे बढ़कर है क्योंकि वह मजदूरोंको यह कहकर बरगलाना चाहता है कि वह गुटबन्दीसे परे है जब कि वास्तवमें वह मेन्शेविक विसर्जनवादियोंका पूर्ण रूपसे समर्थक है। त्रात्स्की-पंथियोंका ही वह मुख्य गुट था जो मध्यवादका पोषक था।

कॉ. स्तालिनके शब्दोंमें,—

"मध्यवाद एक राजनीतिक धारणा है। इसके मतसे सर्वहारा वर्गके हितोंको **एक ही पार्टीके भीतर** निम्न-पूँजीवादियोंके हितोंके आधीन कर देना चाहिये। इस प्रकार यह मत निम्न-पूँजीवादियोंकी अनुकूलताका मत है। वह लेनिनवाद के लिये इतर और निन्दनीय है।" (**स्तालिन, लेनिनवाद—"देशमें उद्योगधन्धोंका विस्तार और सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टीमें दक्षिणपन्थी विच्युति"; अं. सं.**)

इस समय कामेनेफ़, ज़िनोविएफ़ और राइकौफ़ वास्तवमें त्रात्स्कीके छिपे दलालोंका काम कर रहे थे क्योंकि वे बहुधा लेनिनके विरुद्ध उसकी सहायता करते थे। ज़िनोविएफ़, कामेनेफ़, राइकौफ़ और त्रात्स्कीके दूसरे छिपे साथियोंकी सहायतासे जनवरी १९१० में **लेनिनकी इच्छाओंके विरुद्ध** केन्द्रीय समितिका एक अधिवेशन बुलाया गया। कई बोल्शेविकोंके पकड़े जानेके कारण केन्द्रीय समितिका स्वरूप बदल गया था। इसलिये ढुलमुल-यक़ीन मेम्बर लेनिन-विरोधी निर्णय पास करा सके। उदाहरणके लिये इस अधिवेशनमें तै हुआ कि बोल्शेविक पत्र **प्रोलेतरी** को बन्द कर दिया जाय और विएनामें प्रकाशित त्रात्स्कीके पत्र **प्रावदा**को आर्थिक सहायता दी जाय। त्रात्स्कीके पत्रके संपादक-मंडलमें कामेनेफ़ शामिल हो गया और ज़िनोविएफ़के साथ उसे केन्द्रीय समितिका मुखपत्र बनानेकी चेष्टा करने लगा।

लेनिनके ज़ोर देनेपर ही केन्द्रीय समितिके जनवरीके अधिवेशनमें बहिष्कारवादियों और विसर्जनवादियों पर निन्दाका प्रस्ताव पास हो सका लेकिन यहाँ भी ज़िनोविएफ़ और कामेनेफ़ त्रात्स्की की इस बातके लिये आग्रह करते रहे कि विसर्जनवादियोंका इस प्रकार खुला नामोल्लेख न हो।

लेनिनने जो कुछ पहले ही देख लिया था और जिसके लिये सावधान भी कर दिया था, वही आगे आया। केवल बोल्शेविकोंने केन्द्रीय समितिके अधिवेशनके निर्णयका पालन किया और अपना मुखपत्र **प्रोलेतरी (सर्वहारा)** बन्द कर दिया। मेन्शेविक अपना विसर्जनवादी गुटबाज अखबार **गोलोस सोत्सिअल दिमोक्राता (सामाजिक-जनवादीकी आवाज़)** निकालते रहे।

कॉ. स्तालिनने लेनिनकी बातका पूरी तरह समर्थन किया। **सामाजिक-जनवादी** नामक पत्र (संख्या ११) में उनका एक लेख प्रकाशित हुआ जिसमें उन्होंने त्रात्स्की पन्थके साझीदारोंके कार्योंकी निन्दा की। बोल्शेविक दलमें कामेनेफ़, ज़िनोविएफ़, और राइकौफ़के विश्वासघातक कार्योंसे जो असाधारण परिस्थिति उत्पन्न हो गयी थी, उसका उन्होंने अंत कर देनेको कहा। इस लेखमें वही आवश्यक कर्तव्य रखे गये थे जिन्हें आगे चल कर प्रॉगमें होने वाली पार्टी-कांग्रेसने कार्यरूपमें परिणत किया। ये कर्तव्य इस प्रकार थे,—एक आम पार्टी-कान्फ्रेन्स बुलायी जाय, पार्टीका एक पत्र निकाला जाय जो वैधरूपसे प्रकाशित हो, और रूसमें कार्य-संचालनके लिये एक ग़ैर-क़ानूनी

पार्टी-केन्द्र स्थापित किया जाय। कॉ. स्तालिनका लेख बाकू कमेटीके निर्णयोंके आधार पर लिखा गया था। बाकू कमेटी पूर्ण रूपसे लेनिनकी समर्थक थी।

त्रात्स्कीके पार्टी-विरोधी अगस्त-गुटसे मोर्चा लेनेके लिये पार्टीमें ऐसे लोगोंका दल संगठित किया गया जो सर्वहारा वर्गकी ग़ैर-क़ानूनी पार्टीकी रक्षा करना चाहते थे और उसे मज़बूत बनाना चाहते थे। त्रात्स्कीके गुटमें छँटे हुए पार्टी–विरोधी लोग थे; इनमें विसर्जनवादियों और त्रात्स्की-पंथियोंसे लेकर बहिष्कारवादियों और देवपूजकों तक तरह–तरहके लोग थे। इनके विरुद्ध लेनिनके नेतृत्वमें बोल्शेविक थे और प्लेखानौफ़के नेतृत्वमें कुछ ऐसे मेन्शेविक थे जो पार्टीके पक्षमें थे। पार्टीके समर्थक ये मेन्शेविक और प्लेखानौफ़ अनेक प्रश्नों पर अपने मेन्शेविक दृष्टिकोण पर अड़े रहते थे, परन्तु वे अगस्त–गुट और विसर्जनवादियोंसे अपनेको बहुत स्पष्टतासे अलग रखते थे और बोल्शेविकोंसे समझौता करना चाहते थे। लेनिनने प्लेखानौफ़के प्रस्तावको मान लिया और उसके साथ एक अस्थायी गुट बनाना इस कारण स्वीकार कर लिया कि इस तरहका गुट पार्टीके लिये हितकर किन्तु विसर्जनवादियोंके लिये घातक सिद्ध होगा।

कॉ. स्तालिनने इस गुटका पूर्ण समर्थन किया। उस समय उन्हें देश निकाला दिया गया था; वहींसे उन्होंने लेनिनको एक पत्रमें लिखा था,—

> "मेरे विचारसे इस (लेनिन–प्लेखानौफ़) गुटकी नीति ही सही है। पहले तो रूसमें क्रान्तिकारी कार्यके हितोंके अनुकूल यह नीति है दूसरे इस नीतिसे, और केवल इस नीतिसे, क़ानूनी संस्थाएँ विसर्जनवादियोंसे जल्दी छुटकारा पायेंगी; क्यों कि इससे मेन्शेविक कार्यकर्ताओं और विसर्जनवादियोंके बीचमें एक गहरी खाई तैयार हो जायगी जिससे विसर्जनवादी तितर–बितर होकर साफ़ हो जायँगे।"

(लेनिन और स्तालिन—रू. सं., खं. १, पृ. ५२९–३०)

क़ानूनी और ग़ैर–क़ानूनी कामका चतुरतासे मेल करके बोल्शेविक मज़दूरोंकी क़ानूनी संस्थाओंमें एक महत्वपूर्ण शक्ति बन सके। यह बात अकस्मात सिद्ध भी हो गयी क्योंकि उस समय चार कांग्रेसें हुई और उनमें बोल्शेविक मज़दूर–गुटोंपर बहुत असर डाल सके। पहली कांग्रेस जन–विश्वविद्यालयोंकी थी दूसरी स्त्रियोंकी, तीसरी मिल–डाक्टरोंकी और चौथी मद्यपान–निषेधकी थी। इन कांग्रेसोंमें बोल्शेविकोंके व्याख्यान राजनीतिक दृष्टिसे अत्यंत मूल्यवान थे और सारे देशमें उनकी अनुकूल प्रतिक्रिया हुई। उदाहरणके लिए जन–विश्वविद्यालयोंकी कांग्रेसमें बोल्शेविक मज़दूर–प्रतिनिधियोंने ज़ारशाहीकी नीतिका भंडाफोड़ कर दिया और कहा कि ज़ारशाहीने सभी सांस्कृतिक कार्योंका गला घोट दिया है; जब तक ज़ारशाहीका अन्त न होगा तब तक वास्तवमें सांस्कृतिक प्रगति होना असंभव है। मिल–डाक्टरोंकी कॉंग्रेसमें मज़दूर-प्रतिनिधियोंने बताया कि किन भयानक अस्वास्थ्यकर परिस्थितियोंमें मज़दूरोंको रहना और काम करना पड़ता है। उन्होंने भी यही निष्कर्ष निकाला कि बिना ज़ारशाहीका पतन हुए मिलोंमें उचित स्वास्थ्य–व्यवस्था नहीं हो सकती।

जो क़ानूनी संस्थाएँ अभी जीवित थीं, उनसेबोल्शेविकोंने विसर्जनवादियोंको धीरे-धीरे निकाल बाहर किया। प्लेखानौफ़के पार्टी-पक्षके गुटके साथ संयुक्त मोर्चेकी विशेष कार्यनीतिके कारण (फिब्रोर्ग ज़िलेमें, एकातेरीनोस्लाफ़, आदिमें) बोल्शेविक अनेक मेन्शेविक मज़दूर-संस्थाओंको अपनी ओर कर सके।

इस कठिन समयमें बोल्शेविकोंने दिखा दिया कि क़ानूनी और ग़ैर-कानूनी कामको कैसे मिलाना चाहिये।

५. प्राग पार्टी-कान्फ्रेन्स, १९१२—बोल्शेविकोंकी स्वतंत्र मार्क्सवादी पार्टीका निर्माण।

विसर्जनवादियों और बहिष्कारवादियों तथा त्रात्स्की-पंथियोंसे मोर्चा लेनेके लिये यह आवश्यक हो गया कि सभी बोल्शेविक तुरंत संगठित हों और अपनी एक स्वतंत्र बोल्शेविक पार्टी बनायें। ऐसा करना अनिवार्य रूपसे आवश्यक था, इसीलिये नहीं कि पार्टीके भीतर जो अवसरवादी प्रवृत्तियाँ मज़दूर-वर्गमें भेद डाल रही थीं, उन्हींका ख़ात्मा करना था वरन् इसलिये भी कि क्रान्तिके नये उठानके लिये मज़दूर-वर्गको तैयार करना ज़रूरी था।

लेकिन इस कार्यकी पूर्तिके पहले अवसरवादियों, मेन्शेविकोंसे पार्टीको मुक्त करना था।

किसी भी बोल्शेविकको अब इस बारेमें दुविधा न थी कि मेन्शेविकोंके साथ एक ही पार्टीमें रहना असंभव है। स्तोलीपिनके शासन-कालमें उनका व्यवहार विश्वासघातक था; उन्होंने सर्वहारा वर्गकी पार्टीको समाप्त करके एक नयी सुधारवादी पार्टी संगठित करनेका प्रयत्न किया था। इन कारणोंसे उनसे सम्बन्ध विच्छेद करना अनिवार्य हो गया। मेन्शेविकोंके साथ एक ही पार्टीमें रहकर एक-न-एक तरहसे बोल्शेविक नैतिक दृष्टिसे उनके व्यवहारके लिये उत्तरदायी होते थे। लेकिन बोल्शेविक मेन्शेविकोंके खुले विश्वास-घातके लिये उत्तरदायी होनेका विचार भी कैसे कर सकते थे जब तक कि वे स्वयं पार्टी और मज़दूर-वर्गके प्रति विश्वासघात करने पर न तुल जाते? इस प्रकार मेन्शेविकोंके साथ एक ही पार्टीमें रहनेका अर्थ मज़दूर-वर्ग और उसकी पार्टीके साथ विश्वासघात करना था। इसलिये मेन्शेविकोंसे जो वास्तविक विच्छेद हो चुका था, उसे अब ठिकाने तक ही पहुँचा देना था; अर्थात उनसे नियमपूर्वक संगठनात्मक विच्छेद कर लेना था और उन्हें पार्टीसे निकाल देना था।

यही एक उपाय था जिससे सर्वहारा वर्गकी क्रान्तिकारी पार्टी इस प्रकार पुनः प्रतिष्ठित की जा सकती थी कि उसका एक ही कार्यक्रम हो, एक ही कार्यनीति हो, और एक ही वर्ग-संगठन हो।

यही एक उपाय था जिससे मेन्शेविकों द्वारा नष्ट की हुई एकता वास्तविक रूपमें (केवल नियमावलीके अनुसार नहीं) पुनः प्रतिष्ठित की जा सकती थी।

इस कार्यका भार छठी आम पार्टी-कान्फ्रेन्सपर था, जिसके लिये बोल्शेविक तैयारी कर रहे थे।

लेकिन यह तो समस्याका एक ही पहलू था। इसमें सन्देह नहीं कि मेन्शेविकोंसे नियमपूर्वक सम्बन्ध-विच्छेद करना तथा एक स्वतंत्र बोल्शेविक पार्टीका निर्माण करना एक अत्यंत महत्वपूर्ण राजनीतिक कार्य था। लेकिन बोल्शेविकोंका कार्य इतना ही न था कि मेन्शेविकोंसे सम्बन्ध-विच्छेद करके नियमपूर्वक अपनी एक अलग पार्टी बना लें; महत्वका काम यह था कि मेन्शेविकोंसे सम्बन्ध-विच्छेद करके वे एक **नयी** पार्टी, एक **नये ढंग**की पार्टी बनायें जो पच्छिमकी साधारण सामाजिक-जनवादी पर्टियोंसे भिन्न हो, जो अवसरवादी लोगोंसे बरी हो और जो शासन-तंत्रपर अधिकार करनेके लिये सर्वहारा वर्गका संघर्षमें नेतृत्व कर सके।

बोल्शेविकोंसे लड़नेमें सभी तरहके मेन्शेविक—ऐक्सेलरोद और मार्तीनौफ़से लेकर मार्तौफ़ और त्रात्स्की तक—उन्हीं अस्त्र-शस्त्रोंका प्रयोग करते थे जो उन्हें पच्छिमी योरपके सामाजिक-जनवादियोंके यहाँ मिलते थे। वे रूसमें वैसी ही पार्टी चाहते थे जैसी उदाहरणके लिये, जर्मनी या फ्रान्सकी सामाजिक-जनवादी पार्टी थी। वे बोल्शेविकोंसे लड़ते थे क्योंकि वे भाँप गये थे कि इनमें कुछ नयापन है, कुछ अनोखापन है जो पच्छिमके सामाजिक-जनवादियोंसे भिन्न है। और उन दिनों पश्चिमकी सामाजिक-जनवादी पार्टियोंका स्वरूप क्या था? ये पार्टियाँ मार्क्सवादियों और अवसरवादियोंकी पँचमेल मिठाई थीं, जिनमें क्रान्तिके दोस्त और दुश्मन दोनों थे, पार्टी-सिद्धांतके समर्थक और विरोधी दोनों थे, और जो समर्थक थे वे विरोधी-पक्षके विचारोंसे सहमत होते जा रहे थे और असलमें उनसे दबते जा रहे थे। बोल्शेविक पच्छिमी योरपके सामाजिक-जनवादियोंसे पूछते थे,—"अवसरवादियों और क्रान्तिके शत्रुओंसे किस बातके लिये समझौता किया जाय?" पच्छिमी योरपके सामाजिक-जनवादी उत्तर देते थे,—"एकता"के लिये, "पार्टीके भीतर शान्ति" बनाये रखनेके लिये। "एकता किससे, अवसरवादियोंसे?" वे उत्तर देते—"हाँ, अवसरवादियोंसे।" जाहिर था कि ऐसी पार्टियाँ क्रान्तिकारी न हो सकती थीं।

बोल्शेविकोंकी दृष्टिसे यह छिपा न रह सकता था कि एंगेल्सकी मृत्युके बाद पच्छिमी योरपकी सामाजिक-जनवादी पार्टियाँ सामाजिक क्रान्तिकी पार्टी न रहकर "समाज-सुधार" की पार्टियाँ बन गयी हैं। इनमेंसे हरेक पार्टी, संस्थाकी दृष्टिसे, नेतृत्व करनेवाली शक्ति न रहकर अब अपने-अपने पार्लियामेंटरी दलकी पिछलगुआ बन गयी थी।

बोल्शेविकोंकी जानकारीसे यह छिपा न रह सकता था कि इस तरहकी पार्टीसे सर्वहारा वर्गकी भलाईकी कोई आशा नहीं है और वह क्रान्तिकी ओर सर्वहारा वर्गका नेतृत्व नहीं कर सकती।

बोल्शेविकोंकी जानकारीसे यह भी छिपा न रह सकता था कि सर्वहारा वर्गको इस तरहकी नहीं, एक दूसरी तरहकी पार्टीकी ज़रूरत है; एक नयी पार्टीकी जो वास्तवमें मार्क्सवादी हो, जो अवसरवादियोंसे समझौता न करे और पूँजीवादियोंका क्रान्तिकारी विरोध करे; जो सुगठित और अटूट हो, जो सामाजिक क्रान्ति और सर्वहारा वर्गके एकाधिपत्यकी पार्टी हो।

बोल्शेविक इस तरहकी नयी पार्टी चाहते थे। और बोल्शेविकोंने ऐसी पार्टी बनानेके लिये परिश्रम किया। 'अर्थवादियों," मेन्शेविकों, त्रात्स्की-पंथियों, वहिष्कार-वादियों, सभी तरहके आदर्शवादियों और अनुभवसिद्ध आलोचकों तकसे उनके युद्धका इतिहास इस तरहकी पार्टीके निर्माणका ही इतिहास है। बोल्शेविक एक नयी पार्टी, एक **बोल्शेविक** पार्टी बनाना चाहते थे जो उन सब लोगोंके लिये आदर्श हो जो एक वास्तविक क्रान्तिकारी मार्क्सवादी पार्टी बनाना चाहें। पुराने **इस्क्रा**के दिनोंसे ही बोल्शेविक इस तरहकी पार्टी बनानेका प्रयास करते आ रहे थे। वे इसके लिये लगनसे, अडिग धीरतासे, सभी विघ्न-बाधाओंका सामना करते हुए प्रयत्न करते रहे थे। लेनिनकी **क्या करें ?, दो कार्यनीतियाँ,** आदि पुस्तकोंने इन प्रयत्नोंमें मूल कार्य किया जिससे सैद्धान्तिक निर्णय संभव हुआ। इस तरहकी पार्टीके लिये लेनिनकी पुस्तक **क्या करें** ने **विचार-भूमि** तैयार की। इस तरहकी पार्टीके लिये लेनिनकी पुस्तक **एक क़दम आगे तो दो कदम पीछे**ने **संगठन-भूमि** तैयार की। इस तरहकी पार्टीके लिये लेनिनकी पुस्तक **जनवादी क्रान्तिमें सामाजिक-जनवादकी दो कार्यनीतियाँ**ने **राजनीतिक भूमि** तैयार की और अंतमें इस तरहकी पार्टीके लिये लेनिनकी पुस्तक **भौतिकवाद और अनुभवसिद्ध आलोचना**ने **सैद्धान्तिक भूमि** तैयार की।

यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि इतिहासमें किसी भी राजनीतिक गुट की—पार्टीमें परिणत होनेके लिये—ऐसी तैयारी नहीं हुई जैसी बोल्शेविक गुटकी हुई।

बोल्शेविकोंके पार्टी बनानेके लिये परिस्थिति उपयुक्त थी। तैयारियाँ पूरी हो चुकी थीं।

वास्तविक कार्य-पूर्तिके बाद "इति शुभम्" लिखना छठी पार्टी-कान्फ्रेन्सका काम था। उसका काम था कि मेन्शेविकोंको निकालकर वह नयी पार्टी, बोल्शेविक पार्टीका नियमपूर्वक विधान कर दे।

जनवरी १९१२ में छठी अखिल-रूसी पार्टी कान्फ्रेन्स प्रॉगमें हुई। बीससे ऊपर पार्टी-संगठनोंके प्रतिनिधि आये। इसलिये इस कान्फ्रेंसका वही महत्व था जो नियमानुकूल होनेवाली पार्टी-कांग्रेसका होता।

कान्फ्रेन्सने अपने वक्तव्यमें घोषित किया कि पार्टीका केन्द्रीय संगठन जो

छिन्न-भिन्न होगया था पुनः प्रतिष्ठित किया गया है और एक केन्द्रीय समिति वना दी गयी है। उसमें यह भी कहा गया कि रूसी सामाजिक-जनवादी पार्टीका संगठनात्मक रूप जवसे निश्चित हुआ था, तवसे अव तक ये प्रतिक्रियाके दिन ही उसके अनुभवमें सवसे भारी विपत्तिके दिन थे। हर तरहके दमन और वाहरी चोटोंके साथ भीतरी विश्वासघात और अवसरवादियोंकी अस्थिरताका सामना करके भी, सर्वहारा वर्गकी पार्टीने अपने संगठनको वनाये रखा था और अपने झंडेको ऊँचा रखा था।

इस वक्तव्यमें कहा गया था,—"रूसकी सामाजिक जनवादी पार्टीके झंडे की, उसके कार्यक्रम की, और उसकी क्रान्तिकारी परम्पराकी ही रक्षा नहीं हुई, उसके संगठन की भी रक्षा हुई है जिसे दमनने कुछ क्षीण और निर्वल भले कर दिया हो, परन्तु जिसे वह कभी समूल नष्ट नहीं कर सका।"

रूसमें मज़दूर-आन्दोलनके नवीन अभ्युत्थान तथा पार्टी-कार्यके नव-जीवनके प्रथम लक्षणोंका कान्फ्रेन्सने उल्लेख किया।

स्थानीय संगठनोंके कार्य-विवरणपर प्रस्ताव पास करते हुए कान्फ्रेन्सने लक्ष्य किया कि "स्थानीय ग़ैर-क़ानूनी सामाजिक-जनवादी संगठनों और गुटोंको मज़वूत वनानेके उद्देश्यसे हर जगह सामाजिक-जनवादी मज़दूरोंमें जोरोंसे काम हो रहा है।"

कान्फ्रेन्सने इस वातका उल्लेख किया कि पीछे हटनेके समय वोल्शेविक कार्यनीतिका जो मुख्य नियम था अर्थात् ग़ैर-कानूनी कामको क़ानूनी कामसे मिला दिया जाये, उसका हर जगह पालन हो रहा था।

प्रॉग कान्फ्रेन्सने पार्टीकी एक वोल्शेविक केन्द्रीय समिति चुनी जिसमें लेनिन, स्तालिन, और्जोनिकित्से, स्वेर्दलौफ़, स्पान्दरियान, गोलोश्चेकिन, और कुछ दूसरे लोग थे। कॉ. स्तालिन और स्वेर्दलौफ़ उस समय कालेपानीकी सजा भोग रहे थे, इसलिये उनकी अनुपस्थितिमें ही उन्हें केन्द्रीय समितिके लिये चुना गया। केन्द्रीय समितिमें जो दूसरोंकी एवजीमें काम करनेके लिये चुने गये, उनमें कॉ. कालिनिन भी थे।

रूसमें क्रान्तिकारी कार्यके सञ्चालनके लिये एक व्यावहारिक केन्द्र (केन्द्रीय समितिकी रूसी लघुसमिति) वनाया गया। इसके अध्यक्ष कॉ. स्तालिन थे और सदस्योंमें कॉ. य. स्वेर्दलौफ़, स. स्पान्दरियान. स. और्जोनिकित्से, म. कालिनिन और गोलोश्चेकिन थे।

प्रॉग कान्फ्रेन्सने अवसरवादके विरुद्ध वोल्शेविकोंके पूर्व संग्रामकी पर्यालोचनाकी और निर्णय किया कि मेन्शेविकोंको पार्टीसे निकाल दिया जाय।

प्रॉग कॉन्फ्रेन्सने मेन्शेविकोंको पार्टीसे निकालकर वोल्शेविक पार्टीकी स्वतंत्र सत्ता का नियमपूर्वक विधान किया।

मेन्शेविकोंको विचार और संगठनकी भूमिपर परास्त करके और पार्टीसे वाहर खदेड़कर भी वोल्शेविकोंने पार्टीके पुराने झंडेको क़ायम रखा। १९१८ तक वे अपनेको रूसी सामाजिक-जनवादी मजदूर-पार्टी ही कहते रहे, और केवल ब्रैकटमें वोल्शेविक शब्द जोड़ देते थे।

१९१२ के आरंभमें प्रॉग कान्फ्रेन्सके परिणामोंके बारेमें लेनिनने गोर्कीको लिखा था,—

"विसर्जनवादके कूड़ा–कबारको हटाकर पार्टी और उसकी केन्द्रीय समिति को पुनः प्रतिष्ठित करनेमें आखिर हम सफल हो गये। आशा है कि इस बातसे हमारे साथ तुम्हें भी प्रसन्नता होगी।"

(लेनिन ग्रंथावली—रूसी सं०, खंड २९, पृ. १९)

प्रॉग कान्फ्रेन्सकी महत्ताके बारेमें कॉ. स्तालिनने कहा था,—

"हमारी पार्टीके इतिहासमें यह कान्फ्रेन्स अत्यंत महत्वपूर्ण थी क्योंकि इसने बोल्शेविकों और मेन्शेविकोंके बीचमें सीमा-रेखाएँ खींच दी थीं और देश भरके बोल्शेविक–संगठनोंको एक संयुक्त बोल्शेविक पार्टीमें सूत्रबद्ध कर दिया था।"

(सोवियत संघकी कम्युनिस्ट--बोल्शेविक--पार्टीकी १५ वीं कांग्रेसकी शब्दशः रिपोर्ट—रूसी सं., पृ. ३६१–६२)

मेन्शेविकोंको निकालने और स्वयं एक स्वतंत्र पार्टी बननेके बाद बोल्शेविक पार्टी अधिक दृढ़ और शक्तिशाली बन गयी। **अपनी पाँतिसे अवसरवादी लोगोंको निकाल बाहर करनेसे पार्टी मज़बूत होती है।** यह बोल्शेविक पार्टीका एक मूल–सूत्र है। सेकेंड इंटरनेशनल (दूसरा अन्तरराष्ट्रीय संघ—सं.) की सामाजिक–जनवादी पार्टियोंसे मूलतः भिन्न बोल्शेविक पार्टी एक नये तरहकी पार्टी है। यद्यपि सेकेंड इंटरनेशनलकी पार्टियाँ अपनेको मार्क्सवादी पार्टी कहती थीं परंतु वास्तवमें वे अपनी पाँति में खुले अवसरवादियों और मार्क्सवादके शत्रुओंको भी रहने देती थीं। इस कारण इन अवसरवादियों और मार्क्सवादके शत्रुओंको इस बातकी सुविधा मिल गयी कि वे सेकेंड इण्टरनेशनलको पथभ्रष्ट करके उसे बरबाद कर दें? इसके विपरीत बोल्शेविकोंने अवसरवादियों से डटकर युद्ध किया और सर्वहारा वर्गकी पार्टीसे अवसरवादका कूड़ा–कबार निकाल फेंका। वे एक नये ढंगकी पार्टी, एक लेनिनवादी पार्टी बना सके जिसे आगे चलकर सर्वहारा वर्गका एकाधिपत्य स्थापित करनेमें सफलता मिली।

यदि सर्वहारा-पार्टीकी पाँतिमें अवसरवादी बने रहते तो बोल्शेविक पार्टी कभी खुले मैदानमें आकर मजदूरोंका नेतृत्व न कर सकती, न वह शासन–तंत्रपर अधिकार करके सर्वहारा वर्गका एकाधिपत्य स्थापित कर सकती, न वह गृह-युद्धमें विजयी होकर समाजवाद का निर्माण कर सकती।

अल्पतम कार्यक्रमकी जो मांगें थीं, उन्हें ही पार्टीके मुख्य तात्कालिक राजनीतिक नारोंके रूपमें रखनेका प्रॉग्र कान्फ्रेन्सने निश्चय किया। वे मांगें इस प्रकार थीं,—जनवादी प्रजातन्त्र, मजदूरीके आठ घंटे, और रियासती भूमिका अपहरण।

बोल्शेविकोंने इन्हीं क्रान्तिकारी नारोंके साथ चौथी राजदूमाके चुनावकी लड़ाई लड़ी।

१९१२–१४ में मजदूर-जनताके क्रान्तिकारी आन्दोलनके नये उठानका निर्देश इन्हीं नारोंके अनुसार हुआ।

सारांश

१९०८ से १२ तकका समय क्रान्तिकारी कार्यके लिये अत्यंत कठिन रहा। क्रांतिकी पराजयके बाद, जब क्रांतिकारी आंदोलन ह्रासोन्मुख था और जनता थकी हुई थी, तब बोल्शेविकोंने अपनी कार्यनीति बदल डाली और ज़ारशाहीसे खुली लड़ाई न लड़कर छिपी राहोंसे लड़ते रहे। स्तोलीपिनके काले कारनामोंके दिनोंमें जब परिस्थिति अत्यंत कठोर हो गयी थी, तब जनतासे अपना सम्बन्ध बनाये रखनेके लिये बोल्शेविक (रोगी-सहायक समितियों और ट्रेड यूनियनोंसे लेकर राज-दूमा तक) छोटेसे छोटे वैध अवसरका भी उपयोग करते थे। क्रान्तिकारी आन्दोलनके नये उठानके लिये शक्ति-संचय करनेमें उन्होंने अथक परिश्रम किया।

क्रान्तिकी पराजयसे, सरकार-विरोधी शक्तियोंकी विशृंखलतासे, क्रान्तिकी ओरसे निराश होनेसे, और (बोग्दानौफ़, बाजारौफ़ आदि) जिन बुद्धिजीवियोंने पार्टीसे कनाराकशी कर ली थी उनके पार्टीके मूल-सिद्धान्तोंमें संशोधन करनेके अधिकाधिक प्रयत्नोंसे जो विषम परिस्थिति उत्पन्न हुई, उसमें बोल्शेविक ही पार्टीकी एक ऐसी शक्ति थे जिन्होंने पार्टीका झंडा नीचा नहीं होने दिया, जिन्होंने पार्टीके कार्यक्रमको नहीं ठुकराया, और जिन्होंने मार्क्सीय सिद्धान्तोंके "आलोचकों"के आक्रमणका मुँहतोड़ जवाब दिया (लेनिनकृत "**भौतिकवाद और अनुभवसिद्ध आलोचना**"।) लेनिन रूपी केन्द्रसे बँधे हुए प्रधान बोल्शेविक नेता पार्टी और उसके क्रान्तिकारी सिद्धान्तोंकी इसलिये रक्षा कर सके कि वे मार्क्सवाद-लेनिनवादके सिद्धान्तोंकी आँचमें तपकर निखर चुके थे और क्रांतिके भावी विकासकी रूपरेखाको हृदयङ्गम कर चुके थे। बोल्शेविकोंके बारेमें लेनिनने कहा था,—"लोग यों ही नहीं कहते कि हम चट्टानकी तरह दृढ़ हैं।"

उस समय मेन्शेविक क्रान्तिसे अधिकाधिक दूर चले जा रहे थे। वे विसर्जनवादी बन गये और सर्वहारा वर्गकी ग़ैर-क़ानूनी पार्टीको निर्मूल करनेकी, उसके विसर्जनकी माँग करने लगे। वे अधिकाधिक खुले रूपमें पार्टीके कार्यक्रमको, उसके क्रान्तिकारी उद्देश्यों और नारोंको ठुकराने लगे। उन्होंने अपनी एक अलग सुधारवादी पार्टी संगठित करनेका प्रयत्न किया जिसे मज़दूरोंने "स्तोलीपिनकी मज़दूर-पार्टी"का नाम दिया। त्रात्स्कीने विसर्जनवादियोंका समर्थन किया। बगुला भगतकी तरह "पार्टीकी एकता" का नारा लगाकर उसने असलियतको छिपाना चाहा; लेकिन पार्टीकी एकताका अर्थ उसके लिये विसर्जनवादियोंसे एकताका था।

दूसरी ओर कुछ बोल्शेविकोंकी समझमें यह नहीं आया कि ज़ारशाहीसे युद्ध करनेके लिये नये और टेढ़े-मेढ़े रास्तोंकी ज़रूरत है। इसलिये उनका कहना था कि क़ानूनसे जो अवसर मिले, उसका उपयोग न करना चाहिये। उनकी माँग थी कि मज़दूरोंके प्रतिनिधियोंको राज-दूमासे वापस बुला लिया जाय। बहिष्कारवादी पार्टीको उस ओर

ठेल रहे थे, जहाँ उसका जनतासे सम्बन्ध-विच्छेद हो जाता। क्रान्तिके नये उठानके लिये शक्ति-संचय करनेमें वे बाधा डाल रहे थे। "गरम" शब्दावलीकी आड़में विसर्जनवादियोंकी तरह वहिष्कारवादी भी वास्तवमें क्रान्तिकारी संघर्षसे मुँह चुरा रहे थे।

विसर्जनवादी और वहिष्कारवादी लेनिनके विरुद्ध अगस्त-गुटमें त्रात्स्की द्वारा संगठित किये गये।

विसर्जनवादियों और वहिष्कारवादियोंसे मोर्चा लेनेमें, इस अगस्त-गुटसे संघर्ष करनेमें बोल्शेविकोंका पलड़ा भारी रहा और वे सर्वहारा वर्गकी ग़ैर-क़ानूनी पार्टीकी रक्षा करनेमें समर्थ हुए।

इस कालकी मुख्य घटना प्रॉगमें होनेवाली सामाजिक-जनवादियोंकी कान्फ्रेन्स (जनवरी १९१२) थी। इस कान्फ्रेन्समें मेन्शेविक पार्टीसे निकाल दिये गये और एक पार्टीके भीतर बोल्शेविकों और मेन्शेविकोंकी ऊपरी-नियमावली वाली एकताका सदाके लिये अन्त हो गया। एक राजनीतिक गुटसे बोल्शेविक नियमपूर्वक एक स्वतंत्र पार्टी बने। यह पार्टी रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर-पार्टी (बोल्शेविक) थी। प्रॉग कान्फ्रेन्सने एक नयी तरहकी पार्टी, लेनिनवादकी पार्टी, **बोल्शेविक** पार्टीका *विधान किया।*

प्रॉग-कान्फ्रेन्समें सर्वहारा-पार्टीकी पाँतिसे मेन्शेविक अवसरवादियोंके बाहर निकालनेका महत्वपूर्ण और निर्णय-सूचक प्रभाव पार्टीके अगले विकासपर तथा क्रान्ति पर पड़ा। यदि मज़दूरोंके ध्येयके प्रति विश्वासघात करने वाले समझौता-प्रेमी मेन्शेविकों को बोल्शेविकोंने पार्टीसे निकाल बाहर न किया होता, तो १९१७ में सर्वहारा-पार्टी जनता को इस बातके लिये आन्दोलित न कर सकती कि वह सर्वहारा वर्गके एकाधिपत्यके लिये संग्राम ठाने।

पाँचवाँ अध्याय

प्रथम साम्राज्यवादी युद्धके पूर्व मज़दूर-आन्दोलनके नये उठानमें बोलशेविक पार्टी

(१९१२–१४)

१. १९१२–१४ में क्रान्तिकारी आन्दोलनका नया उठान।

स्तोलीपिनके काले कारनामोंके दिन गिने हुए थे। ऐसी सरकार जो जनताका डंडेसे और फांसीके तख्तेसे ही स्वागत करती थी, टिकाऊ न हो सकती थी। लोग दमनके आदी होकर निडर हो गये। क्रान्तिकी पराजयके बाद वे जिस थकानका अनुभव करने लगे थे, वह दूर होने लगी। उन्होंने फिर लड़ाई छेड़ दी। बोल्शेविकोंकी बात सच निकली कि क्रान्तिकारी आन्दोलनमें नया उठान अनिवार्य है। १९११ के पहले हड़तालियोंकी संख्या पचास-साठ हजारसे ज्यादा न होती थी लेकिन उस साल यह संख्या बढ़कर एक लाख तक पहुँच गयी। जनवरी १९१२ में होनेवाली प्रॉग-कान्फ्रेन्सने ही मजदूर-आन्दोलनके नव-जीवनके चिन्होंको लक्ष्य किया था। लेकिन क्रान्तिकारी आन्दोलनके वास्तविक उठानका आरंभ अप्रैल–मई १९१२ में हुआ, जब लीनामें मज़दूरोंपर गोली चलानेके कारण आम हड़तालें होने लगीं।

४ अप्रैल १९१२ को साइबेरियामें लीनाकी सोनेकी खानोंमें हड़ताल होनेपर सशस्त्र पुलिसके एक ज़ार–भक्त अफ़सरकी आज्ञासे ५०० मज़दूर मारे गये और घायल हुए। मजदूर खान-मालिकोंके साथ समझौतेकी बातचीत करनेके लिये शान्तिपूर्वक चले जा रहे थे कि उनपर गोलियों की बाढ़ दागी गयी। इस गोलीकांडसे सारा देश क्षुब्ध हो उठा। खान–मजदूरोंकी आर्थिक हड़तालको तोड़ने लिये और इस प्रकार लीनाकी सोनेकी खानोंके मालिकों, ब्रिटिश पूँजीपतियोंको प्रसन्न करनेके लिये ही जारशाहीने फिर अपने हाथ खूनमें रँगे थे। बिल्कुल बेशर्मीसे मजदूरोंको पीसकर ब्रिटिश पूँजीपति और उनके रूसी भागीदार सत्तर लाख रूबलसे ऊपर सालाना मुनाफ़ेकी भारी रक़म खा जाते थे। मजदूरोंको वे कहने-भरको मज़दूरी देते थे; खाना ऐसा देते थे जो सड़ा हुआ और फेंक देनेके क़ाबिल होता था। इस जोरो–जुल्म और बेइज्ज़तीको न सहकर लीनाकी सोनेकी खानोंमें काम करने वाले छः हजार मजदूरोंने हड़ताल कर दी थी।

सेंट-पीटर्सबर्ग, मॉस्को और दूसरे सभी औद्योगिक केन्द्रों और प्रदेशोंके मज़दूरोंने लीनाके गोली-कांडका जवाब सभाओं, जुलूसों और आम हड़तालोंसे दिया।

कारखानोंके एक समूहके मज़दूरोंने अपने प्रस्तावमें लिखा था,—"हम ऐसे चकित और क्षुब्ध हो गये कि अपने भाव प्रकट करनेके लिये हमें तुरन्त शब्द न मिले। हमने जो भी विरोध प्रदर्शित किया वह हमारे हृदयमें खौलने वाले गुस्सेकी परछाईं भर था। न विरोधसे कुछ होगा, न रोने-धोनेसे; जब हम सब लोग संगठित होकर लड़ेंगे तभी काम चलेगा।"

मज़दूर और भी जल उठे जब राज-दूमामें सामाजिक-जनवादी गुटके लीना-गोली-कांडके बारेमें प्रश्न करनेपर ज़ारके मंत्री माकारौफ़ने उद्दंडतासे उत्तर दिया, "गोली चली है, और अभी चलेगी!" लीनाके मज़दूरोंकी हत्याके प्रति विरोध-प्रदर्शन करनेके लिये जो राजनीतिक हड़ताल हुई, उसमें भाग लेने वाले मज़दूरोंकी संख्या तीन लाख तक पहुँच गयी।

स्तोलीपिन-शासनके "शान्तिमय" वातावरणको लीना-काण्डने आँधीकी तरह झकझोर दिया।

१९१२ में सेंट-पीटर्सबर्गके बोल्शेविक पत्र **स्वेज़्दा (नक्षत्र)** में कॉ. स्तालिनने इस सम्बन्धमें लिखा था,—

> "लीनाके गोलीकाण्डने वातावरणकी बरफ जैसी शान्तिको भंग कर दिया है और जन-आन्दोलनकी नदी फिर बह चली है। बरफ टूट चुकी है!... ... वर्तमान शासनकी दुष्टता और दुर्नीति तथा बहुत दिनसे कष्ट पानेवाले रूस देशके सभी रोग-दोख, एक साथ ही इस लीना-काण्डमें प्रकट हो गये। इसी कारण लीनाके गोलीकाण्डने हड़तालों और जुलूसोंके लिये डंकेकी चोटका काम किया।"

विसर्जनवादियों और त्रात्स्की-पंथियोंके क्रान्तिको दफ़ना देनेके सारे प्रयत्न विफल हो गये। लीना-प्रकरणसे सिद्ध हो गया कि क्रान्तिकी शक्तियाँ अभी जीवित हैं और मज़दूर-वर्गमें क्रान्तिकारी शक्तिका एक विशाल भंडार संचित हो गया है। १९१२ के मई दिवसकी हड़तालोंमें लगभग चार लाख मज़दूरोंने भाग लिया। इन हड़तालोंके राज-नीतिक लक्षण स्पष्ट थे। जनवादी प्रजातंत्र, मज़दूरीके आठ घंटे और रियासती भूमिके अपहरणके क्रान्तिकारी बोल्शेविक नारे लगाकर ये हड़तालें की गयीं। इन मुख्य नारोंका लक्ष्य न केवल मज़दूरोंको ही सामूहिक रूपसे संगठित करना था वरन् निरंकुश राज्य-सत्तापर क्रान्तिकारी धावा करनेके लिये किसानों और सैनिकोंको भी एक सूत्रमें बाँधना था।

"क्रान्तिकारी उठान" नामके एक लेखमें लेनिनने लिखा था,—

> "पूरे रूसके मज़दूरोंकी मई दिवसकी भारी हड़ताल और उसके साथ सड़कोंपर जुलूस, क्रांतिकारी घोषणापत्र, और मज़दूरोंकी सभाओंमें क्रान्तिकारी व्याख्यान,—इन सब बातोंसे स्पष्ट सिद्ध होता है कि रूसमें यह क्रान्तिके नये उठानकी अवस्था है।" (**लेनिन ग्रंथावली—रूसी सं., खं. १५, पृ. ५२२**)

मज़दूरोंके क्रान्तिकारी जोशसे शंकित होकर विसर्जनवादी हड़ताल-आन्दोलनके आड़े आगये। उन्होंने कहा कि "हड़तालोंकी बीमारी" फैल गयी है। विसर्जनवादी

और उनका सहयोगी त्रात्स्की चाहते थे कि मजदूरोंके क्रान्तिकारी संघर्षके वदले "अर्जियोंकी मुहीम" शुरू की जाय। उन्होंने मजदूरोंसे एक प्रार्थना-पत्रपर, एक क़ागजके पर्चेपर, दस्तख़त करनेको कहा। इस पर्चेमें "हक़ों" की (सभा, हड़ताल आदि परसे प्रतिवन्ध हटा देनेकी) माँग की गयी थी। इस अर्जीको राज-दूमाके पास भेजना था। लाखों मजदूर वोल्शेविकोंके क्रान्तिकारी नारे लगा रहे थे, लेकिन विसर्जनवादी केवल तेरह सौ दस्तखत इकठ्ठा कर सके।

मजदूर वोल्शेविकोंके वताये हुए रास्तेपर चल रहे थे।

उस समय देशकी आर्थिक परिस्थिति इस तरहकी थी।

औद्योगिक गतिरोधके वाद १९१० में ही कारवारमें नया जीवन आ गया था। मुख्य उद्योग-धन्धोंमें उत्पादन वढ़ गया था। १९१० में १८,६०,००,००० 'पूड' (१ पूड लगभग १८ सेरके वरावर—सं०) कच्चा लोहा तैयार हुआ था; १९१२ में २५,६०,००,००० 'पूड' और १९१३ में उसकी तादाद २८,३०,००,००० तक पहुँच गयी।

कोयलेकी पैदावार १९१० में १,५२,२०,००,००० पूड थी, १९१३ में वढ़कर वह २,२१,४०,००,००० पूड हो गयी।

पूँजीवादी उद्योग-धन्धोंके प्रसारके साथ सर्वहारा वर्गमें भी शीघ्र वृद्धि हुई। औद्योगिक विकासकी एक प्रमुख विशेषता यह थी कि उत्पादन पहलेसे भी ज्यादा वड़े-वड़े कारख़ानोंमें केन्द्रित हो गया। १९०१ में जिन कारख़ानोंमें ५०० या इससे ऊपर मजदूर काम करते थे, उन सव कारख़ानोंके मजदूर कुल रूसी मजदूरोंके अनुपातमें ४६.७ प्रति सैकड़ा थे। १९१० में यह अनुपात वढ़कर ५४ प्रतिशत होगया अर्थात् कुल मजदूरोंम आधेसे ऊपर इन वड़े-वड़े कारख़ानोंमें काम करने लगे थे। उद्योग-धंधोंका वड़े कारख़ानोंमें इस सीमातक केन्द्रित होना अभूतपूर्व था। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका जैसे देशमें भी—जहाँ इतना औद्योगिक विकास हो चुका था—उस समय कुल मजदूरोंका एक-तिहाई भाग ही वड़े कारख़ानोंमें काम करता था।

एक तो सर्वहारा वर्गकी वृद्धि, फिर उसका वड़े कारख़ानोंमें केन्द्रित होना, और इसके साथ वोल्शेविक पार्टी जैसी क्रान्तिकारी पार्टीका होना—इन कारणोंसे रूसी मजदूर-वर्ग देशके राजनीतिक जीवनमें सवसे वड़ी शक्ति वनता जा रहा था। कारख़ानोंमें मजदूरोंका शोषण करनेके जंगली तरीक़ोंके कारण और उसके साथ जारके टुकड़खोरोंके पुलिस-राजके कारण जो भी हड़ताल होती, उसपर राजनीतिका रंग चढ़ जाता। राजनीतिक और आर्थिक लड़ाइके एक हो जानेसे आम हड़तालोंकी क्रान्तिकारी शक्ति अपूर्व हो गयी थी।

क्रान्तिकारी मजदूर-आन्दोलनके आगे-आगे सेंट-पीटर्सवर्गका वीर सर्वहारा वर्ग था। सेंट-पीटर्सवर्गके पीछे वाल्टिक प्रान्त, मॉस्को नगर तथा प्रान्त, वोल्गा प्रदेश और दक्षिण रूस थे। १९१३ में आन्दोलन राज्यके पच्छिमी भाग पोलैण्ड और कॉकेशस तक फैल गया। १९१२ में हड़तालोंमें भाग लेने वाले मजदूरोंकी संख्या सरकारी हिसावसे

७,२५,००० और पूरे आँकड़ोंके अनुसार दस लाखसे उपर थी। १९१३ में हड़तालोंमें भाग लेनेवाले मजदूरोंकी संख्या ८,६१,००० सरकारी हिसावसे, और १२,७२,००० पूरे आँकड़ोंके अनुसार थी। १९१४ के पूर्वार्द्धमें ही हड़तालियोंकी संख्या १५ लाखके लगभग पहुँच चुकी थी।

इस प्रकार १९१२–१४ के क्रान्तिकारी उठानने, हड़तालोंकी लहरने देशमें वैसी ही परिस्थिति उत्पन्न कर दी जैसी १९०५ की क्रान्तिके पूर्व थी।

मजदूरोंकी क्रान्तिकारी आम हड़तालें **सारी जनता**के लिये महत्वपूर्ण थीं। उनका लक्ष्य निरंकुश राज्यसत्ताका विरोध था और इसलिये उन्हें बहुसंख्यक मेहनतकश जनताकी सहानुभूति प्राप्त हुई। मिल-मालिकोंने हड़तालोंका जवाब मिलोंमें ताला बन्द करके दिया। १९१३ में मॉस्को प्रान्तके पूँजीपतियोंने सूती कारखानोंके ५०,००० मजदूरोंको वेकार बना दिया। मार्च १९१४ में सेंट-पीटर्सबर्गमें एक दिनमें ही ७०,००० मजदूर बर्खास्त कर दिये गये। दूसरे उद्योग-धन्धों और कारखानोंके मजदूरोंने सामूहिक चंदा करके और कभी-कभी हमदर्दीकी हड़तालें करके हड़ताली मजदूरोंकी और ताला पड़ी हुई मिलोंके वेकारोंकी सहायता की।

इस चढ़ते हुए मजदूर-आन्दोलनसे और आम हड़तालोंसे किसानोंमें भी हलचल पैदा हुई और वे लड़ाईके मैदानमें उतर आये। वे फिर जमींदारोंसे विद्रोह करने लगे। धनी किसानोंके खेतोंमें और रियासती जमीनमें वे उत्पात करने लगे। १९१०–१४ में १३,००० बार किसानोंका असन्तोष फूट–फूट पड़ा था।

सैनिकोंमें भी क्रांतिकारी विद्रोह हुआ। १९१२ में तुर्किस्तानमें सैनिकोंने सशस्त्र विद्रोह कर दिया। बाल्टिक समुद्रके बेड़े और सेबास्तोपोलमें विद्रोहकी आग सुलग रही थी।

बोल्शेविक पार्टीके नेतृत्वमें क्रान्तिकारी हड़तालोंके आन्दोलनसे और प्रदर्शनोंसे यह सिद्ध हो गया कि मजदूर अपनी आंशिक माँगोंके लिये या कुछ "सुधारों" के लिये नहीं लड़ रहे वरन् वे जारशाहीसे जनताकी मुक्तिके लिये लड़ रहे हैं। देश एक नयी क्रान्तिकी ओर अग्रसर हो रहा था।

रूसके अधिक निकट रहनेके लिये १९१२ की ग्रीष्मऋतुमें लेनिन पैरिससे गैलीशिया (पहलेकी आस्ट्रिया) चले आये। यहाँ उन्होंने केन्द्रीय समितिके सदस्यों और पार्टीके मुख्य कार्यकर्ताओंकी दो कान्फ्रेन्सोंका सभापतित्व किया। इनमेंसे एक १९१२ के अन्तमें क्रैकाउमें हुई और दूसरी १९१३ की शरदऋतुमें उस नगरके पास पोरोनीनो नामके एक छोटेसे कस्बेमें हुई। मजदूर-आन्दोलनके महत्वपूर्ण प्रश्नोंपर इन कान्फ्रेन्सोंने निर्णय किये। क्रान्तिकारी आन्दोलनका उठान, हड़तालोंके सम्बन्धमें पार्टीका कर्तव्य, गैर-क़ानूनी संगठनोंको और दृढ़ करना, दूमामें सामाजिक-जनवादी गुट, पार्टी-प्रकाशन, मजदूरोंके बीमा करानेका आन्दोलन,—इन्हीं प्रश्नोंपर कान्फ्रेन्सोंमें विचार किया गया।

२. बोल्शेविक पत्र प्रावदा—चौथी राजदूमामें बोल्शेविक गुट

अपने संगठनोंको दृढ़ करनेके लिये और जनतामें अपना प्रभाव विस्तार करनेके लिये बोल्शेविक पार्टीके हाथमें एक समर्थ साधन सेंट-पीटर्सबर्गमें प्रकाशित दैनिक बोल्शेविक पत्र **प्रावदा (सत्य)** था। स्तालिन, ओलमिन्स्की और पोलेतायेफ़की पहलक़दमीसे लेनिनके निर्देशानुसार इसका सूत्रपात हुआ। **प्रावदा** आम मजदूर जनताका पत्र था और क्रान्तिकारी आन्दोलनके नये उठानके साथ ही उसका जन्म हुआ था। इसका पहला अंक २२ अप्रैल (नयी शैली **५ मई**) १९१२ को प्रकाशित हुआ था। यह दिन वास्तवमें मज़दूरोंके उत्सव मनानेके योग्य था। **प्रावदा**-प्रकाशनके सम्मानार्थ यह निश्चय किया गया कि ५ मईको मजदूरोंका प्रकाशन-दिवस मनाया जाय।

प्रावदाके प्रकाशनके पूर्व ही आगे बढ़े हुए मजदूरोंके लिये बोल्शेविक साप्ताहिक **स्वेज़्दा** निकलता था। लीना-प्रकरणमें **स्वेज़्दा**की भूमिका महत्वपूर्ण रही। इसमें लेनिन और स्तालिनके कुछ तेज़ राजनीतिक लेख प्रकाशित हुए जिनसे लड़ाईके लिये मज़दूर इकठ्ठे किये जा सके। लेकिन क्रान्तिकारी ज्वारके उठानके समय एक साप्ताहिक पत्रसे बोल्शेविक पार्टीकी आवश्यकता पूरी न होती थी। मजदूरोंके विशाल जन-समूह तक पहुँचनेके लिये एक आम राजनीतिक पत्रकी आवश्यकता थी। **प्रावदा** ऐसा ही पत्र था।

इस समय **प्रावदा**ने जो कार्य किया वह अत्यंत महत्वपूर्ण था। आम मज़दूरोंमें इसने बोल्शेविज़्मके समर्थक बना दिये। एक ओर पुलिसका लगातार जुल्म और जुर्माना था; दूसरी ओर सेंसर (निषेधक) जिन लेखों या पत्रोंको ना पसन्द करता था, उनके छापने पर उन अंकोंको ज़ब्त कर लेता था। इसलिये हजारों जाग्रत मज़दूरोंके बलपर ही **प्रावदा** जी सकता था। मजदूरोंसे रकमें इकट्ठा करनेसे ही **प्रावदा** जुर्माने दे सकता था। ऐसा भी होता था कि ज़ब्त अंकोंकी काफ़ी प्रतियाँ पाठकों तक पहुँच जाती थीं क्योंकि कुछ अधिक तत्पर मजदूर रातमें ही छापेखानेमें आकर पत्रके बण्डल उठा ले जाते थे।

ढाई सालमें ज़ार-सरकारने **प्रावदा**को आठ बार बन्द किया लेकिन हर बार मजदूरोंकी सहायतासे वह किसी नये किन्तु मिलते-जुलते नामसे फिर निकल आया। ये नाम इस तरहके होते थे,—**ज़ा प्रावदा (सत्यके लिये), पुत प्राव्दी (सत्य मार्ग), त्रुदोवाया प्रावदा (श्रमिक सत्य)**।

प्रावदाकी औसतन ४०,००० प्रतियाँ हर रोज बाँटी जाती थीं। लेकिन मेन्शेविकोंके दैनिक **लुच (किरण)** की खपत १५,००० या १६,००० से अधिक न थी।

मजदूर **प्रावदा**को अपना ही पत्र समझते थे; उन्हें उसमें विश्वास था और वे उसकी बातें मानते थे। हर प्रतिके पढ़नेवाले बीसों मजदूर होते थे। हाथों-हाथ घूमकर **प्रावदा**ने उनकी वर्ग-चेतनाका निर्माण किया, उन्हें शिक्षा दी और युद्धके लिये उन्हें जाग्रत किया।

प्रावदा किन विषयोंपर लिखता था ?

हर अंकमें मजदूरोंके दर्जनों पत्र छपते थे जिनमें वे अपने जीवन और बर्बर शोषणका तथा पूँजिपतियों, उनके मैनेजरों और फ़ोरमैनोंसे जो जुल्म और बेइज्जती उन्हें सहनी पड़ती थी, उसका वर्णन करते थे। इन पत्रोंमें पूँजीवादी परिस्थितियोंकी तीखी और प्रभावपूर्ण अलोचना होती थी। **प्रावदा**में बहुधा उन बेकार और भूखे मजदूरोंकी कथाएँ प्रकाशित होती थीं जो मजदूरीकी आशा छोड़कर आत्महत्या कर डालते थे।

विभिन्न उद्योग-धन्धों और कारखानोंके मजदूरोंकी आवश्यकताओं और माँगोंके बारेमें **प्रावदा**में लेख प्रकाशित होते थे। उससे पाठक यह भी जान पाते थे कि मजदूर कैसे अपनी माँगोंके लिये लड़ रहे हैं। प्रायः हर अंकमें विभिन्न कारखानोंमें होनेवाली हड़तालों के समाचार रहते थे। जब कोई बड़ी हड़ताल चलती होती थी, तो हड़ताली मज़दूरोंकी सहायताके लिये **प्रावदा** दूसरे उद्योग-धन्धों और कारखानोंसे अर्थ-संग्रह करनेमें सहायता देता था। उन दिनों जब अधिकांश मजदूरोंको दिनमें ७०–८० कोपेकसे ज्यादा न मिलता था, तब वे कभी–कभी दस–दस हजार रूबलकी भारी रक़में इकट्ठा कर लेते थे। इससे मज़दूरोंमें भाईचारेकी भावना दृढ़ हुई और वे समझने लगे कि सब मजदूरोंके हित एक ही धागेसे बँधे हुए हैं।

प्रावदामें अपने अभिनन्दन, प्रतिवाद तथा पत्र छपाकर मजदूर हर राजनीतिक घटना और प्रत्येक विजय और पराजयके प्रति अपने भाव व्यक्त करते थे। **प्रावदा**में सुसंगत बोल्शेविक दृष्टिकोणसे मज़दूर-आन्दोलनके कर्तव्योंकी विवेचना होती थी। वैध रूपसे प्रकाशित होनेवाला कोई भी पत्र ज़ारशाहीके पतनके लिये खुली आवाज़ न उठा सकता था। उसे इशारोंसे काम लेना पड़ता था जिन्हें सचेत मजदूर अच्छी तरह समझ जाते थे और फिर उन्हें जन–साधारण को समझाते थे। उदाहरणके लिये जब **प्रावदा**ने "पाँचवें वर्षकी पूरी–पूरी माँगों" के बारेमें लिखा, तो मजदूर समझ गये कि इसका तात्पर्य बोल्शेविकोंके १९०५ वाले क्रान्तिकारी नारोंसे है,—अर्थात ज़ारशाहीका ध्वंस, जनवादी प्रजातन्त्र, रियासती भूमिका अपहरण और मज़दूरीके आठ घंटे।

चौथी दूमाके चुनावके पहले **प्रावदा**ने अग्रसर मजदूरोंको संगठित किया। उदारपंथी पूँजीपतियोंसे जो समझौता करनेकी बात कह रहे थे, जो स्तोलिपिनकी "मजदूर–पार्टी" की वकालत कर रहे थे उनकी, अर्थात् मेन्शेविकोंकी, विश्वासघातक नीतिका **प्रावदा**ने भंडाफोड़ कर दिया। उसने मज़दूरोंसे कहा कि जो "पाँचवें वर्षकी पूरी–पूरी माँगोंका समर्थन करें" उन्हींको अर्थात् बोल्शेविकोंको ही वोट देना चाहिये। उस समय चुनाव परोक्ष रूपमें होता था जिसके लिये कई मंजिलें तै करनी पड़ती थीं। पहले तो मज़दूर अपनी सभाओंमें डेलीगेट चुनते थे। फिर ये डेलीगेट निर्वाचकों (एलेक्टरों) को चुनते थे। तब ये निर्वाचक दूमाके लिये मजदूर-प्रतिनिधिके चुनावमें वोट देते थे। मज़दूरोंके चुनावके दिन **प्रावदा**ने बोल्शेविक उम्मीदवारोंकी एक सूची प्रकाशित की और मजदूरोंसे उन्हीं उम्मीदवारोंको वोट देनेको कहा। यह सूची पहले न

प्रकाशित हो सकती थी क्योंकि इससे जिनका नाम सूचीमें होता, उनके पकड़े जानेका अंदेशा था।

प्रावदाने सर्वहारा वर्गके सामूहिक कार्योंको संगठित करनेमें सहायता दी। १९१४ के वसन्तमें सेंट-पीटर्सवर्गमें भारी तालेबन्दी हुई। उस समय आम हड़ताल करना अहितकर होता। इसलिये **प्रावदा**ने कारखानोंमें बड़ी-बड़ी सभाएँ करने और सड़कोंपर जुलूस निकालकर लड़ाईका दूसरा रूप अपनानेके लिये मजदूरोंसे कहा। पत्रमें ये सब बातें साफ़-साफ़ न लिखी जा सकती थीं। लेकिन जब सचेत मजदूरोंने लेनिनका लेख पढ़ा तो वे **प्रावदा**की बात समझ गये। लेनिनके लेखका बहुत सीधा-सा सिरनामा था—"**मज़दूर-आन्दोलनके रूप**" और उसमें लिखा था कि उस समय हड़तालोंके बदले मजदूर-आन्दोलनके और ऊँचे रूपको अपनाना चाहिये। इसका यही मतलब था कि सभाएँ करो और जुलूस निकालो।

इस प्रकार **प्रावदा** द्वारा बोल्शेविकोंकी अवैध क्रान्तिकारी कार्यवाही आम मजदूरोंके संगठन और आन्दोलनके वैध रूपोंसे मिला दी गयी थी।

प्रावदामें मजदूरोंके जीवन और उनकी हड़तालों और जुलूसोंके बारेमें ही लेख प्रकाशित न होते थे वरन् उसमें वे लेख भी बराबर छपते थे जिनमें किसानोंके जीवन, दुर्भिक्षकी पीड़ा और सामन्ती जमींदारों द्वारा उनके शोषणकी कथा रहती थी। **प्रावदा**ने बताया कि किस तरह स्तोलीपिनके "सुधारों" के फलस्वरूप धनी किसानों (कुलकों) ने साधारण किसानोंकी अच्छी-अच्छी भूमि हड़प ली थी। **प्रावदा**ने गावोंमें चारों ओर फैले हुए घोर असन्तोषकी ओर सचेत मजदूरोंका ध्यान आकर्षित किया। उसने सर्वहारा वर्गको सिखाया कि १९०५ की क्रान्तिके उद्देश्य सिद्ध न हुए थे और एक नयी क्रान्ति फिर होने वाली थी। उसने सिखाया कि इस दूसरी क्रान्तिमें सर्वहारा वर्गको जनताके वास्तविक नेता और पथदर्शकका काम करना चाहिये। इस क्रान्तिमें उसे क्रान्तिकारी किसान-वर्ग जैसा जबर्दस्त साथी मिलेगा।

इधर मेन्शेविक इस बातकी कोशिश करते रहे कि सर्वहारा वर्ग क्रान्तिका विचार छोड़ दे, वह जनताकी बात न सोचे, किसानोंकी भुखमरीकी ओर ध्यान न दे, यमदूत सभाओं वाले सामंती जमींदारोंकी निन्दा न करे और केवल "सभाएँ करनेकी स्वतंत्रता" के लिये लड़े। इस "स्वतंत्रता" के लिये वह जार-सरकारके आगे "अर्जियाँ" पेश करे। बोल्शेविकोंने मजदूरोंको समझाया कि क्रान्तिके विसर्जनकी इस नीतिका प्रचार, किसानोंके सहयोगको छोड़ देनेकी नीतिका प्रचार, पूँजीपतियोंके हितचिंतनसे किया जा रहा है। मजदूर अगर किसानोंको अपना साथी बना लेंगे तो वे अवश्य जारशाहीका तख्ता उलट देंगे। उन्होंने समझाया कि मेन्शेविकों जैसे दुष्ट पथदर्शकोंको क्रान्तिका शत्रु समझकर निकाल बाहर करना चाहिये।

"किसान-जीवन" के स्तम्भमें **प्रावदा** क्या लिखता था ?

उदाहरणके लिये १९१३ सालके बारेमें प्रकाशित कुछ पत्र लेते हैं।

समारासे भेजा हुआ "किसान-जीवनका नमूना" नामसे एक पत्र छपा था जिसमें लिखा था कि बुगुल्मा जिलेके नोवोखाखुलात गाँवके ४५ किसानोंपर अभियोग लगाया गया था कि पंचायतसे अलग होने वाले किसानोंके लिये पंचायती भूमिकी पैमाइश करने वाले पटवारीके काममें उन्होंने बाधा पहुँचानेका प्रयत्न किया है। इनमेंसे अधिकांशको लंबी-लंबी सजाएँ हो गयीं।

प्स्कौफ़ प्रान्तके एक संक्षिप्त पत्रमें लिखा था कि "(ज़ावल्ये स्टेशनके पास) प्सित्सा गाँवके किसानोंने देहाती पुलिसका हथियारबंद होकर मुक़ाबला किया। कई आदमी घायल हुए। भूमि-संबंधी झगड़ेके कारण यह मुठभेड़ हुई थी। प्सित्सामें देहाती पुलिस भेज दी गयी है और वाइस-गवर्नर (उप-शासक) तथा सरकारी वकील गाँवकी ओर चल दिये हैं।"

ऊफ़ा प्रान्तसे भेजे हुए एक पत्रमें लिखा था कि किसानोंके तमाम हिस्से बिके जा रहे हैं और अकालके कारण तथा पंचायतें छोड़नेकी अनुमति देने वाले क़ानूनके कारण अधिकाधिक किसानोंके हाथसे उनकी ज़मीनें निकली जा रही हैं। उदाहरणके लिये बोरीसोव्का गांवमें २७ किसान-परिवार हैं जिनके पास कुल मिलाकर खेतीकी ज़मीन ५४३ देसिआतिन है। अकालमें पांच किसानोंने एकदमसे ३१ देसिआतिन ज़मीन २५ से ३३ रूबल प्रति देसिआतिनके हिसाबसे बेच डाली, यद्यपि ज़मीनका मूल्य इससे तिगुना या चौगुना है। इसी गाँवमें सात किसानोंने १७७ देसिआतिन खेतीकी ज़मीन १८ से २० रूबल हर देसियातिनके हिसाबसे ६ सालके लिये गिरवी (मकफ़ूल) रख दी है। ब्याज की दर १२ फ़ी सैकड़े सालाना है। अगर हम किसानोंकी ग़रीबी और ब्याजकी ऊंची दरपर ध्यान दें, तो सहज ही अनुमान कर सकते हैं कि १७७ देसिआतिन ज़मीनका आधा हिस्सा ज़रूर महाजनके पल्ले पड़ जायगा क्योंकि इसकी संभावना कम है कि आधे कर्ज़दार भी छः सालमें इतनी भारी रक़म अदा कर पायेंगे।

"रूसमें बड़े ज़मींदारों और छोटे किसानोंकी भू-सम्पत्ति" नामके **प्रावदा**में प्रकाशित एक लेखमें लेनिनने बड़ी खूबीसे किसानों और मज़दूरोंको समझाया था कि ज़ाँगर-चोर ज़मींदारोंके हाथमें ज़मीनकी कितनी बड़ी जायदाद है। तीस हज़ार बड़े ज़मींदारों के ही बीचमें ७,००,००,००० देसिआतिन ज़मीन थी। इसीके बराबर ज़मीन एक करोड़ किसान-परिवारोंमें बँटी हुई थी। बड़े ज़मींदारोंमेंसे हरेकके पास औसतन २,३०० देसिआतिन भूमि थी जब कि धनी-किसानों समेत किसान-परिवारोंमें से हरेकके पास पास ७ देसिआतिन ज़मीन ही पड़ती थी। इनके सिवा ५० लाख छोटे किसान-परिवारों के पास अर्थात् देशके आधे किसानोंके पास एक या दो देसिआतिनसे ज़्यादा भूमि न थी। इन आँकड़ोंसे स्पष्ट था कि किसानोंकी ग़रीबीका और बार-बार दुर्भिक्ष पड़नेका मूल कारण रियासती ज़मीनें थीं, किन्तु मज़दूरोंके नेतृत्वमें होनेवाली क्रान्तिके बिना किसान दास-व्यवस्थाके इन अवशेषोंसे छुटकारा नहीं पा सकते थे।

देहातसे सम्बन्ध रखनेवाले मज़दूरोंके द्वारा **प्रावदा** गाँवोंमें भी पहुँच गया और

राजनीतिक दृष्टिसे अग्रसर किसानोंको उसने क्रान्तिकारी संघर्षके लिये सचेत किया।

जिस समय **प्रावदा**का सूत्रपात हुआ था, उस समय गैर-क़ानूनी सामाजिक-जनवादी संगठन पूरी तरहसे बोल्शेविकोंके निर्देशसे काम करते थे। कानूनी संगठनोंमें जैसे दूमाके गुटमें, पार्टी-प्रकाशनोंमें, रोगी-सहायक समितियोंमें, ट्रेड यूनियनोंमें मेन्शेविक अभी कब्ज़ेसे न काटे गये थे। मज़दूरोंकी विद्यमान वैध संस्थाओंसे विसर्जनवादियोंको निकाल बाहर करनेके लिये बोल्शेविकोंको जमकर लड़ना पड़ा। **प्रावदा**के कारण इस लड़ाईमें उनकी जीत हुई।

पार्टी-निर्माणके सिद्धान्तके लिये, **आम** मज़दूरोंकी एक क्रान्तिकारी पार्टी बनानेके लिये जो संघर्ष हुआ, उसका **केन्द्र प्रावदा** था। उसने वैध संस्थाओंको बोल्शेविक पार्टीके अवैध केन्द्रोंके चारों ओर एकत्र किया और एक निश्चित ध्येय—क्रान्तिकी तैयारी—के लिये उसने मज़दूर आन्दोलनका संचालन किया।

प्रावदाके मज़दूर-संवाददाताओंकी एक बहुत बड़ी संख्या थी। एक सालमें ही उसमें ११ हज़ारसे ऊपर मज़दूरोंके पत्र छपे थे। लेकिन **प्रावदा** केवल पत्रों द्वारा मज़दूरोंसे अपना संपर्क न बनाये रखता था। कुछ मज़दूर रोज़ ही अपने कारखानोंसे **प्रावदा**के दफ़्तरमें जाते थे। पार्टीके अधिकांश संगठनात्मक कार्यका केन्द्र प्रावदाका संपादकीय दफ़्तर रहता था। यहींपर पार्टी-केन्द्रोंके प्रतिनिधियोंकी बैठकोंका प्रबन्ध किया जाता था; मिलों और कारखानोंमें पार्टीके कामकी रिपोर्टें यहीं आती थीं; यहींसे पार्टीकी केन्द्रीय समिति और सेंट-पीटर्सबर्ग कमिटीके निर्देश बाहर भेजे जाते थे।

मज़दूरोंकी एक आम क्रान्तिकारी पार्टी बनानेके लिये विसर्जनवादियोंसे ढाई सालके अनवरत संग्रामका फल यह निकला कि १९१४ की ग्रीष्म ऋतु तक रूसके राजनीतिक दृष्टिसे क्रियाशील मज़दूरोंमें **अस्सी प्रतिशत** प्रावदाकी कार्यनीति और बोल्शेविक पार्टीके पक्षमें हो गये। उदाहरणके लिये इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह था कि १९१४ में कुल मिलाकर जिन ७,००० मज़दूर-गुटोंने श्रमिक-प्रकाशनके लिये धन एकत्र किया, उनमेंसे ५,६०० गुटोंने बोल्शेविक-प्रकाशनके लिये एकत्र किया और केवल १,४०० गुटोंने मेन्शेविक प्रकाशनके लिये। लेकिन उदारपंथी पूँजीपतियों और पूँजीवादी बुद्धिजीवियोंमें मेन्शेविकोंके बहुतसे "अमीर दोस्त" थे जिन्होंने मेन्शेविक पत्रको चलानेके लिये जितना धन चाहिये था, उसका आधा खुद ही दे दिया था।

बोल्शेविकोंको उस समय **प्रावदा-वादी** कहा जाता था। **प्रावदा**ने क्रान्तिकारी मज़दूरोंकी एक पूरी पीढ़ीको तैयार कर दिया था जिसने आगे चलकर अक्तूबरकी समाजवादी क्रान्ति की। हज़ारों-लाखों मज़दूर **प्रावदा**के समर्थक थे। क्रान्तिकारी आन्दोलनके उठानके समय (१९१२-१४ में) एक सार्वजनीन बोल्शेविक पार्टीकी दृढ़ नींव डाल दी गयी जिसे दूसरे साम्राज्यवादी युद्धमें ज़ारका घोर दमन भी हिला न पाया।

> "१९१७ में बोल्शेविज़्मकी जो विजय हुई, उसका सूत्रपात १९१२ के **प्रावदा**से हुआ था।" (**स्तालिन**)

पार्टीकी एक दूसरी केन्द्रीय संस्था चौथी राज-दूमाका बोल्शेविक गुट था।

१९१२ में सरकारने चौथी दूमाके निर्वाचनकी घोषणा की। पार्टीकी दृष्टिमें इस चुनावमें भाग लेना अत्यंत महत्वपूर्ण था। बोल्शेविक पार्टीके क्रान्तिकारी कार्योंके आधार-स्तम्भ—**प्रावदा** और दूमाका सामाजिक-जनवादी गुट—ये दो ही वैध संस्थाएँ थीं जो सारे देशमें काम कर सकती थीं।

बोल्शेविक पार्टीने अपने नारे लगाकर स्वतंत्र रूपसे दूमाका चुनाव लड़ा। एक ओर उसने सरकारी पार्टियोंपर आक्रमण किया तो दूसरी ओर उदारपंथी पूँजीवादियों (वैधानिक-जनवादियों) को भी नहीं छोड़ा। चुनावमें बोल्शेविकोंने जनवादी प्रजातन्त्र, मजदूरीके आठ घंटों और रियासती ज़मीनको ज़ब्त कर लेनेके नारे लगाये।

चौथी दूमाका चुनाव १९१२ की शरद ऋतुमें हुआ। अक्तूबरके आरंभमें सेंट-पीटर्सबर्ग के चुनावसे असन्तुष्ट होकर सरकारने कई कारखानोंके मज़दूरोंके निर्वाचन-अधिकार पर हमला करनेका विचार किया। इसके उत्तरमें कॉ. स्तालिनके प्रस्तावपर हमारी पार्टीकी सेंट-पीटर्सबर्गकी कमिटीने बड़े कारखानोंके मजदूरोंसे एक दिनकी हड़ताल का ऐलान कर देनेको कहा। सरकार बड़ी मुश्किलमें पड़ी और उसे झुकना पड़ा। मजदूरोंने अपनी सभाओंमें जिन्हें वे चाहते थे, उन्हें ही चुना। बहु-संख्यक मज़दूरोंने उस निर्देश-पत्र (मैंडेट, नकज़) के लिये वोट दिये जिसे उनके डेलीगेटों और दूमाके उम्मेदवारके लिये कॉ. स्तालिन ने बनाया था। "श्रमिक-प्रतिनिधियोंके लिये सेंट-पीटर्सबर्गके मजदूरोंका निर्देशपत्र"—इस पर्चेमें १९०५ के अधूरे कार्योंकी ओर प्रतिनिधियोंका ध्यान आकर्षित किया गया था।

उसमें लिखा था,—

> "हमारा विचार है कि रूसमें विशाल जन-आन्दोलन आरम्भ होनेवाले हैं जो शायद १९०५ से अधिक व्यापक होंगे।...१९०५ की भाँति इन आन्दोलनोंमें सबसे आगे रूसी सर्वहारा वर्ग होगा जो रूसी समाजका सबसे अग्रसर वर्ग है। उसका साथ बहुत दिनोंसे कष्ट पानेवाले किसान ही दे सकते हैं क्योंकि रूसकी स्वाधीनताको वे अपने जीवन-मरणका प्रश्न समझते हैं।"

निर्देश-पत्रमें लिखा था कि भविष्यमें जनताको दो मोर्चोंपर लड़ाईकी तैयारी करनी चाहिये,—एक तो जार-सरकारसे, दूसरे उदारपंथी पूँजीवादियोंसे जो जार-सरकारसे समझौता करनेकी फिराक़में हैं।

लेनिनकी दृष्टिमें मज़दूरोंका क्रांतिकारी संघर्षके लिये आह्वान करनेवाला यह निर्देश-पत्र अत्यन्त महत्वपूर्ण था। और मजदूरोंने अपने प्रस्तावोंमें इस आह्वानका स्वागत किया।

चुनावमें बोल्शेविकोंकी जीत हुई और सेंट-पीटर्सबर्गके मज़दूरोंने कॉ. बादायेफ़को दूमाके लिए चुन लिया।

दूमाके चुनावमें मजदूरोंने शेष जनतासे अलग होकर वोट दिये थे (इसे मजदूर

क्यूरिआ अथवा मज़दूर–विभाग कहते थे)। मज़दूर–विभागसे जो नौ उम्मेदवार चुने गये, उनमेंसे ये छः बोल्शेविक पार्टीके मेम्बर थे,—बादायेफ़, पेत्रोव्स्की, मुरानौफ़, सामोइलौफ़, शागौफ़, और मालिनोव्स्की (जो अन्तमें सरकारी दलाल हो गया)। बोल्शेविक प्रतिनिधि उन बड़े औद्योगिक केन्द्रोंसे चुने गये थे जिनमें कमसे कम ८० प्रतिशत मज़दूर केन्द्रित थे। इसके विपरीत कई चुने हुए विसर्जनवादी उम्मेदवारोंने मज़दूर–विभागसे अपने निर्देश–पत्र न पाये थे। इसलिये वास्तवमें वे मज़दूरों द्वारा नहीं चुने गये। इसके फलस्वरूप दूमामें छः बोल्शेविकोंके मुक़ाबलेमें सात विसर्जनवादी थे। पहले तो इन दोनोंने दूमामें एक संयुक्त सामाजिक–जनवादी गुट बनाया। ये विसर्जनवादी बोल्शेविकोंके क्रान्तिकारी कार्यमें हमेशा बाधा पहुँचाते थे। इसलिये अक्तूबर १९१३ में एक भयंकर संग्रामके बाद पार्टीकी केन्द्रिय समितिके निर्देशानुसार बोल्शेविक प्रतिनिधि संयुक्त गुटसे अलग हो गये और उन्होंने अपना स्वतंत्र बोल्शेविक गुट बना लिया।

बोल्शेविक प्रतिनिधि दूमामें क्रान्तिकारी व्याख्यान देते थे जिनमें वे निरंकुश राज्य–सत्ताका पर्दाफ़ाश करते थे और मज़दूरोंके दमन और पूँजीपतियों द्वारा उनके अमानुषिक शोषणके बारेमें सरकारसे प्रश्न पूछते थे।

वे दूमामें कृषि–सम्बन्धी प्रश्नोंपर बोलते थे और किसानोंसे सामन्ती ज़मींदारोंसे लड़नेको कहते थे। वे वैधानिक–जनवादियोंका भी भंडाफोड़ करते थे जो रियासती ज़मीनको ज़ब्त करके उसे किसानोंको देनेका विरोध करते थे।

बोल्शेविकोंने मज़दूरोंके आठ घंटे बाँधनेके लिये दूमामें एक बिल पेश किया। अवश्य, उसे यमदूत सभावालोंने पास नहीं होने दिया लेकिन उसका यह महत्व था कि उससे काफ़ी हलचल पैदा की जा सकी।

दूमाका बोल्शेविक गुट पार्टीकी केन्द्रिय समिति और लेनिनसे बराबर निकट संपर्क बनाये रखता था, और उनसे निर्देश पाता था। जब कॉ. स्तालिन सेंट-पीटर्सबर्गमें रहते थे, तब वे सीधे स्वयं निर्देश देते थे।

बोल्शेविक प्रतिनिधियोंने अपने कार्यको दूमाकी सीमाओंमें ही नहीं रक्खा बँधा। वे दूमाके बाहर भी अत्यन्त क्रियाशील थे। वे मिलों और कारख़ानोंमें जाते थे, देशके मज़दूर-केन्द्रोंका दौरा करते थे, वहाँ पर व्याख्यान देते थे, गुप्त सभाएँ करके उनमें पार्टीके निर्णयोंकी व्याख्या करते थे और पार्टीके नये संगठन बनाते थे। ये प्रतिनिधि बड़े कौशलसे क़ानूनी कार्योंको ग़ैर-क़ानूनी कार्योंसे मिला देते थे।

२. वैध संस्थाओंमें बोल्शेविकोंकी विजय—क्रान्तिकारी आन्दोलनकी बेरोक उठान—साम्राज्यवादी युद्धका पूर्व-काल।

इस समय मजदूरोंका वर्ग-संघर्ष जैसे भी व्यक्त हुआ और उसके जो भी रूप हुए, उन सभीमें बोल्शेविक पार्टीने नेतृत्वका आदर्श उपस्थित किया। उसने अवैध संगठन बनाये, ग़ैर-क़ानूनी पर्चे निकाले और जनतामें गुप्त रूपसे क्रान्तिकारी काम जारी रखा। इसके साथ मज़दूरोंकी विभिन्न वैध संस्थाओंके नेतृत्वको वह क्रमशः अपने हाथमें लेती गयी। पार्टीने ट्रेड यूनियनोंको अपनी ओर करनेकी और जन-गृहोंमें, सान्ध्य विद्यालयोंमें अपना प्रभाव विस्तार करनेकी चेष्टा की। ये वैध संस्थाएँ बहुत दिनोंसे विसर्जनवादियोंका अड्डा बनी हुई थीं। बोल्शेविकोंने इन्हें अपने पार्टीका गढ़ बनानेके लिये जोरदार लड़ाई छेड़ दी। क़ानूनी और ग़ैर-क़ानूनी कामको चतुरतासे मिलाकर बोल्शेविकोंने सेंट-पीटर्सबर्ग और मॉस्को, इन दो राजनगरोंकी ट्रेड यूनियन संस्थाओंमेंसे अधिकांशको अपनी ओर कर लिया। १९१३ में सेंट-पीटर्सबर्गके धातुके मज़दूरोंकी कार्यकारिणीके चुनावमें उनकी विजय विशेष चमत्कारी थी; सभामें जो ३,००० धातुके मज़दूर इकट्ठा हुए थे, उनमेंसे मुश्किलसे १५० ने विसर्जनवादियोंको वोट दिये।

चौथी दूमाके सामाजिक-जनवादी गुट जैसी महत्वपूर्ण वैध संस्थाओंके लिये भी यही कहा जा सकता है। यद्यपि दूमामें मेन्शेविकोंके ७ प्रतिनिधि थे और बोल्शेविकोंके छः ही थे, फिर भी मेन्शेविक प्रतिनिधि मुश्किलसे बीस प्रतिशत मज़दूरोंका प्रतिनिधित्व करते थे क्योंकि वे अधिकतर ग़ैर-मज़दूर जिलोंसे चुने गये थे। इसके विपरीत बोल्शेविक देशके अस्सी प्रतिशत मज़दूरोंका प्रतिनिधित्व करते थे क्योंकि वे देशके मुख्य औद्योगिक केन्द्रों (सेंट-पीटर्सबर्ग, मॉस्को, इवानोवो-वोज़्नेसेन्स्क, कोस्त्रोमा, एकातरीनोस्लाफ़, और खारकौफ़) से चुने गये थे। मज़दूर अपना प्रतिनिधि (बादायेफ़, पेत्रोव्स्की आदि) छः बोल्शेविकोंको समझते थे, न कि सात मेन्शेविकोंको।

बोल्शेविक वैध संस्थाओंको अपनानेमें इसलिये सफल हुए कि ज़ार-सरकारके अमानुषिक दमन और विसर्जनवादियों तथा त्रात्स्की-पंथियोंके गंदे प्रचारके बावजूद वे अपनी ग़ैर-क़ानूनी पार्टीको बनाये रख सके, पार्टीके भीतर दृढ़ अनुशासन क़ायम रख सके, उन्होंने मज़दूर-हितोंका साहसपूर्वक समर्थन किया, वे जनतासे अपना घनिष्ठ संपर्क बनाये रहे और उन्होंने मज़दूर-आंदोलनके दुश्मनोंसे बिना मेल-मुलाहिज़ेके डटकर लड़ाई की।

इस प्रकार वैध संस्थाओंमें, बोल्शेविकोंकी विजय और मेन्शेविकोंकी पराजय व्यापक बन गयी। क्या दूमा द्वारा प्रचार-कार्यमें और क्या मज़दूरोंकी प्रकाशन-व्यवस्था

तथा दूसरी संस्थाओंमें, मेन्शेविकोंको हर जगह पीछे हटना पड़ा। मज़दूर-वर्गमें क्रांतिकारी आन्दोलनकी जड़ मजबूतीसे जम गयी। मजदूर निश्चित रूपसे बोल्शेविकोंके चारों ओर संगठित हुए और मेन्शेविकोंकी उन्होंने जड़ काट दी।

जातीय प्रश्नपर मेन्शेविकोंका दिवालियापन उनकी पराजयका एक और कारण बन गया। रूसी सीमान्त प्रदेशोंके क्रान्तिकारी आन्दोलनको बढ़ानेके लिये जाति-सम्बन्धी स्पष्ट कार्य-क्रम आवश्यक था। लेकिन मेन्शेविकोंके पास बुंदके "सांस्कृतिक स्वराज्य" के सिवा कोई कार्यक्रम न था और इस स्वराज्यसे किसीको भी सन्तोष न था। जातीय प्रश्नपर केवल बोल्शेविकोंके पास एक मार्क्सीय कार्यक्रम था, जिसकी व्याख्या कॉ. स्तालिनने "मार्क्सवाद और जातीय प्रश्न" नामके लेखमें और लेनिनने "जातियोंका आत्म-निर्णयका अधिकार", और "जातीय प्रश्नपर टीका-टिप्पणी" नामके लेखोंमें की थी।

इस तरह मेन्शेविकोंके हारनेपर अगस्त-गुट टूटने लगा तो इसमें कोई आश्चर्य की बात न थी। उसमें बहुरंगी लोग इकट्ठा हुए थे; इसलिये वह बोल्शेविकोंके प्रबल आघातको न सह सका और छिन्न-भिन्न होने लगा। बोल्शेविज़मका विरोध करनेके लिये यह गुट बना था; बोल्शेविकोंके प्रहारसे वह ढेर हो गया। सबसे पहले (बोग्दानौफ़, लूनाचार्स्की आदि) प्रेयोद्-पन्थी उसे छोड़कर अलग हुए; उनके बाद लेटिश लोग चले और उनके पीछे फिर और सब भी बिखर गये।

बोल्शेविकोंसे हारकर विसर्जनवादियोंने सेकेंड इण्टरनेशनलसे सहायताकी प्रार्थना की। सेकेंड इण्टरनेशलने उनकी पुकार सुन भी ली। बोल्शेविकों और विसर्जनवादियोंके बीचमें "मध्यस्थ" बननेके बहाने और "पार्टीमें शान्ति" स्थापित करनेकी आड़में सेकेंड इण्टरनेशनलने बोल्शेविकोंसे कहा कि वे विसर्जनवादियोंकी समझौता करनेकी नीतिकी आलोचना करना छोड़ दें। लेकिन बोल्शेविक अवसरवादी सेकेंड इन्टरनेशनलके इस निर्णयको माननेके लिये तैयार न हुए। मेन्शेविकोंके साथ कोई भी रियासत करनेसे उन्होंने साफ़ इनकार कर दिया।

वैध संस्थाओंमें बोल्शेविकोंकी विजय कोई आकस्मिक घटना न थी, न हो सकती थी। केवल बोल्शेविकोंके पास सही मार्क्सीय सिद्धान्त थे, एक साफ़-सुथरा कार्यक्रम था, और लड़ाईकी आँचमें तपी और निखरी हुई सर्वहारा वर्गकी एक क्रान्तिकारी पार्टी थी। परन्तु केवल इन्हीं कारणोंसे उनकी विजय को आकस्मिक न कहना भूल होगा। वह आकस्मिक इस कारण भी नहीं थी कि वह क्रान्तिके चढ़ते हुए ज्वार को प्रतिबिम्बित करती थी।

मजदूरोंका क्रान्तिकारी आन्दोलन सहज गतिसे बढ़ता गया और एक कस्बे से दूसरे तक और फिर एक इलाक़ेसे दूसरे इलाक़े तक फैलता गया। १९१४ के आरंभमें मजदूरोंकी हड़तालोंका मद्धिम पड़ना तो दूर, उनमें नयी तेजी आगयी। वे दिनपर दिन और सख़्त होने लगीं और ज्यादासे ज्यादा मजदूर उनमें भाग लेने लगे। ९ जनवरीको २,५०,००० मजदूर हड़ताल किये हुए थे जिनमें १,४०,००० अकेले सेंट-पीटर्सबर्गके थे।

पहली मईको हड़ताली मजदूरोंकी संख्या पाँच लाखसे ऊपर थी जिनमें सेंट-पीटर्सबर्गके मजदूरोंकी संख्या २,५०,००० से अधिक थी। इन हड़तालोंमें मजदूरोंने असाधारण दृढ़ताका परिचय दिया। सेंट-पीटर्सबर्गमें ओबूखौफ़के कारखानोंमें एक हड़ताल दो महीने तक चलती रही और लेस्नरके कारखानोंमें दूसरी हड़ताल लगभग तीन महीने तक चलती रही। सेंट-पीटर्सबर्गके कई कारखानोंमें मजदूरोंको सामूहिक रूपसे विषाक्त भोजन देनेके कारण १,१५,००० मजदूरोंने हड़ताल कर दी और उसके साथ प्रदर्शन भी किये। आन्दोलन फैलता गया। (जुलाईके पहले पखवारे समेत) १९१४ के पूर्वार्द्धमें कुल मिलाकर १४,२५,००० मजदूरोंने हड़तालोंमें भाग लिया।

मईमें बाकूके तेलके मज़दूरोंने एक आम हड़ताल कर दी जिसने सारे रूसके मज़दूरोंका ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया। हड़तालका संचालन संगठित रूपसे हुआ। पुलिसने बाकूके मजदूरोंपर निष्ठुरतासे दमन-चक्र चलाया। इस दमनके विरोधमें और बाकूके मज़दूरोंसे अपना भाईचारा दिखानेके लिये मॉस्कोमें हड़ताल हो गयी और वह फिर दूसरे जिलोंमें भी फैल गयी।

३ जुलाईको बाकू-हड़तालके बारेमें सेंट-पीटर्सबर्गके पुतिलौफ़-कारखानोंमें एक सभा हुई। इस सभामें पुलिसने मज़दूरोंपर गोली चलायी। सेंट-पीटर्सबर्गके मज़दूरोंमें एक गुस्सेकी लहर दौड़ गयी। पार्टीकी सेंट-पीटर्सबर्ग कमिटीके आह्वानपर वहाँके ९०,००० मज़दूरोंने हड़ताल करके अपना विरोध प्रदर्शित किया। ७ जुलाईको इनकी संख्या बढ़कर १,३०,००० हो गयी, दूसरे दिन १,५०,००० तथा ११ जुलाईको बढ़ते-बढ़ते वह दो लाख तक पहुँच गयी।

सभी कारखानोंमें असन्तोष फैल गया। सभी जगह सभाएँ की गयीं और जुलूस निकाले गये। मज़दूर राहोंमें मोर्चाबन्दी तक करने लगे। बाकू और लोत्समें मोर्चेबन्दी हुई। कई जगह मजदूरोंपर गोली चलायी गयी। आन्दोलनको दबानेके लिये सरकारने "विपत्तिकाल" के विशेषाधिकारोंका उपयोग किया। राजधानी फ़ौजी छावनी बन गयी। **प्रावदा** बंद कर दिया गया।

लेकिन उसी समय युद्धभूमिमें एक अन्तरराष्ट्रीय महत्वकी नवीन घटना घटी। यह घटना साम्राज्यवादी युद्ध थी जिससे सारा घटनाक्रम ही बदल जानेवाला था। जुलाईकी क्रान्तिकारी घटनाओंके समय ही फ्रांसका राष्ट्रपति प्वाङ्कारे निकट भविष्यमें होनेवाले युद्धके बारेमें जारसे मंत्रणा करने सेंट-पीटर्सबर्ग आया था। उसके कुछ ही दिन बाद जर्मनीने रूसपर युद्धकी घोषणा कर दी। जार-सरकारने युद्धके सुयोगसे बोल्शेविक संस्थाओं और मजदूर-आन्दोलनपर भरपूर वार किया। क्रान्तिकी गतिमें महायुद्धसे बाधा पहुँची। महायुद्धमें जार-सरकारने क्रान्तिसे बचनेके लिये आश्रय खोजा।

सारांश

१९१२-१४ में क्रान्तिके नये उठानके समय बोल्शेविक पार्टी मजदूर आन्दोलनके सिरे पर रही और बोल्शेविक नारे लगाती हुई उसे नयी क्रान्तिकी ओर ले गयी। पार्टीने योग्यतासे क़ानूनी और ग़ैर-क़ानूनी कार्योंका मेल किया; विसर्जनवादियों और उनके साथी त्रात्स्कीपंथियों और बहिष्कारवादियोंके विरोधको तोड़कर पार्टीने वैध आन्दोलनके सभी रूपोंमें अपना नेतृत्व स्थापित किया। इस प्रकार उसने वैध संस्थाओंको अपने क्रान्तिकारी कार्योंका आधार बनाया।

मजदूर-वर्गके शत्रुओं और मजदूर-आन्दोलनमें उनके दलालोंके विरुद्ध संग्राममें पार्टीने अपनी सफ़ें मजबूत कीं, और मजदूरोंसे अपना संपर्क बढ़ाया।

क्रान्तिकारी प्रचारके लिये दूमाका भरपूर उपयोग करके और आम मजदूरोंके लिये एक सुन्दर पत्र **प्रावदा**का प्रकाशन आरंभ करके पार्टीने प्रावदावादी क्रान्तिकारी मजदूरोंकी एक नयी पीढ़ी तैयार की। साम्राज्यवादी युद्धमें ये मजदूर अन्तरराष्ट्रीयता और सर्वहारा-क्रान्तिके झंडेके नीचे अडिग रहे। आगे चलकर अक्तूबर १९१७ की क्रान्तिमें यही मजदूर बोल्शेविक पार्टीकी रीढ़ बने।

साम्राज्यवादी युद्धके आरंभ होनेसे पहले मजदूरवर्गके क्रान्तिकारी कार्योंमें पार्टीने उसका नेतृत्व किया। यह युद्धका प्राथमिक संघर्ष था जिसमें साम्राज्यवादी युद्धसे विघ्न पड़ गया, परन्तु तीन साल बाद वह फिर आरंभ हुआ और जारशाहीके ध्वंस हीसे फिर समाप्त हुआ। बोल्शेविक पार्टीने साम्राज्यवादी युद्धके कठिन युगमें सर्वहारा-अन्तरराष्ट्रीयताका झंडा फहराते हुए पदार्पण किया।

छठवाँ अध्याय

साम्राज्यवादी युद्धके समय बोल्शेविक पार्टी— रूसमें दूसरी क्रांति

(१९१४—मार्च १९१८)

१. साम्राज्यवादी युद्धका आरंभ और उसके कारण

१४ जुलाई (नयी शैली, २७ जुलाई) १९१४ को जार-सरकारने सार्वजनिक सैन्य-संगठनकी आज्ञा निकाली। १९ जुलाई (नयी शैली, १ अगस्त) को जर्मनीने रूसपर युद्धकी घोषणा की।

रूस लड़ाईके मैदानमें उतर आया।

युद्धके वास्तविक आरंभके बहुत पहले ही लेनिनके नेतृत्वमें बोल्शेविकोंने देख लिया था कि युद्ध अनिवार्य है। अन्तरराष्ट्रीय सोशलिस्ट कांग्रेसोंमें लेनिनने इस बातके लिये बराबर प्रस्ताव रखे थे कि युद्ध होनेपर सोशलिस्ट क्या करेंगे इसके लिये एक क्रान्तिकारी नीति निर्धारित हो जाय।

लेनिनने दिखाया था कि युद्ध पूँजीवादका अपरिहार्य अंग है। पूँजीवादी राष्ट्रोंने पहले भी अनेक बार दूसरे देशोंकी भूमि हड़पनेके लिये, उपनिवेशोंपर अधिकार करके उन्हें लूटने-खसोटनेके लिये और अपने लिये नये बाजारोंपर अधिकार करनेके लिये विजय-युद्ध ठाने थे। पूँजीवादी राष्ट्रोंके लिये युद्ध वैसे ही एक स्वाभाविक और उचित परिस्थिति है जैसे मजदूरोंका शोषण।

युद्ध उस समय विशेष रूपसे अनिवार्य हो गया जब १९ वीं शताब्दीके अन्तमें और बीसवींके आरम्भमें पूँजीवादने निश्चित रूपसे अपने विकासकी चरम और अन्तिम अवस्थामें पदार्पण किया। साम्राज्यवादी कालमें पूँजीपतियोंके शक्तिशाली एकाधिकारी संघ और बैंक उन पूँजीवादी राष्ट्रोंके जीवनपर हावी होगये। महाजनी पूँजी इन राष्ट्रोंकी मालिक बन बैठी। इस महाजनी पूँजीके लिये नये बाजार, नये उपनिवेश, पूँजीको बाहर लगानेके लिये नये प्रदेश, और कच्चा माल देने वाले नये देश आवश्यक थे।

लेकिन १९ वीं सदीके अन्त तक सारा भूमंडल पूँजीवादी राष्ट्रोंमें बँट चुका था। फिर, साम्राज्यवादी युगमें पूँजीवादके विकासकी गति एक-सी नहीं होती वरन् वह कभी-कभी एक साथ कई मंजिलें पार कर जाती है। ऐसे कुछ देशोंके उद्योग धंधोंके विकासकी गति धीमी पड़ जाती है जो पहले सबके सिरे पर थे। कुछ दूसरे देश,

जो पहले पिछड़े हुए थे, लंबे डग भरते हुए उनके बराबर आ जाते हैं और आगे भी बढ़ जाते हैं। साम्राज्यवादी राष्ट्रोंकी सैनिक एवं आर्थिक शक्तिमें परिवर्तन अवश्यंभावी हो जाता है जिस कारण एक-दूसरेके मुक़ाबलेमें उनकी शक्ति पहलेकी अपेक्षा घट या बढ़ जाती है, इसलिये संसारका नये सिरेसे बँटवारा करनेके लिये प्रयत्न होने लगते हैं और बँटवारेके इन प्रयत्नोंसे साम्राज्यवादी युद्ध अनिवार्य हो जाता है।

१९१४का युद्ध संसारका बँटवारा करनेके लिये और अपने-अपने व्यापार-क्षेत्रोंकी नयी हदें बाँधनेके लिये था। सभी साम्राज्यवादी राष्ट्र अर्सेसे उसकी तैयारी करते रहे थे। सभी देशोंके साम्राज्यवादी इस युद्धके लिये उत्तरदायी थे।

परंतु विशेष रूप से इस युद्धकी तैयारी एक ओर जर्मनी और आस्ट्रियाने की थी, और दूसरी ओर ब्रिटेन और उसपर निर्भर रूसने की थी। १९०७ में ब्रिटेन, फ्रांस और रूसमें सहयोग सम्बंध स्थापित हुआ था और उनका त्रिगुट बना था। जर्मनी, आस्ट्रिया-हंगरी और इटलीने एक दूसरा साम्राज्यवादी गुट क़ायम किया था परंतु युद्ध छिड़नेपर इटली ने इस गुटको छोड़ दिया था और बादको त्रिगुटमें सम्मिलित हो गया था। बलगेरिया और तुर्की, जर्मनी और आस्ट्रिया-हंगरीके सहायक थे।

जर्मनी ने साम्राज्यवादी युद्धके लिये इस उद्देश्यसे तैयारी की कि ग्रेटब्रिटेन और फ्रान्ससे उपनिवेश ले लें और रूससे पोलैंड और बाल्टिक प्रान्त ले लें। बग़दाद रेलवे बनाकर जर्मनीने निकट पूर्वमें ब्रिटेनके प्रभुत्वके लिये भय उत्पन्न कर दिया। ब्रिटेनको जर्मन जलसेनाकी तैयारीसे भी डर लगा।

ज़ारशाही रूस तुर्कीके बँटवारेकी चेष्टा करने लगा और कुस्तुन्तुनिआ तथा काले सागर और भूमध्य-सागरके बीचमें दर्रे-दतियालके जलडमरूमध्यपर अधिकार करनेके स्वप्न देखने लगा। ज़ार-सरकारकी योजनाओंमें आस्ट्रिया-हंगरीके एक भाग गैलीशिया का अपहरण भी था।

युद्धके पहले जर्मनीका माल धीरे-धीरे ब्रिटेनके मालको दुनियाके बाजारोंसे बाहर ठेले दे रहा था; इसलिये ब्रिटेनने अपने भयंकर प्रतिद्वन्द्वीको युद्ध द्वारा कुचल देनेका विचार किया। इसके सिवा वह तुर्कीसे मेसोपोटामिया और फिलिस्तीन छीन लेना चाहता था और मिस्रमें मजबूतीसे पैर जमाना चाहता था।

फ्रांसके पूंजीपति जर्मनीसे सारे प्रदेश तथा अल्सास-लोरेन छीन लेना चाहते थे। इनमें कोयला और लोहा बहुतायतसे होता था और अल्सास-लोरेनको १८७०-७१ के युद्धमें जर्मनीने फ्रान्ससे ही छीना था।

इस प्रकार दोनों पूंजीवादी गुटोंके परस्पर व्यापक विरोध होनेके कारण यह साम्राज्यवादी युद्ध आरंभ हुआ।

दुनियाका बँटवारा करनेकी इस लूटमारकी लड़ाईका प्रभाव दूसरे साम्राज्यवादी देशोंपर भी पड़ा; फलतः जापान, संयुक्त राष्ट्र अमरीका और कुछ अन्य देश आगे चल कर इस लड़ाईमें शामिल हो गये।

युद्ध संसार-व्यापी महायुद्ध बन गया।

पूंजीपतियोंने युद्धकी तैयारियोंको जनतासे खूब छिपाकर रखा था। जब युद्ध छिड़ गया तो हर साम्राज्यवादी सरकारने यह सिद्ध करनेका प्रयत्न किया कि उसने अपने पड़ोसियों पर हमला नहीं किया, वरन् पड़ोसियोंने ही उसपर हमला किया है। पूँजीपतियोंने जनताको धोखा दिया, युद्धके वास्तविक उद्देश्योंको उससे छिपाया और युद्धके लुटेरेपनको, उसकी साम्राज्यवादी विशेषताको गुप्त रखा। हर साम्राज्यवादी सरकारने गुहार मचायी कि वह आत्मरक्षाके लिये युद्ध कर रही है।

जनताको धोखा देनेमें सेकण्ड इण्टरनेशनलके अवसरवादियोंने पूँजीपतियोंकी सहायता की। सेकण्ड इण्टरनेशनलके सामाजिक-जनवादियोंने बड़ी नीचतासे समाजवाद और सर्वहारावर्गके अन्तरराष्ट्रीय भाईचारेके प्रति विश्वासघात किया। युद्धका विरोध करना तो दूर, उन्होंने लड़नेवाले राष्ट्रोंके पूँजीपतियोंकी इस बातमें सहायता की कि मातृभूमिकी रक्षाके नामपर वहाँके किसानों और मज़दूरोंको एक-दूसरेका गला काटनेके लिये उकसाया जाय।

रूसने साम्राज्यवादी युद्धमें मित्र देशोंकी ओरसे, ग्रेट ब्रिटेन और फ्रान्सकी ओरसे युद्धमें भाग लिया। यह भी कोई आकस्मिक घटना न थी। यह न भूलना चाहिये कि १९१४ के पहले रूसके मुख्य उद्योग-धन्धे विदेशी पूँजीपतियोंके हाथमें, विशेषकर फ्रान्स, ब्रिटेन और बेल्जियमके हाथमें अर्थात् मित्र देशोंके हाथमें थे। रूसके मुख्य धातुके कारखाने फ्रांसके पूँजीपतियोंके हाथमें थे। कुल मिलाकर, धातुके उद्योग-धन्धोंमेंसे लगभग तीन-चौथाई (७२ प्रतिशत) विदेशी पूँजीके सहारे चल रहे थे। यही बात दोन्येत्स प्रदेशमें कोयलेके उद्योग-धन्धोंपर भी लागू होती है। देशमें जितना तेल पैदा होता था, उसका लगभग आधा उन तेलके कुओंसे निकलता था जिनपर ब्रिटेन और फ्रान्सके पूँजीपतियोंका अधिकार था। रूसी उद्योगधन्धोंसे मुनाफ़ेकी एक अच्छी खासी रक़म विदेशी बैंकोंमें, विशेषकर ब्रिटेन और फ्रान्सके बैंकोंमें चली जाती थी। फ्रान्स और ब्रिटेनसे ज़ारने करोड़ों रुपया कर्ज़ ले रखा था, सो अलग। उपरोक्त कारणोंसे ही ज़ारशाही ब्रिटिश और फ्रांसीसी साम्राज्यवादसे बँधी हुई थी और रूस इन देशोंका एक मातहत राज्य, एक अर्द्ध-उपनिवेश बन गया था।

रूसी पूँजीपतियोंने इस उद्देश्यसे युद्धमें भाग लिया कि इससे उनकी हालत सुधर जायगी, उन्हें नये बाजार मिल जायँगे, लड़ाईके ठेकोंसे उन्हें भारी मुनाफ़ा होगा और इसके साथ लड़ाईसे लाभ उठाकर वे क्रान्तिकारी आन्दोलनको दबा सकेंगे।

ज़ारशाही रूस युद्धके लिये तैयार न था। रूसी उद्योग-धंधे अन्य देशोंकी तुलनामें बहुत पिछड़े हुए थे। उद्योग-धंधोंके नाम पर पुरानी मशीनोंसे चलने वाली बाबा आदम के ज़मानेकी मिलें और कारखाने थे। कम्मी-प्रथापर निर्भर ज़मींदारी व्यवस्थाके कारण और तमाम किसानोंके ग़रीब और तबाह होनेसे रूसकी कृषि-व्यवस्था दीर्घ-कालीन युद्धके लिये एक दृढ़ आर्थिक आधार न बन सकती थी।

ज़ारके मुख्य समर्थक सामन्ती जमींदार थे। यमदूत सभावाले ताल्लुकेदार बड़े-बड़े पूंजीपतियोंके साथ सारे देशपर हावी थे। राज-दूमामें उन्हींकी तूती बोलती थी। वे ज़ार-सरकारकी देशी-विदेशी नीति, सभीका दृढ़तासे समर्थन करते थे। रूसके साम्राज्यवादी पूंजीपतियोंकी आशा ज़ारके, निरंकुश राज्य-तंत्रपर लगी हुई थी कि वह अपनी वज्र-मुष्टिसे उनके लिये नये बाज़ार और नये प्रदेश जीत सकेगा और घरमें किसानों और मज़दूरोंके क्रान्तिकारी आन्दोलनको कुचल देगा।

उदारपंथी पूंजीपतियोंकी पार्टी-वैधानिक जनवादी पार्टी-ने विरोधका थोड़ा-सा अभिनय किया परन्तु ज़ार-सरकारकी वैदेशिक नीतिका उसने बिना किसी दुरावके समर्थन किया।

युद्धके आरम्भसे ही निम्न-पूंजीवादी पार्टियोंने, सामाजिक क्रान्तिकारियों और मेन्शेविकोंने सोशलिज़्मके झंडेकी आड़ लेकर पूंजीपतियोंकी इस बातमें मदद की कि वे युद्धके लुटेरेपनको और उसके साम्राज्यवादी लक्षणोंको छिपाकर जनताको धोखा दें। वे इस बातका प्रचार करने लगीं कि "जर्मन खूँख्वारों"से पूंजीपतियोंकी "मातृभूमि" की रक्षा की जाय। उन्होंने "नागरिक शान्ति" की नीतिका समर्थन किया और इस प्रकार उन्होंने लड़ाई चलानेमें रूसी ज़ारकी वैसे ही मदद की जैसे जर्मनीके सामाजिक-जनवादियोंने "रूसी खूँख्वारों"के विरुद्ध जर्मन कैसरकी मदद की।

केवल बोल्शेविक पार्टीने सर्वहारा-अन्तरराष्ट्रीयताके महान् उद्देश्यको नहीं छोड़ा। वह इस मार्क्सवादी निर्णयपर डटी रही कि ज़ारकी निरंकुश राज्य-सत्ताके विरुद्ध, ज़मींदारों और पूंजीपतियोंके विरुद्ध और साम्राज्यवादी लड़ाईके विरुद्ध डटकर संग्राम करना चाहिये। युद्धके आरंभसे ही बोल्शेविकोंका कहना था कि यह लड़ाई देशरक्षाके लिये नहीं वरन् दूसरोंका राज्य हड़पनेके लिये, दूसरी जातियोंको लूटनेके लिये, और ज़मींदारों और पूंजीपतियोंके हितके लिये छेड़ी गयी है और इसलिये मज़दूरोंको इस लड़ाईका डटकर विरोध करना चाहिये।

मज़दूर-वर्गने बोल्शेविकोंका समर्थन किया।

यह ठीक है कि युद्धके आरंभके दिनोंमें बुद्धिजीवियों और धनी किसानोंने जो पूँजीवादी अंध-देशभक्तिका प्रदर्शन किया, उससे कुछ मज़दूर भी चक्करमें आ गये। लेकिन इनमेंसे अधिकतर गुंडाशाही "रूसी जन-संघ" के मेम्बर थे और कुछ सामाजिक क्रान्तिकारियों और मेन्शेविकोंके प्रभावमें थे। मज़दूर-वर्गकी भावना इन लोगोंमें न तो प्रतिबिम्बित हुई थी और न हो सकती थी। युद्धके आरंभ कालमें ज़ार सरकारके इशारेपर पूँजीवादियोंने जो अपनी अंध-देशभक्तिके प्रदर्शन किये, उनमें इन्हीं लोगोंने भाग लिया था।

२. सेकण्ड इण्टरनेशनलकी पार्टियोंका अपनी साम्राज्यवादी सरकारोंसे सहयोग—विभिन्न सामाजिक राष्ट्रवादी-पार्टियोंमें सेकण्ड इण्टरनेशनलका विभाजन।

लेनिनने अनेक बार सेकण्ड इण्टरनेशनलके अवसरवाद और उसके नेताओंकी अस्थिर मतिकी सूचना दी थी। उन्होंने इस बातपर बराबर जोर दिया था कि सेकण्ड इण्टरनेशनलके नेता लड़ाईका विरोध करनेकी बातें भर बनाते हैं परन्तु जब लड़ाई छिड़ेगी तो वे ज़रूर रंग बदलेंगे और साम्राज्यवादी पूँजीपतियोंकी ओर भागकर वे युद्धके समर्थक बन जायँगे। लेनिनकी अग्रसूचना युद्धके आरम्भ कालमें ही फलीभूत हुई।

१९१० में सेकण्ड इण्टरनेशनलकी कोपेनहॉगेन कांग्रेसमें यह निर्णय किया गया था कि व्यवस्थापिका सभाओंमें सोशलिस्ट सदस्य लड़ाईके खर्चके विरुद्ध वोट देंगे। १९१२ के बलकान-युद्धके समय बालमें होनी वाली सेकण्ड इण्टरनेशनलकी विश्व-कांग्रेसने यह घोषित किया था कि पूँजीपतियोंके लाभके लिये एक दूसरेपर गोली चलाना सभी देशोंके मजदूर अपराध समझते हैं। कहनेको उन्होंने यही कहा था; इसीके प्रस्ताव पास किये थे।

लेकिन जब सिरपर तूफान फट पड़ा, जब साम्राज्यवादी लड़ाई छिड़ गयी और इन बातोंपर अमल करनेका समय आया, तो सेकण्ड इण्टरनेशनलके नेताओंने अपनेको दग़ाबाज, सर्वहारा वर्गके प्रति विश्वासघाती और पूँजीपतियोंका गुलाम साबित किया। वे युद्धके समर्थक बन बैठे।

४ अगस्त १९१४ को जर्मन सामाजिक-जनवादियोंने युद्धके खर्चके लिये वोट दिया; उन्होंने साम्राज्यवादी युद्धका समर्थन करनेके लिये हाथ उठाये। इसी तरह फ्रान्स, ग्रेट ब्रिटेन, बेल्जियम और दूसरे देशोंके सोशलिस्टोंने बहुसंख्यक रूपमें युद्धका समर्थन किया।

सेकण्ड इण्टरनेनशल समाप्त हो गया। वास्तवमें वह विभिन्न सामाजिक-राष्ट्रवादी पार्टियोंमें बँट गया जो एक दूसरेसे लड़ने लगीं।

सोशलिस्ट पार्टियोंके नेताओंने मजदूरोंसे दग़ाबाजी की; उनका दृष्टिकोण सामाजिक-राष्ट्रवाद और साम्राज्यवादी पूँजीपतियोंकी रक्षा करनेका हो गया। उन्होंने साम्राज्यवादी सरकारोंकी मदद की कि वे मजदूरोंकी आखोंमें धूल झोंक दें और उन्हें अन्ध देशभक्तिकी घूँटी देते रहें। मातृभूमिकी रक्षाका बहाना करके ये दग़ाबाज जर्मन

मज़दूरोंको फ्रेंच मज़दूरोंके खिलाफ़ और ब्रिटिश और फ्रेंच मजदूरोंको जर्मन मज़दूरोंके खिलाफ़ उकसाने लगे। सेकण्ड इण्टरनेशनलकी बस एक नगण्य अल्पसंख्याने अन्तर-राष्ट्रीयताके दृष्टिकोणको न छोड़ा और इस प्रवाहका विरोध किया। यह सही है कि उन्होंने ऐसा यथेष्ट आत्म-विश्वास और स्पष्टतासे नहीं किया, फिर भी प्रवाहके विरोधमें वे खड़े हुए, इसमें सन्देह नहीं।

केवल बोल्शेविक पार्टीने तुरंत और बिना किसी दुविधाके साम्राज्यवादी युद्धसे डटकर मोर्चा लेनेके लिये झंडा ऊँचा किया। १९१४ की शरदऋतुमें लेनिनने युद्धपर जो निबन्ध लिखे, उनमें उन्होंने दिखाया कि सेकण्ड इण्टरनेशनलका पतन कोई आकस्मिक घटना न थी। सेकण्ड इण्टरनेशनलको उन अवसरवादियोंने तबाह कर दिया था जिनके प्रति क्रान्तिकारी सर्वहारा वर्गके मुख्य प्रतिनिधि बहुत दिनसे अग्र-सूचना देते चले आ रहे थे।

युद्धके पहले ही सेकण्ड इण्टरनेशनलकी पार्टियोंमें अवसरवाद घर कर चुका था। अवसरवादियोंने क्रान्तिकारी संघर्षको छोड़ देनेका खुल्लमखुल्ला प्रचार किया था। "पूँजीवादका समाजवादमें शान्तिपूर्वक संक्रमण होगा,"—वे इस सिद्धान्तका प्रचार करने लगे थे। सेकण्ड इण्टरनेशनल अवसरवादसे मोर्चा न लेना चाहता था; अवसरवादके साथ वह शान्तिसे रहना चाहता था और उसने उसे मजबूतीसे पैर जमा लेने दिया। अवसरवादके प्रति समझौतेकी नीतिका व्यवहार करके सेकण्ड इण्टरनेशनल स्वयं अवसरवादी हो गया।

साम्राज्यवादी पूँजीपतियोंको उपनिवेशोंसे और पिछड़े हुए देशोंको लूटनेसे जो धन मिलता था, उससे कुछ अंश निकालकर उन्होंने कुशल मजदूरोंके ऊपरी स्तरके लोगोंको, मजदूरोंके इस नामचारके अभिजातवर्गको, ऊँची मजदूरी देकर या दूसरे टुकड़े फेंककर बाक़ायदा घूस देना शुरू कर दिया। मजदूरोंके इस स्तरसे बहुतसे लोग ट्रेड यूनियनों और सहयोग-संस्थाओंके नेता बने थे, म्युनिसिपल और पार्लियामेंटरी संस्थाओंके मेम्बर बने थे, सामाजिक-जनवादी संगठनोंमें पत्रकार और कार्यकर्ता बने थे। जब लड़ाई छिड़ी तो इन लोगोंको डर लगा कि हमारी जगह न छिन जाय; इसलिये वे क्रान्तिके शत्रु बन बैठे और बड़े जोशसे अपने पूँजीवादी वर्ग और अपनी साम्राज्यवादी सरकारोंका समर्थन करने लगे।

अवसरवादी सामाजिक-राष्ट्रवादी बन गये।

सामाजिक-राष्ट्रवादियोंने, जिनमें रूसी मेन्शेविक और सामाजिक क्रान्तिकारी भी थे, इस बातका नारा लगाया कि घरमें मजदूरों और पूँजीपतियोंमें वर्ग-शान्ति हो और बाहर दूसरे देशोंसे लड़ाई की जाय। युद्धके लिये सच्चा उत्तरदायी कौन है, इस बातको जनतासे छिपाकर उन्होंने उसे धोखा दिया और कहने लगे कि अपने देशके पूँजीपतियोंका कोई दोष नहीं है। बहुतसे सामाजिक-राष्ट्रवादी अपने देशकी साम्राज्य-वादी सरकारोंके मंत्री भी बन गये।

कुछ दूसरे सामाजिक-राष्ट्रवादी अपनेको मध्यवादी कहते थे। किन्तु ये छिपे हुए सामाजिक-राष्ट्रवादी सर्वहारा-हितके लिये कम खतरनाक नहीं थे। काट्स्की, त्रात्स्की, मार्तोफ़ आदि मध्यवादी खुले हुए सामाजिक-राष्ट्रवादियोंकी नीतिको उचित ठहराते थे और उनका पक्ष-समर्थन करते थे; इस प्रकार सर्वहारा वर्गके प्रति विश्वासघात करनेमें वे सामाजिक-राष्ट्रवादियोंके साथ हो गये। वे अपना विश्वासघात छिपानेके लिये युद्धके विरोधमें "गरमदलकी" बातें किया करते थे ताकि मजदूर चकमेमें आजायँ। वास्तवमें मध्यवादी युद्धका समर्थन करते थे। जब युद्धके लिये खर्च पर वोट लिये जारहे थे तब उन्होंने तै किया कि वे वोट न देंगे वरन् तटस्थ रहेंगे; इसका यही अर्थ था कि वे युद्धका समर्थन करते थे। सामाजिक-राष्ट्रवादियोंकी तरह उन्होंने भी माँग की कि युद्ध-कालमें वर्ग-संघर्ष बंद कर दिया जाय जिससे युद्ध-संचालनमें उनकी साम्राज्यवादी सरकारको अड़चन न हो। युद्ध और सोशलिज़्मके सभी मुख्य प्रश्नोंपर मध्यवादी त्रात्स्कीने लेनिन और बोल्शेविक पार्टीका विरोध किया।

युद्धके आरंभसे ही लेनिन एक नये इण्टरनेशनल, थर्ड इण्टरनेशनल (तृतीय अन्तरराष्ट्रीय संघ—सं.) बनानेके लिये शक्ति-संचय करने लगे थे। नवंबर १९१४ में बोल्शेविक पार्टीकी केन्द्रीय समितिने जो घोषणापत्र निकाला था, उसमें उसने दूसरी इण्टरनेशनलके बदले, जिसका इस बुरी तरह दिवाला निकल गया था, तीसरी इण्टर-नेशनल बनानेके लिये कहा था।

फ़रवरी १९१५ में मित्र देशोंके सोशलिस्टोंकी एक सभा लन्दनमें हुई। लेनिनके निर्देशसे इस कान्फ्रेंसमें कॉ. लित्विनौफ़ने वान्देरवेल्द, सेम्बा और गेस्द नामके सोश-लिस्टोंसे इस बातकी माँग की कि वे बेल्जियम और फ्रांसकी पूँजीवादी सरकारोंसे इस्तीफ़ा देकर साम्राज्यवादियोंसे बिल्कुल नाता तोड़ लें और उनका साथ देनेसे साफ़ इनकार कर दें। *उन्होंने इस बातकी माँग की कि सभी सोशलिस्ट अपनी साम्राज्यवादी सरकारोंके विरुद्ध* डटकर लड़ें और युद्धके खर्चके लिये वोट देनेकी निन्दा करें। लेकिन इस कान्फ्रेन्समें एक आदमीने भी कॉ. लित्विनौफ़का समर्थन न किया।

सितम्बर १९१५ के आरम्भमें अन्तरराष्ट्रीयतावादियोंकी पहली कान्फ्रेन्स जिमेर-वॉल्डमें हुई। लेनिनका कहना था कि युद्ध-विरोधी अन्तरराष्ट्रीय आन्दोलनके विकासमें यह "पहला क़दम" था। इस कान्फ्रेन्समें लेनिनने जिमेरवॉल्ड-गरमदल बनाया। लेकिन इस गरमदलमें लेनिनके नेतृत्वमें केवल बोल्शेविक पार्टीने युद्धके विरोधमें एक सही और संगत दृष्टिकोण बनाये रखा। जिमेरवॉल्ड-गरमदलने जर्मनमें एक पत्रिका निकाली जिसका नाम रखा गया **फ़ोरबोटे (अग्रदूत)** जिसमें लेनिन भी लिखा करते थे।

१९१६ में स्वीज़रलैंडके कीन्थाल नामके गाँवमें अन्तरराष्ट्रीयतावादियोंकी एक दूसरी कान्फ्रेन्स हुई। इसे द्वितीय जिमेरवॉल्ड कान्फ्रेन्स कहा जाता है। इस समय तक प्रायः हर देशमें अन्तरराष्ट्रीयतावादियोंके गुट बन गये थे और उनसे सामाजिक-

राष्ट्रवादियोंका भेद पहलेसे बहुत स्पष्ट हो गया था। लेकिन सबसे महत्वपूर्ण बात यह हुई थी कि युद्ध और उसके कष्टोंके कारण जनता ही अब गरमदलकी ओर झुक आयी थी। कीन्थाल कान्फ्रेन्सने जो घोषणा-पत्र निकाला, वह विभिन्न विरोधी गुटोंके आपसी समझौतेका परिणाम था। ज़िमेरवॉल्ड घोषणापत्रसे यह एक क़दम आगेकी चीज़ थी।

लेकिन ज़िमेरवॉल्ड कान्फ्रेन्सकी तरह कीन्थाल कान्फ्रेन्सने भी बोल्शेविक नीतिके इन मूलसूत्रोंको न स्वीकार किया कि साम्राज्यवादी युद्धको गृह-युद्धमें परिणत किया जाय, अपनी-अपनी साम्राज्यवादी सरकारोंको हराया जाय और तीसरा इण्टरनेशनल बनाया जाय। फिर भी कीन्थाल कान्फ्रेन्ससे अन्तरराष्ट्रीय गुटकी रूपरेखा अधिक स्पष्ट हुई और आगे चलकर इसीसे कम्युनिस्ट थर्ड इण्टरनेशनल बना।

लेनिनने गरमदलके सामाजिक-जनवादियोंमें रोज़ा लुग्ज़ेम्बुर्ग और कार्ल लीब्कनेष्ट जैसे अंतरराष्ट्रीयतावादियोंकी भूलोंकी आलोचना की लेकिन साथ ही उन्होंने सही दृष्टिकोण अपनानेमें उनकी सहायता भी की।

३. युद्ध, शान्ति और क्रान्तिके प्रश्नोंपर बोल्शेविक पार्टीके सिद्धान्त और उसकी कार्यनीति।

बोल्शेविक विशुद्ध शान्तिवादी नहीं थे जो शान्तिके लिये आहें भरते और शान्तिके प्रचारसे सन्तुष्ट हो जाते, जैसा कि गरमदलके सामाजिक-जनवादियोंमेंसे अधिकांश करते थे। बोल्शेविक शान्तिके लिये क्रान्तिकारी संघर्षका समर्थन करते थे। उनके अनुसार इस संघर्षको तब तक जारी रहना चाहिये जबतक कि युद्ध-प्रेमी साम्राज्यवादी पूँजीपतियोंके शासनका अन्त न हो जाय। बोल्शेविक सर्वहारा-क्रान्तिकी विजयके उद्देश्यको शान्तिके उद्देश्यसे मिला देते थे। उनका कहना था कि युद्धका अन्त करनेका और ऐसी न्यायपूर्ण शान्ति स्थापित करनेका, कि जिसमें किसी देशको ज़मीन या हरजाना न देना पड़े, सबसे निश्चित उपाय यह था कि साम्राज्यवादी पूँजीपतियोंके शासनका अन्त कर दिया जाय।

मेन्शेविकों और सामाजिक क्रान्तिकारियोंके विपरीत, जो क्रान्तिसे विमुख होकर युद्धकालमें "नागरिक शान्ति" की रक्षा करनेका विश्वासघाती नारा लगाने लगे थे, बोल्शेविकोंने "**साम्राज्यवादी युद्धको गृहयुद्धमें परिणत करने**"का नारा लगाया था। इसका यह मतलब था कि सभी मेहनतकश लोगोंको—सिपाहियोंकी वर्दी पहने हुए हथियारबन्द किसान-मजदूरोंको भी—चाहिये कि अपने पूँजीपतियोंके विरुद्ध इन हथियारोंका प्रयोग करें। अगर वे युद्धका अन्त करके न्यायपूर्ण शान्ति स्थापित करना चाहते हैं तो उन्हें पूँजीपतियोंके शासनका अन्त करना होगा।

मेन्शेविकों और सामाजिक-क्रान्तिकारियोंके विरुद्ध, जो पूँजीपतियोंकी मातृभूमिकी रक्षा करनेकी नीतिका समर्थन कर रहे थे, बोल्शेविकोंने "**साम्राज्यवादी युद्धमें अपनी सरकारको हराने**" की नीति सामने रखी। इसका अर्थ यह था कि युद्धके खर्चके विरुद्ध वोट दिये जायँ, फ़ौजमें ग़ैर-क़ानूनी क्रान्तिकारी संगठन बनाये जायँ, मोर्चेपरके सिपाहियोंमें भाईचारेका समर्थन किया जाय, युद्धके विरोधमें किसानों और मजदूरोंके क्रान्तिकारी कार्योंका संगठन किया जाय और इन कार्योंको अपनी साम्राज्यवादी सरकारके विरुद्ध विद्रोहमें परिणत कर दिया जाय। बोल्शेविकोंका कहना था कि साम्राज्यवादी युद्धमें जार-सरकारकी सैनिक पराजय जनताके लिये कम संकटकी बात होगी क्योंकि इससे जारशाहीपर जनताकी विजय सरल हो जायगी; पूँजीपतियोंकी गुलामी और साम्राज्यवादी लड़ाइयोंसे छुटकारा पानेके लिये मजदूर-वर्गकी लड़ाई इससे सहायता पाकर और आसानीसे सफल हो सकेगी। लेनिनका कहना था कि रूसी क्रान्तिकारियोंको ही अपनी साम्राज्यवादी सरकारको हरानेकी नीतिका पालन न करना चाहिये वरन् युद्धमें लगे हुए **सभी** देशोंके मजदूर-वर्गकी क्रान्तिकारी पार्टियोंको इस नीतिका पालन करना चाहिये।

बोल्शेविक **सभी तरह**के युद्धका विरोध न करते थे। दूसरे देशोंको जीतनेके लिये किये गये युद्धका, साम्राज्यवादी युद्धका, वे विरोध करते थे। उनका कहना था कि युद्ध दो तरहका होता है,—

(अ) एक तो न्यायपूर्ण युद्ध जो दूसरोंको जीतनेके लिये नहीं वरन् अपने देशको स्वाधीन करनेके लिये, विदेशी आक्रमणसे जनताको बचानेके लिये, या पूँजीवादी गुलामीसे जनताको आजाद करनेके लिये, या अंतमें, साम्राज्यशाहीसे उपनिवेशों और पराधीन देशोंको आजाद करनेके लिये लड़ा जाता है।

(आ) दूसरा अन्यायपूर्ण युद्ध, विजयाकांक्षी युद्ध, जो दूसरे देशों और जातियोंको जीतने और उन्हें गुलाम बनानेके लिये लड़ा जाता है।

पहली तरहके युद्धका बोल्शेविक समर्थन करते थे। दूसरी तरहके युद्धके बारेमें उनका कहना था कि उससे डटकर मोर्चा लेना चाहिये, यहाँ तक कि क्रान्ति करके अपनी साम्राज्यवादी सरकारका तख़्ता उलट देना चाहिये।

संसारके मजदूर-वर्गके लिये युद्धकालमें लेनिनका सैद्धान्तिक कार्य अत्यन्त महत्वपूर्ण था। १९१६ की बसन्तऋतुमें लेनिनने **पूँजीवादकी चरम अवस्था, साम्राज्यवाद** नामकी एक पुस्तक लिखी। इस पुस्तकमें उन्होंने दिखाया कि साम्राज्यवाद पूँजीवादकी चरम अवस्था है—ऐसी अवस्था जहाँ पूँजीवाद अपनी "प्रगतिशील" भूमिका पूरी करके जाँगरचोर पतनोन्मुख पूँजीवादमें परिणत हो गया है; साम्राज्यवाद गतिरुद्ध पूँजीवाद है। निश्चय ही, इसका यह अर्थ न था कि बिना सर्वहारा-क्रान्तिके पूँजीवाद अपने आप मुरझाकर नष्ट हो जायगा। लेनिनने बराबर यही सिखाया था कि मजदूरोंकी क्रान्तिके बिना पूँजीवादका अन्त नहीं हो सकता।

इसलिये लेनिनने जहाँ यह कहा कि साम्राज्यवाद गतिरुद्ध पूँजीवाद है, वहाँ उन्होंने यह भी कहा कि "साम्राज्यवाद सर्वहारा–क्रान्तिका आरंभकाल है।"

लेनिनने दिखाया था कि साम्राज्यवादी युगमें पूँजीवादकी बेड़ियाँ और भारी हो जाती हैं, पूँजीवादके आधारके प्रति सर्वहारा वर्गका विद्रोह बढ़ता जाता है, और पूँजीवादी देशोंमें क्रान्तिकारी विस्फोटके उपकरण एकत्र होते जाते हैं।

लेनिनने दिखाया था कि साम्राज्यवादी युगमें औपनिवेशिक और पराधीन देशोंमें क्रान्तिकारी संकट बढ़ता जाता है और साम्राज्यशाहीके विरुद्ध विद्रोहके उपकरण, साम्राज्यशाहीसे मुक्ति पानेके स्वाधीनता-संग्रामके उपकरण एकत्र होते जाते हैं।

लेनिनने दिखाया कि साम्राज्यवादके युगमें पूँजीवादकी असंगतियों और उसके विकासकी विषमतामें विशेष तीव्रता आगयी है और संसारका बँटवारा करनेके लिये समय–समयपर साम्राज्यवादी युद्ध इसलिये अनिवार्य हो जाते हैं कि पूँजीपतियोंमें कच्चा माल पानेके लिये, उपनिवेशोंके लिये और अपनी पूँजी लगानेके लिये नये क्षेत्रों और बाजारोंके लिये होड़ होती है।

लेनिनने दिखाया था कि पूंजीवादके विकासकी विषमतासे ही साम्राज्यवादी युद्ध होते है जो साम्राज्यवाद को खोखला बना देते हैं और उसके सबसे निर्बल मोर्चेपर आघात करके उसे तोड़ना संभव बनाते हैं।

इस सबसे लेनिनने यह परिणाम निकाला कि सर्वहारा वर्गके लिये यह बिल्कुल संभव है कि वह साम्राज्यवादी मोर्चेको एक या कई जगह तोड़ दे; समाजवादकी विजय पहले कई देशोंमें या अकेले एक देशमें **संभव** है; परंतु पूंजीवादके विकासकी विषमताके कारण सभी देशोंमें समाजवादका एक साथ विजयी होना असंभव है; समाजवाद पहले एक या अनेक देशोंमें विजयी होगा और अन्य देश कुछ समय तकके लिये पूंजीवादी ही रहेंगे।

साम्राज्यवादी युद्धके समय लेनिनने दो लेखोंमें इस तर्कसिद्ध परिणामको इस प्रकार व्यक्त किया था,—

१) "आर्थिक और राजनीतिक विकासकी विषमता पूँजीवादका अपरिहार्य लक्षण है। इसलिये समाजवादकी विजय पहले अनेक या केवल एक पूँजीवादी देशमें संभव है। उस देशका विजयी सर्वहारा वर्ग पूँजीपतियोंका अन्त करके और अपने समाजवादी उत्पादनका संगठन करके शेष संसार अर्थात् पूँजीवादी संसारके विरुद्ध खड़ा होगा और अपने साथकी ओर अन्य देशोंके पीड़ित वर्गोंको आकर्षित करेगा। (**अगस्त १९१५ में लिखित "योरपके संयुक्त राष्ट्रका नारा" नामके लेखसे: संक्षिप्त लेनिन-ग्रंथावली—अं. सं., ग्रं. ५, पृ. १४१**)

२) "विभिन्न देशोंमें पूँजीवादके विकासकी गति अत्यन्त विषम है। बाजारके लिये माल तैयार करनेकी व्यवस्थामें इसके सिवा और कुछ हो भी नहीं

सकता। इससे यह अतर्क्य परिणाम निकलता है कि **सभी** देशोंमें समाजवादकी विजय एक साथ नहीं हो सकती। उसकी विजय पहले एक या अनेक देशोंमें होगी और दूसरे देश कुछ समयके लिये पूँजीवादी या उससे भी पूर्वकी अवस्थामें रहेंगे। इससे न केवल खींचतान पैदा होगी वरन् दूसरे देशोंके पूँजीपति सीधेसे इस बातका प्रयत्न करेंगे कि समाजवादी देशके विजयी सर्वहारा वर्गको कुचल दें। ऐसी दशामें हमारा युद्ध वैध और न्यायपूर्ण होगा। यह युद्ध समाजवादके लिये, पूँजीपतियोंकी गुलामीसे दूसरे देशोंको छुड़ानेके लिये होगा।" (**"सर्वहारा क्रान्तिका सामरिक कार्यक्रम" नामके १९१६की शरद ऋतुमें लिखे गये लेखसे: लेनिन-ग्रंथावली—रूसी सं., खं. १९, पृ. ३२५**)

सोशलिस्ट क्रान्तिका यह एक **नया** और पूर्ण सिद्धान्त था जिसके अनुसार विभिन्न देशोंमें समाजवादकी विजय संभव थी, जिसमें इस विजयके लिये आवश्यक परिस्थितियों और उसकी संभावनाओंका निर्देश था और जिसके मूल-तत्वोंका उल्लेख लेनिनने बहुत पहले, १९०५ में ही "जनवादी क्रान्तिमें सामाजिक जनवादकी दो कार्यनीतियाँ" नामकी अपनी पुस्तिकामें किया था।

साम्राज्यवादसे पहलेके पूँजीवादी युगमें मार्क्सवादियोंमें जो धारणा प्रचलित थी, उससे यह सिद्धान्त मूलतः भिन्न था। उनका विचार था कि किसी एक देशमें अकेले समाजवादकी विजय असंभव है और यह विजय सभी सभ्य देशोंमें एक साथ होगी। अपनी अद्वितीय पुस्तक **पूँजीवादकी चरम अवस्था, साम्राज्यवाद**में लेनिनने **साम्राज्यवादी** पूँजीवादके सम्बन्धमें जो तथ्य एकत्र किये थे, उनके आधार पर उन्होंने सिद्ध कर दिया कि यह मत जर्जर हो गया है। उसके बदले उन्होंने एक नये सिद्धान्तका प्रतिपादन किया जिससे यह परिणाम निकला कि सभी देशोंमें समाजवादकी विजय एक साथ **असम्भव** है और एक पूँजीवादी देशमें अकेले समाजवादकी विजय **संभव** है।

सोशलिस्ट क्रांतिके सम्बन्धमें लेनिनके सिद्धान्तका अतुल महत्व इसी बातमें नहीं है कि उसने मार्क्सवाद को भरा-पूरा बनाया है और उसे आगे बढ़ाया है, वरन् इस बात में है कि उससे विभिन्न देशोंके सर्वहारा वर्गके लिये क्रान्तिकी नवीन संभावनाएँ खुल जाती हैं, अपने देशके पूँजीपतियोंपर आघात करनेके लिये उसकी प्रेरणा निर्बन्ध हो जाती है, इन आघातोंको संगठित करनेके लिये युद्धकालीन परिस्थितिसे वह लाभ उठाना सीखता है, और सर्वहारा-क्रान्तिकी विजयमें उसका विश्वास दृढ़ होता है।

युद्ध, शान्ति और क्रान्तिके प्रश्नों पर बोल्शेविकोंका सैद्धान्तिक और कार्यनीति-सम्बन्धी दृष्टिकोण ऐसा ही था।

रूसमें बोल्शेविकोंकी प्रत्यक्ष कार्यवाही इसी दृष्टिकोणपर निर्भर थी।

युद्धके आरम्भमें पुलिसके कठोर दमनके होते हुए भी बादायेफ़, पेत्रोव्स्की, मुरानौफ़, सामोइलौफ़ और शागौफ़, दूमाके इन बोल्शेविक सदस्योंने अनेक संस्थाओंमें जाकर व्याख्यान दिये और युद्ध और क्रान्तिके सम्बन्धमें बोल्शेविकोंकी नीति उन्हें

समझायी। नवंबर १९१४ में युद्धके प्रश्नपर अपनी नीतिकी विवेचना करनेके लिये राज-दूमाके बोल्शेविक गुटकी एक कान्फ्रेन्स बुलायी गयी। कान्फ्रेन्सके तीसरे दिन उसमें जो भी आये थे, पकड़ लिये गये। अदालतसे राज-दूमाके बोल्शेविक सदस्योंको यह सजा दी गयी कि उनके नागरिक अधिकार छीन लिये जायँ और उन्हें पूर्वी साइबेरियामें देश-निकाला दे दिया जाय। जार-सरकारने उनपर "राजद्रोह" का अभियोग लगाया था।

अदालतमें दूमाके सभासदोंकी कार्यवाहीका जो वृत्तान्त खुला, वह पार्टीके लिये गौरवपूर्ण था। बोल्शेविक प्रतिनिधियोंने पुरुषार्थसे काम लिया; जारकी अदालतको उन्होंने अपना प्रचार-मञ्च बना लिया और उससे जारशाहीकी दूसरोंका राज हड़पनेकी नीतिका भंडाफोड़ किया।

इस मुक़द्दमेमें एक अभियोगी कामेनेफ़ भी था, परन्तु उसका व्यवहार औरोंसे बिल्कुल भिन्न था। अपनी कायरताके कारण संकटका सामना होते ही उसने बोल्शेविक पार्टीकी नीतिसे कनाराकशी कर ली। उसने अदालतमें कहा कि युद्धके प्रश्नपर वह बोल्शेविकोंसे सहमत नहीं है और इसे साबित करनेके लिये उसने मेन्शेविक जोरदांस्कीको गवाही देनेके लिये बुलानेकी प्रार्थना की।

युद्धकी आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिये जो सामरिक उद्योग-समितियाँ बनी थीं उनके विरुद्ध और साम्राज्यवादी पूँजीपतियोंके प्रभावमें मजदूरोंको लानेके मेन्शेविकोंके प्रयत्नोंके विरुद्ध बोल्शेविकोंने सफलतासे मोर्चा लिया। पूँजीपतियोंके लिये यह अत्यन्त हितकर था कि हरेक आदमी साम्राज्यवादी युद्धको जनताका युद्ध समझे। युद्धकालमें पूँजीपतियोंने शासन-तंत्रमें काफ़ी हाथ-पैर पसार लिये और सारे देशमें अपने ज़िला (ज़ेम्स्त्वो) और नगर-संघ बना डाले। पूँजीपतियोंके लिये आवश्यक था कि वे मजदूरोंको भी अपने प्रभाव और नेतृत्वमें ले लें। ऐसा करनेके लिये उन्होंने एक उपाय सोचा; सामरिक उद्योग-समितियोंमें उन्होने "मजदूर-गुट" बनाये। मेन्शेविक इसकी खबर पाते ही उछल पड़े। पूँजीपतियोंका तो इसमें हित ही था कि उन्हें सामरिक उद्योग-समितियोंमें ऐसे मज़दूर-प्रतिनिधि मिल जायँ जो आम मज़दूरोंसे उन कार-ख़ानोंमें पैदावार बढ़ानेको कहें जहाँ गोले, राइफल, तोपें, कारतूस और दूसरा लड़ाईका सामान तैयार होता था। पूँजीपतियोंका नारा था—"लड़ाईके लिये खून-पसीना एक कर दो।" इसका असली मतलब यह था,—"लड़ाईके ठेकोंसे और दूसरोंका राज हड़प करके जितना मोटे बन सको, बन जाओ।" पूँजीपतियोंकी इस नीम-हकीमी योजनामें मेन्शेविकोंने बड़ी सरगर्मी दिखाई। उन्होंने इस बातका जोरदार आन्दोलन करके पूँजीपतियोंकी सहायता की कि सामरिक उद्योग-समितियोंके मजदूर-गुटोंके चुनावमें मजदूर भाग लें। बोल्शेविक इस योजनाके विरुद्ध थे। उन्होंने कहा कि सामरिक उद्योग-समितियोंका बहिष्कार करो और उनका बहिष्कार करानेमें वे सफल हुए। लेकिन एक प्रमुख मेन्शेविक ग्वोज्देफ़ और एक पुलिसके आदमी अब्रोसीमोफ़के नेतृत्वमें कुछ मजदूरोंने सामरिक उद्योग-समितियोंके काममें हाथ बँटाया। परन्तु जब सितम्बर

१९१५ में इन समितियोंके " मजदूर-गुटों " के आखिरी चुनावके लिये मजदूरोंके प्रतिनिधि इकट्ठा हुए तो उनमेंसे बहुसंख्यक लोग इन समितियोंमें भाग लेनेके विरोधी निकले। बहुसंख्यक मजदूर-प्रतिनिधियोंने एक जोरदार प्रस्ताव पास किया कि सामरिक उद्योग-समितियोंमें भाग न लेना चाहिये। उन्होंने कहा कि मजदूरोंने अपना ध्येय यह बनाया था कि वे शान्तिके लिये और जारशाहीके पतनके लिये लड़ेंगे।

जल और स्थल सेनाओंमें भी बोल्शेविकोंने अपना कार्य-विस्तार किया। उन्होंने सिपाहियों और मल्लाहोंको समझाया कि युद्धके घोर कष्टोंके लिये और जनताके दुखदर्दके लिये कौन उत्तरदायी है। बोल्शेविकोंने उन्हें समझाया कि साम्राज्यवादियोंके नरमेधसे बचनेका एकही उपाय है—क्रान्ति। उन्होंने जल और स्थल सेनाओंमें, मोर्चेपर और मोर्चेके पीछे अपने केन्द्र स्थापित किये, और युद्धके विरोधमें लड़नेके लिये उन्होंने पर्चे बाँटे।

क्रोन्स्तातमें बोल्शेविकोंने "क्रोन्स्तात सैनिक संगठनका केन्द्रीय संघ" बनाया जिसका पार्टीकी पेत्रोग्राद-समितिसे घनिष्ठ सम्बन्ध था। लश्करमें काम करनेके लिये पार्टीकी पेत्रोग्राद-कमिटीका एक सैनिक संगठन क़ायम किया गया। अगस्त १९१६ में पेत्रोग्राद **ओख़राना**के अफ़सरने यह रिपोर्ट दी कि "क्रोन्स्तात संघका गुप्त संगठन खूब बन पड़ा है और उसके सदस्य गंभीर और सतर्क व्यक्ति हैं। इस संघके प्रतिनिधि बन्दरगाहों पर भी हैं।"

मोर्चेपर पार्टीने इस बातका आन्दोलन किया कि एक दूसरेसे लड़नेवाली फ़ौजोंके सिपाही भाईचारा क़ायम करें। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि सिपाहियोंके दुश्मन संसार के पूँजीपति हैं और लड़ाई तभी समाप्त हो सकती है जब साम्राज्यवादी युद्धको वे गृह-युद्ध बना दें और अपने देशके पूँजीपतियों और अपनी सरकारपर अपने हथियारोंसे वार करें। फ़ौजी टुकड़ियाँ हमला करनेसे इनकार कर रही हैं, इस तरहकी घटनाएँ अधिक होने लगीं। इस तरहकी घटनाएँ १९१५ में ही घटी थीं; १९१६ में उनकी संख्या बढ़ गयी।

बाल्टिक प्रान्तोंमें उत्तरी मोर्चेपरकी फ़ौजोंमें बोल्शेविकोंका कार्य-विस्तार विशेष था। १९१७ के आरम्भमें उत्तरी मोर्चेके सेनापति जनरल रुज़्कीने सैन्य-केन्द्रको सूचित किया था कि मोर्चेपर बोल्शेविकोंकी क्रान्तिकारी कार्यवाही तेज़ीसे बढ़ी हुई थी।

युद्धसे जनताके जीवनमें, संसार भरके मजदूर-वर्गके जीवनमें एक गंभीर परिवर्तन हो गया था। राष्ट्रों और जातियोंका भाग्य, समाजवादी आन्दोलनका भाग्य, दाँवपर लगा हुआ था। इसलिये सभी सोशलिस्ट कहलानेवाली प्रवृतियों और पार्टियोंके लिये युद्ध एक कसौटी थी। उस समय प्रश्न यह था कि क्या ये प्रवृतियाँ और पार्टियाँ सोशलिज़्मके ध्येयके प्रति, अन्तरराष्ट्रीयताके प्रति, अपना कर्तव्य निबाहेंगी या वे मजदूर-वर्गके प्रति विश्वासघात करना पसंद करेंगी और अपने झंडे लपेटकर देशके पूँजीपतियोंके चरणोंमें रख देंगी?

युद्धने दिखा दिया कि सेकण्ड इण्टरनेशनलकी पार्टियाँ इस कसौटीपर खरी नहीं उतरीं। उन्होंने मजदूर-वर्गके प्रति विश्वासघात करके अपने झंडे लपेटकर अपने देशके पूँजीपतियोंके चरणोंमें रख दिये थे।

और ये पार्टियाँ जिन्होंने अवसरवादको अपने भीतर पनपने दिया था, और जिन्होंने अवसरवादियोंकी माँगें स्वीकार करना सीखा था, इसके सिवा और कुछ कर भी न सकती थीं।

युद्धने दिखा दिया कि बोल्शेविक पार्टी ही एक ऐसी पार्टी है जो इस कसौटी पर खरी उतरी है और दावेसे खरी उतरी है। इसी पार्टीने सोशलिज्मके ध्येयके प्रति अपना कर्तव्य निबाहा है।

और उसीसे इसकी आशा भी की जा सकती थी। केवल एक नये ढंगकी पार्टी जिसने अवसरवादियोंसे बेमुलाहिजा होकर लड़ना सीखा हो, केवल एक ऐसी पार्टी जो अवसरवाद और राष्ट्रवादसे मुक्त हो, केवल ऐसी पार्टी इस कठिन कसौटीपर खरी उतर सकती है, केवल ऐसी पार्टी मजदूर-वर्गके ध्येयके प्रति, समाजवाद और अन्तरराष्ट्रीयताके ध्येयके प्रति अपना कर्तव्य निबाह सकती है।

बोल्शेविक पार्टी ऐसी ही पार्टी थी।

४. ज़ारशाही फ़ौजकी हार—आर्थिक विश्रृंखलता—ज़ारशाही का संकट।

लड़ाईको चलते तीन साल हो गये थे। लाखों आदमी मारे गये थे या घावोंसे और युद्धकालीन परिस्थितियोंसे फैलने वाली महामारियोंसे नष्ट हो गये थे। पूँजीपति और जमींदार लड़ाईसे रक़में काट रहे थे। मजदूर-किसानोंकी गरीबी और लाचारी बढ़ती जा रही थी। युद्धसे रूसका आर्थिक जीवन खोखला हो रहा था। लगभग एक करोड़ चालीस लाख हट्टे-कट्टे आदमी अपनी रोजीसे हटा कर फ़ौजमें भर्ती कर लिये गये थे। मिलें और कारखाने ठप हो रहे थे। मजदूर न मिलनेसे खेती कम हो गयी थी। मोर्चेके सिपाही और जनता भूखे, अध-नंगे और खाली पाँव थे। देशका माल-मसाला युद्धकी भट्टीमें स्वाहा होता जा रहा था।

ज़ारकी फ़ौज हारपर हार खाती गयी। जर्मन तोपें ज़ारकी फ़ौजपर अग्निवर्षा करती थीं लेकिन ज़ारकी फ़ौजमें तोपों, गोलों और राइफलों तकका अकाल था। कभी-कभी तीन-तीन सिपाहियोंको एक-एक राइफलसे काम चलाना पड़ता था। लड़ाई चालू थी, तभी पता चला कि ज़ारका युद्ध-सचिव सुखोम्लीनोफ़ विश्वासघाती है और जर्मन गुप्तचरोंसे संपर्क बनाये हुए जर्मन जासूस-विभागके इस निर्देशका पालन

कर रहा है कि युद्ध–सामग्री पहुँचानेमें अड़चनें डालकर मोर्चे तक न तोपें पहुँचने दे, न राइफलें। जारके कुछ मंत्री और जनरल गुप्त रूपसे जर्मन फ़ौजकी विजयमें सहायक हो रहे थे। जारीनाके साथ-साथ, जिसका जर्मनोंसे नाता था, ये लोग भी जर्मनोंको सैनिक भेद बता देते थे। जारकी फ़ौजको हार खाकर पीछे हटना पड़ा, तो इसमें कोई आश्चर्य न था। १९१६ तक जर्मन पोलैंडपर और बाल्टिक प्रान्तोंके एक भागपर अधिकार कर चुके थे।

इस सबसे जार–सरकारके विरुद्ध मजदूरों, किसानों, सैनिकों, और बुद्धिजीवियोंकी घृणा और क्रोध भड़क उठे और क्या मोर्चेपर और क्या पीछे, क्या मध्यमें और क्या सीमान्त प्रदेशोंमें, युद्ध और जारशाहीके विरुद्ध जन–आन्दोलनकी आग सुलगी और जल उठी।

रूसके साम्राज्यवादी पूँजीपतियोंमें भी असन्तोष फैलने लगा। वे इस बातसे जल उठे कि रासपुटीन जैसे गुंडे जो जर्मनीसे अलग सन्धि करने की जानी–बूझी कोशिशें कर रहे थे, दरबारमें शेर बने हुए थे। पूँजीपतियोंको अकिकाधिक विश्वास होता गया कि जार-सरकार सफतापूर्वक युद्ध संचालन करनेमें असमर्थ है। उन्हें भय था कि जार अपनी पगड़ी बचानेके फेरमें जर्मनोंसे अलग सन्धि न कर ले। इसलिये रूसके पूँजीपतियोंने सोचा कि जार निकोलस द्वितीयको गद्दीसे उतारकर उसकी जगह उसके भाई माइकेल रोमानौफ़को बिठा दिया जाय। रोमानौफ़का पूँजीपतियोंसे संपर्क था। इस तरह वे एक तीरसे दो शिकार मारना चाहते थे,—एक तो राज्यशक्ति अपने हाथमें करके भावी युद्ध–संचालनको निश्चित कर लेना और दूसरे राजमहलमें थोड़ेसे उलट–फेरसे एक महान जन–प्रिय क्रान्तिको रोक लेना जिसकी लहर दिनपर दिन चढ़ती ही आती थी। इस बातमें ब्रिटेन और फ्रान्सकी सरकारें रूसी पूँजीपतियोंके साथ थीं क्योंकि वे जानती थीं कि जार युद्ध–संचालन करनेमें असमर्थ है। उन्हें डर था कि वह जर्मनोंसे अलग संधि करके लड़ाई खतम न कर दे। जार सरकारके अलग संधि करनेपर ब्रिटिश और फ्रेंच सरकारोंका लड़ाईका एक साथी खो जाता जो न केवल दुश्मनकी फ़ौजोंको अपने मोर्चोंपर अटकाये हुए था वरन् फ्रान्सको लाखों चुने हुए रूसी सिपाही भी देता था। इसलिये ब्रिटिश और फ्रेंच सरकारोंने रूसी पूँजीपतियोंकी मदद की कि वे निकोलस द्वितीयको गद्दीसे उतार कर किसी दूसरेको राजा बना लें।

इस प्रकार जार अकेला पड़ गया।

मोर्चेपर जब हारपर हार हो रही थी, तब आर्थिक विशृंखलता और बढ़ती गयी। जनवरी और फ़रवरी १९१७ में कच्चे माल, ईंधन और खाद्य सामग्रीको पहुँचाना इतना मुश्किल हो गया, सारा काम इतना अस्तव्यस्त हो गया कि बस हद हो गयी। पेत्रोग्राद और मॉस्कोको खाना पहुँचना प्रायः बन्द होगया था। एकके बाद दूसरा कारखाना बन्द होने लगा; इससे बेकारी बढ़ गयी। मज़दूरोंकी दशा विशेष रूपसे गिरी हुई थी। अधिकाधिक लोग अब इस नतीजेपर पहुँच रहे थे कि इस असहनीय परिस्थितिसे छुटकारा पानेका एक ही उपाय है—जारकी निरंकुश राज्यसत्ताका ध्वंस।

जारशाही स्पष्ट ही मरण–संकटकी यातना भोग रही थी।

पूँजीपति सोचते थे कि ज़ारको बदल देनेसे वे इस संकटसे छुटकारा पा जायँगे। लेकिन जनताने छुटकारेका दूसरा ही उपाय ढूँढ़ निकाला।

५. फ़रवरी-क्रान्ति—ज़ारशाहीका ध्वंस—मज़दूर और सैनिक प्रतिनिधियोंके सोवियतोंका निर्माण—अस्थायी सरकारका निर्माण—द्विधात्मक शासन-तंत्र।

१९१७ के सालका आरम्भ ९ जनवरीकी हड़तालसे हुआ। इस हड़तालके सिलसिलेमें पेत्रोग्राद, मॉस्को, बाकू और निज़्नी-नोवगोरोदमें प्रदर्शन किये गये। मॉस्कोमें लगभग एक-तिहाई मज़दूरोंने ९ जनवरीकी हड़तालमें भाग लिया। त्वेर्स्कोईके तरुमंडित राजपथपर दो हज़ार जनताके प्रदर्शनको घुड़सवार पुलिसने भंग किया। फ़िबोर्गके राजपथमें सैनिक भी प्रदर्शनमें सम्मिलित हो गये।

पेत्रोग्राद पुलिसने यह रिपोर्ट दी कि "आम हड़ताल करनेके पक्षमें लोग बढ़ते ही जा रहे हैं और यह विचार उतना ही लोकप्रिय होता जा रहा है जितना कि वह १९०५ में था।"

मेन्शेविक और सामाजिक क्रान्तिकारी इस उदीयमान क्रांतिकारी आन्दोलनको उन्हीं पगडंडियोंसे ले चलना चाहते थे जो उदारपंथी पूँजीपतियोंके लिये हितकर थीं। मेन्शेविकोंने प्रस्ताव किया कि १४ फ़रवरीको दूमाके प्रथम अधिवेशनके अवसरपर वहाँ एक मज़दूरोंका जुलूस चले। लेकिन आम मज़दूरोंने बोल्शेविकोंका अनुसरण किया और दूमा न जाकर एक प्रदर्शनमें चले गये।

१८ फ़रवरी १९१७ को पेत्रोग्रादमें पुतिलौफ़के कारखानोंमें हड़ताल हो गयी। २२ फ़रवरीको अधिकांश बड़े कारखानोंके मज़दूरोंने हड़ताल कर रखी थी। २३ फ़रवरी (नयी शैली ८ मार्च) को अन्तरराष्ट्रीय महिला-दिवसके अवसरपर मज़दूर-स्त्रियोंने भूख, लड़ाई और ज़ारशाहीके विरोधमें सड़कोंपर जुलूस निकाला। नगर-व्यापी हड़तालका आन्दोलन करके पेत्रोग्रादके मज़दूरोंने मज़दूर-स्त्रियोंके प्रदर्शनकी सहायता की। यह राजनीतिक हड़ताल ज़ारशाही राज्यतंत्रके विरुद्ध एक सार्वजनिक राजनीतिक प्रदर्शनका रूप लेने लगी।

२४ फ़रवरी (९ मार्च) को प्रदर्शन पहलेसे और ज़ोर-शोरसे आरम्भ हो गया। लगभग दो लाख मज़दूरोंने पहलेसे ही हड़ताल कर रखी थी।

२५ फ़रवरी (१० मार्च) को पेत्रोग्रादका समस्त मज़दूर-वर्ग क्रान्तिकारी आन्दोलनमें सम्मिलित हो गया। ज़िलोंकी राजनीतिक हड़तालें मिलकर सारे शहरकी एक

चहलकदमी कर रहे थे। इसका फल यह हुआ कि पेत्रोग्रादकी सोवियत और उसकी स्थायी समितिकी वागडोर अवसरवादी पार्टियोंके प्रतिनिधियों अर्थात् मेन्शेविकों और सामाजिक--क्रान्तिकारियोंके हाथमें चली गयी। मॉस्को और कुछ दूसरे शहरोंका भी यही हाल था। केवल ईवानोवो-वौत्स्नेजेन्स्क, क्रास्नोयार्स्क और कुछ दूसरी जगहोंमें शुरूसे ही सोवियतोंमें बोल्शेविकोंका वहुमत था।

सशस्त्र जनताने—मजदूरों और सैनिकोंने—सोवियतोंको जनशक्तिका केन्द्र मानकर उनमें अपने प्रतिनिधियोंको भेजा था। उनका विचार था और उन्हें विश्वास था कि मजदूर और सैनिक प्रतिनिधियोंके सोवियत क्रान्तिकारी जनताकी सभी माँगोंको कार्य-रूपमें परिणत करेंगे और सवसे पहले तो शान्ति स्थापित होगी।

लेकिन मज़दूरों और सैनिकोंके निराधार विश्वासका परिणाम उनके लिये हितकर नहीं हुआ। सामाजिक-क्रान्तिकारियों और मेन्शेविकोंकी ज़रा भी इच्छा न थी कि युद्ध समाप्त हो और शान्तिकी स्थापना हो। क्रान्तिसे लाभ उठाकर उन्होंने युद्धको चलाते रहने की योजना बनायी। जहाँ तक क्रान्ति और जनताकी क्रान्तिकारी माँगोंका सम्बन्ध था, सामाजिक-क्रान्तिकारियों और मेन्शेविकोंका कहना था कि क्रान्ति तो समाप्त हो चुकी है, और अव " इति शुभम् " लिखकर पूँजीपतियोंके साथ " नियमित ", वैधानिक जीवन व्यतीत करना चाहिये। इसलिये पेत्रोग्राद सोवियतके सामाजिक-क्रान्तिकारी और मेन्शेविक नेताओंने अपनी कोशिशोंमें कुछ उठा न रखा कि युद्धको बंद करने और शान्ति स्थापित करनेके मसलेको दवा दिया जाय और शासन-सूत्र पूँजीवादियोंको सौंप दिया जाय।

२७ फ़रवरी (१२ मार्च) १९१७ को चौथी राज-दूमाके उदारपंथी सदस्योंने सामाजिक-क्रान्तिकारी और मेन्शेविक नेताओंसे गुप्त समझौता करके राज-दूमाकी एक अस्थायी समिति बना ली। इसका नेता दूमाका सभापति रोदजियान्का नामका एक ज़मींदार और राजसत्तावादी था। इसके कुछ ही दिन बाद राज-दूमाकी अस्थायी समिति और मजदूर और सैनिक प्रतिनिधियोंकी कार्यकारिणी समितिके सामाजिक-क्रान्तिकारी तथा मेन्शेविक नेताओंने बोल्शेविकोंसे छिपकर यह समझौता कर लिया कि वे रूसमें एक नयी सरकार, एक पूँजीवादी अस्थायी सरकार बनायेंगे। इसका नेता प्रिंस ल्वोफ़ होगा जिसे फ़रवरी-क्रान्तिके पहले स्वयं जार निकोलस द्वितीय अपनी सरकारका प्रधान मंत्री बनाने वाला था। अस्थायी सरकारमें वैधानिक-जनवादियोंका नेता मिल्यूकौफ़ था, अक्तूबरवादियोंका नेता गुच्कौफ़ था; उसमें पूँजीवादी वर्गके अन्य प्रमुख प्रतिनिधि थे और " जनवाद " के प्रतिनिधि-रूपमें सामाजिक-क्रान्तिकारी करेन्स्की था।

इस प्रकार सोवियतकी स्थायी समितिके सामाजिक-क्रान्तिकारी और मेन्शेविक नेताओंने शासन-सूत्र पूँजीपतियोंके हाथमें सौंप दिया। फिर भी जब मजदूर और सैनिक प्रतिनिधियोंके सोवियतने यह सब सुना तो बोल्शेविकोंके प्रतिवाद करनेपर भी उसके बहुमतने नियमानुसार सामाजिक-क्रान्तिकारी और मेन्शेविक नेताओंके कार्यका अनुमोदन किया।

इस प्रकार रूसमें एक नयी राज-शक्ति खड़ी हो गई जिसमें, लेनिनके अनुसार, "पूँजीपतियों और पूँजीपति वन जानेवाले ज़मींदारों" के प्रतिनिधि थे।

परन्तु पूँजीवादी सरकारके साथ एक दूसरी शक्ति भी थी—मज़दूर और सैनिक प्रतिनिधियोंके सोवियत। सोवियतमें जो सैनिक प्रतिनिधि आये थे; वे अधिकतर लड़ाई में भर्ती किये हुए किसान थे। मज़दूर और सैनिक प्रतिनिधियोंका सोवियत ज़ारके शासन-तंत्रके विरुद्ध मज़दूरों और किसानोंके सहयोगका केन्द्र था; साथ ही उनकी शक्तिका भी वह एक केन्द्र था; वह मज़दूर-वर्ग और किसानोंके एकाधिपत्यका केन्द्र था।

इसके फलस्वरूप दो शक्तियोंका विचित्र गठ-बन्धन हो गया। एक ओर पूँजीपतियोंका एकाधिपत्य था, जिसकी प्रतिनिधि अस्थायी सरकार थी; दूसरी ओर सर्वहारा वर्ग और किसानोंका एकाधिपत्य था जिसका प्रतिनिधि मज़दूर और सैनिक प्रतिनिधियोंका सोवियत था।

फलतः शासन-सत्ता **द्विधात्मक** हो गयी।

इसका क्या कारण था कि सोवियतोंमें पहले मेन्शेविकों और सामाजिक-क्रान्तिकारियोंका बहुमत था?

इसका क्या कारण था कि विजयी मज़दूरों और सैनिकोंने स्वेच्छासे शासन-सूत्र पूँजीवादी प्रतिनिधियोंके हाथों सौंप दिया?

लेनिनने बताया कि कोटि-कोटि जनता, जिसे राजनीतिका अनुभव न था, सहसा जाग उठी थी और राजनीतिक कार्यवाहीमें भाग लेनेके लिये आगे बढ़ आयी थी। इस जनतामें अधिकतर छोटी पूँजीके लोग, किसान, और ऐसे मज़दूर थे जो कुछ दिन पहले किसान थे—ऐसे लोग जो पूँजीपतियों और सर्वहारा वर्गके बीचमें आते थे। योरपके बड़े देशोंमें उस समय रूस सबसे अधिक निम्न-पूँजीवादी देश था।

लेनिनने लिखा था,—इस देशमें "निम्न-पूँजीवादकी एक विशाल लहरने हर वस्तुको छाप लिया है और श्रेणी-सजग सर्वहाराको इसने संख्या द्वारा ही नहीं, विचार-दृष्टिसे भी मोह लिया है; अर्थात मज़दूरोंके एक बड़े भारी समुदायमें इसने निम्न-पूँजीवादियोंके राजनीतिक दृष्टिकोणको बिठा दिया है और उसे जमा दिया है।"

(संक्षिप्त लेनिन-ग्रंथावली—अ. सं., खं. ६, पृ. ४९)

निम्न-पूँजीवादी लहरके प्रबल थपेड़ोंसे ही निम्न-पूँजीवादी मेन्शेविक और सामाजिक-क्रान्तिकारी पार्टियाँ ऊपर पहुँच गयीं।

लेनिनने एक दूसरा कारण यह बताया था कि युद्धकालमें सर्वहारा वर्गका स्वरूप बदल गया था और क्रान्तिके आरम्भमें सर्वहारा वर्गका संगठन और उसकी वर्ग-चेतना अपर्याप्त थी। युद्धकालमें सर्वहारा वर्गके ही भीतर विशाल परिवर्तन हो गया था। नियमित मज़दूरोंमेंसे ४० प्रतिशतके लगभग फ़ौजमें भर्ती कर लिये गये थे। भर्तीसे बचनेके लिये बहुतसे छोटी पूँजीके लोग, कारीगर और दूकानदार जिनके लिये सर्वहारा-दृष्टिकोण एक अनोखी वस्तु थी, कारखानोंमें भर्ती हो गये थे।

मजदूरोंके इस निम्न-पूँजीवादी भागमें मेन्शेविकों और सामाजिक-क्रान्तिकारियों जैसे निम्न-पूँजीवादी राजनीति-विशारदोंको उर्वर भूमि मिल गयी।

इसीलिये राजनीतिका अनुभव न होनेसे वहुतसे लोग निम्न-पूँजीवादके इस शक्तिशाली आवर्तमें फँस गये। क्रान्तिकी प्राथमिक सफलतासे उन्मत्त होकर वे आरंभ-कालमें समझौतावादी पार्टियोंके प्रभावमें आगये। इस भोले विश्वाससे कि पूँजीवादी शासन सोवियतोंके कार्यमें हस्तक्षेप न करेगा, शासनतंत्रको पूँजीवादियोंके हाथों सौंप देनेके लिये वे राजी हो गये।

बोल्शेविक पार्टीके सामने अब यह कार्य था कि वह धीरजसे काम लेकर जनताको समझाये कि अस्थायी सरकार साम्राज्यवादी है, सामाजिक क्रान्तिकारी और मेन्शेविक दगाबाज हैं, और जब तक अस्थायी सरकारके बदले सोवियतोंकी सरकार नहीं बनती, तब तक शान्ति नहीं स्थापित हो सकती।

इस काममें बोल्शेविक पार्टी जी-जानसे जुट गयी।

उसने अपने क़ानूनी पत्रोंका प्रकाशन फिर आरम्भ कर दिया। फ़रवरी-क्रान्तिके पाँच दिन बाद पेत्रोग्रादमें **प्रावदा** छपने लगा और कुछ दिन बाद ही मॉस्कोसे **सोशियाल डेमोक्राट (सामाजिक-जनवादी)** निकलने लगा। पार्टी उन लोगोंका नेतृत्व अपने हाथमें ले रही थी जिनका उदारपंथी पूँजीवादियों तथा मेन्शेविकों और सामाजिक-क्रान्तिकारियोंमें विश्वास कम हो रहा था। उसने धीरजसे किसानों और सैनिकोंको मजदूर-वर्गके साथ मिलकर काम करनेकी आवश्यकताको समझाया। उसने उन्हें समझाया कि बिना क्रान्तिको आगे बढ़ाये और बिना अस्थायी सरकारकी जगह सोवियतोंकी सरकार बनाये किसानोंको न शान्ति मिलेगी न भूमि मिलेगी।

सारांश

साम्राज्यवादी युद्धका आरंभ हुआ पूँजीवादी देशोंके विषम विकासके कारण, प्रमुख शक्तियोंका सन्तुलन बिगड़ जानेके कारण और एक नया सन्तुलन बनानेके लिये युद्ध द्वारा संसारका नया बँटवारा करनेकी साम्राज्यवादियोंकी आवश्यकताके कारण।

यह युद्ध ऐसा विध्वंसक न होता, और शायद उसका ऐसा विशाल परिमाण भी न होता यदि दूसरे इन्टरनेशनलकी पार्टियोंने मजदूर-वर्गके हितोंसे दगा न की होती, यदि उन्होंने दूसरे इन्टरनेशनलकी काँग्रेसोंके युद्ध-विरोधी निर्णयोंका उल्लंघन न किया होता, यदि अपनी साम्राज्यवादी सरकारों और युद्ध-प्रचारकोंके विरुद्ध बढ़ने और मजदूर-वर्गको जगानेका उन्होंने साहस दिखाया होता।

बोल्शेविक पार्टी ही एकमात्र सर्वहारा पार्टी थी जो समाजवाद और अन्तर-

राष्ट्रीयताके उद्देश्योंके प्रति सच्ची रही और जिसने अपनी साम्राज्यवादी सरकारसे गृह-युद्ध ठान लिया। दूसरे इन्टरनेशनलकी और सभी पार्टियाँ अपने नेताओं द्वारा पूँजी-पतियोंसे बँधी होनेके कारण साम्राज्यवादकी लहरमें बह चलीं। अपना लंगर तोड़कर वे साम्राज्यवादियोंमें जा मिलीं।

यह युद्ध पूँजीवादके साधारण संकटका द्योतक ही था; साथ ही उससे यह संकट और बढ़ गया और संसारका पूँजीवाद निर्बल पड़ गया। संसारमें सबसे पहले रूसके मजदूरोंने और बोल्शेविक पार्टीने पूँजीवादकी इस निर्बलतासे सफलतापूर्वक लाभ उठाया। साम्राज्यवादी मोर्चेमें उन्होंने दरार डाल दी, जारका ध्वंस कर दिया, और मजदूर तथा सैनिक प्रतिनिधियोंके सोवियत स्थापित किये।

क्रान्तिमें पहली बाजी जीतनेसे मदहोश होकर, और मेन्शेविकों तथा सामाजिक क्रान्तिकारियोंकी झाँसा-पट्टीमें गाफ़िल होकर कि अब आगे मैदान साफ़ है, निम्न-पूँजीवादियों, सैनिकों और मजदूरोंमेंसे अधिकांशने अस्थायी सरकारका भरोसा करके उसका समर्थन किया।

बोल्शेविक पार्टीके सामने यह कार्य था कि जो आम मजदूर पहली बाजी जीत कर मद-होश हो रहे थे, उन्हें यह समझाये कि क्रान्तिकी पूर्ण विजय अब भी बहुत दूर है। शासन-सूत्र जब तक पूँजीपतियोंकी अस्थायी सरकारके हाथमें है और जब तक सोवियतोंमें समझौतावादियों—मेन्शेविकों और सामाजिक-क्रान्तिकारियोंकी तूती बोलती है, तब तक जनताको न शान्ति मिलेगी, न भूमि मिलेगी, न अन्न मिलेगा। पूर्ण विजय पानेके लिये अभी एक क़दम और बढ़नेकी जरूरत है और शासन-सूत्र सोवियतों के हाथोंमें सौंपना है।

★

सातवाँ अध्याय

अक्तूबरकी समाजवादी क्रान्तिकी विजय और उसकी तैयारीके समय बोल्शेविक पार्टी।

(अप्रैल १९१७–१९१८)

१. फ़रवरी क्रान्तिके बाद देशकी परिस्थिति—गुप्त जीवनसे पार्टीका खुला राजनीतिक कार्य—पेत्रोग्रादमें लेनिनका आगमन—लेनिनका अप्रैल प्रस्ताव—समाजवादी क्रान्तिकी ओर संक्रमण करनेके लिये पार्टीकी नीति।

घटना-क्रमसे और अस्थायी सरकारके कार्योंसे बोल्शेविक नीतिके सही होनेके नित नये प्रमाण मिलने लगे। दिन पर दिन यह ज़ाहिर होने लगा कि अस्थायी सरकार जनताके पक्षमें न होकर उसके विरोधमें है, वह शान्तिके बदले युद्धके पक्षमें है, और वह जनताको शान्ति, भूमि और अन्न देनेमें अनिच्छुक और असमर्थ है। बोल्शेविकोंको अपने आन्दोलन-कार्यके लिये ज़मीन तैयार मिली।

एक ओर तो मज़दूर और सैनिक ज़ार-सरकारका ध्वंस कर रहे थे और सम्राट-प्रथाका समूल नाश करनेमें लगे हुए थे, दूसरी ओर अस्थायी सरकार निश्चित रूपसे सम्राट-प्रथाको बनाये रखना चाहती थी। २ मार्च १९१७ को उसने गुच्कौफ़ और शुल्गिनको ज़ारसे मिलनेका गुप्तरूपसे निर्देश किया। पूँजीपति, ज़ार निकोलस रोमानौफ़के बदले उसके भाई माइकेलके हाथोंमें शासन-सूत्र देना चाहते थे। लेकिन जब रेलवे-कर्मचारियोंकी एक सभामें गुच्कौफ़ने अपने व्याख्यानके अन्तमें "सम्राट माइकेलकी जै" बोली ते मज़दूरोंने इस बातकी माँग की कि गुचकौफ़को पकड़कर उसकी तलाशी ली जाय। वे नाराज़ होकर बोले कि जैसे "नागनाथ वैसे साँपनाथ" इन्हींमें क्या कम ज़हर होगा ?"

ज़ाहिर था कि मज़दूर राजतंत्रकी पुनःस्थापना न होने देंगे।

मज़दूर और किसान जो अपना खून बहाकर क्रान्ति कर रहे थे, वे आशा करते थे कि युद्ध बन्द कर दिया जायगा। वे अन्न और भूमिके लिये लड़ रहे थे और इस बातकी माँग कर रहे थे कि आर्थिक अव्यवस्थाको दूर करनेके लिये जोरदार उपायोंसे काम लिया जाय। लेकिन अस्थायी सरकार कानोंमें तेल डाले बैठी थी और जनताकी इन जरूरी माँगोंको अनसुनी कर रही थी। उसमें पूंजीपतियों और ज़मींदारोंके मान्य

प्रतिनिधि विद्यमान थे, इसलिये इस सरकारकी यह जरा भी इच्छा न थी कि वह किसानोंकी इस माँगको पूरा करे कि उन्हें जमीन लौटा दी जाय। न वे मजदूरोंके लिये अन्नका प्रबन्ध कर सकते थे क्योंकि ऐसा करनेसे उन्हें अनाजके बड़े-बड़े व्यापारियोंके हितोंको कुचलना पड़ता और हर उपायसे जमींदारों और धनी किसानोंकी खत्तियोंसे अनाज निकालना पड़ता। न यह सरकार शान्तिहीकी स्थापना कर सकती थी। वह ब्रिटिश और फ्रान्सीसी पूँजीपतियोंसे फँसी थी, इसलिये उसकी जरा भी मंशा न थी कि युद्ध बन्द किया जाय। इसके विपरीत उसने कोशिश की कि क्रान्तिसे लाभ उठाकर साम्राज्यवादी युद्धमें रूस और भी जोर-शोरसे हिस्सा ले तथा कुस्तुन्तुनिया, दर्रे दानियाल के जल-डमरूमध्य और गैलीशिआपर अधिकार करनेकी साम्राज्यवादी योजना सफल हो।

यह स्पष्ट था कि अस्थायी सरकारकी नीतिमें जनताके विश्वासका शीघ्र ही अन्त हो जायगा।

यह स्पष्ट हो रहा था कि फ़रवरी-क्रान्तिसे जिस द्विधात्मक शासन-तंत्रका जन्म हुआ था, उसके दिन गिने हुए हैं। घटना-क्रमकी यह मांग थी कि शक्ति एक जगह केन्द्रित हो, चाहे अस्थायी सरकारमें और चाहे सोवियतों में।

यह सही है कि मेन्शेविकों और सामाजिक-क्रांतिकारियोंकी समझौतावादी नीति का अब भी आम जनतामें समर्थन हो जाता था। ऐसे काफ़ी मजदूर थे और उनसे भी ज्यादा सैनिक और किसान थे, जो अब भी सोचते थे कि "शीघ्र ही विधान-सभा बुलायी जायगी और वह सभी कार्योंको शान्तिपूर्ण ढंगसे सम्पन्न करेगी।" इनका विचार था कि युद्ध दूसरे देशोंको जीतनेके लिये नहीं हो रहा वरन् देशकी रक्षाके लिये मजबूरीसे हो रहा है। युद्धके ऐसे समर्थकोंको लेनिन "ईमानदार गुमराह" कहते थे। ये लोग सामाजिक-क्रान्तिकारियों और मेन्शेविकोंकी भुलावों और वायदोंकी नीतिको अब भी सही समझते थे। जाहिर था कि भुलावों और वायदोंसे बहुत दिन तक काम नहीं चल सकता था क्योंकि घटना-क्रमसे और अस्थायी सरकारके कार्योंसे यह नित प्रकट हो रहा था और सिद्ध हो रहा था कि सामाजिक-क्रांतिकारियों और मेन्शेविकोंकी नीति टालने और सीधे लोगोंको बहलानेकी नीति है।

जनताके क्रान्तिकारी आन्दोलनके विरुद्ध अस्थायी सरकार लुकाचोरीसे आक्रमण करके और कूटनीतिसे काम लेकर ही सन्तुष्ट न थी। "अनुशासन स्थापित करने" विशेषकर सैनिकोंमें अनुशासन लाने के नामपर, वह कभी-कभी जनताके जनवादी अधिकारोंपर खुला प्रहार करनेकी चेष्टा करती थी और "व्यवस्था क़ायम करने" के बहाने क्रान्तिकी धाराको पूँजीवादी हितोंके अनुकूल मार्गोंसे बहाना चाहती थी। लेकिन इस दिशामें उसकी सभी चेष्टाएँ विफल हो गयीं। जनताने अपने जनवादी अधिकारोंका अर्थात् भाषण, प्रकाशन, सभा-समिति और प्रदर्शनकी स्वाधीनताका बड़ी आतुरतासे उपयोग किया। मजदूरों और सैनिकोंने हालमें मिली हुई जनवादी स्वाधीनताका पूर्ण उपयोग करनेकी चेष्टाकी जिससे कि वे देशके राजनीतिक जीवनमें

सक्रिय भाग ले सकें, परिस्थितिको बुद्धिमानीसे पहचान सकें और अगला क़दम निश्चित कर सकें।

ज़ारशाहीकी विकट परिस्थितियोंमें बोल्शेविक पार्टीके संगठनोंने गुप्तरूपसे काम किया था; फ़रवरी-क्रान्तिके बाद गुप्त जीवन छोड़कर वे खुले आम अपना राजनीतिक और संगठनात्मक कार्य आगे बढ़ाने लगे। उस समय बोल्शेविक पार्टीमें चालीस-पैंतालीस हज़ारसे ज़्यादा मेम्बर न थे। लेकिन संघर्षकी आँचमें तपे हुए ये सबके सब खरे क्रान्तिकारी थे। जनवादी **केन्द्रीयता**के सिद्धान्तपर पार्टी-कमिटियाँ पुनः संगठित की गयीं। ऊपरसे लेकर नीचे तक सभी पार्टी-संस्थाओंके लिये निर्वाचन आवश्यक हो गया।

पार्टीके क़ानूनी जीवनका आरम्भ होनेपर भीतरी मतभेद स्पष्ट होने लगे। कामेनेफ़ और मॉस्को-संगठनके कई कार्यकर्ता—उदाहरणके लिये राइकौफ़, बुब्नौफ़ और नोगिन—कुछ शर्तोंके साथ अस्थायी सरकार और युद्ध-संचालकोंकी नीतिका समर्थन करते थे इसलिये उनकी स्थिति अर्द्ध-मेन्शेविकों जैसी थी। कालापानीसे हालमें लौटे हुए स्तालिन, तथा मोलोतौफ़ और दूसरे लोगोंने पार्टीके बहुमतसे अस्थायी सरकारमें अविश्वासकी नीति घोषित की और युद्ध-संचालकोंका विरोध किया। उन्होंने शांतिके लिये और साम्राज्यवादी संग्रामके विरुद्ध सक्रिय संघर्ष करनेके लिये कहा। कुछ पार्टी-मेम्बर हिचकिचाये। इसका कारण यह था कि जेल या कालेपानीमें बहुत दिन रहनेके कारण वे राजनीतिमें पिछड़ गये थे।

पार्टीके नेता लेनिनका अभाव खलने लगा।

३ (नयी शैली १६) अप्रैल, १९१७ को लंबे प्रवासके बाद लेनिन रूसमें लौट आये। पार्टी और क्रान्तिके लिये लेनिनका वापस आना भारी महत्व रखता था।

स्वीज़रलैंडमें ही क्रान्तिका प्रथम समाचार मिलते ही लेनिनने पार्टी और रूसी मज़दूर-वर्गके नाम "विदेशसे पत्र" लिखे थे जिसमें उन्होंने कहा था,—

> "मज़दूरो, ज़ारशाहीसे लड़ते हुए गृह-युद्धमें तुमने सर्वहारा-वीरताके, जनताकी वीरताके चमत्कार दिखाये हैं। अब क्रान्तिकी दूसरी मंज़िल फ़तह करनेके लिये तुम्हें संगठनके चमत्कार, सर्वहारा वर्ग और सारी जनताके संगठनके चमत्कार दिखाने होंगे।" (**संक्षिप्त लेनिन-ग्रंथावली—अं. सं., खं. ६, पृ. ११**)

तीसरी अप्रैलकी रातको लेनिन पेत्रोग्रादमें आये। उनका स्वागत करनेके लिये हज़ारों मज़दूर, सिपाही, और मल्लाह फ़िनलैंड रेलवे स्टेशन और स्टेशनके चौराहे पर इकट्ठा हुए। लेनिनके रेलसे उतरनेपर जनताका उत्साह अवर्णनीय था। लोगोंने अपने नेताको पुरसा भर उठा लिया और उन्हें स्टेशनके मुख्य वेटिंग रूममें ले गये। वहाँ पर मेन्शेविक चेख़ाइत्से और स्कोबेलेफ़ने पेत्रोग्राद सोवियतकी ओरसे "स्वागत" भाषण दिये जिनमें उन्होंने यह "आशा प्रकट की" कि वे और लेनिन एक ही

"मुश्तर्का जबान" में बातें कर सकेंगे। परन्तु लेनिन उनका "स्वागत–भाषण" सुननेके लिये नहीं रुके। उन्हें पीछे छोड़कर वह मजदूरों और सिपाहियोंकी भीड़के पास जा पहुँचे। वे एक हथियारबन्द गाड़ीके ऊपर चढ़ गये और फिर उन्होंने अपना वह प्रसिद्ध व्याख्यान दिया जिसमें उन्होंने जनतासे समाजवादी क्रान्तिकी विजयके लिये लड़नेको कहा था। "समाजवादी क्रान्ति जिन्दाबाद"—इन शब्दोंके साथ, प्रवास के दीर्घकालके बाद, लेनिनने अपना यह पहला व्याख्यान समाप्त किया।

रूसमें आकर लेनिन पूरे उत्साहसे क्रान्तिकारी कार्योंमें लग गये। आनेके दूसरे दिन युद्ध और क्रान्तिके विषयपर उन्होंने बोल्शेविकोंकी बैठकमें एक रिपोर्ट पेश की। इस रिपोर्टके निश्चयोंको उन्होंने एक दूसरी सभामें दोहराया जिसमें मेन्शेविक और बोल्शेविक दोनों थे।

इन्हीं निश्चयोंको लेनिनका प्रसिद्ध 'अप्रैल प्रस्ताव' कहते हैं जिनसे पूँजीवादी क्रान्तिसे समाजवादी क्रान्तिकी ओर बढ़नेमें पार्टी और सर्वहारा वर्गको एक स्पष्ट क्रान्तिकारी मार्ग मिल सका।

क्रान्ति और पार्टीके भावी कार्यके लिये लेनिनका यह प्रस्ताव अत्यन्त महत्वपूर्ण था। क्रान्तिसे देशके जीवनने भारी पलटा खाया था। जारशाहीके ध्वंसके बाद संघर्ष की नयी परिस्थितियोंमें एक नये मार्गपर साहस और आत्मविश्वाससे आगे बढ़नेके लिये पार्टीको एक नये दृष्टिकोणकी आवश्यकता थी। लेनिनके प्रस्तावसे पार्टीको यह नया दृष्टिकोण मिला।

पूँजीवादी–जनवादी क्रांतिसे सोशलिस्ट क्रांतिकी ओर, अथवा क्रांतिकी पहली अवस्थासे दूसरी अवस्था—सोशलिस्ट क्रांतिकी अवस्थाकी ओर संक्रमण करनेके लिये जिस संघर्षकी आवश्यकता थी, उसके लिये लेनिनके इस अप्रैल प्रस्तावसे पार्टीको एक सुन्दर योजना मिली। पार्टीके पूर्ण इतिहासने पार्टीको इस महान् कार्यके लिये तैयार किया था। बहुत पहले १९०५ में ही, **जनवादी क्रांतिमें सामाजिक जनवादकी दो कार्यनीतियाँ** नामकी अपनी पुस्तिकामें, लेनिन ने कहा था कि जारशाहीके ध्वंसके बाद सर्वहारा वर्ग सोशलिस्ट क्रांतिमें लग जायगा। इस में नयी बात यह थी कि उन्होंने समाजवादी क्रांतिकी ओर संक्रमणके आरम्भकी दशाके लिये एक ऐसी ठोस योजना रखी थी जिसका एक दृढ़ सैद्धान्तिक आधार था।

आर्थिक क्षेत्रमें संक्रमणकी ये मंजिलें थीं,—रियासती जमीनको जब्त करना और समस्त भूमिको देशकी सम्पत्ति बनाना; सभी बैंकोंको मिलाकर एक राष्ट्रीय बैंक बनाना जो मजदूर प्रतिनिधियोंके सोवियतके नियंत्रणमें रहेगा; और वस्तुओंके सामाजिक उत्पादन और वितरणपर नियंत्रण स्थापित करना।

राजनीतिक क्षेत्रमें लेनिनका प्रस्ताव था कि पार्लियामेंटरी प्रजातंत्रसे सोवियत प्रजातंत्रकी ओर संक्रमण हो। मार्क्सवादके दर्शन और उसके प्रत्यक्ष अभ्यासमें यह एक महत्वपूर्ण कदम था। अभी तक मार्क्सीय सिद्धान्तवादियोंका विचार था कि

सोशलिज़्मकी ओर संक्रमण करनेके लिये पार्लियामेंटरी प्रजातंत्रही सबसे अच्छा राजनीतिक संगठन है। अब लेनिनने यह प्रस्ताव किया कि पूँजीवादसे समाज़वादकी ओर बढ़नेके युगमें, समाजके राजनीतिक संगठनका सबसे उपयोगी रूप सोवियत प्रजातंत्र है और पार्लियामेंटरी प्रजातंत्रके बदले इसी रूपको अपनाना चाहिये।

इस प्रस्तावमें कहा गया था,—

"रूसकी वर्तमान परिस्थितिका विशेष लक्षण यह है कि वह क्रांतिकी पहली अवस्थासे **दूसरी अवस्थाकी ओर संक्रमण**की द्योतक है। सर्वहारा वर्गकी अपर्याप्त वर्ग-चेतना और उचित संगठनके अभावके कारण क्रांतिकी पहली अवस्थामें शक्ति पूँजीपतियोंके हाथोंमें सौंप दी गयी। दूसरी अवस्थामें यह शक्ति सर्वहारा वर्ग और बिलकुल ग़रीब किसानोंके हाथों सौंपी जानी चाहिये।" **(उपरोक्त—पृष्ठ २२)**

और भी ;

"मजदूर प्रतिनिधियोंके सोवियतसे पार्लियामेंटरी प्रजातंत्रकी ओर लौटना पीछे हटनेके बराबर होगा। इसलिये पार्लियामेंटरी प्रजातंत्रके बदले सारे देशमें, ऊपर से लेकर नीचे तक, मजदूरों, खेतिहर मजूरों और किसानोंके प्रतिनिधियोंके सोवियतोंका प्रजातंत्र होना चाहिये।" **(उपरोक्त—पृष्ठ १३)**

नयी सरकार यानी अस्थायी सरकारके शासनमें लेनिनके अनुसार महायुद्ध डाकुओंका साम्राज्यवादी युद्ध बना रहा। पार्टीका कर्तव्य था कि वह इस बातको जनताको समझाये और उसे बताये कि जब तक पूंजीपतियोंका ध्वंस न होगा, तब तक डाकुओंकी शांतिके बदले सच्ची जनवादी शांतिकी स्थापनासे युद्धको समाप्त करना असम्भव होगा।

जहाँ तक अस्थायी सरकारका संबंध था, लेनिनने यह नारा लगाया कि "अस्थायी सरकारको कोई मदद न दी जाय।"

इस प्रस्तावमें लेनिनने यह भी दिखाया कि सोवियतोंमें हमारी पार्टी अब भी अल्पमतमें है; सोवियतोंपर मेन्शविकों और सामाजिक-क्रांतिकारियोंके एक ऐसे गुटने अधिकार जमा रखा है जो सर्वहारा वर्गमें पूँजीवादी प्रभाव विस्तार करनेका अस्त्र बना हुआ है। इसलिये पार्टीका कार्य इस प्रकार था,—

"जनता को यह समझना चाहिये कि मजदूर-प्रतिनिधियोंके सोवियत ही क्रांतिकारी सरकारका **एक मात्र संभव** रूप हैं। इसलिये हमारा कर्तव्य है कि जब तक **यह** सरकार पूँजीपतियोंके प्रभावमें बनी रहे, तब तक उसकी कार्य-नीतिकी भूलोंको धीरतासे, क्रमपूर्वक और डट कर जनताको समझाना चाहिये। भूलोंको समझाते समय जनताकी प्रत्यक्ष आवश्यकताओंको ध्यानमें रखना होगा। जब तक हम अल्पमतमें हैं, तब तक आलोचना और दोष-दर्शनका कार्य चलता रहेगा; साथ ही हम इस बातकी आवश्यकतापर जोर देंगे कि संपूर्ण राजकीय शक्ति मजदूर प्रतिनिधियोंके सोवियतोंको सौंप दी जाय।..." **(उपरोक्त—पृष्ठ २२)**

इसका यह अर्थ था कि उस समय लेनिन अस्थायी सरकारसे, जिसमें सोवियतोंको विश्वास था, विद्रोह करनेकी मांग न कर रहे थे। वह उसके ध्वंसकी मांग न कर रहे थे, वरन् चाहते थे कि समझाकर और अपने मतसे प्रभावित करके सोवियतों में अपना बहुमत क़ायम किया जाय, सोवियतोंकी नीति बदली जाय और सोवियतोंके द्वारा सरकारकी रूप-रेखा और उसकी नीतिको बदला जाय।

यह एक ऐसा मार्ग था कि जिसपर क्रांतिकी प्रगति शांतिपूर्ण उपायोंसे होती थी।

लेनिनने यह भी मांग की कि "पुरानी मिर्जई" को उतार डाला जाय अर्थात् पार्टीको अब सामाजिक-जनवादी पार्टी न कहलाना चाहिये। रूसी मेन्शेविक और दूसरे इन्टरनेशनलकी पार्टियाँ अपनेको सामाजिक-जनवादी कहती थीं। अवसरवादियों ने, समाजवादके प्रति विश्वासघात करनेवालोंने इस नामको दूषित कर दिया था और उसे हेय बना दिया था। लेनिनका प्रस्ताव था कि बोल्शेविकोंकी पार्टी अपनेको **कम्युनिस्ट पार्टी** कहे, जो नाम मार्क्स और एंगेल्सने अपनी पार्टीको दिया था। यह नाम वैज्ञानिक दृष्टिसे भी सही था क्योंकि कम्युनिज़्मकी प्राप्ति ही बोल्शेविक पार्टी का चरम लक्ष्य था। मनुष्यजाति पूंजीवादसे प्रत्यक्षतः समाजवादकी ओर ही संक्रमण कर सकती है अर्थात् उस व्यवस्थाकी ओर बढ़ सकती है जिसमें उत्पादनके साधनों पर सबका समान अधिकार हो और प्रत्येक व्यक्तिके कार्यके अनुसार वस्तुओंका वितरण हो। लेनिनका कहना था कि हमारी पार्टी इससे आगेकी बात देख रही है। सोशलिज़्मसे क्रमशः कम्युनिज़्मकी ओर बढ़ना अनिवार्य है, जिसके झंडेपर यह सिद्धांत वाक्य है—"जितना बने उतना करो, जितना चाहो उतना भरो।"

अंतमें लेनिनने अपने प्रस्तावमें इस बातकी माँग की कि एक नया तीसरा, कम्युनिस्ट इन्टरनशनल बनाया जाय जो अवसरवाद और सामाजिक-राष्ट्रवादकी भावनाओंसे मुक्त हो।

लेनिनके इस प्रस्तावसे पूंजीपति, मेन्शेविक और सामाजिक-क्रांतिकारी आपेसे बाहर होगये।

मेन्शेविकोंने मजदूरोंके नाम एक ऐलान निकाला जिसके आरम्भमें ही उन्हें सावधान किया गया था कि "क्रांति ख़तरेमें है।" मेन्शेविकोंके मतसे ख़तरा इस बातमें था कि बोल्शेविकोंने मजदूर और सैनिक प्रतिनिधियोंके सोवियतोंको संपूर्ण शक्ति सौंप देनेकी मांग की है।

प्लेख़ानोफ़ने अपने अख़बार **येदिन्स्त्वो (एकता)** में एक लेख लिखा जिसमें लेनिनके व्याख्यानको "पागलका प्रलाप" बताया। उसने मेन्शेविक चख़ाइत्सेके शब्दोंको उद्धृत किया, "केवल लेनिन ही क्रांतिसे बाहर रहेंगे; हम अपनी राहपर चलते जायँगे।"

१४ अप्रैलको पेत्रोग्रादमें बोल्शेविकोंकी एक नगर-कान्फ्रेन्स हुई। कान्फ्रेन्सने लेनिनके प्रस्तावका अनुमोदन किया और उसे अपने कार्यका आधार बनाया।

थोड़ेही समयमें पार्टीके स्थानीय संगठनोंने भी इस प्रस्तावका अनुमोदन किया। कामेनेफ़, राईकौफ़, और पियाताकौफ़ जैसे कुछ इने-गिने लोगोंको छोड़कर सम्पूर्ण पार्टीने लेनिनके प्रस्तावका पूर्ण संतोषसे स्वागत किया।

२. अस्थायी सरकारके संकटका आरम्भ—बोल्शेविक पार्टीकी अप्रैल-कान्फ्रेन्स

एक ओर जहाँ बोल्शेविक क्रान्तिको और आगे बढ़ानेकी कोशिश कर रहे थे, वहाँ दूसरी ओर अस्थायी सरकार जनताकी छातीपर मूँग दल रही थी। १८ अप्रैलको वैदेशिक मंत्री मिल्यूकौफ़ने मित्र-देशोंको सूचित किया कि "सारी जनता महायुद्धको तब तक जारी रखना चाहती है जब तक कि निश्चित विजय न मिल जाय। अस्थायी सरकार मित्र-देशोंके प्रति अपने कर्तव्यका पालन करना चाहती है।"

इस प्रकार अस्थायी सरकारने ज़ारकी संधियोंके प्रति वफ़ादारी निबाही और वादा किया कि "पूर्ण विजय"के लिये जनताके जितने लहूकी आवश्यकता होगी उतना वह साम्राज्यवादियोंको देगी।

१९ अप्रैलको "मिल्यूकौफ़के परचे"की यह बात मज़दूरों और सिपाहियोंको मालूम हुई। २० अप्रैलको बोल्शेविक पार्टीकी केन्द्रीय समितिने जनतासे अस्थायी सरकारकी साम्राज्यवादी नीतिका विरोध करनेको कहा। २०, २१ अप्रैल (३, ४ मई १९१७) को मिल्यूकौफ़के परचेसे क्षुब्ध होकर जिन मज़दूरों और सिपाहियोंने एक प्रदर्शनमें भाग लिया था, उनकी संख्या एक लाखसे कम न थी। उनके झंडोंपर लिखा हुआ था—"गुप्त संधियोंको प्रकाशित करो", "युद्धका अन्त हो", "सोवियतका राज हो"। मज़दूर और सिपाही शहरके बाहरसे उसके मध्यभागकी ओर बढ़ चले जहाँ अस्थायी सरकारका अड्डा था। नेव्स्की प्रॉस्पेक्ट और दूसरी जगहोंमें पूँजीवादी गुटोंसे उनकी मुठभेड़ हुई।

जनरल कौर्निलोफ़ जैसे कट्टर क्रांति-विरोधी लोग अब जुलूसपर गोली चलानेकी माँग करने लगे। उन्होंने इस बातकी आज्ञा भी दे दी लेकिन सिपाहियोंने आज्ञा माननेसे इनकार किया।

प्रदर्शनके समय पेत्रोग्राद पार्टी कमिटीके सदस्योंके एक छोटेसे गुट (बाग्दात्येफ़ आदि) ने यह नारा लगाया कि अस्थायी सरकारका तुरंत ध्वंस किया जाय। बोल्शेविक पार्टीकी केन्द्रीय समितिने इन लोगोंका तीव्र खंडन किया। इन लोगोंका व्यवहार "गरमदली" उच्छृंखलताका था। केन्द्रीय समितिका विचार था कि यह नारा

अनुचित और असामयिक है। उससे सोवियतोंमें पार्टीका बहुमत क़ायम करनेके कार्यमें बाधा पड़ती है। यह नारा क्रांतिके शांतिमय विकासकी पार्टी-नीतिके विरोधमें है।

२०, २१ अप्रैलकी घटनाओंसे पता चल गया कि अस्थायी सरकारके संकटका आरंभ हो चुका है।

मेन्शेविकों और सामाजिक-क्रांतिकारियोंकी अवसरवादी नीतिमें यह पहली गहरी दरार पड़ी थी।

२ मई १९१७ को जनताके दबावसे मिल्यूकौफ़ और गुच्कौफ़ अस्थायी सरकारसे अलग कर दिये गये।

पहली **संयुक्त** अस्थायी सरकार बनायी गयी। इसमें पूंजीपतियोंके प्रतिनिधियोंके अलावा मेन्शेविक स्कोबेलेफ़ और त्सेरेतेली तथा सामाजिक-क्रांतिकारी चरनौफ़, केरेन्स्की, आदि थे।

इस प्रकार जो मेन्शेविक १९०५ में कहते थे कि सामाजिक-जनवादी पार्टीके प्रतिनिधियोंके लिये **क्रांतिकारी** अस्थायी सरकारमें भाग लेना असम्भव है, अब वे ही **क्रांति-विरोधी** अस्थायी सरकारमें भाग लेना अपने प्रतिनिधियोंके लिये उचित समझने लगे।

इस प्रकार मेन्शेविक और सामाजिक-क्रांतिकारी भागकर क्रांति-विरोधी पूंजीपतियोंसे जा मिले।

२४ अप्रैल १९१७ को बोल्शेविक पार्टीकी सातवीं (अप्रैल) कान्फ्रेन्स हुई। पार्टीके जीवनमें यह पहली खुली बोल्शेविक कान्फ्रेन्स थी। पार्टीके इतिहासमें इस कान्फ्रेन्सका पार्टी-कांग्रेस जैसा ही महत्व है।

अप्रैलकी इस अखिल रूसी कान्फ्रेन्सने दिखा दिया कि पार्टी जोरोंसे बढ़ रही है। इस कान्फ्रेन्समें १३३ प्रतिनिधि आये थे जो वोट दे सकते थे और १८ ऐसे थे जो केवल बोल सकते थे परन्तु वोट न दे सकते थे। पार्टीके ८०,००० संगठित सदस्योंके ये प्रतिनिधि थे।

युद्ध और क्रांतिके सभी मूल प्रश्नों पर कान्फ्रेन्सने विचार किया और वर्तमान परिस्थिति, युद्ध, अस्थायी सरकार, सोवियत, कृषि-संबंधी प्रश्न, जाति समस्या, आदिपर पार्टी-नीति स्थिर की।

अपने अप्रैल-प्रस्तावमें लेनिनने जिन सिद्धान्तोंका उल्लेख किया था, उन्होंने अपनी रिपोर्टमें उनका विस्तार किया। पार्टीका कार्य यह था कि क्रांतिकी पहली अवस्थासे "जब कि शक्ति पूँजीपतियोंके हाथों सौंप दी गयी... **दूसरी अवस्थाकी ओर,** जब कि शक्ति सर्वहारा-वर्ग और सबसे ग़रीब किसानोंके हाथों सौंप दी जानी चाहिये" (लेनिन) संक्रमणको पूरा करे। पार्टीको सोशलिस्ट क्रांतिकी तैयारीका मार्ग पकड़ना था। पार्टीका तात्कालिक कार्य लेनिनने इस नारेसे स्पष्ट किया था, "राज सोवियतों का हो।"

"राज सोवियतोंका हो," इस नारेका यह मतलब था कि द्विधात्मक शक्तिका अर्थात् अस्थायी सरकार और सोवियतोंके बीच शक्तिके बँटवारेका, अन्त करना आवश्यक था। **संपूर्ण** शक्ति सोवियतोंको देना आवश्यक था और शासन-संस्थाओंसे ज़मींदारों और पूँजीपतियोंके प्रतिनिधियोंको निकाल बाहर करना आवश्यक था।

कान्फ्रेन्सने निश्चय किया कि पार्टीका एक बहुत जरूरी काम यह है कि वह लगातार जनताके सामने इस सत्यकी व्याख्या करे कि "अस्थायी सरकार स्वभावसे ही ज़मींदारों और पूंजीपतियोंकी शासन-संस्था है"। पार्टीको यह भी दिखाना था कि सामाजिक क्रांतिकारियों और मेन्शेविकोंकी समझौतावादी नीति कितनी घातक है। वे जनताको झूठा दिलासा दे रहे हैं, और साम्राज्यवादी युद्ध तथा क्रांतिकी प्रतिक्रियाके नीचे उसे कुचल रहे हैं।

कान्फ्रेन्समें कामेनेफ़ और राइकौफ़ने लेनिनका विरोध किया। मेन्शेविकोंकी हाँ-में-हाँ मिलाते हुए उन्होंने कहा कि रूस सोशलिस्ट क्रांतिके लिये तैयार नहीं है, इसलिये रूसमें पूंजीवादी प्रजातंत्र ही संभव है। उन्होंने पार्टी और मजदूर-वर्गसे सिफ़ारिश की कि वे अस्थायी सरकारपर "नियंत्रण रखकर" ही संतुष्ट रहें। वास्तवमें मेन्शेविकोंकी तरह वे भी पूंजीवाद और पूंजीपतियोंकी शक्तिको बनाये रखनेके पक्षमें थे।

इस कान्फ्रेंसमें जिनोविएफ़ने भी लेनिनका विरोध किया, और वह भी इस समस्या पर कि बोल्शेविक पार्टी जिमेरवाल्ड-सहयोगमें बनी रहे या उससे नता तोड़ कर एक नया इन्टरनेशनल बनाये। जैसा युद्ध-कालमें सिद्ध होगया था, यह सहयोग शांति के लिये तो प्रचार करता था परन्तु युद्धमें भाग लेनेवाले पूंजीपतियोंसे एकदम नाता न तोड़ता था। इसलिये लेनिनने इस बातपर जोर दिया कि इस सहयोगसे तुरन्त अलग होकर एक नया कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल बनाया जाय। जिनेवियेफ़का प्रस्ताव था कि पार्टी जिमेरवाल्ड सहयोगमें बनी रहे। लेनिनने जिनोवियेफ़के प्रस्ताव का जोरोंसे खंडन किया और कहा कि उसकी कार्यनीति "नितान्त अवसरवादी और दुष्टतापूर्ण है"।

अप्रैलकी इस कान्फ्रेन्सने कृषि-संबंधी प्रश्न और जातीय समस्या पर भी विचार किया।

कृषि-संबंधी प्रश्नपर लेनिनने जो रिपोर्ट पेश की, उसपर कान्फ्रेन्सने यह प्रस्ताव स्वीकृत किया कि रियासती भूमि छीनकर किसान-समितियोंको दे दी जाय तथा सभी भूमिपर राष्ट्रीय अधिकार हो। बोल्शेविकोंने किसानोंसे ज़मीनके लिये लड़नेको कहा और उन्हें बताया कि बोल्शेविक पार्टी ही ऐसी एक क्रांतिकारी पार्टी है, और एक मात्र पार्टी है, जो ज़मींदारोंका ध्वंस करनेके लिये सचमुच किसानोंकी मदद कर रही है।

जातीय प्रश्नपर कॉमरेड स्तालिनकी रिपोर्टका भारी महत्व था। क्रांतिके पहले भी, साम्राज्यवादी युद्धके आरम्भ होनेसे पहले, जातीय प्रश्न पर बोल्शेविक पार्टीकी नीतिके मूल सिद्धान्तोंका लेनिन और स्तालिनने विस्तार किया था। लेनिन और

स्तालिनका कहना था कि सर्वहारा-पार्टीको साम्राज्यवादके विरुद्ध पीड़ित जातियोंके राष्ट्रीय स्वाधीनता-आन्दोलनका समर्थन करना चाहिये । फलतः बोल्शेविक पार्टी जातियोंके *आत्मनिर्णयके अधिकारका समर्थन करती थी, यहाँ तक कि वह उनके अलग* होने और स्वतंत्र राष्ट्र बनानेकी स्वाधीनताको भी स्वीकार करती थी । कान्फ्रेन्समें केन्द्रीय समितिकी ओरसे का. स्तालिनने जो रिपोर्ट दी, उसमें उन्होंने इस मतका समर्थन किया ।

पियाताकौफ़ने लेनिन और स्तालिनका विरोध किया । युद्धकालमें ही उसने बुखारिनके साथ जातीय प्रश्नपर अन्ध-राष्ट्रवादियोंकी लीक पकड़ ली थी । पियाताकौफ़ और बुखारिन जातियोंके आत्मनिर्णयके अधिकारका विरोध करते थे ।

जातीय प्रश्न पर पार्टीकी संगत और दृढ़ नीतिसे, जातियोंकी पूर्ण समानता और सभी प्रकारके जातीय उत्पीड़न तथा जातीय विषमताके विरुद्ध उसके संघर्षसे, उसे पीड़ित जातियोंकी सहानुभूति मिली और वे उसका समर्थन करने लगीं ।

अप्रैलकी कान्फ्रेन्समें जातीय प्रश्नपर जो प्रस्ताव स्वीकृत हुआ, वह इस प्रकार था,—

"जातीय उत्पीड़नकी जो नीति तानाशाही और बादशाहीसे विरासतकी तरह बच गयी है, उसका समर्थन जमींदार, पूंजीपति और निम्न-पूंजीवादी इसलिये करते हैं कि वे अपने वर्गके विशेषाधिकारोंकी रक्षा कर सकें और विभिन्न जातियोंके मजदूरोंमें फूट पैदा कर सकें । आधुनिक साम्राज्यवाद कमजोर जातियोंको दबाये रखनेके प्रयत्नोंको बढ़ाता है; इसलिये राष्ट्रीय उत्पीड़नको बढ़ानेमें वह एक नयी शक्ति है ।

"पूंजीवादी समाजमें राष्ट्रीय उत्पीड़नका ध्वंस, जहाँ तक भी संभव है, तभी संभव है जब एक संगत जनवादी प्रजातंत्रकी व्यवस्था हो और ऐसी शासन-प्रणाली हो जो सभी जातियों और भाषाओंकी पूर्ण एकताकी रक्षा कर सके ।

"रूसमें जितनी भी जातियाँ हैं वे अलग होकर अपना स्वाधीन राज्य बना सकें, यह अधिकार मान्य होना चाहिये । उनके इस अधिकारको अस्वीकार करनेका या प्रत्यक्ष रूपसे उसे चरितार्थ करनेके लिये उद्योग न करनेका यह अर्थ है कि हम दूसरोंका राज्य हड़पनेकी नीतिका समर्थन करते हैं । *सर्वहारा वर्ग द्वारा* जातियोंके विलग हो सकनेके अधिकारको मानने पर ही विभिन्न जातियोंके मजदूरोंमें निश्चित रूपसे पूर्ण एकता स्थापित हो सकती है । और सच्चे जनवादी मार्गोंसे जातियाँ एक दूसरेके निकट आ सकती हैं ...

"स्वाधीनतासे अलग होनेका अधिकार एक चीज है और किसी विशेष अवसर पर किसी विशेष जातिका अलग हो जाना कहाँतक सुविधा-जनक है, यह दूसरी चीज है । हमें इन दोनोंको एक न समझना चाहिये । ऐसा प्रश्न आनेपर सर्वहारा वर्गकी पार्टीको सामाजिक विकासके सम्पूर्ण हितोंका ध्यान रखते हुए,

और समाजवादके लिये सर्वहारा वर्गके संघर्षके हितोंका ध्यान रखते हुए, इस प्रश्नपर अपना मत स्थिर करना चाहिये।

"पार्टी इस बातकी माँग करती है कि प्रदेशोंमें विस्तृत स्वायत्त-शासन हो, ऊपरसे देखरेखकी व्यवस्थाका अन्त हो, अनिवार्य सरकारी भाषाका अन्त हो, और आर्थिक तथा सामाजिक परिस्थितियोंके अनुसार, प्रदेशकी जनताकी जातीय रूपरेखा आदिके अनुसार स्थानीय जनताही स्वायत्त शासनके प्रदेशोंकी सीमाएँ निश्चित करे।

"सर्वहारा वर्गकी पार्टी "जातियोंकी सांस्कृतिक स्वाधीनता" की बातको दृढ़तापूर्वक अमान्य ठहराती है, जिसके अनुसार शिक्षा आदि विषय केन्द्रीय शासनसे अलग करके किसी तरहकी जातीय सभाओंके हाथमें दे दिये जाते हैं। जातियोंकी इस सांस्कृतिक स्वाधीनता द्वारा एक ही जगह रहने वाले और एक ही जगह काम भी करने वाले मज़दूरोंको कृत्रिमतासे, उनकी विभिन्न "जातीय संस्कृतियों"के अनुसार, विभाजित कर दिया जाता है। दूसरे शब्दोंमें यह स्वाधीनता विभिन्न जातियोंकी पूंजीवादी संस्कृतिके साथ उस जातिके मजदूरोंके संबन्धको दृढ़ करती है, जब कि सामाजिक-जनवादियोंका ध्येय संसारभरके सर्वहारा वर्गकी अंतरराष्ट्रीय संस्कृतिको विकसित करना है।

"पार्टी इस बातकी माँग करती है कि विधानमें एक ऐसा आधारभूत क़ानून बनाया जाय जो प्रत्येक जातिके सब भाँतिके विशेषाधिकारोंको रद कर दे और अल्पसंख्यक जातियोंके अधिकारोंमें बाधा डालनेका अंत हो।

"मजदूर वर्गके हितोंकी यह माँग है कि रूसकी सभी जातियोंके मजदूरोंके एक ही सर्वहारा-संगठन हों, अर्थात् उनके एक ही राजनीतिक और ट्रेड यूनियन-संगठन और सहकार-विभागोंकी एकही शिक्षा संस्थायें आदि हों। विभिन्न जातियोंके मजदूरोंके ऐसे संगठन होनेपर ही सर्वहारा वर्गके लिये यह संभव होगा कि वह अंतरराष्ट्रीय पूंजीवाद और पूंजीवादी राष्ट्रवादसे सफलतापूर्वक युद्ध कर सके। (***लेनिन और स्तालिन—१९१८ अं. सं., पृ. ११८-१९***)

इस प्रकार अप्रैलकी कान्फ्रेंससे कामेनेफ़, पियाताकोफ़, बुखारिन, राइकोफ़, और उनके थोड़ेसे अनुचरोंका अवसरवादी लेनिन-विरोधी दृष्टिकोण प्रकट होगया।

सभी महत्वपूर्ण प्रश्नोंपर स्पष्ट मत स्थिर करके और समाजवादी क्रांतिके विजय-पथ को अपनाकर कान्फ्रेंसने एक मतसे लेनिनका समर्थन किया।

३. राजधानीमें बोल्शेविक पार्टीकी सफलता—अस्थायी सरकारकी फ़ौजकी असफल मुहीम—मज़दूरों और सिपाहियोंके जुलाई-प्रदर्शनका दमन ।

अप्रैलकी कान्फ्रेन्सके निर्णयोंके आधारपर पार्टीने जनताको अपनी ओर करनेके लिये, और युद्धके लिये उसे शिक्षित और संगठित करनेके लिये, बड़े विस्तारसे कार्य आरंभ किया । उस समय पार्टीकी नीति यह थी कि जनताको धीरजसे बोल्शेविक नीति समझाकर, और मेन्शेविकों तथा सामाजिक-क्रांतिकारियोंकी अवसरवादी नीतिका भंडाफोड़ करके, इन पार्टियोंको जनतासे अलग कर दिया जाय और सोवियतोंमें अपना बहुमत बनाया जाय ।

सोवियतोंमें काम करनेके अलावा बोल्शेविक ट्रेड यूनियनों और कारखानोंमें भी अपना काम फैलाये थे । फ़ौजमें बोल्शेविकोंका कार्य विशेषरूपसे फैला हुआ था । हर जगह फ़ौजी संगठन बनने लगे । क्या मोर्चेपर और क्या पीछे, सिपाहियों और मल्लाहोंको संगठित करनेके लिये बोल्शेविक अथक परिश्रम करने लगे । सिपाहियोंको क्रियाशील क्रांतिकारी बनानेमें मोर्चेपरके बोल्शेविक पत्र **ओकोप्नाया प्रावदा (फ़ौजी सत्य)** ने विशेषरूपसे महत्वपूर्ण कार्य किया ।

बोल्शेविकोंके प्रचार और आंदोलनके फलस्वरूप क्रांतिके शुरू महीनोंमें ही बहुतसे शहरोंमें मजदूरोंने सोवियतोंके, विशेषकर जिला-सोवियतोंके, नये चुनाव किये । उन्होंने मेन्शेविकों और सामाजिक-क्रांतिकारियोंको निकाल बाहर किया और उनकी जगह बोल्शेविक पार्टीके अनुयाइयोंको चुन लिया ।

बोल्शेविकोंके कार्यका चमत्कारी फल हुआ, विशेषकर पेत्रोग्रादमें ।

३० मईसे ३ जून १९१७ तक पेत्रोग्रादमें कारखाना-कमिटियोंकी एक कान्फ्रेंस हुई । इस कान्फ्रेंसमें ही तीन-चौथाई प्रतिनिधि बोल्शेविकोंके समर्थक निकले । पेत्रोग्रादका प्रायः समूचा मजदूर-वर्ग बोल्शेविकोंके इस नारेका समर्थन करता था कि " राज सोवियतोंका हो । "

३ (१६) जून १९१७ को सोवियतोंकी पहली अखिल रूसी कांग्रेस हुई । सोवियतोंमें बोल्शेविक अब भी अल्पमतमें थे । कांग्रेसमें उनके प्रतिनिधि १०० से कुछ ही ऊपर थे जब कि मेन्शेविकों, सामाजिक-क्रांतिकारियों, आदिके सात-आठ सौ प्रतिनिधि थे ।

सोवियतोंकी पहली कांग्रेसमें बोल्शेविकोंने पूंजीपतियोंसे समझौता करनेके घातक

परिणामोंपर बराबर जोर दिया और युद्धके साम्राज्यवादी लक्षणोंको बराबर स्पष्ट किया। लेनिनने कांग्रेसमें एक भाषण दिया जिसमें उन्होंने दिखाया कि बोल्शेविक नीति उचित है। उन्होंने कहा कि सोवियतोंकी सरकार ही मजदूरोंको रोटी, किसानोंको जमीन, और युद्धकी विशृंखलतासे देशको उबारकर उसे शांति दे सकती है।

उस समय पेत्रोग्रादके मजदूर-क्षेत्रोंमें इस बातके लिये सामूहिक आंदोलन किया जा रहा था कि सोवियतोंकी कांग्रेसके सामने एक प्रदर्शन संगठित करके अपनी मांगें रखी जायँ। बिना अपनी अनुमतिके होने वाले इस मजदूर-प्रदर्शनको रोकनेकी इच्छा से, और जनताके क्रांतिकारी भावोंसे अपना हित साधनेकी आशासे, पेत्रोग्राद-सोवियतकी स्थायी समितिने निश्चय किया कि प्रदर्शन १८ जून (१ जुलाई) को हो। मेन्शेविकों और सामाजिक-क्रांतिकारियोंको आशा थी कि यह प्रदर्शन बोल्शेविक-विरोधी नारे लगायेगा। बोल्शेविक पार्टी इस प्रदर्शनके लिये जोर-शोरसे तैयारी करने लगी। कॉ. स्तालिनने प्रावदामें लिखा कि "हमें इस बातका निश्चय कर लेना चाहिये कि १८ जूनको पेत्रोग्रादका जुलूस हमारे ही क्रांतिकारी नारे लगाये।"

१८ जून १९१७ का यह प्रदर्शन क्रांतिके शहीदोंकी समाधिपर हुआ। इस प्रदर्शनमें बोल्शेविक पार्टीकी शक्ति एकत्र दिखायी दी। प्रदर्शनसे यह सिद्ध हो गया कि जनतामें क्रांतिकारी भावना बढ़ रही है और बोल्शेविक पार्टीमें उसका विश्वास बढ़ रहा है। मेन्शेविकों और सामाजिक-क्रांतिकारियोंने युद्धको जारी रखनेके लिये और अस्थायी सरकारमें विश्वास बनाये रखनेके लिये नारे लगाये लेकिन वे बोल्शेविक नारोंके समुद्रमें खो गये। चार लाख प्रदर्शनकारी जो झंडे लिये थे उनपर लिखा था, "युद्धका अन्त हो," "राज सोवियतोंका हो।"

मेन्शेविकों और सामाजिक-क्रांतिकारियोंकी यह बुरी हार हुई। यह देशकी राजधानीमें ही अस्थायी सरकारकी हार थी।

फिर भी सोवियतोंकी पहली काँग्रेसने अस्थायी सरकारका समर्थन किया और अस्थायी सरकारने निश्चय किया कि वह अपनी साम्राज्यवादी नीतिको जारी रखेगी। १८ जूनके दिन ही ब्रिटेन और फ्रांसके साम्राज्यवादियोंकी आज्ञानुसार उसने मोर्चे परके सिपाहियोंको हमला करनेकी आज्ञा दी। पूंजीपति समझते थे कि क्रांतिका अंत करनेका यही उपाय है। उन्हें आशा थी कि आक्रमण सफल होनेपर वे सारी शक्ति अपने हाथमें कर लेंगे और सोवियतोंको मैदानसे बाहर निकालकर बोल्शेविकोंको कुचल डालेंगे। यदि आक्रमण असफल हुआ, तो फ़ौजको विशृंखल बनानेके बहाने सारा दोष बोल्शेविकोंके मत्थे मढ़ दिया जायगा।

आक्रमणके असफल होनेमें कोई संदेह न हो सकता था। वह असफल हुआ ही। सिपाही थके-माँदे थे; आक्रमणका मतलब उनकी समझमें न आया; उनके अफ़सर उनके लिये ग़ैर थे, इसीलिये उनमें उन्हें विश्वास न था; तोपों और गोलोंकी अलग कमी थी। इन सब कारणोंसे आक्रमणकी असफलता पूर्व-निश्चित थी। पहले तो मोर्चेपर आक्रमणसे

और फिर उसकी असफलतासे राजधानीमें सनसनी फैल गयी। मजदूरों और सिपाहियों के क्रोधकी सीमा न रही। यह जाहिर हो गया कि अस्थायी सरकारने जब शांतिमय नीतिकी घोषणा की थी, तब वह जनताकी आँखोंमें धूल डाल रही थी। वह साम्राज्यवादी युद्धको जारी रखना चाहती थी। यह भी जाहिर हो गया कि सोवियतों की अखिल रूसी केन्द्रीय कार्यकारिणी और पेत्रोगाद-सोवियत या तो अस्थायी सरकारके दुष्ट कार्योंको रोकना नहीं चाहते थे, या रोक नहीं सकते थे, वरन् खुद उनके पिछलगुआ बन गये थे।

पेत्रोग्रादके मजदूरों और सिपाहियोंका क्रांतिकारी रोष प्रचंड हो उठा। ३ (१६) जुलाईको पेत्रोग्रादके फिबोर्ग जिलेमें अपने आप प्रदर्शन होने लगे। प्रदर्शन सारे दिन जारी रहे। ये विभिन्न प्रदर्शन बढ़कर एक विशाल सार्वजनिक सशस्त्र प्रदर्शन बन गये, जिसकी माँग थी कि शासन सूत्र सोवियतोंको सौंप दिया जाय। उस समय बोल्शेविक पार्टी सशस्त्र लड़ाईके विरोधमें थी। उसका विचार था कि क्रांतिकारी संकट अभी परिपक्व नहीं हुआ, फ़ौज और प्रांत राजधानीमें विद्रोहका समर्थन करनेके लिये तैयार नहीं हैं और एक अलग-अलग और अपरिपक्व विद्रोहसे क्रांति-विरोधियोंके लिये क्रांतिके अग्रदलको कुचल देना सरल हो सकता है। परन्तु जब स्पष्ट ही जनताको प्रदर्शनसे रोकना असंभव होगया, तो पार्टीने निश्चय किया कि प्रदर्शनको संगठित और शांतिपूर्ण रूप देनेके लिये वह उसमें भाग ले। ऐसा करनेमें बोल्शेविक पार्टी सफल हुई। लाखों मर्दऔरत पेत्रोग्राद सोवियतके हेड-क्वार्टर और सोवियतोंकी अखिल रूसी केंद्रीय कार्यकारिणीके दफ़्तरकी ओर चल पड़े। वहाँ उन्होंने इस बातकी माँग की कि सोवियत राज्य-सूत्र अपने हाथ में ले, साम्राज्यवादी पूँजीपतियोंसे तल्ला तोड़ें और एक सक्रिय शांतिमय नीतिका अनुसरण करें।

प्रदर्शनके शांतिमय होनेपर भी प्रतिक्रियावादी जत्थे—अफ़सरों और रंगरूटोंकी टुकड़ियाँ—उसका दमन करने लिये बुलाये गये। पेत्रोग्रादकी सड़कें मजदूरों और सिपाहियोंके खूनसे नहा गयीं। मजदूरोंका दमन करनेके लिये मोर्चेपरसे फ़ौजके वे दस्ते बुलाये गये, जो एकदम अबूझ और क्रांति-विरोधी थे।

मजदूरों और सिपाहियोंका प्रदर्शन कुचल देनेके बाद मेन्शेविक और सामाजिक-क्रांतिकारी पूंजीपतियों और गद्दार सेनापतियोंके साथ बोल्शेविक पार्टीपर टूट पड़े। **प्रावदा**का दफ़्तर वगैरह तोड़-फोड़ डाला गया। **प्रावदा, सोल्दात्स्काया प्रावदा** (**सैनिक सत्य**) और कुछ दूसरे बोल्शेविक पत्र बन्द कर दिये गये। **लिस्तोक प्रावदी** (**प्रावदा बुलेटिन**) बेचनेके लिये भी वोइनोफ़ नामका मजदूर सड़कोंपर रंगरूटों द्वारा मार डाला गया। लाल रक्षकों (रेड गार्डों) के हथियार छीने जाने लगे। पेत्रोग्राद छावनीके क्रांतिकारी दस्ते राजधानीसे हटाकर लामपर भेज दिये गये। मोर्चेपर और पीछे पकड़-धकड़ शुरू हो गयी। ७ जुलाईको लेनिनको पकड़नेके लिये वारंट जारी किया गया। बोल्शेविक पार्टीके कुछ प्रमुख सदस्य पकड़ भी लिये गये।

त्रुद नामका छापाखाना जहाँसे बोल्शेविक-प्रकाशन होता था, तोड़-फोड़ डाला गया। पेत्रोग्रादकी सेशन्स अदालतके प्रोक्यूरेटर (सरकारी वकील) ने ऐलान किया कि लेनिन और कुछ दूसरे बोल्शेविकोंपर "राजद्रोह" तथा सशस्त्र विद्रोहके संगठनका अभियोग है। यह अभियोग जनरल देनिकिनके हेडक्वार्टरमें जासूसों और दलालोंकी शहादतके आधार पर गढ़ा गया।

इस प्रकार संयुक्त अस्थायी सरकार, जिसमें त्सेरेतेली, स्कोबेलेफ, करेन्स्की और चरनौफ़ जैसे मेन्शेविकों और सामाजिक-क्रांतिकारियोंके प्रमुख प्रतिनिधि थे, सीधे साम्राज्यवाद और क्रांति-ध्वंसके कार्योंपर उतर आयी। शांतिपूर्ण नीतिके बदले उसने युद्ध जारी रखनेकी नीतिको अपनाया। जनताकी नागरिक स्वाधीनताकी रक्षा करनेके बदले उसने इस स्वाधीनता और मजदूरों और सिपाहियोंके सशस्त्र दमनकी नीतिको अपनाया।

पूंजीपतियोंके प्रतिनिधि गुचकौफ़ और मिल्यूकौफ़ जो करनेमें हिचकिचाये थे उसे समाजवादी करेन्स्की और त्सेरेतेली, चरनौफ़ और स्कोबेलेफ़ने पूरा कर दिया।

द्विधात्मक शासनका अंत हुआ।

उसका अंत पूंजीपतियोंके पक्षमें हुआ क्योंकि अब राज्य-सूत्र पूरी तरहसे अस्थायी सरकारके हाथमें हो गया और अपने सामाजिक-क्रांतिकारी तथा मेन्शेविक नेताओं सहित अब सोवियत उनके पिछलगुआ बन गये।

क्रांतिकी शांतिपूर्ण अवधि समाप्त हुई क्योंकि अब कार्यक्रममें गोली-बंदूक भी आगये थे।

परिस्थितिमें परिवर्तन होनेसे बोल्शेविक पार्टीने भी अपनी कार्यनीति बदलनेका निश्चय किया। पार्टीने गुप्त जीवन बिताना आरम्भ किया। अपने नेता लेनिनके लिये उसने एक सुरक्षित गुप्त स्थानका प्रबन्ध किया। पूँजीपतियोंके शासनका सशस्त्र विद्रोह द्वारा अन्त करनेके लिये और सोवियत राज स्थापित करनेके लिये उसने तैयारी शुरू कर दी।

४. बोल्शेविक पार्टी द्वारा सशस्त्र विद्रोहकी तैयारीके मार्गका अनुसरण—छठी पार्टी कांग्रेस।

बोल्शेविक पार्टीकी छठी कांग्रेस पेत्रोग्रादमें उस समय हुई जब कि पूंजीवादी और निम्न पूंजीवादी पत्रोंमें बोल्शेविकोंके विरुद्ध बे-अख्तियार वाही-तबाही बकी जा रही थी। यह कांग्रेस पार्टीकी पांचवी (लंदन) कांग्रेसके दस बरस बाद,

और बोल्शेविकोंकी प्रॉग कान्फ्रेन्सके पाँच वर्ष बाद हुई थी। २६ जुलाईसे ३ अगस्त १९१७ तक यह कांग्रेस गुप्त रूपसे होती रही। अखबारोंमें यही छपा कि कांग्रेस हो रही है लेकिन उसका स्थान गुप्त रखा गया। पहली बैठकें फ़िबोर्ग जिलेमें और बादवाली नारवा दरवाजेके पास एक स्कूलमें, जहाँ अब एक संस्कृति-गृह है, हुई। पूंजीवादी पत्र कांग्रेसके प्रतिनिधियोंको पकड़नेके लिये शोर मचाने लगे। जासूस बड़ी तत्परतासे शहरकी खाक छानते फिरे। लेकिन कांग्रेस कहाँ हो रही है यह वे सूँघ भी न पाये।

इस प्रकार जारशाहीके ध्वंसके पाँच महीने बाद ही बोल्शेविकोंको गुप्त रूपसे मिलना पड़ा और सर्वहारा पार्टीके नेता लेनिनको गुप्त स्थानमें रहना पड़ा। राझलिफ स्टेशनके पास एक झोपड़ीमें उन्होंने आश्रय लिया।

अस्थायी सरकारके जासूस उन्हें खोजनेके लिये जमीन-आसमान एक किये थे। इसलिये लेनिन पार्टी कांग्रेसमें न शामिल हो सके। परन्तु अपने निकटके साथी और शिष्यों द्वारा, जो पेत्रोग्रादमें थे, अर्थात स्तालिन, स्वेर्दलौफ, मोलोतोफ़, और्जोनिकिद्से द्वारा, वे अपने गुप्त स्थानसे उसके कार्योंका निर्देश करते रहे।

काँग्रेसमें १५७ प्रतिनिधियोंको वोट देनेका अधिकार था और १२८ को केवल बोलनेका अधिकार था। उस समय पार्टी मेम्बरोंकी संख्या २,४०,००० थी। ३ जुलाईको अर्थात् मजदूरोंका प्रदर्शन भंग होनेके पहले जब कि बोल्शेविकोंकी कार्यवाही क़ानूनी थी, पार्टीके ४१ पत्र प्रकाशित होते थे जिनमेंसे २९ रूसी और १२ अन्य भाषाओंके थे।

जुलाईमें बोल्शेविकों और मजदूर-वर्गपर जो अत्याचार हुआ उससे पार्टीका प्रभाव कम होनेके बजाय बढ़ता ही गया। प्रांतोंसे आये हुये प्रतिनिधियोंने इस बात को दिखानेके लिये बहुतसे आँकड़े दिये कि झुंडके झुंड मजदूर और सिपाही मेन्शेविकों और सामाजिक-क्रांतिकारियोंसे पिंड छुटाने लगे हैं। सामाजिक-क्रांतिकारियोंको व घृणासे "सामाजिक जेलर" कहते थे। जो मजदूर और सिपाही मेन्शेविक और सामाजिक-क्रांतिकारी पार्टियोंमें थे, वे रोष और घृणासे अपनी सदस्यता (मेम्बरशिप) के कार्ड फाड़ने लगे और बोल्शेविक पार्टीमें आनेके लिये प्रार्थना-पत्र देने लगे।

कांग्रेसमें जिन मुख्य बातोंपर विचार किया गया वे थीं केन्द्रीय समितिकी राजनीतिक रिपोर्ट और देशकी राजनीतिक परिस्थिति। इन दोनों प्रश्नों पर कॉ. स्तालिन ने रिपोर्ट दी। उन्होंने अति स्पष्टतासे दिखाया कि यद्यपि पूंजीपतियोंने क्रांतिका दमन करनेके लिये बहुत प्रयत्न किया था, फिर भी क्रान्तिकी शक्ति बढ़ रही थी। उन्होंने दिखाया कि क्रान्तिसे मजदूरोंका यह तात्कालिक कार्य हो गया था कि वे वस्तुओंके उत्पादन और वितरणपर अपना अधिकार जमायें, किसानोंको जमीन दें और शासन-सूत्र पूंजीपतियोंसे छीनकर मजदूर-वर्ग और गरीब किसानोंके हाथमें सौंप दें। उन्होंने कहा कि क्रांतिमें अब समाजवादी क्रांतिके लक्षण प्रकट हो रहे थे।

जुलाईसे देशकी राजनीतिक परिस्थिति एकदम बदल गयी थी। द्विधात्मक शासनका अंत हो चुका था। सामाजिक-क्रांतिकारियों और मेन्शेविकोंके नेतृत्वमें

सोवियतोंने पूरी तरहसे शासनकी बागडोर संभालनेसे इनकार किया था, इसलिये वह उनके हाथसे बिलकुल निकल गयी थी। अब राजशक्ति पूँजीपतियोंकी अस्थायी सरकारमें केन्द्रित थी और यह सरकार क्रांतिको पंगु बनानेमें लगी हुई थी, उसके संगठनों को तोड़ रही थी और बोल्शेविक पार्टीकी जड़ खोदनेपर तुली हुई थी। क्रांतिके शांति- मय विकासकी अब कोई संभावना न थी। कॉ. स्तालिनने कहा कि अब एक ही उपाय रह गया है कि बलपूर्वक अस्थायी सरकारका ध्वंस करके राज्यसत्तापर अधिकार कर लिया जाय। निर्धन किसानोंको साथ लेकर सर्वहारावर्ग ही राज्यसत्तापर अधिकार कर सकता था।

सोवियतोंपर मेन्शेविकों और सामाजिक-क्रांतिकारियोंका अब भी नियंत्रण था इसलिये सोवियत पूंजीपतियों से जा मिले थे और वर्तमान परिस्थितिमें वे अस्थायी सरकारके पीछे ही चल सकते थे। कॉ. स्तालिनने कहा कि जुलाईके बाद "राज सोवियतोंका हो" इस नारे को हटाना जरूरी था। फिर भी इस नारे को कुछ समयके लिये हटानेका यह मतलब न था कि सोवियत-शासन के लिये युद्ध करना छोड़ दिया जाय। प्रश्न यहाँपर क्रांतिकारी संघर्षकी संस्थाओं, आम सोवियतोंका नहीं था वरन् उन वर्तमान सोवियतोंका था जिनपर मेन्शेविकों और सामाजिक क्रांतिकारियोंका अधिकार था।

का. स्तालिनने कहा,—

"क्रांतिकी शांतिमय अवधि बीत चुकी। अब ध्वंस और विस्फोटके अशान्तिमय युगका आरंभ होता है।" (**लेनिन और स्तालिन, १९१७— अं. सं., पृ. ३०२**)।

सशस्त्र विद्रोहके लिये पार्टीकी तैयारी की गयी।

कांग्रेसमें कुछ ऐसे लोग थे जो पूँजीवादी प्रभावके कारण समाजवादी क्रांतिके मार्ग पर चलनेका विरोध करते थे।

त्रात्स्कीपंथी प्रिओब्राजेन्स्कीने कहा कि शासन-सत्ताको हाथमें लेनेके प्रस्तावमें यह भी होना चाहिये कि पच्छिममें सर्वहारा क्रान्ति होने पर ही देश समाजवादकी ओर बढ़ सकता है।

कॉ. स्तालिनने इस त्रात्स्कीपंथी प्रस्तावका विरोध किया। उन्होंने कहा,—

"यह असंभव नहीं है कि सबसे पहले समाजवादका पथ-निर्माण रूसमें ही हो। हमें इस पुरानी धारणाको छोड़ देना चाहिये कि योरप ही हमारा मार्गदर्शन कर सकता है। मार्क्सवादके जड़ और विकासोन्मुख दो रूप हैं। मैं दूसरेका समर्थक हूँ।" (**उप पृ. ३०९**)

बुखारिनने त्रात्स्कीपंथी दृष्टिकोणको अपनाते हुए कहा कि किसान युद्धके समर्थक हैं, वे पूँजीवादियोंके साथ गुटबन्दी किये हैं और मजदूरवर्गके पीछे न चलेंगे।

बुखारिनको प्रत्युत्तर देते हुए कॉ. स्तालिनने दिखाया कि किसान कई तरहके हैं। अमीर किसान साम्राज्यवादी पूँजीपतियोंका समर्थन करते हैं और गरीब किसान

मजदूर-वर्गसे सहयोग करना चाहते हैं और क्रान्तिकी विजयके लिये युद्ध करनेमें वे उसका साथ देंगे।

कांग्रेसने प्रिओब्राजेन्स्की और बुखारिनके संशोधनोंको रद कर दिया और कॉ. स्तालिनके प्रस्तावको स्वीकृत किया।

कांग्रेसने बोल्शेविकोंके आर्थिक कार्यक्रम पर विचार किया और उसे स्वीकार किया। उसकी मुख्य बातें ये थीं,—रियासती भूमि जब्त कर ली जाय और सारी जमीन पर राष्ट्रीय अधिकार हो, बैंकों पर और बड़े उद्योग-धन्धोंपर राष्ट्रीय अधिकार हो, और उत्पादन तथा वितरण पर मजदूर-नियंत्रण हो।

उत्पादनपर नियंत्रण स्थापित करनेके लिये मजदूर-संघर्षके महत्व पर कांग्रेसने जोर दिया। बड़े उद्योग-धन्धोंपर राष्ट्रीय अधिकार स्थापित करनेमें आगे चल कर यह बात बड़ी कारगर साबित हुई।

अपने सभी निर्णयोंमें छठी कांग्रेसने लेनिनके इस सिद्धान्त पर विशेषरूपसे जोर दिया कि समाजवादी क्रान्तिकी विजयके लिये सर्वहारावर्ग और गरीब किसानोंके बीच सहयोगकी शर्त पूरी होना आवश्यक है।

कांग्रेसने इस मेन्शेविक सिद्धान्तका खंडन किया कि ट्रेड यूनियनोंको तटस्थ रहना चाहिये। उसने बताया कि रूसी मजदूर वर्गके सामने जो महान् कार्य हैं, वे तभी पूरे हो सकते हैं जब कि ट्रेड यूनियन बोल्शेविक पार्टीका राजनीतिक नेतृत्व स्वीकार करते हुए लड़ाकू वर्ग-संगठन बने रहें।

कांग्रेसने एक प्रस्ताव युवक-संघोंके संबंधमें स्वीकार किया जो उस समय बहुधा अपने आप बनते जा रहे थे। आगे चलकर पार्टीके प्रयत्न करनेपर कांग्रेस इन संघोंको निश्चित रूपसे अपना अनुगामी बना सकी। ये संघ पार्टीके लिये रिजर्व शक्ति बन गये।

कांग्रेसने इस बात पर भी विचार किया कि लेनिन अदालतके सामने हाजिर हों या नहीं। कामेनेफ, राईकोफ, त्रात्स्की आदिने कांग्रेसके पहिले ही यह निश्चय कर लिया था कि लेनिनको क्रांति-विरोधी अदालत में हाजिर होना चाहिये। कॉ. स्तालिन ने लेनिनके हाजिर होनेका जोरोंसे विरोध किया। कांग्रेसका भी यही रुख था क्योंकि उसके विचारसे यह पेशी न होकर एकतरफ़ा सूली होती। कांग्रेसको जरा भी संदेह न था कि पूंजीपतियोंके मनमें एक ही बात है कि अपने सबसे खतरनाक दुश्मन लेनिनको जानसे मार डाला जाय। कांग्रेसने क्रांतिकारी सर्वहारावर्गके नेताओं पर पूंजीपतियोंके इशारेसे होनेवाले पुलिसके अत्याचारका विरोध किया और लेनिनका अभिवादन करते हुये उनके पास सूचना भेजी।

छठी कांग्रेसने नयी पार्टी नियमावलीको स्वीकार किया। इस नियमावलीके अनुसार सभी पार्टी संगठनोंका जनवादी केंद्रीयताके सिद्धांत पर निर्मित होना आवश्यक हो गया।

इसका यह अर्थ था कि,

(१) पार्टीकी सभी निर्देशक संस्थाएँ, ऊपरसे लेकर नीचे तक, निर्वाचित हों;

(२) पार्टी संस्थाएँ अपने विभिन्न पार्टी संगठनोंको समय-समय पर अपनी कार्यवाहीका विवरण दें;

(३) पार्टीमें कठोर अनुशासन हो और अल्पमतको बहुमतके सामने झुकना पड़े;

(४) ऊपरकी संस्थाओंके सभी निर्णय नीचेकी संस्थाओं तथा सभी पार्टी मेम्बरोंके लिये अविकल रूपसे मान्य हों।

पार्टी नियमावलीके अनुसार पार्टीमें नये सदस्योंके भर्ती होनेका यह क़ायदा होगया कि दो पार्टी मेम्बरोंके अनुमोदन करने पर और स्थानीय संगठनको आम मेम्बरोंकी बैठकमें स्वीकृति होने पर स्थानीय पार्टी-संगठनो द्वारा नये सदस्य भर्ती किये जायेंगे।

छठी कांग्रेसने **मेझ्रायोन्त्सी** गुट और उसके नेता, त्रात्स्कीको पार्टीमें भर्ती किया। यह एक छोटासा गुट था जो १९१३ से पेत्रोग्रादमें बना हुआ था। इसमें त्रात्स्की-पंथी मेन्शेविक और कुछ पहलेके बोल्शेविक थे जो पार्टीसे अलग हो गये थे। युद्धकालमें मेझ्रायोन्त्सी एक मध्यवादी संगठन था। ये लोग बोल्शेविकोंसे लड़ते थे परन्तु बहुतसी बातोंमें मेन्शेविकोंमे उनकी न पटती थी, इस प्रकार उनकी स्थिति बीचकी, ढुलमुल-सी, मध्यवादी थी। छठी पार्टी कांग्रेसमें इस दलने कहा कि वह सभी बातोंमें बोल्शेविकोंसे सहमत है, अतः उसे पार्टीमें भर्ती कर लिया जाय। काँग्रेसने उनकी प्रार्थनाको इस आशासे स्वीकार कर लिया कि दिन बीतने पर यह लोग सच्चे बोल्शेविक बन जायेंगे। उनमेंसे वोलोदार्स्की और उरित्स्की जैसे कुछ लोग सच्चे बोल्शेविक बन भी गये, परन्तु जहाँ तक त्रात्स्की और उसके नजदीकी दोस्तोंका सवाल था, यह आगे चल कर साबित हो गया कि वे पार्टीमें इसलिये शामिल न हुए थे कि वे पार्टी-हितके लिये कार्य करेंगे; वरन् उसमें फूट डाल कर भीतरसे उसे तोड़नेके लिये ही वे उसमें शामिल हुए थे।

छठी कांग्रेसके निर्णयोंका यही लक्ष्य था कि सर्वहारा वर्ग और निर्धन किसानोंको सशस्त्र विद्रोहके लिये तैयार किया जाय। छठी कांग्रेसने पार्टीको सशस्त्र विद्रोहके लिये, समाजवादी क्रांतिके लिये तैयार किया।

कांग्रेसने पार्टीका एक घोषणा-पत्र निकाला जिसमें उसने पूँजीपतियोंसे आखिरी लड़ाई लड़नेके लिये मजदूरों, सिपाहियों और किसानोंसे अपनी शक्ति संचय करनेके लिये कहा। उसके अंतिम शब्द यह थे,—

> "इसलिये हथियारबंद साथियो, नयी लड़ाईके लिये तैयारी करो। दृढ़तासे, पौरुषसे, और शांतिसे अपनी फ़ौज इकट्ठी करो और लड़नेवालोंकी सफ़ें दुरुस्त करो। मजदूरो और सिपाहियो, पार्टीके झंडेके नीचे इकट्ठा हो। गाँवके ग़रीब किसानो, हमारे झंडेके नीचे इकट्ठा हो।"

५. जनरल कौर्नीलौफ़का क्रांति-विरोधी षड़यंत्र—षड़यंत्रका ध्वंस—पेत्रोग्राद और मॉस्कोकी सोवियतोंमें बोल्शेविकोंका प्राधान्य ।

राज्य-सूत्र अपने हाथमें करके पूँजीपति सोवियतोंका नाश करनेकी सोचने लगे । सोवियत पहलेसे कमजोर हो गये थे । पूँजीपतियोंने सोचा कि अब खुले आम क्रांति-विरोधी तानाशाही स्थापित की जा सकती है । रियाबुशिन्स्की नामके लखपतीने धृष्टतापूर्वक घोषणा की कि " संकटसे निकलनेका एक ही उपाय है कि दुर्भिक्ष और जनताकी बेवसी जनताके झूठे मित्रों—जनवादी सोवियतों और समितियोंका गला घोट दें । " मोर्चे पर फ़ौजी अदालतें सिपाहियोंसे बुरी तरह बदला लेने लगीं और उन्हें सामूहिक रूपसे प्राण-दंड देने लगीं । ३ अगस्त १९१७ को प्रधान सेनापति, जनरल कौर्नीलौफ़ने इस बातकी मांग की कि मोर्चेके पीछे भी प्राणदंड देनेकी व्यवस्था की जाय ।

१२ अगस्तको अस्थायी सरकारने पूँजीपतियों और जमींदारोंकी शक्ति संगठित करनेके विचारसे मॉस्कोके मुख्य नाट्य-गृहमें एक राज्य-परिषद बुलायी । इस परिषदमें मुख्यतः जमींदारों, पूँजीपतियों, जनरलों, अफ़सरों, और कज्जाकोंके प्रतिनिधि ही आये थे । सोवियतोंके प्रतिनिधि मेन्शेविक और सामाजिक क्रांतिकारी बने ।

राज्य-परिषदका विरोध करनेके लिये उसके प्रथम अधिवेशन-दिवस पर बोल्शेविकोंने मॉस्कोमें एक आम हड़ताल करनेकी अपील की । इस हड़तालमें अधिकांश मजदूरोंने भाग लिया । इसके साथ ही कई दूसरे शहरोंमें भी हड़तालें हुई ।

सामाजिक क्रांतिकारी करेन्स्कीने समितिमें डींग हाँकते हुए कहा कि वह क्रांतिकारी आन्दोलनके हर प्रयत्नको " डंडेके जोरसे " दबा देगा । किसान अगर रियासती जमीनको छीननेकी कोशिश करेंगे तो उनकी इन गैर-क़ानूनी कोशिशोंको भी दबा दिया जायगा ।

क्रांतिविरोधी जनरल कौर्निलौफ़ने यह मुँहफट माँग पेश की कि " समितियों और सोवियतोंका अन्त कर दिया जाय । "

सेठ-साहूकार और सौदागर, जनरल कौर्निलौफ़के हेड-क्वार्टर पर इकट्ठा होने लगे और उसे धन देने और उसकी सहायता करनेका वचन देने लगे ।

" मित्र " देश ब्रिटेन और फ्रांसके प्रतिनिधि भी कौर्निलौफ़के पास आये और कहने लगे कि क्रांतिविरोधी मुहीममें अब देर न की जाय ।

जनरल कौर्निलौफका क्रांति-विरोधी षड़यंत्र परिपक्व हो रहा था ।

कौर्निलौफ अपनी तैयारी खुले आम कर रहा था। ध्यान वटानेके लियें षड्यंत्र-कारियोंने अफ़वाह फैला दी कि २७ अगस्तको अर्थात् क्रांतिके पहले छः महीनोंके वाद, वोल्शेविक पेत्रोग्रादमें विद्रोहकी तैयारी कर रहे हैं। केरेन्स्कीके नेतृत्वमें अस्थायी सरकारने उग्र वेगसे बोल्शेविकों पर आक्रमण किया और सर्वहारा पार्टीके विरुद्ध अपनी आतंकवादी कार्रवाइयोंको बढ़ा दिया। उधर जनरल कौर्निलौफ़ने अपनी फ़ौजें तैयार रखीं कि पेत्रोग्राद पर चढ़ चलें और सोवियतोंका नाश करके फ़ौजी तानाशाही क़ायम करें।

इस क्रांतिविरोधी कार्यके संबंधमें कौर्निलौफ़ने केरेन्स्कीसे पहलेही समझौता कर लिया था। लेकिन कौर्निलौफ़की मुहीम शुरू हुई नहीं कि केरेन्स्की एकदम बदल गया और उसने अपने साथी कौर्निलौफ़ से अपनेको अलग कर लिया। केरेन्स्कीको डर था कि अगर उसने इस कौर्निलौफ़-षड्यंत्रसे अपनेको अलग न किया तो जो जन-समूह कौर्निलौफ़का सामना करके उसे कुचलेगा, वह केरेन्स्कीकी पूंजीवादी सरकारको भी तहस-नहस कर देगा।

२५ अगस्तको "मातृभूमिकी रक्षा" के नाम पर कौर्निलौफ़ने जनरल क्रिमौफ़ की कमानमें तीसरी सवार टुकड़ीको पेत्रोग्राद पर बढ़नेकी आज्ञा दी। कौर्निलौफ़-विद्रोह होने पर वोल्शेविक पार्टीकी केन्द्रीय समितिने मजदूरों और सिपाहियोंसे सशस्त्र और सक्रिय रूपसे क्रांति-विरोधियोंका सामना करनेको कहा। मजदूर जल्दीसे हथि-यार-बन्द होकर मुक़ाबलेकी तैयारी करने लगे। इन दिनों लाल रक्षकोंके दस्ते खूब बढ़े। ट्रेड यूनियनोंने अपने मेम्वरोंको रक्षाके लिये तैयार किया। पेत्रोग्रादके क्रांतिकारी सैनिक दस्ते भी लड़ाईके लिये तैयार रखे गये। पेत्रोग्रादके चारों तरफ़ खाइयाँ खोद डाली गयीं, कँटीले तार उलझाये गये और शहरको आनेवाली रेलकी पटरियाँ उखाड़ डाली गयीं। नगरकी रक्षाके लिये कई हजार हथियार-बंद मल्लाह क्रोन्स्तात से आगये। शहर पर जो "जंगली पल्टन" वढ़ी जा रही थी, उसे समझानेके लिये प्रतिनिधि भेजे गये। इस जंगली डिवीजनमें कॉकेशसके प्रदेशके पहाड़ी भरे हुए थे। जब प्रति-निधियों ने इन्हें कौर्निलौफ़ षड्यन्त्रका रहस्य समझाया तो उन्होंने आगे क़दम उठानेसे इनकार कर दिया। कौर्निलौफ़के दूसरे दस्तोंमें भी प्रचारक भेजे गये। जहाँ कहीं भी संकट दिखायी दिया, वहाँ कौर्निलौफ़से लड़नेके लिये क्रांतिकारी समितियाँ और हेड-क्वार्टर वनाये गये।

इन दिनों मेन्शेविक और केरेन्स्की समेत तमाम सामाजिक क्रांतिकारी नेता भयसे पीले पड़ रहे थे। उन्हें विश्वास था कि राजधानीमें कौर्निलौफ़को परास्त करनेकी शक्ति बोल्शेविकोंमें ही है। इसलिये अपनी रक्षाके लिये वे इन्हींकी शरण लेने दौड़े।

कौर्निलौफ़ विद्रोहका दमन करनेके लिये जनताको संगठित करते हुए भी बोल्शे-विकोंने केरेन्स्की-सरकारसे अपनी लड़ाई वन्द नहीं की। उन्होंने जनताके सामने केरेन्स्की-सरकार तथा मेन्शेविकों और सामाजिक-क्रांतिकारियोंका पर्दाफ़ाश किया और

बताया कि उनकी नीति वास्तवमें कौर्निलौफ़के क्रांतिविरोधी षड्यन्त्रकी सहायता कर रही है।

इन सब उपायोंसे कौर्निलौफ़-विद्रोह शांत होगया। जनरल क्रिमौफ़ने आत्म-हत्या कर ली। कौर्निलौफ़ और उसके साथी देनिकिन और लुकोम्स्की पकड़ लिये गये। (परन्तु शीघ्र ही केरेन्स्कीने उन्हे छुड़वा दिया।)

कौर्निलौफ़–विद्रोहके दमनसे तुरन्त ही क्रांति और उसके विरोधियोंके कसबलका पता चल गया। उससे सिद्ध हो गया कि सारी क्रांति-विरोधी पाँतिके लिये अब कोई आशा नहीं है। क्या सेनापति और वैधानिक जनवादी, क्या मेन्शेविक और सामाजिक–क्रांतिकारी जो पूँजीपतियोंके जालमें फँस गये थे, किसीके भी बचनेकी अब कोई आशा न थी। यह स्पष्ट था कि युद्धके असह्य कष्टोंके बने रहनेसे और लंबी लड़ाईसे पैदा होनेवाली आर्थिक विशृंखलतासे जनतामें मेन्शेविकों और सामाजिक–क्रांति-कारियोंकी साख मिट गयी है।

कौर्निलौफ़की पराजयसे यह भी पता चल गया कि क्रांतिमें बोल्शेविक पार्टी अब निर्णायक शक्ति बन गयी है और क्रांतिविरोधी प्रयत्नोंको विफल करनेमें समर्थ है। अभी शासन-सूत्र हमारी पार्टीके हाथोंमें न था परन्तु विद्रोहके दिनोंमें उसने वास्तविक शासक–शक्तिकी तरह ही कार्य किया था। मजदूर और सिपाही बिना हिचकके उसके निर्देशोंका पालन करते थे।

अंतमें कौर्निलौफ़की पराजयसे यह मालूम हुआ कि मुर्दा-सी दिखनेवाली सोवियतोंमें क्रांतिकारी विरोधकी सुप्त-शक्तिका भंडार भरा है। इसमें कोई संदेह न हो सकता था कि सोवियतों और क्रांतिकारी समितियोंने ही कौर्निलौफ़की राह रोकी है और उसकी कमर तोड़ दी है।

कौर्निलौफ़–संघर्षसे मजदूर और सैनिक प्रतिनिधियोंकी शिथिल सोवियतोंमें नया जीवन–संचार हुआ। समझौतावादी नीतिके प्रभावसे वे मुक्त हुई। वे क्रांतिकारी संघर्षके प्रशस्त मार्ग पर आगयीं और उनका झुकाव बोल्शेविक पार्टीकी ओर होगया।

सोवियतोंमें पहलेसे कहीं ज्यादा बोल्शेविकोंकी धाक बँध गयी।

देहातमें भी उनका प्रभाव शीघ्रतासे फैलने लगा।

कौर्निलौफ़ विद्रोहसे विशाल कृषक जन–समूह यह समझ गया कि यदि जनरलों और जमींदारोंने मिलकर अगर बोल्शेविकों और सोवियतोंको परास्त कर दिया, तो उनका दूसरा धावा किसानों पर होगा। इसलिये निर्धन किसान बोल्शेविकोंके निकट आने लगे। अप्रैलसे अगस्त १९१७ तक मझले किसानोंकी ढीलपोलसे क्रांतिकी प्रगति रुक गयी थी परन्तु कौर्निलौफ़की पराजयके बाद वे भी निर्धन किसानोंके साथ निश्चित रूपसे बोल्शेविक पार्टीकी ओर झुकने लगे। कृषक–जनता यह अनुभव करने लगी कि युद्धसे छुटकारा पाना बोल्शेविक पार्टी द्वारा ही संभव है। यही पार्टी जमींदारोंका नाश कर सकती है और उनकी जमीन किसानोंको देनेको तैयार है। सितंबर और अक्तूबर

१९१७ में किसान बड़े जोर-शोरसे रियासती भूमि जब्त करने लगे। मनमाने ढंगसे जमींदारोंके खेतोंको खुद जोत लेनेका चलन हो गया। किसानोंने क्रांतिकी राह पकड़ ली थी और अब वे न तो बहलानेसे रुक सकते थे न दंड देने वाले जत्थों से।

क्रांतिका ज्वार बराबर उठ रहा था।

अब सोवियतोंके पुनर्जीवनका समय आया जब उनकी रूपरेखामें परिवर्तन हुआ और उनका **बोल्शेविकी-करण** हुआ। मिलों, कारखानों और फ़ौजी दस्तोंमें नये चुनाव हुए। उन्होंने मेन्शेविकों और सामाजिक-क्रांतिकारियोंके बदले सोवियतोंमें बोल्शेविक पार्टीके प्रतिनिधि भेजे। कौर्निलौफ़ पर विजय पानेके दूसरे ही दिन, ३१ अगस्तको पेत्रोग्राद सोवियतने बोल्शविक नीतिको स्वीकृत किया। च्खाइद्सेके नेतृत्वमें पेत्रोग्राद सोवियतके पुराने मेन्शेविक और सामाजिक-क्रांतिकारी सभापति-मंडलने पद-त्याग कर दिया। इस प्रकार बोल्शेविकोंका रास्ता साफ़ होगया। ५ सितम्बरको मॉस्कोकी सोवियतके मजदूर प्रतिनिधि बोल्शेविकोंके साथ होगये। मॉस्को सोवियतके भी सामाजिक क्रान्तिकारी और मेन्शेविक सभापति-मण्डलने पद-त्याग करके बोल्शेविकोंका रास्ता साफ़ कर दिया।

इसका यह अर्थ था कि सफल विद्रोहकी मुख्य शर्तें पूरी हो गयी थीं।

"राज सोवियतोंका हो"—यह नारा फिर बुलन्द किया गया। लेकिन यह मेन्शेविक और सामाजिक क्रांतिकारी सोवियतोंको शासन-सूत्र सौंपनेवाला पुराना नारा न था। इस बार इस नारेका अर्थ था, सोवियत अस्थायी सरकारसे विद्रोह करें जिससे कि संपूर्ण शक्ति उन सोवियतोंके हाथमें आ जाय जिनका नेतृत्व अब बोल्शेविक कर रहे थे।

अवसरवादी पार्टियोंमें फूट पैदा हो गयी।

क्रांतिकारी किसानोंके दबावसे सामाजिक क्रांतिकारी पार्टीमें एक गरम दल बन गया। ये "गरम" सामाजिक क्रांतिकारी पूंजीपतियोंसे समझौता करनेकी नीतिको अस्वीकार करते थे।

मेन्शेविकोंमें भी एक "गरम दल" पैदा हो गया जो अपनेको "अन्तरराष्ट्रीयतावादी" कहता था। इसका झुकाव बोल्शेविकोंकी तरफ़ था।

अराजकतावादी गुटकी शक्ति पहलेसे ही नगण्य थी। वह अब निश्चित रूपसे छोटे-छोटे गुटोंमें बँट गया जिनमेंसे कुछ चोर-बदमाशों और समाजके गुंडों आदिसे मिल गये। कुछ लोग अपनी "आस्था के कारण" लुटेरे बन गये। ये लोग किसानों और शहरके मामूली लोगोंको लूटने लगे। मजदूर-क्लबोंकी रक़म मारने लगे और कुछ तो खुले आम क्रांति-विरोधियोंसे जा मिले। पूंजीपतियोंकी खिदमत करके वे अपना घर भरने लगे। ये लोग हर तरहके शासनके विरोधी थे; मजदूरों और किसानोंके क्रांतिकारी शासनके तो विशेष रूप से विरोधी थे क्योंकि वे जानते थे कि क्रांतिकारी

सरकार जनताको लूटने और उसकी सम्पत्तिको हजम करनेकी उन्हें अनुमति नहीं दे सकती।

कौर्निलौफ़की पराजयके बाद मेन्शेविकों और सामाजिक क्रांतिकारियोंने क्रांतिके बढ़ते हुए ज्वारको रोकनेके लिये एक बार फिर हाथ पैर फेंके। इस उद्देश्यसे उन्होंने १२ सितम्बर १९१७ को एक अखिल रूसी जनवादी कान्फ्रेंस की। इसमें समाजवादी पार्टियों, अवसरवादी सोवियतों, ट्रेड युनियनों, जेम्स्त्वो (लोकल बोर्डों), व्यापारी और औद्योगिक दलों तथा फ़ौजी दस्तोंके प्रतिनिधि शामिल हुए। कान्फ्रेंसने प्रजातंत्रकी एक अस्थायी समिति बनायी जिसका नाम उन्होंने **प्रि-पार्लमेंट** (प्रारंभिक परिषद) रखा। अवसरवादियोंको आशा थी कि इस समितिकी सहायतासे वे क्रांतिको रोक सकेंगे और देशको सोवियत क्रांतिकी राहसे हटाकर उसे पूंजीवादी वैधानिक विकासकी राह पर, पूंजीवादी पार्लमेंटगीरीकी राह पर, लगा सकेंगे। परंतु क्रांति-चक्रको रोकनेका इन राजनीतिक दिवालियोंने यह व्यर्थ प्रयत्न किया। इस योजनाको एक दिन ढेर होना था और वह ढेर होकर ही रही। अवसरवादियोंके इन पार्लमेंटरी प्रयत्नों की मजदूर खिल्ली उड़ाते थे और **प्रि-पार्लमेंट** (प्रारम्भिक परिषद) को **प्रेदवान्निक** (प्रारंभिक स्नानागार) कहते थे।

बोल्शेविक पार्टीकी केंद्रीय समितिने निश्चय किया कि इस परिषदका बहिष्कार किया जाय। यह सही है कि परिषदमें कामेनेफ़ और थियोदोरोविच जैसे लोगोंका एक बोल्शेविक गुट था जो वहाँसे निकलना न चाहता था परंतु केंद्रीय समितिने उसे निकलने पर बाध्य किया।

कामेनेफ़ और जिनोवियेफ़ने जिद पकड़ी कि परिषदमें भाग लेना ही चाहिये। इस तरह वे प्रयत्न कर रहे थे कि पार्टी विद्रोहकी तैयारियाँ बन्द कर दे। अखिल रूसी जनवादी कान्फ्रेंसके बोल्शेविक गुटकी एक बैठकमें बोलते हुए कॉ. स्तालिनने परिषदमें भाग लेनेका दृढ़तासे विरोध किया। उन्होंने कहा कि यह परिषद "कौर्निलौफ़की सृष्टि" है।

लेनिन और स्तालिनका विचार था कि परिषदमें थोड़े समयके लिये भी भाग लेना भयंकर भूल होगी क्योंकि इससे जनतामें यह दुराशा उत्पन्न हो सकती थी कि परिषद उसके लिये सचमुच कुछ कर सकती है

साथ ही बोल्शेविकोंने दूसरी सोवियत-कांग्रेसकी जोरदार तैयारी की। उन्हें आशा थी कि इसमें उनका बहुमत होगा। अखिल रूसी केन्द्रीय कार्यकारिणीमें मेन्शेविकों और सामाजिक क्रांतिकारियोंने बड़े दाँव पेंच लगाये लेकिन बोल्शेविक सोवियतोंके दबावसे अक्तूबर १९१७ के दूसरे पखवारेमें सोवियतोंकी दूसरी अखिल रूसी कांग्रेस करना तै हो गया।

६. पेत्रोग्रादमें अक्तूबर विद्रोह और अस्थायी सरकारकी गिरफ्तारी--दूसरी सोवियत-कांग्रेसका अधिवेशन और सोवियत सरकारका निर्माण--दूसरी सोवियत-कांग्रेसके शांति और भूमिसंबंधी निर्देश--समाजवादी क्रांतिकी विजय--समाजवादी क्रांतिकी विजयके कारण ।

बोल्शेविक विद्रोहकी घनघोर तैयारी करने लगे। लेनिनने कहा कि मॉस्को और पेत्रोग्राद इन दोनों राजधानियोंकी मजदूर और सैनिक प्रतिनिधियों की सोवियतोंमें बोल्शेविकोंका बहुमत हो गया है; इसलिये वे अब शासन-सूत्रको अपने हाथमें ले सकती हैं और उन्हें ले लेना चाहिये। पार किये हुए मार्ग पर दृष्टिपात करते हुए लेनिनने इस बात पर जोर दिया कि "अधिकांश जनता हमारे पक्षमें है।" केन्द्रीय समिति और बोल्शेविक संगठनोंको लिखे गये अपने पत्रों तथा लेखोंमें लेनिनने विद्रोहका एक विस्तृत कार्यक्रम रखा। इसमें उन्होंने बताया कि फ़ौजी दस्तों, जल-सेना और लाल-रक्षकोंका किस प्रकार उपयोग करना चाहिये, विद्रोहकी सफलताके लिये पेत्रोग्रादके किन महत्वपूर्ण स्थानों पर अधिकार कर लेना चाहिये, इत्यादि।

७ अक्तूबरको गुप्त रूपसे लेनिन फिनलैंडसे पेत्रोग्राद आये। १० अक्तूबर १९१७ को पार्टीकी केन्द्रीय समितिकी ऐतिहासिक बैठक हुई जिसमें शीघ्रही सशस्त्र विद्रोह करनेका निश्चय किया गया। लेनिनका बनाया हुआ पार्टीकी केन्द्रीय समितिका यह ऐतिहासिक प्रस्ताव इस प्रकारका था,—

"केन्द्रीय समिति इस बातका अनुभव करती है कि सशस्त्र विद्रोह करनेका समय आगया है। अंतरराष्ट्रीय परिस्थितिसे भी रूसी क्रांति होनी चाहिये (जर्मन जलसेनाका विद्रोह योरपमें समाजवादी विश्व-क्रांतिका चरम निदर्शन है; साथ ही साम्राज्यवादियोंने रूसी क्रांतिको नाश करनेके लिये संधि करनेकी धमकी दी है)। सैनिक परिस्थिति उसके अनुकूल है (रूसी पूंजीपतियों और केरेन्स्की, आदिने यह विचित्र निर्णय किया है कि पेत्रोग्रादको जर्मनोंको दे दें।) सोवियतोंमें सर्वहारा पार्टीका बहुमत हो गया है। इसके साथही किसान-विद्रोह भी हुए हैं। जनताका विश्वास हमारी पार्टीमें बढ़ रहा है। (मॉस्कोके चुनावसे इस बातका पता लगता है।) अंतमें, एक दूसरे कौर्निलौफ़-कांडके

लिये खुली तैयारियां हो रही हैं (पेत्रोग्रादसे फ़ौज बुला ली गयी है और वहाँ कज़्ज़ाक भेजे गये हैं। कज़्ज़ाकोंने मिन्स्क भी घेर लिया है, इत्यादि)।

"इसलिये यह विचार करके कि सशस्त्र विद्रोह अनिवार्य है और उसका उपयुक्त अवसर आ गया है, केन्द्रीय समिति सभी पार्टी-संगठनोंको निर्देश करती है कि वे इस वातको ध्यानमें रख कर कार्य करें और सभी प्रत्यक्ष समस्याओं पर (उत्तरी प्रदेशमें सोवियत-कांग्रेस, पेत्रोग्रादसे फ़ौजकी वापसी, मॉस्को और मिन्स्कमें हमारी जनताके कार्य, आदिपर) इसी दृष्टिकोण से विचार करके निर्णय करें।" (**संक्षिप्त लेनिन ग्रंथावली—अ. सं., खण्ड ६, पृ. ३०३**)

केन्द्रीय समितिके दो सदस्य कामेनेफ़ और जिनोवियेफ़ इस ऐतिहासिक निर्णयके विरुद्ध बोले और उन्होंने उसके प्रतिकूल वोट दिये। मेन्शेविकोंकी तरह वे एक पूँजीवादी पार्लमेंटरी प्रजातंत्रका स्वप्न देख रहे थे, और मजदूर वर्गको यह कहकर लांछित कर रहे थे कि समाजवादी क्रांतिकी उसमें सामर्थ्य नहीं है और शासन-सूत्र लेनेके लिये उसके हाथ काफ़ी मजबूत नहीं हुए हैं।

इस अधिवेशनमें त्रात्स्कीने प्रत्यक्ष रूपसे प्रस्तावके विरुद्ध वोट नहीं दिया परंतु उसने एक संशोधन रखा जिससे कि विद्रोह घपलेमें पड़ जाता और निरर्थक हो जाता। उसका कहना था कि दूसरी सोवियत-कॉंग्रेसके पहले विद्रोह न किया जाय। इस प्रस्तावके माननेसे विद्रोहमें विलम्ब होता, उसकी तिथि प्रकट हो जाती और अस्थायी सरकारको पहलेसे सूचना मिल जाती।

बोल्शेविक पार्टीकी केन्द्रीय समितिने अपने प्रतिनिधियोंको दोन्येत्स प्रदेश और यूराल, हेलसिंगफोर्स, क्रोस्तात, दक्षिणी-पश्चिमी मोर्चा और दूसरे स्थानोंमें विद्रोहका संगठन करनेके लिये भेजा। कॉ. वोरोशिलोफ़, मोलोतोफ़, जर्जिन्स्की, औजोंनिकित्से, किरोफ़, कगानोविच, क्वीविशेफ़, फ्रुन्से, यारोस्लावस्की, आदिको प्रांतोंमें विद्रोहका निर्देश करनेके लिये पार्टीने विशेष रूपसे नियुक्त किया। कॉ. ज़्दानोफ़ने शाद्रिन्स्क (यूराल) की फ़ौजमें काम किया। पच्छिमी मोर्चे पर बायलोरूसियामें सैनिक विद्रोहकी तैयारी कॉ. येज़ोफ़ने की। केन्द्रीय समितिके प्रतिनिधियोंने प्रान्तोंमें बोल्शेविक संगठनोंके प्रमुख सदस्योंको विद्रोहकी योजना बतायी और पेत्रोग्रादके विद्रोहका समर्थन करनेके लिये उन्हें कमर कसे हुए तैयार रखा। पार्टीकी केन्द्रीय समितिके निर्देशसे पेत्रोग्राद सोवियतकी एक **क्रांतिकारी सैनिक समिति** बनायी गयी। यह संस्था विद्रोहका वैध निर्देश-केन्द्र बन गयी।

इसी बीच क्रांति-विरोधी भी जल्दी-जल्दी अपना दल-बल समेटनेमें लगे थे। फ़ौजी अफ़सरोंने अफ़सर-संघ नामका एक क्रांति-विरोधी संगठन बनाया। लड़ाकू जत्थे बनानेके लिये क्रांति-विरोधियोंने हर जगह हेडक्वार्टर स्थापित किये। अक्तूबरका अंत

होते-होते ४३ लड़ाकू जत्थे उनकी कमानमें हो गये। 'सेंट जार्ज क्रास' नामके घुड़सवारोंकी विशेष टुकड़ियाँ बनायी गयीं।

केरेन्स्की सरकार इस प्रश्नपर विचार करने लगी कि सरकारको पेत्रोग्रादसे मॉस्को उठाले चला जाय। इससे स्पष्ट हो गया कि नगरमें विद्रोहकी नाका-बंदी करनेके लिये सरकार पेत्रोग्रादको जर्मनोंके हाथों सौंपनेकी तैयारी कर रही है। किन्तु पेत्रोग्रादके मजदूरों और सिपाहियोंके विरोधसे अस्थायी सरकारको बाध्य होकर पेत्रोग्रादमेंही रहना पड़ा।

१६ अक्तूबरको पार्टीकी केन्द्रिय समितिका एक विस्तारित अधिवेशन हुआ। इस अधिवेशनने विद्रोहका संचालन करनेके लिये कॉ. स्तालिनके नेतृत्वमें एक **पार्टी-केन्द्र** निर्वाचित किया। पेत्रोग्राद-सोवियतकी क्रांतिकारी सैनिक समितिकी रीढ़ यह पार्टी केन्द्र था और समूचे विद्रोहका प्रत्यक्ष निर्देश उसीके हाथमें था।

केन्द्रिय समितिके अधिवेशनमें पराजयवादी जिनोवियेफ़ और कामेनेफ़ने विद्रोहका फिर विरोध किया। अधिवेशनमें मुहँकी खाकर वे पत्रोंमें विद्रोह और पार्टीका विरोध करने लगे। १८ अक्तूबरको मेन्शेविक पत्र **नोवायाज़िल्स्नमें** कामेनेफ़ और जिनोवियेफ़ का एक वक्तव्य प्रकाशित हुआ। इसमें कहा गया था कि बोल्शेविक विद्रोहकी तैयारी कर रहे हैं और वे (कामेनेफ़ और ज़िनोवियेफ़) इसे दुस्साहसिकता समझते हैं। इस प्रकार कामेनेफ़ और जिनोवियेफ़ ने केन्द्रीय समितिके विद्रोह-सम्बन्धी निर्णयको शत्रुके सामने प्रकट कर दिया। उन्होंने यह भेद खोल दिया कि कुछ ही दिनके भीतर विद्रोह शुरू करनेकी तैयारीकी गयी है। यह विश्वासघात था। लेनिनने इस सम्बन्धमें लिखा था,-" कामेनेफ़ और जिनोवियेफ़ने रोदूलियान्को और केरेन्स्कीके सामने अपनी पार्टीकी केन्द्रीय समितिके सशस्त्र विद्रोह-सम्बन्धी निर्णयका **भेद खोल दिया है।**" लेनिनने केन्द्रीय समितिके सामने ज़िनोवियेफ़ और कामेनेफ़को पार्टीसे निकाल देनेका प्रश्न रखा।

इन दगाबाजोंने क्रांति-विरोधियोंको पहलेहीसे आगाह कर दिया और उन्होंने तुरंत ही चौकन्ने होकर विद्रोहको रोकनेके लिये हाथ-पैर चलाना शुरू कर दिया। वे विद्रोहकी संचालक शक्ति बोल्शेविक पार्टीका नाश करनेका प्रयत्न करने लगे। अस्थायी सरकारने एक गुप्त बैठकमें बोल्शेविकोंसे मोर्चा लेनेके लिये उपाय निश्चित किये। १९ अक्तूबरको अस्थायी सरकारने जल्दीसे फ़ौजी दस्तोंको मोर्चेसे पेत्रोग्राद बुला लिया। सड़कोंपर पहरा बढ़ा दिया गया। मॉस्कोमें विशेष रूपसे बड़ी फ़ौज इकट्ठा करनेमें क्रांति-विरोधी सफल हुए। अस्थायी सरकारने अपना कार्यक्रम बना लिया। दूसरी सोवियत कांग्रेसके आरम्भ होनेसे पहले ही बोल्शेविक केन्द्रीय समितिके हेडक्वार्टर स्मोलनीपर धावा किया जायगा और उसपर अधिकार कर लिया जायगा और बोल्शेविक संचालन-केन्द्र नष्ट कर दिया जायगा। इस उद्देश्यसे अस्थायी सरकारने पेत्रोग्रादमें उन सिपाहियोंको इकट्ठा किया जिनकी वफ़ादारीमें उसे विश्वास था।

परन्तु अस्थायी सरकारके दिन क्या, घड़ियाँ भी गिनी हुई थीं। समाजवादी क्रांतिके दुर्धर्ष वेगको अब कोई भी शक्ति न रोक सकती थी।

२१ अक्तूबरको बोल्शेविकोंने सभी क्रांतिकारी फ़ौजी दस्तोंमें क्रांतिकारी सैनिक-समितियोंके जन-प्रतिनिधियोंको भेजा। विद्रोहकी तिथि तक बचे हुए समयमें फ़ौजी दस्तों और मिलों तथा कारख़ानोमें जोरदार तैयारी की गयी। जंगी जहाज **अरोरा** और **ज़ारिया स्वोबोदी**को स्पष्ट निर्देश भेजा गया।

पेत्रोग्राद सोवियतकी एक बैठकमें त्रात्स्कीने डींग हांकते हुए दुश्मनको वह तारीख भी बता दी जब कि बोल्शेविकोंने सशस्त्र विद्रोह करना निश्चित किया था। केरेन्स्की सरकारको विद्रोहका नाश करनेका समय न देनेके लिये पार्टीकी केन्द्रीय समितिने निश्चय किया कि नियत तिथिके पहले ही विद्रोह आरंभ करके पूर्ण कर दिया जाय। इसलिये विद्रोहकी तिथि सोवियत कांग्रेसके आरंभ होनेके एक दिन पहले रखी गयी।

२४ अक्तूबर (६ नवंबर) के सवेरे केरेन्स्कीने अपना आक्रमण आरंभ कर दिया। बोल्शेविक पार्टीके मुखपत्र **राबोशी पुत (मज़दूर पथ)** को बंद करनेकी आज्ञा दी गयी। उसके संपादन-गृह और बोल्शेविकोंके छापेख़ानेकी ओर हथियारबंद गाड़ियाँ भेजी गयीं। परन्तु दस बजे तक कॉ. स्तालिनके निर्देशसे लाल रक्षकों और क्रांतिकारी सिपाहियोंने हथियारबंद गाड़ियोंको पीछे ठेल दिया। छापेख़ाने और **राबोशी पुत**के संपादन-गृहके चारों ओर लाल रक्षकोंकी संख्या बढ़ा दी गयी। ११ बजेके लगभग **राबोशी पुत** अस्थायी सरकारका **ध्वंस** करनेके आह्वानके साथ प्रकाशित हुआ। इसके साथ ही विद्रोहके पार्टी-केन्द्रके निर्देशसे क्रांतिकारी सिपाहियों और लाल रक्षकोंके जत्थे स्मोल्नीकी ओर दौड़ा दिये गये। विद्रोह आरम्भ हो गया। २४ अक्तूबरकी रात्रिको लेनिन स्मोल्नीमें आगये और स्वयं विद्रोहका संचालन करने लगे। रातभर स्मोल्नीमें फ़ौजके क्रांतिकारी दस्ते और लाल-रक्षकोंकी टुकड़ियाँ आती रहीं। बोल्शेविकोंने उन्हें राजधानीके मध्यभागमें जाकर शिशिर प्रासादको घेर लेनेको कहा जहाँ कि अस्थायी सरकार जमी हुई थी।

२५ अक्तूबर (७ नवंबर) को लाल-रक्षकोंके क्रांतिकारी दस्तोंने रेलवे स्टेशनों, डाक घर, तार घर, मंत्री-भवन, और सरकारी बैंक पर अधिकार कर लिया।

प्रि-पार्लमेंट (प्रारंभिक परिषद) भंग कर दी गयी।

पेत्रोग्राद सोवियत और बोल्शेविक केन्द्रीय समितिका हेडक्वार्टर स्मोल्नीमें था। वहीं अब क्रान्तिका हेडक्वार्टर भी हो गया जहाँसे युद्ध संबंधी निर्देश भेजे जाते थे।

उस समय पेत्रोगादके मज़दूरोंने दिखा दिया कि बोल्शेविक पार्टीकी देखरेख में उन्हें कैसी शिक्षा मिली है। फ़ौजके क्रान्तिकारी दस्ते, जिन्हें बोल्शेविकोंने विद्रोह के लिये तैयार किया था, सही ढंगसे आज्ञाओंका पालन करते थे और लाल रक्षकोंके साथ साथ लड़ते थे। जल सेना फ़ौजके पीछे न रही। क्रोन्स्ताद बोल्शेविक पार्टीका

मजबूत अड्डा था। और बहुत पहले अस्थायी सरकारकी आज्ञा माननेसे इनकार कर चुका था। **अरोरा** नामके जहाजने अपनी तोपें शिशिर प्रासादकी ओर सीधी कीं और २५ नवम्बरको उनके वज्रघोषके साथ एक नये युगका, महान् समाजवादी क्रान्तिके युगका, आरम्भ हुआ।

२५ अक्तूबर (७ नवंबर) को बोल्शेविकोंने "रूसी नागरिकों" के नाम एक घोषणापत्र निकाला जिसमें उन्होंने कहा कि पूँजीवादी अस्थायी सरकार हटा दी गयी है और राज्यशक्ति सोवियतोंके हाथमें आगयी है।

रंगरूटों और लड़ाकू जत्थोंके संरक्षणमें अस्थायी सरकारने शिशिर-प्रासादमें शरण ली। २५ अक्तूबरकी रातको क्रान्तिकारी मजदूरों, सिपाहियों और मल्लाहोंने शिशिर प्रासादपर हल्ला बोल दिया और उसपर अधिकार करके अस्थायी सरकारको बन्दी बना लिया।

पेत्रोग्रादमें सशस्त्र विद्रोहकी विजय हुई।

२५ अक्तूबर (७ नवंबर) १९१७ को पौने ग्यारह बजे स्मोलनीमें दूसरी अखिल रूसी सोवियत-कांग्रेसका अधिवेशन आरम्भ हुआ। इस समय तक पेत्रोग्रादका विद्रोह विजयी हो चुका था और राजधानीमें शासन-तंत्र पेत्रोग्राद-सोवियतके हाथमें आ चुका था।

कांग्रेसमें बोल्शेविकोंका भरपूर बहुमत रहा। मेन्शेविकों, बुंदवालों और नरम दली सामाजिक क्रान्तिकारियोंने देखा कि उनका भाग्य-नक्षत्र अस्त हो रहा है, इसलिये यह कह कर कि वे कांग्रेसकी कार्यवाहीमें भाग लेना अस्वीकार करते हैं, वे बाहर चले आये। सोवियत-कांग्रेसमें पढ़े हुए एक वक्तव्यमें उन्होंने अक्तूबर क्रान्तिको "सैनिक षड्यंत्र" कहा। कांग्रेसने मेन्शेविकों और सामाजिक-क्रान्तिकारियोंकी निन्दा की और उनके चले जाने पर खेद प्रकट करना तो दूर, उसने यह कह कर उसका स्वागत किया कि दगाबाजोंके चले जानेसे कांग्रेस अब मजदूर और सैनिक प्रतिनिधियोंकी एक वास्तविक क्रान्तिकारी कांग्रेस बन गयी है।

कांग्रेसने घोषित किया कि सम्पूर्ण शक्ति सोवियतोंके हाथमें आ गयी है।

दूसरी सोवियत-कांग्रेसके घोषणापत्रमें लिखा था,—

> "मजदूरों, सिपाहियों और किसानोंके विशाल बहुभागकी इच्छाका सहारा पा कर, पेत्रोग्रादके मजदूरों और वहाँकी फ़ौजी टुकड़ीके सफल विद्रोहका सहारा पा कर, कांग्रेस शासन-सत्र अपने हाथमें लेती है।"

२६ अक्तूबर (८ नवंबर), १९१७ को दूसरी सोवियत कांग्रेसने **शान्ति-सम्बन्धी विज्ञप्ति** स्वीकार की। कांग्रेसने लड़नेवाले देशोंसे कमसे कम तीन महीने के लिये युद्ध रोकनेको कहा जिससे शान्तिके लिये बातचीत की जा सके। युद्धमें भाग लेनेवाले सभी देशोंकी जनता और सरकारोंसे अपनी बात कहनेके साथ उसने "मनुष्य जातिमें सबसे आगे बढ़ी हुई तीन जातियों तथा युद्धमें भाग लेने वाले सबसे बड़े राज्यों के अर्थात् ब्रिटेन, फ्रान्स और जर्मनीके श्रेणी-सजग मजदूरोंसे" अपील की। उसने

इन मजदूरोंसे कहा कि वे "शान्तिके उद्देश्यकी सिद्धिमें, और साथ ही सभी तरहकी दासता और सभी तरहके शोषणसे मेहनत करनेवाले शोषित जन-समूहकी मुक्तिके उद्देश्यकी सिद्धिमें" सहायक हों।

उसी रातको दूसरी सोवियत-कांग्रेसने **भूमि-सम्बन्धी विज्ञप्ति** स्वीकार की जिसमें घोषित किया गया कि "जमीन पर जमींदारी अधिकारका अबसे बिना किसी मुआविजेके अन्त किया जाता है।" इस कृषि-सम्बन्धी क़ानूनका आधार किसानोंका एक निर्देश-पत्र (नकशा) था जो विभिन्न स्थानोंके किसानोंके २४२ निर्देश-पत्रोंसे संकलित किया गया था। इस निर्देश-पत्रके अनुसार भूमिपर व्यक्तिगत अधिकारका सदाके लिये अन्त कर दिया गया और उसके बदले भूमिपर सार्वजनिक अथवा राज्यका अधिकार हुआ। जमींदारोंकी जमीन, जार-परिवार तथा मठोंकी जमीन, मेहनतकशों को दे दी गयी कि वे स्वाधीनतासे उसका उपयोग करें।

इस निर्देश-पत्रसे किसानोंको अक्तूबर क्रान्तिसे १५ करोड़ देसियातिन (४० करोड़ एकड़ से ऊपर) जमीन मिल गयी जो पहले जमींदारों, पूँजीपतियों, जार-परिवारके लोगों, मठों और गिरजाघरोंके पास थी।

इसके सिवा किसान अब जमींदारोंको लगान देनेसे बरी हो गये। यह लगान प्रतिवर्ष ५० करोड़ स्वर्ण रूबल होता था।

तेल, कोयला, धातु आदिकी सभी खनिज संपत्ति तथा जंगलों और जलाशयोंपर जनताका अधिकार हो गया।

अंतमें दूसरी सोवियत कांग्रेसने पहली सोवियत सरकार—जन-प्रतिनिधियोंकी समिति (काउन्सिल ऑफ पीपल्स कमीसार्स)—बनायी जिसमें सब बोल्शेविक ही थे। लेनिन जन-प्रतिनिधियोंकी इस पहली समितिके सभापति चुने गये।

इस प्रकार इस ऐतिहासिक द्वितीय सोवियत-कांग्रेसकी कार्यवाही समाप्त हुई।

कांग्रेसके प्रतिनिधि विदा हुए कि जाकर पेत्रोग्रादमें सोवियत-विजयका समाचार सुनायें और इस बातका प्रयत्न करें कि सारे देशमें निश्चित रूपसे सोवियत राज स्थापित हो जाय।

हर जगह शासन-सूत्र सोवियतोंके हाथमें एकबारगी नहीं आ गया। जब पेत्रोग्रादमें सोवियत सरकार बन चुकी थी, तब मॉस्कोकी सड़कोंमें और कई दिन तक घनघोर लड़ाई होती रही। मॉस्को-सोवियतके हाथमें शासन-सूत्र न जाय, इसलिये क्रान्ति-विरोधी मेन्शेविक और सामाजिक क्रान्तिकारी पार्टियाँ गद्दारों और रंगरूटोंके साथ मजदूरों और सिपाहियों से लड़ बैठीं। विद्रोहियोंको परास्त करने और मॉस्को में सोवियत शासन-तंत्र स्थापित करनेमें कई दिन लग गये।

पेत्रोग्राद और उसके कई स्वयं जिलोंमें क्रान्तिकी विजयके पहले दिनों में ही सोवियत-शासनका ध्वंस करनेके लिये क्रांति-विरोधी प्रयत्न किये गये। १० नवंबर

१९१७ को केरेन्स्कीने—जो पेत्रोग्रादसे उत्तरी मोर्चेको भाग गया था—कई कज्जाक दस्ते इकट्ठे किये और जनरल क्रासनौफ़की कमानमें उन्हें पेत्रोग्रादकी ओर भेज दिया। ११ नवंबर १९१७ को सामाजिक-क्रांतिकारियोंके नेतृत्व में "मातृभूमि तथा क्रांतिकी रक्षा समिति" नामके एक क्रांति-विरोधी संगठनने पेत्रोग्रादमें रंगरूटोंका एक विद्रोह करा दिया। परन्तु उस दिन शाम तक विना किसी विशेष कठिनाईके मल्लाहों और लाल रक्षकोंने विद्रोहका दमन कर दिया और १३ नवंबरको पुल्कोवो पहाड़ियोंके पास जनरल क्रासनौफ़ परास्त कर दिया गया। लेनिनने व्यक्तिगत रूपसे सोवियत-विरोधी विद्रोहके दमनका निर्देश किया, जैसे कि व्यक्तिगत रूपसे उन्होंने अक्तूबर क्रान्तिका निर्देश किया था। उनकी अटूट दृढ़ता और विजयमें अडिग विश्वासने जनताको प्रोत्साहित किया और उसे सूत्र-बद्ध किया। शत्रु परास्त हुआ। क्रासनौफ़ बन्दी बना लिया गया और उसने "वचन दिया" कि वह सोवियत शासनसे लड़ना बन्द कर देगा। "वचन देने" पर वह मुक्त कर दिया गया। परन्तु आगे चलकर उसने वचन-भंग कर दिया। केरेन्स्की एक स्त्रीका भेस बना कर "किसी अज्ञात दिशाकी ओर" भाग गया।

मोगीलेफ़में, जहां फ़ौजके जनरल हेडक्वार्टर थे, प्रधान सेनापति, जनरल दुखोनिनने भी विद्रोह करनेका प्रयत्न किया। जब सोवियत सरकारने उसे आज्ञा दी कि जर्मन सैन्य-विभागसे वह तुरंत युद्ध रोकनेकी बात चलाये, तो उसने आज्ञा मानना अस्वीकार किया। इस पर सोवियत सरकारकी आज्ञासे जनरल दुखोनिनको पदच्युत कर दिया गया। क्रान्ति-विरोधी जनरल हेडक्वार्टर तोड़ दिये गये और जनरल दुखोनिनके ही सिपाहियोंने विद्रोह करके उसे ठिकाने लगा दिया।

पार्टीके भीतर कुछ दुष्ट अवसरवादियोंने—कामेनेफ़, जिनोवियेफ़, राइकौफ़, शिलयाप्नीकौफ़ आदिने—सोवियत शासन पर वार किया। उन्होंने यह माँग की कि एक "अखिल समाजवादी सरकार" बनायी जाय जिसमें अक्तूबर क्रान्तिमें परास्त किये हुए मेन्शेविक और सामाजिक-क्रान्तिकारी भी हों। १५ नवंबर १९१७ को बोल्शेविक पार्टीकी केन्द्रीय समितिने इन क्रान्ति-विरोधी पार्टियोंसे समझौता अस्वीकार करते हुए एक प्रस्ताव पास किया। इसमें कामेनेफ़ और जिनोवियेफ़को क्रान्ति-ध्वंसक कहा गया। १७ नवंबरको कामेनेफ़, जिनोवियेफ़, राइकौफ़ और मिल्यूतिनने पार्टी-नीति से असहमत होकर केन्द्रीय समितिसे अलग होनेकी सूचना दी। उसी दिन, १७ नवंबर को, नोगिनने अपनी ओरसे तथा जन प्रतिनिधि-समितिके सदस्य राइकौफ़, मिल्यूतिन, तिओदोरोविच, आ. शिलयाप्नीकौफ़, दा. रियाजिनौफ़, युरेनेफ़ और लारिनकी ओरसे पार्टीकी केन्द्रीय समितिकी नीतिसे अपने मतभेदकी सूचना दी और जन-प्रतिनिधि-समितिसे त्यागपत्र दे दिया। इन मुट्ठी भर कायरोंके अलग हो जानेसे अक्तूबर क्रान्तिके शत्रु फूले न समाये। पूँजीवादी वर्ग और उसके लगुए-भगुए मारे खुशीके चिल्ला उठे कि बोल्शेविज़्म खतम हो गया और बोल्शेविक पार्टीके

दिन भी गिने हुए हैं। परन्तु इन मुट्ठी भर कायरोंके भागनेसे पार्टी एक क्षणको भी विचलित न हुई। पार्टीकी केन्द्रीय समितिने घृणासे उन्हें पूँजीपतियोंका साथी और क्रान्तिको पीठ दिखानेवाला कह कर उनकी निन्दा की और उसके बाद अपने काममें लग गयी।

जहाँ तक "गरम" सामाजिक क्रान्तिकारियोंका सम्बन्ध था, वे किसानों पर अपना प्रभाव जमाये रखना चाहते थे। परन्तु किसानोंकी सहानुभूति निश्चित रूपसे बोल्शेविकोंके साथ थी; इसलिये बोल्शेविकोंसे लड़ाई मोल न लेनेके लिये उन्होंने कुछ समयके लिये उनसे संयुक्त मोर्चा बनाये रखना उचित समझा। नवंबर १९१७ में किसान-सोवियतोंकी कांग्रेस हुई। उसने अक्तूबर क्रान्तिके लाभोंको स्वीकार किया और सोवियत सरकारके निर्देश-पत्रोंका अनुमोदन किया। "गरम" सामाजिक-क्रान्तिकारियोंके साथ समझौता कर लिया गया और उनमेंसे कई लोग (कोलेगायेफ़, स्पिरिदोनोवा, प्रोश्यान, और स्टाइनबर्ग) जन-प्रतिनिधि-समितिमें अनेक पदों पर प्रतिष्ठित कर दिये गये। फिर भी, यह समझौता ब्रेस्त-लितोव्स्ककी संधि और गरीब-किसान-समितियोंके बनने तक ही रहा। उस समय किसानोंमें गहरा मतभेद उठ खड़ा हुआ। "गरम" सामाजिक-क्रान्तिकारी अधिकाधिक कुलक-हितोंकी ओर झुकने लगे और उन्होंने बोल्शेविकोंसे विद्रोह कर दिया। सोवियत सरकारने उन्हें परास्त किया।

अक्तूबर १९१७ से १९१८ की अवधिमें सोवियत-क्रान्ति देशकी विशाल भूमिमें ऐसे वेगसे फैली कि लेनिनने उसे सोवियत शासनका "विजय-प्रयाण" कहा था।

अक्तूबर समाजवादी क्रान्तिकी विजय हुई।

रूसमें समाजवादी क्रान्तिकी इस अपेक्षाकृत सरल विजयके अनेक कारण थे। निम्नलिखित मुख्य कारण ध्यान देने योग्य हैं:—

(१) रूसी क्रान्तिके शत्रु थे रूसी पूँजीपति जो अपेक्षाकृत निर्बल थे, जिनका संगठन शिथिल और राजनीतिक अनुभव नहींके बराबर था। आर्थिक दृष्टिसे वे अब भी शक्ति-हीन थे, वे सरकारी ठेकों पर निर्भर रहते थे और उनमें इतनी राजनीतिक आत्म-निर्भरता और स्वयंप्रेरणा नहीं थी कि वे परिस्थितिसे बचनेका उपाय करते। उदाहरणके लिये उनमें न तो फ्रांसके पूँजीपतियोंकी राजनीतिक दलबन्दीका अनुभव था और न उन जैसी धूर्तता थी; न उनमें ब्रिटेनके पूँजीपतियोंकी तरह व्यापक आधारपर चतुर समझौता करनेकी क्षमता थी। थोड़े दिन पहलेही उन्होंने ज़ारसे समझौता करनेकी कोशिश की थी परन्तु जब शासन-सूत्र उनके हाथमें आगया तो उनकी समझमें न आया कि उसी दुष्ट ज़ारकी नीतिको, सभी महत्त्वपूर्ण अंशोंमें, चरितार्थ करनेके सिवा वे क्या करें। ज़ारकी तरह वे भी "विजय पर्यंत युद्ध" के समर्थक थे यद्यपि अब देशमें युद्ध करनेका दम न रह गया था और युद्धसे जनता और फ़ौज एकदम पस्त हो गयी थी। ज़ारकी तरह वे भी मुख्यतः बड़ी-बड़ी भूसम्पत्तिको बनाये रखनेके पक्षमें थे यद्यपि किसान भूमिके अभावसे और ज़मींदारीके भारी बोझसे पिसे जा रहे थे।

अपनी श्रम-सम्बन्धी नीतिमें मजदूर-वर्गसे घृणा करनेमें पूँजीपतियोंने ज़ारके भी कान काट लिये थे क्योंकि उन्होंने मिलमालिकोंके शासनको बनाये रखने और उसे दृढ़ करनेकाही प्रयत्न नहीं किया वरन् धड़ल्लेसे तालाबन्दी करके उन्होंने उस शासनको असह्य बना देनेमें भी कसर न उठा रखी।

कोई आश्चर्य नहीं कि जनताको ज़ार और पूँजीपतियोंकी नीतिमें कोई विशेष अन्तर न दिखायी दिया और वह ज़ारके बदले पूँजीपतियोंकी अस्थायी सरकारसे घृणा करने लगी।

जब तक समझौतावादी सामाजिक क्रान्तिकारी और मेन्शेविक पार्टियोंका जनतामें थोड़ा-बहुत प्रभाव था, तब तक पूँजीपति उन्हें आड़ बना कर अपना शासन बनाये रख सकते थे। परन्तु जब मेन्शेविकों और सामाजिक-क्रान्तिकारियोंने अपनेको साम्राज्यवादी पूँजीपतियोंका दलाल साबित कर दिया और इस प्रकार जनतासे उनकी साख उठ गयी, तब अस्थायी सरकारका कोई सहायक न रह गया।

(२) अक्तूबर क्रान्तिका नेतृत्व रूसी मजदूरवर्ग जैसे क्रान्तिकारी वर्गके हाथमें था। यह वर्ग संघर्षकी आँचमें खरा उतर चुका था, थोड़े ही समयमें उसने दो क्रान्तियाँ देखी थीं, और तीसरी क्रान्तिके आरम्भ होनेसे पहले लोग मान गये थे कि शांति, भूमि, स्वाधीनता और समाजवादके लिये संघर्ष करनेमें वह जनताका नेता है। यदि रूसी मज़दूरवर्ग जैसा जनताका विश्वासपात्र क्रान्तिका नेता न होता तो मजदूरों और किसानोंमें सहयोग भी न हो पाता और बिना इस सहयोगके अक्तूबर क्रान्तिकी विजय असम्भव होती।

(३) कृषक-जनताका विशाल-बहुभाग, ग़रीब किसान, क्रान्तिमें रूसी मज़दूर-वर्गके शक्तिशाली सहायक थे। क्रान्तिके आठ महीनोंका अनुभव निःसंदिग्ध रूपसे "साधारण विकास" के पचीस पचास सालके अनुभवके बराबर था; वह आम खेतिहरोंके लिये व्यर्थ नहीं गया। इस अवधिमें उन्हें अवसर मिला कि वे प्रत्यक्ष व्यवहारमें रूसकी सभी पार्टियोंको परखलें और इस बातका विश्वास जमालें कि न तो वैधानिक जनवादी और न सामाजिक-क्रान्तिकारी या मेन्शेविक ज़मींदारोंसे डटकर मोर्चा लेंगे और किसान-हितोंके लिये अपने प्राण होम करेंगे। उन्हें स्पष्ट हो गया कि रूसमें एक ही पार्टी—बोल्शेविक पार्टी ही—ऐसी है जिसका जमींदारोंसे कोई सम्बन्ध नहीं है और जो किसानोंकी आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिये जमींदारीको निर्मूल करनेके लिये तैयार है। सर्वहारा वर्ग और ग़रीब किसानोंके सहयोगका यह दृढ़ आधार था। मजदूर-वर्ग और ग़रीब किसानोंके इस सहयोगसे ही मँझले किसानोंका आचरण भी निश्चित हुआ। वे बहुत दिनसे इधरसे उधर झोंके खाते रहे थे और अक्तूबर-विद्रोह आरंभ होते-होते ही पूरे मनोयोगसे क्रान्तिकी ओर झुक आये थे और ग़रीब किसानोंसे मिल गये थे।

कहना न होगा कि इस सहयोगके बिना अक्तूबर क्रान्तिकी विजय असंभव होती।

(४) मजदूर वर्गका नेतृत्व बोल्शेविक पार्टी जैसी खरी और परखी हुई पार्टीके हाथमें था। केवल बोल्शेविक पार्टी जैसी पार्टी, जिसमें डटकर हमला करते समय जनताका अगुआ बननेका साहस था, और जिसमें लक्ष्यकी ओर बढ़ते समय राहकी छिपी हुई सुरंगोंसे बच निकलनेकी सावधानी थी, एक सामान्य क्रान्तिकारी धारामें सभी फुटकर नदीनालोंको मिला सकती थी। एक ओर शान्ति पानेके लिये आम जनवादी आन्दोलन था, तो उसके साथ रियासती जमीनको छीननेके लिये किसानोंका जनवादी आन्दोलन भी था; इधर जातीय स्वाधीनता और जातीय समानताके लिये पीड़ित जातियोंका आन्दोलन था तो उधर पूँजीवादी वर्गके ध्वंस और सर्वहारावर्गका एकाधिपत्य स्थापित करनेके लिये सर्वहारा वर्गका समाजवादी आन्दोलन था। इन विभिन्न क्रान्तिकारी जल-धाराओंको मिलाकर बोल्शेविक पार्टीने एक महान् क्रान्तिकारी धारा बनायी।

इसमें सन्देह नहीं कि इन विभिन्न क्रान्तिकारी धाराओंके एकही अविच्छिन्न और अप्रतिहत क्रान्तिकारी धारा बन जानेसे रूसमें पूँजीवादके भाग्यका निर्णय हो गया।

(५) अक्तूबर क्रान्ति उस समय आरम्भ हुई जब साम्राज्यवादी युद्ध जोरोंपर था, जब प्रमुख पूँजीवादी राज्य दो विरोधी दलोंमें बँटे हुए थे, और जब परस्पर-युद्ध और एक दूसरेकी जड़ काटनेमें लगे होनेसे वे अपनी पूरी ताक़तसे "रूसी मामलात" में दखल न दे सकते थे और क्रियात्मक ढंगसे अक्तूबर क्रान्तिका विरोध न कर सकते थे।

इसमें सन्देह नहीं कि इससे अक्तूबर क्रान्तिकी विजयमें बड़ी सहायता मिली।

७. सोवियत शासनकी जड़ जमानेके लिये बोल्शेविक पार्टीका संघर्ष—ब्रेस्त लितोव्स्ककी सन्धि—सातवीं पार्टी कांग्रेस।

सोवियत शासनकी जड़ जमानेके लिये पुराने पूँजीवादी शासन-तंत्रको नष्ट करके उसके बदले एक नवीन सोवियत शासन-तंत्रको प्रतिष्ठित करना था। इसके सिवा पहले समाज विशिष्ट वर्गोंमें विभक्त था, उस विभाजनके अवशेष को नष्ट करना था, जातीय उत्पीड़नका अंत करना था, गिरजा-घरोंके विशेषाधिकारों को समाप्त करना था, सभी तरहके क़ानूनी और ग़ैर-क़ानूनी क्रान्ति-विरोधी प्रकाशनों और संगठनोंका दमन करना था, और पूँजीवादी विधान-सभाको भंग करना था।

भूमिपर राष्ट्रीय अधिकार होनेके बाद उद्योग-धन्धोंके साथ भी यही करना था। और अंतमें युद्ध-कालीन अवस्थाका अंत करना था, क्योंकि और किसी बातसे सोवियत शासनके सुदृढ़ होनेमें इतनी बाधा न पड़ती थी जितनी युद्धसे।

कुछ ही महीनोंमें, १९१७ के अंतसे १९१८ के मध्य तककी अवधिमें ये सब काम कर डाले गये।

सामाजिक-क्रान्तिकारियों और मेन्शेविकोंकी प्रेरणासे पुराने राज्य-विभागोंके अधिकारी तोड़-फोड़ करनेमें लगे थे; उनके कार्योंका दमन किया गया और उनपर विजय प्राप्त की गयी। ये सब विभाग भंग कर दिये गये और उनके बदले सोवियत शासन-तंत्र और उपयुक्त जन-प्रतिनिधि-मंडल स्थापित किये गये। देशके उद्योग-धन्धोंका संचालन करनेके लिये राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्थाकी प्रधान समिति बनायी गयी। क्रान्ति-विरोध और तोड़-फोड़से लोहा लेनेके लिये अखिल रूसी असाधारण समिति (वेचेका) बनायी गयी और फ. जेरजिन्स्की उसके प्रधान बनाये गये। लाल फ़ौज और लाल जलसेनाके निर्माणके लिये निर्देश-पत्र निकाला गया। विधान-सभा भंग कर दी गयी। इसका निर्वाचन मुख्यतः अक्तूबर क्रान्तिके पहले हुआ था; दूसरी सोवियत-कांग्रेसके इस निर्देश-पत्रको उसने ठुकरा दिया था कि शान्ति स्थापित हो, भूमि किसानोंकी हो, और राज सोवियतोंका हो।

सामन्तशाहीके ध्वंसावशेष, विशिष्ट वर्ग-विभाजन और सामाजिक जीवनके सभी क्षेत्रोंमें ऊँच-नीचका भेद मिटानेके लिये निर्देश-पत्र निकाले गये कि विशिष्ट वर्गोंका अंत हो, धर्म और जातिके आधार पर बनाये गये बन्धनोंका अंत हो, मठोंको सरकारी सहायता न दी जाय और स्कूल मठोंसे अलग कर दिये जायँ, स्त्रियोंकी समानता और रूसकी सभी जातियोंकी समानता स्थापित हो।

" रूसी जनताके अधिकारोंकी घोषणा " नामकी सोवियत सरकारकी एक विशेष विज्ञप्तिने यह क़ानून बनाया कि रूसी जनताको अप्रतिहत विकास और पूर्ण समानताका अधिकार है।

पूँजीपतियोंकी अर्थशक्ति पर कुठाराघात करनेके लिये, एक नयी सोवियत राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्थाका निर्माण करनेके लिये, और मुख्यतः नये सोवियत उद्योग-धन्धोंका निर्माण करनेके लिये बैंक, रेलवे, विदेशसे व्यापार, व्यापारी जहाज और सभी उद्योग-धन्धों—कोयला, धातु, तेल, रसायन, मशीन बनानेवाले, सुती कपड़े, शक्कर, आदि आदिके—कारखानोंपर राजकीय अधिकार होनेका निर्देश किया गया।

विदेशी पूँजीपतियोंसे अपने देशको आर्थिक स्वाधीनता देनेके लिये और उनके शोषणसे उसे बचानेके लिये ज़ार और अस्थायी सरकारके विदेशी कर्जे रद कर दिये गये। हमारे देशकी जनताने उन कर्जोंको पटानेसे इनकार किया जो दूसरोंको गुलाम बनानेकी लड़ाईको जारी रखनेके लिये माँगे गये थे और जिसके कारण हमारा देश, विदेशी पूँजीका दास बन गया था।

इन सब और ऐसे ही अन्य उपायोंसे पूँजीपतियों, ज़मींदारों, प्रतिक्रियावादी अफ़सरों और क्रान्तिविरोधी पार्टियोंकी शक्ति पर कुठाराघात हुआ और देशमें सोवियत सरकारकी स्थिति बहुत काफी दृढ़ हुई।

परन्तु जब तक जर्मनी और आस्ट्रियासे युद्ध छिड़ा हुआ था तब तक सोवियत सरकारकी स्थिति पूर्ण रूपसे सुरक्षित न समझी जा सकती थी। सोवियत शासनको

पूर्ण सुदृढ़ करनेके लिये युद्धका अन्त करना था। इसलिये अक्तूबर क्रान्तिकी विजय होते ही पार्टीने शान्ति स्थापित करनेके लिये यत्न आरम्भ कर दिये थे।

सोवियत सरकारने यह अपील की थी कि "युद्धमें लगे हुए सभी देशोंकी जनता और उनकी सरकारें न्याय-पूर्ण जनवादी शान्तिके लिये तुरंत बातचीत शुरू कर दें।" परन्तु "मित्र" देशोंने—ब्रिटेन और फ्रान्सने—सोवियत सरकारका प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया। इस अस्वीकृतिके कारण, सोवियत सरकारने जर्मनी और आस्ट्रियासे बातचीत शुरू करनेका निश्चय किया।

३ दिसम्बरको ब्रेस्त-लितोव्स्कमें बातचीत शुरू हुई। ५ दिसम्बरको लड़ाई मुल्तवी करनेके काग़ज पर दस्तखत किये गये।

यह बातचीत उस समय हुई जब देशमें आर्थिक विशृंखलता थी, जब सब कहीं युद्धकी थकान फैली हुई थी, जब हमारी फ़ौज खाइयोंको छोड़ रही थी और मोर्चा टूट कर बिखर रहा था। बातचीतके सिलसिलेमें जाहिर हो गया कि जर्मन साम्राज्यवादी पहलेके जार साम्राज्यके विशाल भाग हड़पना चाहते हैं और पोलैंड, युक्राइन तथा बाल्टिक देशोंको जर्मनीका गुलाम बनाना चाहते हैं।

ऐसी परिस्थितिमें लड़ाई जारी रखनेका अर्थ होता नवजात सोवियत प्रजातंत्रके प्राणोंकी बाजी लगा देना। मजदूर वर्ग और किसानोंको इस आवश्यकताका सामना करना पड़ा कि संधिकी भारी शर्तोंको स्वीकार करें, उस युगके सबसे घातक दस्यु जर्मन साम्राज्यवादके सामनेसे पीछे हटें जिससे कि थोड़ा अवकाश पाकर सोवियत शासन सुदृढ़ करें और शत्रुके आक्रमणसे देशकी रक्षा करनेमें समर्थ एक नयी फ़ौज, लाल फ़ौजका निर्माण करें।

मेन्शेविकों और सामाजिक क्रान्तिकारियोंसे लेकर सबसे गये-बीते गद्दारों तक सभी क्रान्तिविरोधी शान्ति स्थापित करनेके विरुद्ध प्राणपनसे प्रचार करने लगे। उनकी नीति स्पष्ट थी। वे सन्धिकी बातचीत भंग कर देना चाहते थे, जर्मनोंको हमला करनेके लिये उकसाना चाहते थे, और इस प्रकार सोवियत-शासनको, जो अभी निर्बल था, संकटमें डालना चाहते थे और मज़दूरों और किसानोंके प्राप्त किये हुए लाभोंको मिट्टीमें मिला देना चाहते थे।

इस दुष्ट-योजनामें उनके साथी त्रात्स्की और उसका सहयोगी बुखारिन थे। रादेक और पियाताकौफ़के साथ बुखारिन ऐसे गुटका सरदार था जो पार्टी-विरोधी था परन्तु जो "गरम कम्युनिस्ट" नामकी आड़ लेकर अपनेको छिपाता था। त्रात्स्की और "गरम कम्युनिस्ट" गुटने पार्टीके भीतर लेनिनसे भयंकर संग्राम छेड़ दिया और इस बातकी माँग की कि लड़ाई जारी रखी जाय। स्पष्ट ही वे लोग जर्मन साम्राज्य-वादियों और देशके क्रान्तिविरोधियोंके हाथमें खिलौना बने हुए थे। उनकी कार्यवाही का यही अन्त होता कि सोवियत प्रजातंत्रको, जिसके पास अभी कोई फ़ौज नहीं थी, जर्मन साम्राज्यवादके प्रहार सहने पड़ते।

यह भड़काने वालोंकी नीति थी जिसे चतुरतासे गरमदलकी शब्दावलीमें छिपाया गया था।

१० फ़रवरी १९१८ को ब्रेस्त-लितोव्स्कमें सन्धिकी बातचीत टूट गयी। यद्यपि पार्टीकी केन्द्रीय समितिकी ओरसे लेनिन और स्तालिनने इस बात पर जोर दिया था कि सन्धि कर ली जाय फिर भी त्रात्स्कीने, जो ब्रेस्त-लितोव्स्कमें सोवियत प्रतिनिधि-मंडलका सभापति था, बोल्शेविक पार्टीके स्पष्ट निर्देशको विश्वासघात करके भंग कर दिया। उसने घोषित किया कि जर्मनीकी शर्तोंपर सोवियत प्रजातंत्र सन्धि न करेगा। साथ ही उसने जर्मनोंको सूचित किया कि सोवियत प्रजातंत्र युद्ध न करेगा और अपनी फ़ौजको तोड़ता रहेगा।

यहाँ पर हद हो गयी। सोवियत-देशोंके हितोंके प्रति विश्वासघात करनेवाले इस दगाबाज़से जर्मन साम्राज्यवादी और ज्यादा कुछ न चाह सकते थे

जर्मन सरकारने बातचीत तोड़ दी और आक्रमण आरम्भ कर दिया। जर्मन फ़ौजोंके हमलेके सामने पुरानी बची-खुची फ़ौज बोल गयी और भाग खड़ी हुई। जर्मन तेजीसे बढ़ते चले आये; विशाल प्रदेशोंपर उन्होंने अधिकार कर लिया और पेत्रोग्राद भी संकटमें पड़ गया। जर्मन साम्राज्यवादने हमारे देशपर इस उद्देशसे आक्रमण किया था कि सोवियत शासनका ध्वंस करके उसे अपना उपनिवेश बनालें। पुरानी ज़ार-सेनाका ध्वंसावशेष जर्मन साम्राज्यवादकी सशस्त्र सैन्य-वाहिनीका सामना न कर सका और उसके आघातोंके सामने बराबर पीछे हटता गया।

परन्तु जर्मन-साम्राज्यवादियोंके सशस्त्र हस्तक्षेपने रण-दुन्दुभिकी तरह देशमें क्रान्तिकारी उत्साहको जगा दिया। पार्टी और सोवियत सरकारने नारा बुलन्द किया कि "सोशलिस्ट देश संकटमें है।" उत्तरमें मजदूर वर्गने जी-जानसे लाल फ़ौजकी पल्टनें बनाना शुरू कर दिया। नयी फ़ौजके इन नये दस्तोंने—क्रान्तिकारी जनताकी फ़ौजने—वीरतासे जर्मन आततायियोंका सामना किया जो एड़ीसे चोटी तक अस्त्र-शस्त्रोंसे सुसज्जित थे। नार्वा और प्स्कौफ़में जर्मनोंको ज़बरदस्त धक्का देकर ठेल दिया दिया गया। पेत्रोग्रादकी ओर उनका बढ़ना रुक गया। वह २३ फ़रवरीका दिन—जब जर्मन साम्राज्यवादकी फ़ौज पीछे हटायी गयी थी—लाल फ़ौजका जन्म-दिन माना जाता है।

१८ फ़रवरी १९१८ को पार्टीकी केन्द्रीय समितिने लेनिनका यह प्रस्ताव स्वीकृत किया था कि तुरंत सन्धि करनेके लिये जर्मन सरकारको तार दिया जाय। परन्तु अच्छी शर्तें पानेके लिये जर्मन आगे बढ़ते आये और २२ फ़रवरीको ही जर्मन सरकारने सन्धि करनेकी इच्छा प्रकट की। उसकी शर्तें अब पहलेसे कहीं ज्यादा खराब थीं।

संधि करनेके पक्षमें निर्णय प्राप्त करनेके लिये लेनिन, स्तालिन, और स्वेर्द-

लौफ़को त्रात्स्की, बुखारिन और दूसरे त्रात्स्की-पंथियोंसे केन्द्रीय समितिमें घनघोर संग्राम करना पड़ा। लेनिनने कहा कि बुखारिन और त्रात्स्कीने,

> "वास्तवमें जर्मन साम्राज्यवादियोंकी **सहायता की है** और जर्मनीमें क्रान्तिके विकास और उसकी प्रगति में **बाधा डाली है**।" (लेनिन-ग्रंथावली—रू. सं., खं. २२, पृ. ३०७)

२३ फ़रवरीको केन्द्रीय समितिने जर्मन सेनापतियोंकी शर्तें मान लेने और संधि-पत्र पर हस्ताक्षर करनेका निश्चय किया। त्रात्स्की और बुख़ारिनका विश्वासघात सोवियत प्रजातंत्रको बड़ा महँगा पड़ा। लैटविआ, एस्टोनिआ और इनके साथ कहना न होगा कि पोलैंड भी जर्मनोंके हाथ लगे। युक्राइन सोवियत प्रजातंत्रसे जुदा हो गया और जर्मन राजके अधीन हो गया। सोवियत प्रजातंत्रने जर्मनोंको हरजाना देनेका वचन दिया।

इसी बीच "गरम कम्युनिस्ट" लेनिनसे लड़ते रहे और विश्वासघातके दल-दलमें और भी गहरे धँसते गये।

पार्टीकी मॉस्को-प्रादेशिक-समितिने, जिसपर "गरम कम्युनिस्टों"ने (बुखारिन, ओसिन्स्की, याकोवलेवा, स्तूकौफ़ और मान्त्सेफ़ने) कुछ समयके लिये अधिकार कर लिया था, केन्द्रीय समितिमें अविश्वासका प्रस्ताव पास किया जिससे पार्टीमें फूट पड़ जाय। समितिने घोषित किया कि उसके विचारसे "निकट भविष्यमें ही पार्टीका फूटसे बचना कठिन है"। "गरम कम्युनिस्ट" यहाँ तक बढ़े कि उन्होंने सोवियत-विरोधी रुख़ अपना लिया। उन्होंने कहा कि "अन्तरराष्ट्रीय क्रान्तिके हितसे हम यह उचित समझते हैं कि सोवियत शासनके संभाव्य अन्तसे भी हम सहमत हो जायँ जो कि अब केवल नामके लिये रह गया है।"

लेनिनने कहा कि यह फ़ैसला "अजीब और बेसिरपैरका है।"

उस समय तक त्रात्स्की और "गरम कम्युनिस्टों" के इस पार्टी-विरोधी व्यवहारका सही कारण पार्टीको न मालूम था। परन्तु (१९३८ में आरम्भ होने वाले) सोवियत-विरोधी "नरम दलवालों और त्रात्स्की-पंथियोंके गुट" के अभी हालके मुक़दमेसे यह प्रकट हो गया है कि बुख़ारिन और उसके नेतृत्वमें "गरम कम्युनिस्ट," और इनके साथ त्रात्स्की और "गरम" सामाजिक-क्रान्तिकारी उस समय गुप्तरूपसे सोवियत सरकारके विरुद्ध षड्यंत्र कर रहे थे। अब यह प्रकट हो गया है कि त्रात्स्की और उसके साथी षड्यंत्रकारियोंने निश्चय किया था कि ब्रेस्त-लितोव्स्की सन्धि-न होने देंगे, लेनिन, स्तालिन, और स्वेर्दलौफ़को पकड़ लेंगे, उनकी हत्या कर डालेंगे और बुख़ारिनवादियों, त्रात्स्की-पंथियों और "गरम" सामाजिक-क्रान्तिकारियोंकी एक नयी सरकार बनायेंगे।

"गरम कम्युनिस्टों" का दल त्रात्स्कीकी सहायतासे एक ओर तो छिपकर यह क्रान्ति-विरोधी षड्यंत्र रच रहा था, दूसरी ओर खुले आम बोल्शेविक पार्टीमें फूट डालने और उसकी पाँति तोड़ देनेके लिये उसपर आक्रमण कर रहा था। परन्तु इस संकट-कालमें पार्टी लेनिन, स्तालिन और स्वेर्दलौफ़के चारों ओर अविचल बनी रही और शान्ति तथा अन्य प्रश्नोंपर उसने केन्द्रीय समितिका समर्थन किया।

"गरम कम्युनिस्टों" का दल अकेला होकर परास्त हुआ।

शान्तिके प्रश्न पर अपना अंतिम निर्णय देनेके लिये पार्टीकी सातवीं कांग्रेस बुलायी गयी।

६ मार्च १९१८ को कांग्रेस आरंभ हुई। शासन-सूत्र हाथमें आनेके बाद पार्टी की यह पहली कांग्रेस थी। इसमें १,४५,००० पार्टी मेम्बरों की ओरसे ४६ वोट देने वाले प्रतिनिधि और ५८ केवल भाषणका अधिकार रखने वाले प्रतिनिधि आये थे। उस समय वास्तवमें पार्टीमें २,७०,००० से कम सदस्य न थे। यह असंगति इस कारण थी कि जल्दीमें कांग्रेस होनेसे बहुतसे संगठन अपने प्रतिनिधि भेज न पाये थे। जर्मनों द्वारा अधिकत प्रदेशोंके संगठन तो अपने प्रतिनिधि भेज ही न सकते थे।

ब्रेस्त-लितोव्स्ककी सन्धिपर अपनी रिपोर्ट देते हुए लेनिनने कहा कि,

> "...पार्टीके भीतर गरम दलके विरोधके कारण पार्टी जिस घोर संकटका अनुभव कर रही है, वह रूसी क्रांन्तिके इतिहासमें एक अतिघोर संकट है।"

(संक्षिप्त लेनिन ग्रंथावली—अं. सं., खं. ७., पृ. २९३-९४)

ब्रेस्त-लितोव्स्ककी सन्धि पर लेनिनका प्रस्ताव स्वीकृत हुआ; ३० वोट पक्षमें आये १२ विपक्षमें, ४ तटस्थ रहे।

इस प्रस्तावके स्वीकृत होनेके दूसरे दिन ब्रेस्त-लितोव्स्ककी सन्धिपर लेनिनने "खेदजनक सन्धि" के नामसे एक लेखमें लिखा,—

> "सन्धिकी शर्तें असहनीय रूपसे कठिन हैं। फिर भी इतिहास अपनी चीज फिर पायेगा।...हमें अब करना चाहिये संगठन, संगठन और फिर संगठन। इन विघ्न-बाधाओंके उस पार भविष्य हमारा है।" **(लेनिन-ग्रंथावली—रू. सं., खं. २२, पृ. २८८)**

अपने प्रस्तावमें कांग्रेसने घोषित किया कि साम्राज्यवादी देश आगे अवश्यही सोवियत प्रजातंत्रपर सैनिक आक्रमण करेंगे। इसलिये कांग्रेसकी दृष्टिमें पार्टीका यह मूल कर्तव्य था कि सचेष्ट उपायों द्वारा और प्राणपनसे वह आत्मानुशासन दृढ़ करे, तथा मजदूरों और किसानोंका अनुशासन मजबूत बनाये, समाजवादी देशकी रक्षाके लिये जनताको आत्म-त्यागके लिये तैयार करे, लाल फ़ौजका संगठन करे और अनिवार्य सैनिक शिक्षा आरम्भ करे।

ब्रेस्त-लितोव्स्ककी सन्धि पर लेनिनकी नीतिका अनुमोदन करते हुए कांग्रेसने

त्रात्स्की और बुखारिनके रवैयेकी निन्दा की और कांग्रेसमें ही हारे हुए " गरम कम्युनिस्टों " की फूट डालनेवाली कार्यवाहीको अनुचित ठहराया।

ब्रेस्त–लितोव्स्ककी सन्धिसे देशको अवकाश मिला कि वह सोवियत शासनकी जड़ जमाये और देशके आर्थिक जीवनको व्यवस्थित करे।

सन्धिसे यह संभव हुआ कि साम्राज्यवादी देशोंके झगड़ोंसे (मित्र–देशोंसे आस्ट्रिया और जर्मनीके युद्धसे, जो अभी चल रहा था) लाभ उठाकर शत्रु-शक्तिको विशृंखल किया जाय, सोवियत अर्थ–व्यवस्थाका संगठन किया जाय, और एक लाल फ़ौज बनायी जाय।

सन्धिसे यह संभव हुआ कि सर्वहारावर्ग किसानोंका सहयोग बनाये रहे और गृह–युद्धमें गद्दार सेनापतियोंको हरानेके लिये शक्ति संचय करे।

अक्तूबर क्रान्तिके समयमें लेनिनने बोलशेविक पार्टीको सिखाया कि परिस्थिति अनुकूल होनेपर निर्भय होकर दृढ़तासे आगे बढ़ना चाहिये। ब्रेस्त–लितोव्स्ककी सन्धिके समय लेनिनने पार्टीको सिखाया कि जब शत्रु–शक्ति स्पष्ट ही अपनेसे बढ़ी-चढ़ी हो तो कैसे व्यवस्थित ढंगसे पीछे हटना चाहिये कि नये आक्रमणके लिये प्राणपनसे तैयारी की जा सके।

लेनिनकी नीति उचित थी, इतिहासने इसे सिद्ध कर दिया है।

सातवीं कांग्रेसमें निश्चय किया गया कि पार्टीके नाम और उसके कार्यक्रममें परिवर्तन किया जाय। पार्टीका नाम बदलकर रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बोलशेविक)—आर. सी. पी. (बी.) रखा गया। लेनिनने कहा कि पार्टीका नाम कम्युनिस्ट पार्टी होना चाहिये क्योंकि इससे ठीक-ठीक पार्टीका उद्देश्य—कम्युनिज्मकी सिद्धिका उद्देश्य —प्रकट होता था।

लेनिनके मसौदेको आधार मानकर एक नया कार्यक्रम बनानेके लिये एक विशेष समिति चुनी गयी जिसमें लेनिन और स्तालिन भी थे।

इस प्रकार सातवीं कांग्रेसने व्यापक ऐतिहासिक महत्त्वका काम पूरा किया। उसने पार्टी–पाँतिमें बैठे हुए शत्रुओं—" गरम कम्युनिस्टों " और त्रात्स्की–पंथियों—को परास्त किया, देशको साम्राज्यवादी युद्धसे अलग किया, सन्धि करके देशको अवकाश दिया, लाल फ़ौजके संगठनके लिये पार्टीको समय दिया, और उसने पार्टीके सामने यह कार्य रखा कि वह देशके आर्थिक जीवनमें समाजवादी व्यवस्था क़ायम करे।

८. समाजवादी निर्माणका श्रीगणेश करनेके लिये लेनिनकी योजना—ग़रीब किसानोंकी समितियाँ और कुलकोंपर नियंत्रण—"गरम" सामाजिक क्रान्तिकारियोंका विद्रोह और उसका दमन—पांचवीं सोवियत-कांग्रेस और सोवियत संघके विधानकी स्वीकृति।

सन्धिसे अवकाश पाकर सोवियत सरकार समाजवादी निर्माण कार्यमें लग गयी नवम्बर १९१७ से फ़रवरी १९१८ तककी अवधिको लेनिनने "पूँजीपर लाल-रक्षकोंके आक्रमण" का समय कहा था। १९१८ के पूर्वार्द्धमें सोवियत सरकारने पूँजीपतियोंकी अर्थ-शक्ति तोड़ दी, देशके आर्थिक जीवनमें महत्वके स्थानोंको (मिल, कारखानों, बैंक, रेलवे, विदेशसे व्यापार, व्यापारी जहाजों, आदिको) अपने हाथमें किया, शासनकी पूँजीवादी सज्जाका नाश किया और सोवियत शासनका ध्वंस करनेके प्रथम क्रान्ति-विरोधी प्रयत्नोंका दमन किया।

परन्तु इतना ही पर्याप्त न था। प्रगतिके लिये पुरातनके ध्वंसके पश्चात् नवीनका निर्माण भी आवश्यक था। इसलिये १९१८ के वसन्त कालमें "शोषकोंके उन्मूलनकी मंजिल"से समाजवादी निर्माणकी एक नयी मंजिलकी ओर—अर्थात् पाई हुई विजयको संगठनसे सुदृढ़ करने और देशकी सोवियत अर्थ-व्यवस्थाके निर्माणकी ओर संक्रमण आरम्भ हुआ। लेनिनका कहना था कि समाजवादी अर्थ-व्यवस्थाकी स्थापनाका आरंभ करनेके लिये इस अवकाशसे यथासंभव लाभ उठाना चाहिये। बोल्शेविकोंको सीखना था कि कैसे नये ढंगसे उत्पादनका संगठन और प्रवन्ध करें। लेनिनने लिखा था कि बोल्शेविक पार्टी रूसकी विश्वास-भाजन बनी है। बोल्शेविक पार्टीने रूसको धनी लोगोंके हाथसे जनताके लिये छीन लिया है और अब बोल्शेविकोंको रूसका शासन करना सीखना चाहिये।

लेनिनका कहना था कि इस समय हमारा मुख्य कार्य यह है कि देशमें जो भी उत्पादन हो, उसका हिसाब रखें और सभी मालके वितरण पर नियंत्रण बनाये रहें। देशके आर्थिक जीवनमें निम्न-पूँजीवादी लोगोंकी प्रधानता थी। शहर और देहातके लाखों छोटी पूँजीवाले लोग पूँजीवादके लिये उर्वर प्रदेशका काम करते थे। ये छुट-भैये न तो श्रम-सम्बन्धी अनुशासन मानते थे और न नागरिक अनुशासन मानते थे। राज्य द्वारा नाप-जोख और नियंत्रणकी व्यवस्थासे वे भड़कते थे। इस कठिन समयमें जो विशेष संकटकी बात थी वह यह कि निम्न-पूँजीवादी सट्टे और मुनाफ़ाख़ोरीकी हवा चल पड़ी थी और छोटे पूँजीवाले और व्यापारी जनताके अभावोंसे लाभ उठाना चाहते थे।

पार्टीने काममें ढिलाईके विरुद्ध और उद्योग-धन्धोंमें श्रम-सम्बन्धी अनुशासनके अभावके विरुद्ध डटकर लड़ना शुरू कर दिया। मेहनतकी नयी आदतें सीखनेमें जनताको देर लगती थी। इसलिये श्रम-सम्बन्धी अनुशासन स्थापित करनेके लिये संघर्षही इस समयका मुख्य कार्य हो गया।

लेनिनने बताया कि यह आवश्यक है कि हम उद्योग-धन्धोंमें समाजवादी प्रतियोगिता बढ़ायें, कामके हिसाबसे मजूरी देनेकी व्यवस्था करें, सबको समान मजूरी देनेका विरोध करें, और जो राज्यसे यथासंभव अपनी जेबें गरम करना चाहते हैं उन्हें और आलसियों और मुनाफ़ाख़ोरोंको समझाने-बुझानेके और शिक्षाके उपायोंके सिवा दबाव डाल कर भी ठीक करें। उनका कहना था कि नया अनुशासन—श्रमिक-अनुशासन, भाई-चारेके सम्बन्धका अनुशासन, सोवियत अनुशासन—एक ऐसी वस्तु है जिसे कोटि-कोटि श्रमिक जनता अपने दैनिक, प्रत्यक्ष कार्यमें ही प्राप्त कर सकेगी और "इस कार्यमें एक पूरा एतिहासिक युग लग जायगा।" (**संक्षिप्त लेनिन ग्रंथावली—अं. सं., खं. ७, पृ. २९२**)

अपनी प्रसिद्ध पुस्तक **सोवियत सरकारके तात्कालिक कार्य**में लेनिनने समाजवादी निर्माणकी इन समस्याओंका, उत्पादनके नये समाजवादी सम्बन्धोंकी समस्याओंका विवेचन किया था।

सामाजिक क्रान्तिकारियों और मेन्शेविकोंसे मिल कर "गरम कम्युनिस्ट" इन प्रश्नोंको भी लेकर लेनिनसे लड़े। बुख़ारिन, ओसिन्स्की, आदि इस बातका विरोध करते थे कि श्रम-सम्बन्धी अनुशासन क़ायम हो, कारखानोंमें एक व्यक्तिका प्रबन्ध हो, उद्योग-धन्धोंमें पूंजीवादी विशेषज्ञोंसे काम लिया जाय, और व्यवसायमें चुस्त ढंगसे काम किया जाय। वे यह कहकर लेनिन पर कीचड़ उछालने लगे कि इस नीतिसे हम फिर पूँजीवादी व्यवस्थाकी ओर लौट पड़ेंगे। साथ ही "गरम कम्युनिस्ट" इस त्रात्स्की-पंथी मतका प्रचार करते थे कि रूसमें समाजवादी निर्माण और समाजवादकी विजय असम्भव है।

"गरम कम्युनिस्ट" अपनी "गरम" शब्दावलीसे कुलकों, आलसियों और मुनाफ़ाख़ोरोंका प्रच्छन्न समर्थन करते थे जो राज्यद्वारा आर्थिक जीवनकी व्यवस्था, और हिसाब तथा नियंत्रण रखनेके विरोधी थे।

नये, सोवियत उद्योग-धन्धोंका निर्माण किन सिद्धान्तों पर हो, यह निश्चित करके पार्टी देहातकी समस्याएँ सुलझानेमें लग गयी। देहातमें इस समय ग़रीब किसानों और कुलकोंमें घमासान मचा हुआ था। कुलक तगड़े पड़ रहे थे और जमींदारोंकी ज़ब्त की हुई जमीनको हथिया रहे थे। ग़रीब किसानोंको सहायताकी आवश्यकता थी। कुलक सर्वहारा-सरकारसे लड़े और बँधे दामों अनाज बेचनेसे उन्होंने इनकार किया। वे चाहते थे कि सोवियत राजको भूखा मारकर उसे बाध्य करें कि वह समाजवादी उपायोंसे काम लेना बन्द कर दे। पार्टीने क्रान्ति-विरोधी कुलकोंकी रीढ़ तोड़ने पर कमर कसी। उद्योग-धन्धोंमें काम करनेवाले मजदूरोंके दस्ते देहातमें भेजे गये कि

वे गरीब किसानोंका संगठन करें, और इस बातका उपाय करें कि कुलकोंसे, जो अपना फालतू अनाज बचाये हुए थे, लड़नेमें उन्हें सफलता मिले ।

लेनिनने लिखा था,—

> "साथियो, मजदूरो, याद रखो कि क्रान्ति संकटमें है। याद रखो कि **एक तुम्हीं** क्रान्तिकी रक्षा कर सकते हो, और दूसरा रक्षा करनेवाला कोई नहीं है। हमें चाहिये लाखों ऐसे चुने हुए, राजनीतिमें अग्रसर मजदूर जो समाजवादके उद्देशके प्रति सच्चे हों, जो चोरी और घूसखोरीके लालचपर थूक दें, और जो कुलकों, मुनाफ़ाखोरों, आततायियों, घूस देनेवालों और विश्रृंखलता फैलाने वालोंके विरुद्ध एक इस्पाती फ़ौज बनालें।"

(लेनिन-ग्रंथावली—रू. सं., खं. २३, पृ. २५)

लेनिनने कहा था,—"रोटीकी लड़ाई समाजवादकी लड़ाई है।" यह नारा लगाकर देहाती इलकोंमें मजदूर-दस्तोंको भेजनेका प्रबन्ध किया गया। खाद्य-सामग्री सम्बन्धी डिक्टेटरशिप बनानेके लिये, बंधे दामों अनाज खरीदनेके लिये और अन्नके जन-प्रतिनिधि मंडलकी संस्थाओंको विशेष अधिकार देनेके लिये कई निर्देश-पत्र निकालें गये।

गरीब किसानोंकी समितियाँ बनानेके लिये ११ जून १९१८ को एक निर्देशपत्र निकाला गया। कुलकोंसे लड़नेमें, जब्त की हुई ज़मीनको फिर बांटनेमें और खेतीके औज़ारोंको बांटनेमें, कुलकोंसे फालतू अन्न इकट्ठा करनेमें और मजदूरवर्गके केन्द्रों तथा लाल फ़ौजको खाद्य-सामग्री पहुँचानेमें इन समितियोंने बड़ा काम किया। पांच क़रोड़ हेक्तार (एक हेक्तार लगभग २॥ एकड़—सं.) कुलक-भूमि गरीब और मझले किसानोंके हाथ लगी। कुलकोंके उत्पादन-साधनोंका एक विशाल भाग जब्त करके गरीब किसानोंको दे दिया गया।

गरीब-किसान-समितियोंका बनना देहातमें समाजवादी क्रान्तिकी प्रगतिमें एक अगली मंजिल थी। ये समितियाँ गावोंमें सर्वहारा-एकाधिपत्यका गढ़ थीं। मुख्यतः इन्हींके द्वारा लाल फ़ौजमें किसानोंकी भर्ती हुई थी।

देहाती क्षेत्रोंमें सर्वहारा आन्दोलनके बढ़नेमें और गरीब किसान-समितियोंके संगठनसे गावोंमें सोवियत शासनकी जड़ें मजबूत हुईं। मझले किसानोंको सोवियत सरकारकी ओर कर लेनेमें इनका बहुत अधिक राजनीतिक महत्व था।

१९१८ के अंतमें ये किसान-समितियाँ, जब उनका काम समाप्त हो गया था, गाँवोंकी सोवियतोंमें मिला दी गयीं और इस प्रकार उनके स्वतंत्र अस्तित्वका अंत हुआ।

४ जुलाई १९१८ को पांचवीं सोवियत कांग्रेस आरंभ हुई। कुलकोंका समर्थन करते हुए "गरम" सामाजिक क्रान्तिकारियोंने फिर लेनिन पर जोर-शोरसे हमला किया। उन्होंने माँग की कि कुलक-विरोधी लड़ाई बन्द की जाय और गाँवोंमें मजदूर दस्तोंका भेजना रोका जाय। जब इन लोगोंने देखा कि कांग्रेसका बहुमत दृढ़तासे

उनकी नीतिके विरुद्ध है तो उन्होंने मॉस्कोमें विद्रोह कर दिया और त्रिओक्षविआ-तितेल्स्की गलीपर अधिकार करके वहाँसे क्रेमलिनपर गोलाबारी करने लगे। इस अहमकपनको बोल्शेविकोंने कुछ घंटोंमें ही ठंडा कर दिया। देशके अन्य स्थानोंमें भी "गरम" सामाजिक क्रान्तिकारियोंने विद्रोह करनेके प्रयत्न किये परन्तु हर कहीं उनके विद्रोहका शीघ्र ही दमन किया गया।

जैसा कि सोवियत-विरोधी "नरम दलवालों और त्रात्स्की-पंथियोंके गुट" के मुक़दमेसे अब सिद्ध हो गया है, "गरम" सामाजिक-क्रान्तिकारियोंका यह विद्रोह बुख़ारिन और त्रात्स्कीकी जानकारीमें और उनकी अनुमतिसे शुरू हुआ था। सोवियत शासनके विरुद्ध बुख़ारिन-वादियों, त्रात्स्की-पंथियों और "गरम" सामाजिक क्रान्तिकारियोंके आम क्रान्ति-विरोधी षड्यंत्रका यह एक अंग था।

इसी समय ब्लमकिन नामके एक "गरम" सामाजिक क्रान्तिकारी और बादको त्रात्स्कीके दलालने जर्मन राजदूतके निवास-गृहमें घुसकर मॉस्को-स्थित जर्मन राजदूत मीरबाख़की हत्या कर डाली। उसका उद्देश था कि जर्मनीसे फिर लड़ाई छिड़ जाय। परन्तु सोवियत सरकारने युद्धको बचाया और क्रान्ति-विरोधियोंकी आग लगानेवाली चालोंको ठंडा कर दिया।

पाँचवीं सोवियत कांग्रेसने पहला सोवियत-विधान—रूसी संघात्मक-सोवियत-समाजवादी प्रजातंत्रका विधान स्वीकृत किया।

सारांश

फ़रवरीसे अक्तूबर १९१७ तकके आठ महीनेमें बोल्शेविक पार्टीने यह कठिन काम पूरा किया कि मजदूर वर्गके बहुभागको अपनी ओर कर लिया, सोवियतोंमें अपना बहुमत स्थापित किया और समाजवादी क्रान्तिके लिये लाखों किसानोंका समर्थन प्राप्त किया। निम्न पूँजीवादी पार्टियों (सामाजिक क्रान्तिकारियों, मेन्शेविकों और अराजकतावादियों) की नीतिका धीरे धीरे पर्दाफ़ाश करके और यह दिखा कर कि वह श्रमिक जनताके हितोंके प्रतिकूल है, उसने जनताको इन पार्टियोंके प्रभावसे मुक्त किया। जनताको अक्तूबर क्रान्तिके लिये तैयार करते हुए बोल्शेविक पार्टीने मोर्चेपर और पीछे विस्तृत राजनीतिक कार्य किया।

पार्टीके इतिहासमें इस समय निर्णायक महत्वकी घटनाएँ थीं, लेनिनका प्रवास से लौटना, उनका अप्रैल-प्रस्ताव, अप्रैलकी पार्टी कान्फ्रेन्स और छठी पार्टी कांग्रेस। पार्टीके निर्णयोंसे मजदूर वर्गको बल मिला और विजयमें उसका विश्वास दृढ़ हुआ

इन निर्णयोंमें मजदूरोंको क्रान्तिकी महत्वपूर्ण समस्याओंके उत्तर मिले। पूँजीवादी-जनवादी क्रान्तिसे समाजवादी क्रान्तिकी ओर संक्रमण करनेके संघर्षमें पार्टी प्रयत्न करे, इस ओर अप्रैलकी कान्फ्रेन्सने निर्देश किया। पूँजीपतियों और उनकी अस्थायी सरकारसे विद्रोह करनेके लिये छठी कांग्रेसने पार्टीको प्रेरित किया।

समझौतावादी सामाजिक-क्रान्तिकारी और मेन्शेविक पार्टियोंने, अराजकतावादियों तथा दूसरी गैर-कम्युनिस्ट पार्टियोंने अपने विकासके क्रमको पूरा कर लिया। अक्तूबर क्रान्तिके पहले ही वे पूँजीवादी पार्टियाँ बन गयीं और पूँजीवादी व्यवस्थाको अटूट बनाये रखनेके लिये लड़ने लगीं। बोल्शेविक पार्टी ही एक पार्टी थी जिसने पूँजीपतियोंके ध्वंस और सोवियत शासनकी प्रतिष्ठाके लिये जन-संघर्षका नेतृत्व किया।

साथ ही पार्टीके भीतरके पराजयवादी—जिनोवियेफ़, कामेनेफ़, राईकौफ़, बुख़ारिन, त्रात्स्की और पियाताकौफ़ आदि—जो पार्टीको समाजवादी क्रान्तिके पथसे अलग ले जाना चाहते थे, उनके प्रयत्नोंको बोल्शेविकोंने विफल कर दिया।

बोल्शेविक पार्टीके नेतृत्वमें, गरीब किसानोंके सहयोगसे, सिपाहियों और मल्लाहों की सहायतासे, और बोल्शेविक पार्टीके नेतृत्वमें मजदूरवर्गने पूँजीवादी शासनका तख्ता उलट दिया, सोवियत-शासनको प्रतिष्ठित किया, एक नये ढंगका राज—सोवियत सोशलिस्ट राज—क़ायम किया, जमीन पर जमींदारी अधिकारका अंत कर दिया, किसानोंके कामेक लिये उन्हें जमीन दे दी, देशकी सारी जमीनको राष्ट्रकी सम्पति बना दिया, पूंजीपतियोंकी सम्पत्ति जप्त कर ली, रूसको युद्धसे छुड़ाया और सन्धि की, अर्थात् अत्यावश्यक अवकाश पाया, और इस प्रकार समाजवादी निर्माणके विकासके लिये परिस्थितियाँ उत्पन्न कीं।

अक्तूबरकी समाजवादी क्रान्तिने पूँजीवादका ध्वंस किया, पूँजिपतियोंसे उत्पादनके साधन छीन लिये, और मिलों, कारख़ानों, जमीन, रेलवे और बैंकोंको समग्र जनताकी सम्पत्ति, सार्वजनिक सम्पत्ति, बना डाला।

अक्तूबर क्रान्तिने सर्वहारा-एकाधिपत्य स्थापित किया और विशाल देशका शासन-सूत्र मजदूरवर्गके हाथों सौंप दिया, इस प्रकार उसे शासक वर्ग बना दिया।

इस प्रकार अक्तूबरकी समाजवादी क्रान्तिने मानवजातिके इतिहासमें एक नये युगका—सर्वहारा क्रान्तियोंके युगका—आरंभ किया।

★

आठवाँ अध्याय

गृहयुद्ध तथा अन्य राष्ट्रों द्वारा सशस्त्र हस्तक्षेपके युगमें बोल्शेविक पार्टी

(१९१८—१९२०)

१. अन्य राष्ट्रों द्वारा सशस्त्र हस्तक्षेपका आरंभ—गृहयुद्धका पूर्वार्द्ध ।

पच्छिममें जब घमासान युद्ध जारी था, उस समय ब्रेस्त-लितोव्स्ककी सन्धिसे तथा अनेक क्रांतिकारी आर्थिक उपायोंसे सोवियत-शासन दृढ़ हुआ तो पच्छिमी और विशेषकर मित्र देशोंके, साम्राज्यवादियोंके पेटमें खलबली मच गयी ।

मित्र देशोंको भय था कि शायद रूस-जर्मनीकी सन्धिसे युद्धमें जर्मनीकी स्थिति सँभल जायगी और साथ ही उनकी सेनाओंकी दशा बिगड़ जायगी । इसके सिवा, उन्हें यह भी भय था कि रूस-जर्मन सन्धिसे सभी देशोंमें, और सभी मोर्चोंपर शान्तिकी तृष्णा न जागे और इस प्रकार युद्ध-संचालनमें बाधा पहुँचाकर उनके हितोंपर कुठाराघात न करे । और अंतमें उन्हें इस बातसे भय था कि एक विशाल भूखंडमें सोवियत शासनके अस्तित्वसे, और पूँजीवादी शासनके ध्वंसके बाद देशमें उसकी सफलतासे, पच्छिमके मजदूरों और सिपाहियोंका चित्त चंचल न हो उठे । लम्बी लड़ाईसे एकदम खीझे हुए मजदूर और सिपाही रूसियोंका अनुकरण करके अपने मालिकों और जल्लादोंकी तरफ़ ही कहीं अपनी बन्दूकें सीधी न कर दें । फलतः मित्र देशोंने निश्चय किया कि वे रूसमें सशस्त्र हस्तक्षेप करेंगे और सोवियत शासनका ध्वंस करके वहाँ पूँजीवादी राजतंत्र स्थापित करेंगे जो देशमें फिर पूँजीवादी व्यवस्था क़ायम करेगा, सन्धिको रद्द कर देगा और जर्मनी तथा आस्ट्रियाके विरुद्ध फिर सैनिक मोर्चा क़ायम करेगा।

मित्र देशोंके साम्राज्यवादी इस जघन्य कार्यमें यह सोचकर और भी उत्साहसे लग गये कि सोवियत शासन अभी डाँवाँडोल है । उन्हें जरा भी दुविधा न थी कि उसके शत्रुओंने थोड़ा भी जोर बाँधा तो निश्चय ही वह अधिक दिनों तक साँस न ले पायेगा ।

सोवियत शासनकी सफलता और उसकी दृढ़तासे जमींदार और पूँजीपति आदि वे वर्ग और भी घबड़ाये जिनका स्वार्थ भंग हुआ था । इसी प्रकार हारी हुई पार्टियोंमें—विधानवादी जनवादी, मेन्शेविक, सामाजिक-क्रान्तिकारी, अराजकवादी और सभी मेलके पूँजीवादी राष्ट्रवादियोंमें—भी खलबली मच गयी । गद्दार सेनापति, कज्जाक अफ़सर आदि भी विचलित हो उठे ।

अक्तूबरकी विजयी क्रान्तिके आरंभसे ही यह सारा विरोधी दल गला फाड़कर चिल्लाने लगा कि रूसमें सोवियत शासन पनप नहीं सकता, उसका नाश निश्चित है और हफ़्ते दो हफ़्तेमें, महीने भरमें या अधिकसे अधिक तीन महीनेमें सारा खेल खतम हो जायगा। लेकिन दुश्मनोंके कोसनेके बावजूद ज्यों-ज्यों सोवियत सरकार जिन्दा ही नहीं रही, वरन् दिन-दूनी रात-चौगुनी बढ़ती और फलती-फूलती गयी, त्यों-त्यों उसके घरेलू शत्रुओंको मजबूरीसे स्वीकार करना पड़ा कि उन्होंने जितना सोचा था, उससे वह बहुत मज़बूत है और उसे तबाह करनेके लिये सभी क्रान्तिविरोधी शक्तियोंको एड़ी-चोटी का ज़ोर लगाना पड़ेगा। इसलिये उन्होंने निश्चय किया कि वे क्रान्तिविरोधी शक्तियोंको जोड़ें-बटोरेंगे और फ़ौजी रँगरूटोंको इकट्ठा करके विद्रोह करेंगे; विशेषकर कज्जाक और कुलक-ज़िलों में वे ज़ोर-शोरसे काम करेंगे। एक बड़े परिमाणमें क्रान्तिविरोधी विद्रोह की कार्यवाहीका उन्होंने निश्चय किया।

इस प्रकार १९१८ के पूर्वार्द्धमें ही सोवियत शासनका ध्वंस करनेके लिये दो दल तैयार हो रहे थे—बाहर मित्र देशोंके साम्राज्यवादी और घरमें गद्दार और क्रान्तिविरोधी।

इनमेंसे एकके पास भी इतना मसाला न था कि वह अकेले सोवियत सरकारका तख्ता उलट दे। रूसी क्रान्तिविरोधियोंके पास मुख्यतः उच्च कज्जाक वर्गों और धनी किसानोंके इतने रँगरूट और सिपाही थे जो सोवियत सरकारसे बगावत शुरू कर देते। लेकिन उनके पास न धन था, न अस्त्र थे। इसके विपरीत विदेशी साम्राज्यवादियोंके पास धन और अस्त्र दोनों थे परन्तु सशस्त्र हस्तक्षेपके लिये वे काफी फ़ौज "जुटा न कर सकते थे"। इसका यही एक कारण न था कि जर्मनी और आस्ट्रियासे लड़नेके लिये उन्हें फ़ौज चाहिये थी, वरन यह डर भी था कि सोवियत शासनसे लड़नेमें शायद सिपाहियोंका पूरा भरोसा न किया जा सके।

सोवियत शासनसे भिड़नेके लिये यह आवश्यक हो गया कि देशी और विदेशी, दोनों ही सोवियत-विरोधी शक्तियाँ जुड़ जायँ। १९१८ के पूर्वार्द्धमें ये शक्तियाँ जुड़ गयीं।

इस प्रकार घरेलू क्रान्तिविरोधी विद्रोहका सहारा पाकर विदेशी सशस्त्र हस्तक्षेपका जन्म हुआ।

रूसमें दो घड़ीकी शान्तिका अन्त हुआ और गृहयुद्धका आरम्भ हुआ। यह युद्ध सोवियत शासनके देशी-विदेशी शत्रुओंके विरुद्ध रूसकी विभिन्न जातियोंके मजदूरों और किसानोंका युद्ध था।

ब्रिटेन, फ्रान्स, जापान और अमरीकाके साम्राज्यवादियोंने बिना युद्धकी घोषणा किये रूसके विरुद्ध सशस्त्र हस्तक्षेप आरम्भ कर दिया। सशस्त्र हस्तक्षेप सीधा-सीधा युद्ध ही था, वह रूसके ऊपर आक्रमण था और वह भी सबसे निम्न कोटिका आक्रमण। पर ये "सभ्य" डाकू चुपचाप और चोरीसे रूसी समुद्रतट तक आ पहुँचे और वहाँ उन्होंने रूसी भूमिपर अपनी फ़ौजें उतार दीं।

अंग्रेज़ों और फ्रान्सीसियोंने उत्तरमें अपनी फ़ौजें उतार दीं, आर्केंजल और मूर्मान्स्क

पर अधिकार कर लिया, गद्दारोंके एक स्थानीय विद्रोहकी सहायता की, सोवियत शासनको समाप्त कर दिया, और गद्दारोंकी "उत्तरी रूसकी सरकार" क़ायम की।

जापानियोंने व्लादीवास्तोक में अपनी फ़ौजें उतार दीं; वहाँके समुद्रतटवर्ती प्रान्त पर अधिकार कर लिया; सोवियतोंको भंग कर दिया, और गद्दारोंकी मदद की जिन्होंने बादमें पूँजीवादी व्यवस्था फिर क़ायम कर दी।

उत्तरी कॉकेशसमें जनरल कौर्नीलोफ़, अलेक्सेयेफ़ और देनीकिनने अंग्रेजों और फ्रान्सिसियोंकी सहायतासे गद्दारोंकी एक "स्वयंसेवक सेना" बना ली। कज्ज़ाक उच्च वर्गोंसे उन्होंने विद्रोह कराया और सोवियतोंसे बग़ावत शुरू कर दी।

दॉनके तटपर जनरल क्रास्नोफ़ और मामोन्तोफ़ने जर्मन साम्राज्यवादियोंकी गुप्त सहायतासे (रूस-जर्मन सन्धि होनेसे जर्मन खुले आम उनकी मदद करनेमें झिझकते थे) वहाँके कज्ज़ाकोंसे विद्रोह करा दिया और दॉन प्रदेशपर अधिकार करके सोवियतोंसे बग़ावत शुरू कर दी।

मध्य वोल्गा प्रदेश तथा साइबेरियामें अंग्रेज़ों और फ्रान्सीसियोंने चेकोस्लोवाक टुकड़ीमें विद्रोहकी आग सुलगा दी। इस टुकड़ीमें युद्धबन्दी थे। सोवियत सरकारने उसे साइबेरिया तथा सुदूर पूर्व होकर घर लौटनेकी अनुमति दे दी थी। लेकिन राहमें सामाजिक-क्रान्तिकारियों तथा अंग्रेजों और फ्रांसिसियोंने उसका उपयोग सोवियतके विरुद्ध विद्रोहके लिये किया। इस विद्रोहने वोल्गा प्रदेश और साइबेरियाके धनी किसानोंकी तथा सामाजिक-क्रान्तिकारियोंसे प्रभावित वोत्किन्स्क और इज़ेव्स्क कारखानोंके मजदूरोंकी बग़ावतके लिये नक़ारेकी चोटका काम किया। वोल्गा प्रदेशमें समारामें गद्दारों और सामाजिक-क्रांतिकारियोंकी सरकार बनायी गयी और ओम्स्कमें साइबेरियाकी गद्दार सरकार क़ायम हुई।

अंग्रेज़-फ्रान्सीसी-जापानी-अमरीकी गुटके हस्तक्षेपमें जर्मनीने कोई भाग न लिया। न वह ले सकता था,—और किसी कारणसे न सही तो इसीलिये कि वह इस गुटसे लड़ रहा था। इसके बावजूद और ब्रेस्त-लितोव्स्ककी रूस-जर्मन सन्धिके होते हुए भी प्रत्येक बोलशेविक यह बात जानता था कि कैसर रूसका वैसा ही कट्टर दुश्मन है जैसे कि अंग्रेज़-फ्रान्सीसी-जापानी-अमरीकी आततायी हैं। और वास्तवमें सोवियत रूसको निःशक्त बनाने और निर्मूल करनेमें जर्मन साम्राज्यवादियोंने अपनी ओरसे कुछ उठा नहीं रखा। उन्होंने रूससे उक्राइन छीन लिया, यद्यपि यह सच है कि उन्होंने उक्राइनकी गद्दार "रादा" (समिति)से अपनी सन्धिकी शर्तोंके अनुसार ही ऐसा किया। "रादा" की प्रार्थना सुनकर वे अपनी फ़ौजें ले आये और निर्दयतासे उक्राइनको लूटने खसोटने और सताने लगे। सोवियत रूससे किसी तरहका भी संपर्क बनाये रखनेकी उन्होंने मनाही कर दी। उन्होंने परवर्ती कॉकेशस प्रदेशको सोवियत रूससे अलग कर दिया और ज्योर्जिया और आजरबैजानके राष्ट्रवादियोंकी प्रार्थना सुनकर वहाँ जर्मन और तुर्की फ़ौजें भेज दीं। तिफ़िलिस और बाकूमें वे बादशाह बन गये। उन्होंने जनरल क्रास्नोफ़को, जिसने दॉनके किनारे सोवियत सरकारसे बग़ावत की थी, काफ़ी हथियार और सामान भेजा; यद्यपि यह

सच है कि उन्होंने खुले आम ऐसा नहीं किया।

इस प्रकार सोवियत रूस खाद्य सामग्री, कच्चे माल और ईंधनके अपने मुख्य प्राप्ति-स्थानोंसे अलग कर दिया गया।

उस समय सोवियत रूसकी दशा अच्छी न थी। रोटी और गोश्तकी कमी थी। मज़दूर भूखों मर रहे थे। मॉस्को और पेत्रोग्रादमें हर दूसरे दिन उन्हें १/८ पाउंड (१ पाउंड=८ छटांक—सं.) रोटीका राशन दिया जाता था और कभी-कभी ऐसा भी होता था कि रोटी मिलती ही न थी। कच्चा माल और ईंधन न मिलनेसे कारखाने ठप हो गये थे या ठपसे ही थे। लेकिन मज़दूरोंने हिम्मत न हारी; न बोल्शेविक पार्टीने ही हिम्मत हारी। उस समयकी अविश्वसनीय कठिनाइयोंके लिये जो प्राणपन से संग्राम ठाना गया, उससे प्रकट हो गया कि मज़दूर-वर्गमें शक्तिका कैसा असीम भण्डार छिपा है और बोल्शेविक पार्टीको कैसा अपरिमेय गौरव प्राप्त है।

पार्टीने घोषित किया कि समस्त देश युद्ध-शिविरके समान है; उसके आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक जीवनको पार्टीने युद्ध-कालके अनुरूप ढाला। सोवियत सरकारने घोषित किया कि "समाजवादी देश संकटमें है"; इसलिये जनताको उसकी रक्षामें लग जाना चाहिये। लेनिनने यह नारा बुलंद किया कि "हर जवान मोर्चे पर!", और हज़ारों मज़दूर और किसान भर्ती होनेके लिये आगे आ गये। लाल फ़ौजमें भर्ती होकर वे मोर्चे पर चले गये। पार्टी और नौजवान कम्युनिस्ट लीगके लगभग आधे सदस्य मोर्चेपर चले गये। पार्टीने जनताको **देशरक्षाके युद्ध**के लिये जाग्रत किया, उस युद्धके लिये जो विदेशी आतताइयों और क्रान्ति द्वारा परास्त शोषक वर्गोंके विद्रोहको परास्त करनेके लिये रचा जा रहा था। लेनिन द्वारा संगठित "श्रमिक और कृषक रक्षा समिति" मोर्चे पर अस्त्र, वस्त्र, खाद्य-सामग्री और कुमक पहुँचानेका निर्देश करती थी। फ़ौजमें भर्ती अनिवार्य करदी गयी थी, इससे हज़ारों नये आदमी उसमें भर्ती हुए और शीघ्र ही उसमें दस लाखसे ऊपर आदमी हो गये।

यद्यपि देशकी दशा संकटपूर्ण थी और नयी लाल फ़ौज अभी सुदृढ़ न हुई थी, फिर भी रक्षाके जो उपाय किये गये थे, उनके प्रथम फल शीघ्र ही देखनेको मिले। जनरल क्रास्नोफ़ने समझा था कि ज़ारत्सिनको वह ले ही लेगा, परन्तु वहाँसे हटाकर वह दॉनके उस पार खदेड़ दिया गया। जनरल देनीकिनकी कार्यवाही उत्तरी कॉकेशसके एक छोटेसे भागमें सीमित कर दी गयी। जनरल कौर्नीलौफ़ लाल फ़ौजसे लड़ता हुआ मारा गया। चेकोस्लोवाक और ग़द्दारों और सामाजिक-क्रान्तिकारियोंकी टुकड़ियाँ कज़ान, सिम्बिर्स्क और समारासे हटाकर यूरालकी ओर खदेड़ दी गयीं। मॉस्कोमें ब्रिटिश मिशनके प्रधान लौखार्टने यारोस्लावलमें विद्रोह संगठित किया और साविन्कौफ़को उसका नेता बनाया। सामाजिक क्रान्तिकारियोंने कॉमरेड उरित्स्की और वोलोदार्स्कीकी हत्या कर डाली थी और लेनिनकी हत्या करनेका भी नीच प्रयत्न किया था; बोल्शेविकोंके विरुद्ध

इनके गद्दार आतंकका उत्तर लाल आतंकसे दिया गया। मध्य रूसके हर प्रमुख शहरसे वे पूरी तरह खदेड़ दिये गये।

नयी लाल फ़ौज बढ़ी और युद्धमें पुष्ट हुई।

लाल फ़ौजको सुदृढ़ करनेमें, उसे राजनीतिक शिक्षा देनेमें, उसके अनुशासनको उच्चस्तरकी ओर लेजानेमें, उसके युद्ध-कौशलको बढ़ानेमें कम्युनिस्ट जन-प्रतिनिधियोंने बहुमूल्य कार्य किया।

परन्तु बोल्शेविक पार्टी यह जानती थी कि ये लाल फ़ौजकी प्राथमिक सफलताएँ हैं; इन्हींसे अंतिम निर्णय नहीं हो गया। वह जानती थी कि नयी और इनसे कहीं घनघोर लड़ाइयाँ अभी आगे लड़नेको हैं, तथा खाद्य सामग्री, कच्चे माल और ईंधनके खोये हुए प्रदेश दुश्मनसे एक लम्बी और विकट लड़ाई लड़नेसे ही मिल सकेंगे। इसलिये बोल्शेविकोंने दीर्घकालीन युद्धके लिये घनघोर तैयारी शुरू कर दी और निश्चय किया कि मोर्चेके लिये ही देशके समस्त साधनोंका उपयोग किया जाय। सोवियत सरकारने **युद्धकालीन कम्युनिज़्म**का श्रीगणेश किया। बड़े उद्योग-धन्धोंके साथ उसने मध्य और निम्न कोटिके उद्योग-धन्धोंपर भी अधिकार कर लिया जिससे कि कृषक-जनता और फ़ौजको भेजनेके लिये माल इकट्ठा हो सके। गल्लेके व्यापारपर उसने सरकारका एकाधिकार स्थापित किया; गल्लेका निजी व्यापार रोक दिया गया। बढ़ती अन्नकी जब्तीके लिये एक व्यवस्था की गयी जिससे किसानोंके पास जितना भी बढ़तीका अन्न होता था, उसकी रजिस्ट्री हो जाती थी और नियत मूल्यपर सरकार उसे खरीद लेती थी जिससे कि फ़ौज और मजदूरोंके लिये नाज इकट्ठा किया जा सकता था। अन्तमें उसने सभी वर्गोंके लिये श्रम अनिवार्य कर दिया। पार्टीने पूँजीवादियोंके लिये दैहिक श्रम अनिवार्य करके मजदूरोंको मोर्चेके अन्य महत्वपूर्ण कार्योंके लिये छुट्टी दे दी। इस प्रकार पार्टी प्रत्यक्ष रूपसे इस सिद्धान्तको चरितार्थ कर रही थी कि "जो काम न करे, वह भूखों मरे!"

देशरक्षाकी अति कठोर परिस्थितियोंके कारण ये सब उपाय करने पड़े जो अस्थायी थे। इन सबको मिलाकर "युद्धकालीन कम्युनिज़्म" का नाम दिया गया था।

देशने एक लंबे और कठोर गृह-युद्धके लिये, सोवियत शासनके देशी और विदेशी शत्रुओंसे युद्ध करनेके लिये तैयारी की। १९१८ के अन्त तक उसे फ़ौजको तिगुना बढ़ाना पड़ा और इस फ़ौजके लिये सामान इकट्ठा करना पड़ा।

उस समय लेनिनने कहा था,—

> "हम लोगोंने सोचा था कि बसन्तकाल तक दस लाख फ़ौज तैयार हो जायगी; अब हमें तीस लाख फ़ौज चाहिये। यह फ़ौज हम तैयार कर सकते हैं, और तैयार कर लेंगे।"

२. युद्धमें जर्मनीकी पराजय—जर्मनीमें क्रान्ति—तीसरे इण्टर-नेशनलका जन्म—आठवीं पार्टी कांग्रेस।

सोवियत देश जब विदेशी हस्तक्षेपके विरुद्ध तैयारी कर रहा था, तब पच्छिममें लड़नेवाले देशोंके मोर्चेपर और उनके भीतर भाग्यविधायक घटनाएँ हो रही थीं। युद्ध और अन्न संकटसे जर्मनी और आस्ट्रियाका दम घुट रहा था। ब्रिटेन, फ्रान्स और अमरीका तो अपने नये साधनोंका उपयोग कर रहे थे परन्तु जर्मनी और आस्ट्रिया अपनी आखिरी पूँजी खर्च किये डाल रहे थे। परिस्थिति यह थी कि जर्मनी और आस्ट्रिया एकदम पस्त होकर अब हारे तब हारे हो रहे थे।

साथ ही जर्मनी और आस्ट्रियाकी जनता इस घातक और अविराम युद्धसे रुष्ट हो रही थी। जिन साम्राज्यवादी सरकारोंने उसमें पस्ती और भुखमरी फैला दी थी, उनके प्रति उसके रोषका ठिकाना न था। अक्तूबर-क्रांतिका क्रान्तिकारी प्रभाव, ब्रेस्त-लितोव्स्क की सन्धिके पहलेही मोर्चे पर सोवियत और जर्मन-आस्ट्रियन सिपाहियों का मेलजोल, सोवियत रूससे युद्धकी समाप्ति और उससे सन्धि,—इन सब बातोंका भी परिस्थिति पर भारी असर पड़ा। रूसी जनताने अपनी साम्राज्यवादी सरकारका तख्ता उलट कर इस जघन्य महायुद्धका अन्त कर दिया था। इस बातसे आस्ट्रिया और जर्मनीके मजदूर बिना सीख लिये न रह सकते थे। जो जर्मन सिपाही पहले पूर्वी मोर्चे पर थे, और ब्रेस्त-लितोव्स्ककी सन्धिके बाद पच्छिमी मोर्चेपर भेज दिये गये थे, उन्होंने वहाँ जाकर अपने साथियोंको बताया कि सोवियत सिपाहियोंने कैसे उनसे भाईचारा बरता था और युद्धका अन्त कर दिया था। इससे मोर्चेके जर्मन सिपाहियोंका मनोबल क्षीण हुए बिना न रहा। इन्हीं कारणोंसे आस्ट्रियन फ़ौजमें पहले ही घुन लग चुके थे।

इन सब बातोंसे जर्मन सिपाहियोंमें शान्ति-कामना तीव्र हो उठी। उनका पहले वाला युद्ध कौशल नष्ट हो गया और वे मित्र-देशोंके आक्रमणसे पीछे हटने लगे। नवम्बर १९१८ में जर्मनीमें क्रान्तिकी ज्वाला फूट पड़ी और कैसर और उसकी सरकारका पतन हो गया।

जर्मनीको पराजय स्वीकार करनी पड़ी और सन्धिके लिये विनती करनी पड़ी।

इस प्रकार एक ही झटकेमें जर्मनी प्रथम श्रेणीके राष्ट्रपदसे हटकर निम्न श्रेणी पर आ पहुँचा।

जहाँ तक सोवियत सरकारका सम्बन्ध था, उसके लिये यह बात कुछ अहितकर हुई, क्योंकि सोवियत राजमें सशस्त्र हस्तक्षेप करनेवाले मित्र देश योरप और एशियामें प्रमुख शक्ति बन गये। वे अब अपने हस्तक्षेपकी कार्यवाही और भी सरगर्मीसे कर सकते थे; सोवियत देशको घेर कर अब वे फन्देको और कस सकते थे। यही हुआ भी, जैसा

कि हम आगे चलकर देखेंगे। दूसरी ओर इस बातसे सोवियत शासनका हित भी हुआ जो अहितसे बढ़कर था और जिससे सोवियत रूसकी दशामें मौलिक सुधार हो गया। पहले तो सोवियत रूस ब्रेस्त–लितोव्स्ककी डाकू–सन्धिको रद करके युद्धका हर-जाना देना बन्द कर सकता था। इसके सिवा वह एस्थोनिआ, लैटविआ, बायलो–रूस, लिथुआनिया, युक्राइन और कॉकेशस प्रदेशके परले भागको जर्मन साम्राज्य-वादियोंसे छुड़ानेके लिये खुलेआम राजनीतिक और सैनिक संघर्ष छेड़ सकता था। इसके सिवा एक मुख्य बात यह थी कि मध्य योरपमें, जर्मनीमें, प्रजातंत्र तथा श्रमिक और सैनिक प्रतिनिधियोंके सोवियत होनेसे योरपके देशोंपर क्रान्तिका रंग चढ़ना अनिवार्य था। उन पर क्रान्तिका रंग चढ़ा ही; इससे रूसमें सोवियत शक्तिका सुदृढ़ होना भी निश्चित था। यह सच है कि जर्मनीमें समाजवादी क्रान्ति न हुई थी। यह क्रान्ति पूँजीवादी थी और वहाँ सोवियत पूँजीवादी पार्लियामेंटके आज्ञाकारी अनुचर बने रहे क्योंकि उनमें रूसी मेन्शेविकोंके साँचेमें ढले हुए अवसरवादी सामाजिक–जनवादी पाँव रोपे हुए थे। वास्तवमें जर्मन क्रान्तिकी निर्बलतापर इससे ही प्रकाश पड़ता है। यह क्रान्ति कितनी निर्बल थी, उसका उदाहरण यही है कि रोजा लुग्जेम्बुर्ग और कार्ल लीब्क्नेख्त जैसे प्रसिद्ध क्रान्तिकारियोंकी हत्या होगयी और उससे पत्ती भी न डोली। फिर भी यह क्रान्ति थी; कैसरका पतन हो गया था और मजदूरोंने अपनी हथकड़ियोंको उतार फेंका था। इस बातसे ही पच्छिममें क्रान्ति अवश्यम्भावी थी; योरपके देशोंमें क्रान्तिका उठान अनिवार्य था।

योरपमें क्रान्तिका ज्वार उठने लगा। आस्ट्रियामें क्रान्तिकारी आन्दोलन छिड़ गया और हंगरीमें एक सोवियत प्रजातन्त्र बन गया। क्रान्तिका ज्वार ज्यों–ज्यों उठने लगा, त्यों–त्यों क्रान्तिकारी पार्टियाँ सतहपर आने लगीं।

अब कम्युनिस्ट पार्टियोंके संघके लिये, तीसरे इण्टरनेशनलके लिये, एक वास्तविक आधार तैयार हो गया था।

मार्च १९१९ में, लेनिनके नेतृत्वमें बोल्शेविकोंकी प्रेरणासे, मॉस्कोमें विभिन्न देशोंकी कम्युनिस्ट पार्टियोंकी पहली कांग्रेस हुई और उसने तीसरे इण्टरनेशनलको जन्म दिया। यद्यपि नाकाबन्दी और साम्राज्यवादी उत्पीड़नके कारण बहुतसे प्रतिनिधि मॉस्को न आ सके, फिर भी योरप और अमरीकाके सबसे प्रमुख देशोंके प्रतिनिधि इस कांग्रेसमें विद्यमान थे। कांग्रेसमें लेनिनने कार्य–निर्देश किया।

पूँजीवादी जनवाद और सर्वहारा–एकाधिपत्यके विषयपर लेनिनने अपनी रिपोर्ट पेश की। उन्होंने सोवियत व्यवस्थाके महत्वपर प्रकाश डाला और बताया कि श्रमिक जनताके लिये वह वास्तविक जनवाद है। कांग्रेसने सभी देशोंके सर्वहारा वर्गके नाम एक घोषणापत्र स्वीकार किया जिसमें सर्वहारा–एकाधिपत्य तथा समस्त भूमंडलमें सोवियतों की विजयके लिये प्राणपणसे संघर्ष करनेके लिये कहा गया।

कांग्रेसने तीसरे कम्युनिस्ट इन्टरनेशनलकी एक स्थायी समिति बनायी।

इस प्रकार एक नये ढंगका अन्तरराष्ट्रीय क्रान्तिकारी सर्वहारा-संगठन—कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल, मार्क्सवादी-लेनिनवादी इन्टरनेशनल बना।

मार्च १९१९ में हमारी पार्टीकी आठवीं कांग्रेस हुई। यह कांग्रेस कुछ विरोधी तत्वोंके संघर्षके दिनोंमें हुई। एक ओर तो मित्र देशोंका सोवियत-विरोधी प्रतिक्रियावादी गुट मजबूत होगया था; दूसरी ओर योरपमें विशेषकर पराजित देशोंमें, क्रान्तिके उठते हुए ज्वारसे सोवियत देशकी स्थिति बहुत कुछ सुधर गयी थी।

कांग्रेसमें ३,१३,७६६ पार्टी-मेम्बरोंके ३०१ प्रतिनिधि आये थे जिन्हें वोट देनेका अधिकार था। १०२ प्रतिनिधियोंको वोलनेका अधिकार था, परन्तु वे वोट न दे सकते थे।

अपने प्रारंभिक भाषणमें लेनिनने स्वेर्दलौफ़का श्रद्धापूर्वक स्मरण किया। बोल्शेविक पार्टीके संगठनसम्बंधी कार्योंमें निपुण व्यक्तियोंमें वह अन्यतम थे परन्तु कांग्रेसका आरंभ होनेके पूर्व ही उनकी मृत्यु हो गयी थी।

कांग्रेसने एक नया पार्टी-प्रोग्राम स्वीकार किया। इस प्रोग्राममें पूंजीवाद और उसकी चरम अवस्था साम्राज्यवादकी व्याख्या की गयी। इसमें पूंजीवादी जनवादी तथा सोवियत व्यवस्थाओंकी तुलना की गयी। समाजवादके लिये होनेवाले संघर्षमें पार्टीके विशिष्ट कार्योंकी इसमें विस्तृत व्याख्या की गयी। समाजवादी व्यवस्था क़ायम करनेके लिये यह आवश्यक था कि पूंजीवादी सम्पत्तिकी जब्ती पूरी हो; एक ही समाजवादी योजनाके अनुसार देशके आर्थिक जीवनका संचालन हो; राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्थाके संगठनमें ट्रेड यूनियन भाग लें; मजदूरोंमें श्रमसम्बन्धी समाजवादी अनुशासन हो; आर्थिक क्षेत्रमें सोवियत संस्थाओंके नियंत्रणमें पूंजीवादी विशेषज्ञोंसे काम लिया जाय; समाजवादी निर्माणके कार्यमें क्रमशः और व्यवस्थित ढँगसे मध्य स्तरके किसानोंका सहयोग प्राप्त किया जाय।

साम्राज्यवाद पूँजीवादकी चरम अवस्था है,—साम्राज्यवादकी इस व्याख्याको कार्यक्रममें रखनेके सिवा कांग्रेसने लेनिनके इस प्रस्तावको स्वीकार किया कि दूसरी पार्टी कांग्रेसके कार्यक्रममें स्वीकृत औद्योगिक पूँजीवाद और साधारण मालके उत्पादनकी व्याख्याओंको भी सम्मिलित कर लिया जाय। लेनिन इस बातको अत्यन्त आवश्यक समझते थे कि कार्यक्रममें अर्थ-व्यवस्थाकी जटिलताका उल्लेख हो और उसमें देशकी अर्थ-व्यवस्थाके विभिन्न रूपोंका निर्देश हो। इस व्याख्यामें मामूली मालके उत्पादनका उल्लेख होना चाहिये जिसके प्रतिनिधि मध्य स्तरके किसान हैं। इसलिये कार्यक्रम-सम्बन्धी विवादके समय लेनिनने बुखारिनकी बोल्शेविक-विरोधी बातोंका जोरोंसे खंडन किया। बुखारिनका कहना था कि पूँजीवाद, मामूली मालके उत्पादन, और मध्य स्तरके किसानोंकी अर्थ-व्यवस्था सम्बन्धी पैराग्राफ़ कार्यक्रमसे उड़ा दिये जायँ। सोवियत राजके विकासमें मँझले किसानोंकी भूमिकाको बुखारिनका मत मेन्शेविक-त्रात्स्कीपंथी ढंगसे अस्वीकार करता था। साथ ही बुखारिन इस बातपर लीपापोती कर जाता था कि किसानोंके साधारण

मालके उत्पादनसे कुलक–वर्गीय लोगोंका जन्म होता था और उससे उनका पोषण होता था।

इसके सिवा जातीय प्रश्नपर बुख़ारिन और पियाताकोफ़के वोल्शेविक-विरोधी मतका लेनिनने खंडन किया। ये दोनों चाहते थे कि कार्यक्रममें जातियोंके आत्म-निर्णयके अधिकारको न स्वीकार किया जाय; इसलिये वे उसके ख़िलाफ़ वोले। उनका कहना था कि जातियोंकी समानताके नारेसे सर्वहारा-क्रान्तिकी विजय और विभिन्न जातियोंके सर्वहारा वर्गकी एकतामें वाधा पहुँचेगी। बुख़ारिन और पियाताकोफ़के इस निकृष्ट, साम्राज्यवादी और संकुचित मतका लेनिनने खंडन किया।

आठवीं कांग्रेसने अपने विचार-विनिमयमें मँझले किसानोंके सम्बन्धमें अपनी नीति स्थिर करनेको महत्वपूर्ण स्थान दिया। भूमिसम्बन्धी क़ानूनसे मँझले किसानकी संख्या वरावर वढ़ती गयी थी और कृषक जन-संख्यामें अब उन्हींका वहुभाग था। उनका व्यवहार और दृष्टिकोण पूँजीवादी और सर्वहारा वर्गोंके वीचमें झोंके खाता था। गृहयुद्धके भाग्य-निर्णय और समाजवादी निर्माणके लिये उनका दृष्टिकोण और व्यवहार अति महत्वपूर्ण था। गृहयुद्धका भाग्य अधिकतर मँझले किसानोंपर निर्भर था कि वे किस तरफ़को झोंका खाते हैं और किस वर्गका अधिनायकत्व वे स्वीकार करते हैं—पूँजीवादी वर्गका या सर्वहारा वर्गका। १९१८ की ग्रीष्मऋतुमें चेकोस्लोवाक ग़द्दार, कुलक, सामाजिक-क्रान्तिकारी और मेन्शेविक वोल्गा प्रदेशमें सोवियत शासनको इसीलिये उलट सके थे कि मँझले किसानोंके एक वहुत बड़े भागने उनका समर्थन किया था। मध्य रूसमें जब कुलकोंने विद्रोह किया, तब भी यही वात हुई। परन्तु १९१८ की शरद ऋतुमें मँझले किसानोंमें से अधिकांश सोवियत शासनकी ओर झुकने लगे। उन्होंने देखा कि ग़द्दारोंकी विजयके वाद ज़मींदारी शासन फिर क़ायम हो जाता है, किसानोंकी ज़मीन छीन ली जाती है और डकैती, अत्याचार और मार–पीटका वाज़ार गर्म हो उठता है। निर्धन किसान–समितिने कुलकोंका ध्वंस किया था, उसकी इस कार्यवाहीसे भी किसान प्रभावित हुए। इसलिये नवम्बर १९१८ में लेनिनने यह नारा लगाया,—

> "कुलकोंके विरुद्ध संग्राममें एक क्षणकी ढील मत दो और दृढ़तासे केवल निर्धन किसानका भरोसा करो। साथ ही मँझले किसानसे समझौता करना सीखो।" **(संक्षिप्त लेनिन-ग्रंथावली—अं. सं., खं. ८, पृष्ठ १५०)**

यह सही है कि मँझले किसानोंका झोंके खाना एकवारगी ही नहीं वन्द हो गया। परन्तु वे सोवियत शासनकी ओर अधिक झुक आये और उसका अधिक दृढ़तासे समर्थन करने लगे। उनके सम्बन्धमें आठवीं पार्टी कांग्रेसने जो नीति निर्धारित की, उससे यह काम और भी शीघ्रता और सरलतासे होने लगा।

आठवीं पार्टी कांग्रेससे मँझले किसानोंके सम्बन्धमें पार्टी नीतिमें परिवर्तन हुआ। लेनिनकी रिपोर्ट और काँग्रेसके निर्णयोंसे इस प्रश्नपर पार्टीने एक नयी नीति निर्धारित की। काँग्रेसने इस वातकी माँग की कि पार्टी–संगठन और सभी कम्युनिस्ट मँझले और धनी

किसानोंमें कठोरतासे विभेद करें और उनमें विभाजन करके मँझले किसानोंकी आवश्यकताओंका निकटसे अध्ययन करें तथा उन्हें मजदूर-वर्गकी ओर फेरनेका प्रयत्न करें। मँझले किसानोंकी पुरोगामितापर विजय पानी चाहिये—उन्हें समझा बुझा कर, न कि बलपूर्वक, उनसे जबरदस्ती करके। इसलिये काँग्रेसने इस बातका निर्देश किया कि देहातमें समाजवादी उपायोंको चरितार्थ करनेमें—पंचायतें और कृषि-संघ बनानेमें—दबावसे काम न लिया जाय। जहाँ भी मँझले किसानके निकट हितोंकी बात हो, वहाँ उससे व्यावहारिक समझौता कर लेना चाहिये और समाजवादी परिवर्तन करनेकी **प्रणालीमें** उसे विशेष सुविधाएँ दी जानी चाहिए। काँग्रेसने मँझले किसानोंसे **स्थायी** सहयोगकी नीति निर्धारित की। इस सहयोगमें **मूल नेतृत्व** सर्वहारा वर्गका ही था।

आठवीं कांग्रेसमें लेनिनने मँझले किसानोंके सबन्धमें जो नीति घोषित की, उसके अनुसार सर्वहारा वर्गके लिये यह आवश्यक हो गया कि वह निर्धन किसानोंका भरोसा करे, मँझले किसानोंसे सहयोग बनाये रहे और धनी किसानोंसे लड़े। आठवीं कांग्रेसके पहले पार्टीकी साधारणतः यह नीति थी कि मँझले किसानोंको **तटस्थ** बना दिया जाय। इसका यह अर्थ था कि पार्टी इस बातका प्रयत्न करती थी कि मँझले किसान विशेषतया कुलक और साधारणतः पूँजीवादी वर्गका पक्ष न करें। लेकिन अब इतना ही यथेष्ट न था। आठवीं कांग्रेसने मँझले किसानोंको तटस्थ बनानेकी नीतिके बदले उनसे **स्थायी सहयोग** स्थापित करनेकी नीति अपनायी जिससे कि गद्दारोंसे और विदेशी सशस्त्र हस्तक्षेपसे युद्ध किया जा सके और सफलतापूर्वक समाजवादका निर्माण हो सके।

विदेशी हस्तक्षेप और उसके गद्दार साथियोंसे गृहयुद्धमें अपनी विजय निश्चित करनेमें आठवीं कांग्रेसकी मँझले किसानोंके बारेमें नीतिका निर्णायक महत्व रहा। ये किसान कृषक-जनसंख्याका बहुभाग थे। १९१९ की शरदृऋतुमें जब किसानोंके सामने यह प्रश्न आया कि वे सोवियत शासनकी ओर होंगे या देनीकिन की ओर, तो उन्होंने सोवियत शासनका समर्थन किया और सर्वहारा-एकाधिपत्य अपने सबसे भयंकर शत्रुको कुचल सका।

कांग्रेसके विचार-विनिमयमें लाल फ़ौजकी निर्माण सम्बन्धी समस्याओंका विशेष स्थान रहा। पार्टीमें एक "सैनिक विरोध" का जन्म हो गया था। इस "सैनिक विरोध" में उस "गरम कम्युनिस्ट" दलके कुछ लोग थे, जो अब ध्वस्त हो चुका था। इसमें पार्टीके कुछ ऐसे कार्यकर्त्ता भी थे जिन्होंने कभी किसी विरोधमें भाग न लिया था परन्तु जो त्रात्स्की द्वारा लाल फ़ौजके कार्य-संचालनसे असन्तुष्ट थे। फ़ौजके प्रतिनिधियोंमेंसे अधिकांश स्पष्टतः त्रात्स्की-विरोधी थे। पुरानी ज़ार-सेनाके विशेषज्ञोंके प्रति त्रात्स्कीकी श्रद्धासे वे रुष्ट थे। इन विशेषज्ञोंमेंसे कुछ तो गृहयुद्धमें साफ़ दगा दे रहे थे। फ़ौजके पुराने बोल्शेविक कार्यकर्त्ताओंके प्रति त्रात्स्कीकी गर्वपूर्ण और विरोधी मनोवृत्ति भी उन्हें पसन्द न थी। कांग्रेसमें त्रात्स्कीकी "कार्रवाइयों" के उदाहरण पेश किये गये। उदाहरणके

लिये मोर्चेपर कुछ प्रमुख फ़ौजी कम्युनिस्टोंको उसने प्राणदंड देनेकी केवल इसलिये चेष्टा की थी कि वे उसके कोपभाजन बन गये थे। इस कार्यसे प्रत्यक्षतः शत्रुका ही भला होता। केन्द्रीय समितिके हस्तक्षेप और सैनिकोंके विरोध करनेसे ही इन साथियोंकी जान बच सकी।

"सैनिक विरोध" त्रात्स्की द्वारा पार्टीकी सेनासम्बधी नीतिके विकृत करनेका खंडन करता था परन्तु सेनाके निर्माण-सम्बन्धी अनेक प्रश्नोंपर उसका मत भ्रान्तिपूर्ण था। लेनिन और स्तालिनने "सैनिक विरोध" का ज़ोरोंसे खंडन किया क्योंकि इस दलके लोग फ़ौजमें अब भी गुरिल्ला-युद्धकी अवशिष्ट परंपराको बनाये रखना चाहते थे और स्थायी लाल फ़ौजके निर्माणका विरोध करते थे। वे चाहते थे कि पुरानी फ़ौजके सैनिक विशेषज्ञोंसे काम न लिया जाय और न फ़ौजमें वह दृढ़ अनुशासन क़ायम किया जाय जिसके बिना कोई भी फ़ौज असलमें फ़ौज हो ही नहीं सकती। का. स्तालिनने "सैनिक विरोध" का खंडन किया और एक ऐसी स्थायी फ़ौजके निर्माणकी मांग की जिसमें कठोर अनुशासनकी भावना विद्यमान हो।

उन्होंने कहा,—

> "या तो हम एक सच्ची मज़दूर और किसान—मुख्यतः किसान—फ़ौज, दृढ़ अनुशासन माननेवाली फ़ौज बनायें, और प्रजातन्त्रकी रक्षा करें या फिर हम मर मिटेंगे।"

"सैनिक विरोध" के अनेक प्रस्तावोंको अस्वीकृत करते हुए कांग्रेसने केन्द्रीय सैनिक संस्थाओंके कार्यमें सुधार और फ़ौजमें कम्युनिस्टोंकी भूमिकामें उन्नतिकी माँग करके त्रात्स्कीपर एक प्रहार किया।

कांग्रेसमें एक सैन्य समिति बनायी गयी। उसके प्रयत्नोंसे सैनिक प्रश्नपर कांग्रेस ने एकमत होकर निर्णय स्वीकार किया।

इस निर्णयके फलस्वरूप लाल फ़ौज दृढ़ हुई और पार्टीके अधिक निकट आयी।

कांग्रेसने पार्टी और सोवियतोंकी वार्तोंपर तथा सोवियतोंमें पार्टीके नेतृत्वपर विचार किया। इस दूसरे प्रश्नपर विवाद करते हुए कांग्रेसने अवसरवादी साप्रोनौफ़-औसिन्स्की गुटके मतका खंडन किया, जिसका कहना था कि पार्टीको सोवियतोंमें कार्य-निर्देश न करना चाहिये।

अन्तमें, पार्टीमें बहुतसे नये मेम्बरोंके भर्ती होनेसे कांग्रेसने पार्टीकी सामाजिक रूपरेखा उन्नत करनेके लिये कुछ उपाय निश्चित किये और अपने मेम्बरोंकी फिर रजिस्ट्री करनेका विचार किया।

पार्टीकी पांतिमें शुद्धिकी यह पहली मुहीम थी।

३. हस्तक्षेपका विस्तार—सोवियत देशकी नाकेबन्दी—कोलचककी मुहीम और हार—देनीकिनकी मुहीम और हार—तीन महीनेके लिये शान्ति—नवीं पार्टी कांग्रेस।

जर्मनी और आस्ट्रियाको हरानेके बाद मित्र देशोंने निश्चय किया कि सोवियत देशपर दलबलसे चढ़ दौड़ेंगे। जर्मनीकी पराजय तथा युक्राइन और कॉकेशस प्रदेशसे जर्मन फ़ौजें हट जानेके बाद जर्मनीकी जगह ब्रिटेन और फ्रान्सने ले ली। उन्होंने अपने जहाजी बेड़े काले समुद्रमें भेज दिये और ओदेसा तथा कॉकेशस प्रदेशमें अपनी फ़ौजें उतार दीं। हस्तक्षेप करनेवाले मित्र-देशोंकी फ़ौजें इतनी बर्बर थीं कि अधिकृत प्रदेशोंमें किसानों और मज़दूरोंको गोलियोंसे भून डालनेमें वे न हिचकिचायीं। उनका अनाचार इतना बढ़ गया कि तुर्किस्तानपर अधिकार करनेके बाद वे परले कॉकेशसमें बाकूके २६ प्रमुख बोल्शेविकोंको पकड़ ले गयीं। इनमें कॉमरेड शोम्यान, फियोलेतौफ़, जापरिद्ज़े, मलिगिन, अज़ीज़बेकौफ़, और कोर्गानौफ़ थे। सामाजिक-क्रान्तिकारियोंकी सहायतासे उन्होंने इन २६ बोल्शेविकोंको निर्दयतापूर्वक गोलीका शिकार बना डाला।

हस्तक्षेप करनेवालोंने शीघ्र ही रूसके नाकेबन्दीकी घोषणा कर दी। जलमार्ग तथा आवाजाहीके और रास्ते बन्द कर दिये गये। बाहरी दुनियासे रूसको अलग कर दिया गया।

सोवियत देश प्रायः हर दिशामें घिर गया।

मित्र देशोंकी आशाओंका केन्द्र साइबेरियाके ओम्स्क नगरमें उनका पिट्ठू जल-सेनापति कोलचक था। उसे "रूसका प्रधान शासक" घोषित कर दिया गया और देशकी सभी क्रान्तिविरोधी शक्तियोंने उसकी अध्यक्षता स्वीकार की।

इस प्रकार पूर्वी मोर्चा मुख्य मोर्चा बन गया।

कोलचकने एक भारी फ़ौज इकट्ठा की और १९१९ के वसन्तमें प्रायः वोल्गा तक पहुँच गया। सबसे अच्छी बोल्शेविक फ़ौजोंने उससे लोहा लिया। नौजवान कम्युनिस्ट लीगी सदस्यों और मज़दूरोंने फ़ौजी वर्दी पहनी। अप्रैल १९१९ में लाल फ़ौजने कोलचकको बुरी तरह परास्त किया। पूरे मोर्चेपर उसकी फ़ौज पीछे हटने लगी।

जब लाल फ़ौज बराबर आगे बढ़ रही थी, तब त्रात्स्कीने एक संदेहात्मक योजना पेश की। उसने कहा कि यूराल तक पहुँचनेके पहले ही लाल फ़ौजको रोक देना चाहिये, कोलचकका पीछा करना बन्द कर देना चाहिये और फ़ौजको पूर्वी मोर्चेसे दक्षिणी मोर्चेकी ओर ले आना चाहिये। पार्टीकी केन्द्रीय समिति अच्छी तरह समझती थी कि यूराल और साइबेरियाको कोलचकके

हाथोंमें नहीं छोडा जा सकता क्योंकि वह जापानियों और अंग्रेजोंकी सहायतासे फिर दम लेकर चंगा हो सकता है और फिर अपनी किस्मत आजमानेकी कोशिश कर सकता है। इसलिये केंद्रीय समितिने इस योजनाको रद कर दिया और लाल फ़ौजको आगे बढ़ते रहनेकी आज्ञा दी। त्रात्स्कीने इस आज्ञासे असहमति प्रकट की और त्यागपत्र दे दिया। केन्द्रीय समितिने उसके त्यागपत्रको अस्वीकार करते हुए उसे आज्ञा दी कि वह पूर्वी मोर्चेके कार्यनिर्देशमें भाग लेना तुरंत बंद कर दे। लाल फ़ौज और भी तेजीसे कोल्चकका पीछा करती रही। उसने उसे और कई बार शिकस्त दी और यूराल तथा साइबेरियाको ग़द्दारोंसे मुक्त किया। यहाँपर ग़द्दारोंके पिछायेमें तगड़ी छापेमार-मुहीम छिड़ी हुई थी जिससे लाल फ़ौजको सहायता मिली।

१९१९ के ग्रीष्मकालमें साम्राज्यवादियोंने जनरल यूदेनिचको यह कार्य सौंपा कि वह पेत्रोग्रादपर हमला करके लाल फ़ौजको पूर्वी मोर्चेसे मोड़े। जनरल यूदेनिच उत्तर पश्चिममें (बाल्टिक प्रदेशोंमें, पेत्रोग्रादकी चौहद्दीमें) क्रान्तिविरोधियोंका नेता था। पुराने अफ़सरोंके क्रान्तिविरोधी आन्दोलनसे प्रभावित होकर पेत्रोग्रादकी चौहद्दीमें दो क़िलोंकी फ़ौजी टुकड़ियोंने सोवियत सरकारसे बग़ावत कर दी। इसके साथ ही मोर्चेपरके हेड-क्वार्टरमें भी एक क्रान्तिविरोधी षड्यंत्रका पता लगा। पेत्रोग्राद संकटमें था। परन्तु मज़दूरों और मल्लाहोंकी सहायतासे सोवियत सरकारके उपाय कारगर हुए। विद्रोही क़िले ग़द्दारोंसे ख़ाली कर दिये गये और यूदेनिचकी फ़ौजें हराकर एस्थोनियामें खदेड़ दी गयीं।

पेत्रोग्रादके पास यूदेनिच की पराजयसे कोल्चकसे निपटना आसान हो गया। १९१९ के अन्त तक उसकी फ़ौज बिल्कुल परास्त कर दी गयी। कोलचक पकड़ लिया गया और इर्कुटस्ककी क्रान्तिकारी समितिकी आज्ञासे उसे प्राणदंड दिया गया।

इस प्रकार कोल्चकका अंत हुआ।

उस समय साइबेरियानिवासियोंमें कोलचक-संबन्धी एक गीत प्रचलित था:—

> **“ वर्दी तो ब्रिटेनकी है फ्रान्सका है ताम-झाम।**
> **हुक्का है जापान का, बस कोलचक का नाम-नाम।**
> **लत्ते हुए वर्दीके औ, गुदड़ी हुआ ताम-झाम।**
> **ठंडा हुआ हुक्का और कोलचकका मिटा, नाम। ”**

कोलचक द्वारा अपनी आशाएँ प्रतिफलित होते न देखकर हस्तक्षेप करने वालोंने सोवियत प्रजातन्त्रपर अपने आक्रमणकी योजना बदल दी। ओदेसामें उतारी हुई फ़ौजों को उन्हें वापस बुलाना पड़ा क्योंकि सोवियत प्रजातंत्रकी फ़ौजके संसर्गसे उनमें भी क्रान्तिकारी भावना घर कर गयी थी और वे अपने साम्राज्यवादी मालिकोंसे बग़ावत करने लगी थीं। उदाहरणके लिये ओदेसामें आन्द्रे मार्तीके नेतृत्वमें फ्रान्सीसी मल्लाहोंने विद्रोह कर दिया। कोल्चक हार ही चुका था; इसलिये मित्रदेशोंने कोर्नीलोफ़के साथी

जनरल देनीकिनपर अपनी आशाएँ बाँधी। यह "स्वयंसेवक सेना" का संगठनकर्ता था। दनीकिन उस समय दक्षिणमें, कूबान प्रदेशमें सोवियत सरकारके विरुद्ध काममें लगा हुआ था। मित्र देशोंने उसकी फ़ौजको काफी हथियार और गोली-बारूद भेजी और सोवियत सरकारसे लड़नेके लिये उसे उत्तर की ओर भेजा।

अब दक्षिणी मोर्चाही मुख्य मोर्चा बन गया।

१९१९ की ग्रीष्मऋतुमें देनीकिनने सोवियत सरकारके विरुद्ध अपना मुख्य आक्रमण आरम्भ किया। त्रात्स्कीने दक्षिणी मोर्चेको छिन्नभिन्न कर दिया था। हमारी फ़ौजें बराबर हारती गयीं। अक्तूबरके मध्यमें ग़द्दारोंने पूरे युक्राइनपर अधिकार कर लिया और ओरेल ले लेनेके बाद तूलाकी ओर बढ़ने लगे जहाँसे हमारी फ़ौजको कार्तूस, राइफलें और मशीनगनें मिलती थीं। ग़द्दार मॉस्कोकी ओर बढ़ आ रहे थे। सोवियत प्रजातंत्रकी स्थिति एकदम संकटपूर्ण हो गयी थी। पार्टीने जनताको चेतावनी दी और उससे दुश्मनका मुक़ाबला करनेको कहा। लेनिनने नारा लगाया,— "देनीकिन से लड़नेमें हर आदमी अपनी जान लड़ा दे!" बोल्शेविकोंसे उत्साहित होकर मज़दूरों और किसानोंने दुश्मनको कुचल देनेके लिये अपनी समग्र शक्ति संचित की।

केन्द्रीय समितिने कॉ. स्तालिन, वोरोशिलौफ़ ओर्जोनिकिद्ज़े, और बुदयोन्नीको दक्षिणी मोर्चेपर भेजा कि वे देनीकिनको खदड़नेकी तैयारी करें। दक्षिणमें त्रात्स्कीके हाथसे फ़ौजी कार्यनिर्देश छीन लिया गया। कॉ. स्तालिनके आनेके पहले त्रात्स्कीके सहयोगसे दक्षिणी मोर्चेके सेनापतियोंने यह योजना बनायी थी कि वे दॉन प्रदेशसे होते हुए ज़ारित्सिनसे नोवोरोसिस्क की ओर देनीकिनपर अपना मुख्य प्रहार करेंगे। इस प्रदेशमें सड़कें न थीं और लाल फ़ौजको ऐसी भूमि पार करनी पड़ती जहाँ कज्ज़ाक बसे हुए थे और जिन पर उस समय मुख्यतः ग़द्दारोंका प्रभाव था। कॉ. स्तालिनने इस योजनाकी कड़ी आलोचनाकी और देनीकिनको हरानेके लिये खुद अपनी योजना केन्द्रीय समितिके पास भेजी। इस योजनाके अनुसार मुख्य प्रहार खारकौफ़—दोन्येत्स प्रदेश—रौस्ताफके मार्गसे होता। इस योजनासे हमारी फ़ौजें शीघ्रतासे देनीकिनके विरुद्ध बढ़ सकतीं क्योंकि वे उस भूमिको पार करतीं जहाँ मजदूरों और किसानोंकी बस्ती थी और जहाँकी जनतासे उन्हें खुली सहानुभूति प्राप्त होती। इस प्रदेशमें रेलवे लाइनोंका जाल बिछा होनेसे फ़ौजको निश्चित रूपसे सभी आवश्यक सामग्री भी मिलती जाती। अन्तमें इस योजनासे दोन्येत्स प्रदेशमें कोयलेकी खानें मुक्त हो जातीं और देशको ईंधन मिल सकता था।

पार्टीकी केन्द्रीय समितिने कॉ. स्तालिनकी योजनाको स्वीकार किया। अक्तूबर १९१९के दूसरे पाखमें घनघोर विरोधके पश्चात ओरेल और वोरोनेजके निर्णायक युद्धोंमें लाल फ़ौजने देनीकिनको परास्त कर दिया। वह तेजीसे पीछे हटने लगा और हमारी फ़ौजों द्वारा खदुड़ाए जानेपर दक्षिणकी ओर भाग खड़ा हुआ। १९२० के आरम्भमें पूरा युक्राइन और उत्तरी कॉकेशस ग़द्दारोंसे खाली कर दिया गया।

दक्षिणी मोर्चेपर जब निर्णायक युद्ध हो रहे थे, तब साम्राज्यवादियोंने यूदेनिच की टुकड़ियोंको पेत्रोग्रादकी ओर झोंक दिया। उनका उद्देश्य था कि दक्षिणसे हमें फ़ौज बुलानी पड़े और देनीकिनकी स्थिति सुधर जाय। ग़द्दार पेत्रोग्रादके दरवाज़ों तक ही आ पहुँचे। क्रान्तिके इस प्रमुख नगरके वीर सर्वहारा वर्गने ग़द्दारोंके सामने फ़ौलादकी दीवाल खड़ी कर दी और नगरकी रक्षा की। सदाकी भाँति आगेकी पाँतिमें कम्युनिस्ट थे। घनघोर संग्रामके बाद ग़द्दार हरा दिये गये और अपनी सीमाओंसे एस्थोनिआकी ओर खदेड़ दिये गये।

और यही देनीकिनका अन्त था।

कोलचक और देनीकिनकी पराजयके बाद दो घड़ी साँस लेनेको अवकाश मिला।

जब साम्राज्यवादियोंने देखा कि ग़द्दार फ़ौजें हार गयी हैं, हस्तक्षेप व्यर्थ हो गया है, सारे देशमें सोवियत शासन दृढ़ हो रहा है और पच्छिमी योरपमें मज़दूरोंका रोष इस बातसे बढ़ता जा रहा है कि सोवियत प्रजातन्त्रमें उन्होंने सैनिक हस्तक्षेप किया है, तो वे सोवियत राजकी ओर अपना रुख बदलने लगे। जनवरी १९२० में ब्रिटेन, फ्रान्स, और इटलीने सोवियत रूसकी नाकेबन्दीका अन्त करनेका निश्चय किया।

हस्तक्षेपकी दीवारमें यह महत्वपूर्ण दरार थी।

परन्तु इसका यह अर्थ न था कि सोवियत भूमिमें हस्तक्षेप और गृहयुद्धका अन्त होगया है। साम्राज्यवादी पोलैंडके आक्रमणका संकट अभी बना हुआ था। हस्तक्षेपकी शक्तियाँ सुदूर पूर्व, कॉकेशस प्रदेश और क्राइमिआसे एकदम निकाल बाहर न की गयी थीं। परन्तु सोवियत रूसको साँस लेनेका थोड़ा-सा अवकाश मिल गया था और अब वह आर्थिक विकासमें अधिक शक्ति लगा सकता था। पार्टी अब आर्थिक समस्याओं की ओर ध्यान दे सकती थी।

गृहयुद्धमें मिलों–कारख़ानोंके बन्द हो जानेसे बहुतसे कुशल मज़दूरोंने उद्योग-धन्धोंको छोड़ दिया था। पार्टीने अब इस बातका उपाय किया कि वे अपने कामसे उद्योग-धंधोंमें फिर आ जायँ। रेलवे लाइनोंकी चिन्तनीय अवस्था थी और बिना इनके सुधरे अन्य मुख्य उद्योग-धन्धोंमें भी विशेष प्रगति न हो सकती थी। इसलिये कई हज़ार कम्युनिस्ट उन्हें सुधारनेके काममें लगाये गये। खाद्य सामग्रीके प्रबन्धका विस्तार किया गया और उसमें सुधार किये गये। रूसमें बिजली लगानेकी एक योजना बनायी जाने लगी। लगभग पचास लाख आदमी लाल फ़ौजमें थे और युद्ध–संकटके कारण फ़ौजसे बाहर न किये जा सकते थे। इसलिये लाल फ़ौजके एक भागको **श्रमिक-फ़ौज** बना दिया गया और उनसे अर्थ-क्षेत्रमें काम लिया जाने लगा। मज़दूर–किसानोंकी रक्षा समितिको **श्रम और रक्षाकी समिति** बना दिया गया। एक **सरकारी योजना समिति** (गोस्प्लान) उसकी सहायता करनेके लिये बनायी गयी।

ऐसी परिस्थितिमें नवीं पार्टी कांग्रेस बुलायी गयी।

मार्च १९२० के अन्तमें यह कांग्रेस हुई। इसमें ६,११,९७८ पार्टी–मेम्बरोंके

५५४ प्रतिनिधि शामिल हुए जिन्हें वोट देनेका अधिकार था। १६२ प्रतिनिधियोंको बोलनेका अधिकार था, परन्तु वे वोट न दे सकते थे।

कांग्रेसने यातायात और उद्योगधन्धोंके क्षेत्रमें देशके तात्कालिक कर्तव्य निश्चित किये। उसने इस आवश्यकतापर विशेष जोर दिया कि आर्थिक जीवनके निर्माणमें ट्रेड यूनियन विशेष भाग लें।

कांग्रेसने इस बातपर विशेष ध्यान दिया कि सबसे पहले रेलवे, फिर ईंधन और लोहे-इस्पातके उद्योग-धन्धोंको सुव्यवस्थित करनेके लिये एक ही आर्थिक योजना बनायी जाय। इस योजनाका मुख्य अंग देशमें बिजली लगानेका कार्यक्रम था। लेनिनने इसे "अगले दस-बीस सालके लिये एक महान् कार्यक्रम" कहकर पेश किया। रूसमें बिजली लगानेकी सरकारी समिति (गोयलरो) की प्रसिद्ध योजनाका यही आधार था। अब वह योजना पूरी हो चुकी है और हम उससे बहुत आगे बढ़ चुके हैं।

कांग्रेसने एक पार्टीविरोधी गुटके मतका खंडन किया जो अपनेको "जनवादी केन्द्रीयताका गुट" कहता था। यह गुट औद्योगिक निर्देशकोंके व्यक्तिगत प्रबन्ध और अविभक्त उत्तरदायित्वका विरोधी था। ये लोग अनियंत्रित "दल-प्रबंध"के पक्षपाती थे जिसके अनुसार औद्योगिक कार्य संचालनमें कोई भी व्यक्तिगत रूपसे उत्तरदायी न हो सकता था। इस पार्टीविरोधी गुटमें मुख्य लोग साप्रोनौफ़, ओसिन्स्की, और वी. स्मिनौंफ़ थे। कांग्रेसमें राइकौफ़ और तौम्स्कीने उनका समर्थन किया।

४. सोवियत रूस पर पोलैंडके ठाकुरोंका हमला—सेनापति रांगेलकी मुहीम—पोलिश योजनाकी विफलता—रांगेलकी हार—हस्तक्षेपका अन्त।

यद्यपि कोलचक और देनीकिन हार चुके थे, उत्तरी प्रदेशोंसे, तुर्किस्तान, साइबेरिया, दॉन प्रदेश, युक्राइन आदिसे गद्दारों और हस्तक्षेप करने वाली फ़ौजोंको निकालकर सोवियत प्रजातंत्र अपनी राज्य-भूमिको बराबर वापस ले रहा था, मित्र देशोंको मजबूर होकर नाकेबन्दी उठा लेनी पड़ी थी, फिर भी वे इस बातको स्वीकार करनेमें हिचक रहे थे कि सोवियत शक्ति अदम्य सिद्ध हुई है और उसकी विजय हो चुकी है। इसलिये उन्होंने सोवियत रूसमें एक बार फिर हस्तक्षेप करनेका विचार किया। इस बार उन्होंने पिलसुद्स्की और रांगेल दोनोंका ही उपयोग करनेका विचार किया। पिलसुद्स्की एक पूँजीवादी क्रान्तिविरोधी राष्ट्रवादी था; पोलैंडके शासनकी बागडोर उसीके हाथोंमें थी। रांगेलने क्राइमिआमें देनीकिनकी रही-सही फ़ौजको जोड़-बटोर लिया था और वहाँसे दोन्येत्स प्रदेश और युक्राइनको आतंकित किये हुए था।

लेनिनके शब्दोंमें पोलैंडके ठाकुर और रांगेल अन्तरराष्ट्रीय साम्राज्यवादके दो हाथ थे जिनसे वह सोवियत रूसका गला घोट देनेकी चेष्टा कर रहा था।

पोलैंडके ठाकुरोंकी यह योजना थी कि नीपर नदीके पच्छिममें सोवियत युक्राइन पर अधिकार कर लें, सोवियत बायलोरूसको हथिया लें, इन प्रदेशोंमें पोलैंडके ठाकुरों का पाया जमा दें और दान्त्सिगसे लेकर ओदेसा तक, "एक समुद्रसे दूसरे समुद्र तक," पोलिश राजकी सीमाएँ फैला दें। रांगेलकी सहायताके बदले वे लाल फ़ौजको परास्त करनेमें और सोवियत रूसमें ठाकुरशाही और पूँजीशाही स्थापित करनेमें उसकी मदद करेंगे।

मित्र-देशोंने इस योजनाका अनुमोदन किया।

युद्धसे बचने और शान्ति क़ायम रखनेके लिये सोवियेत सरकारने पोलैंडसे बात-चीत चलानेके विफल प्रयास किये। पिलसुद्स्कीने शान्तिकी चर्चा करना अस्वीकार किया। उसे चाहिये था युद्ध। उसने हिसाब लगाया था कि लाल फ़ौज कोलचक और देनीकिनसे लड़कर थक गयी है इसलिये पोलिश फ़ौजके आघातको नहीं सह सकेगी।

दो घड़ीके अवकाशका अन्त हो गया।

अप्रैल १९२० में पोलिश ठाकुरोंने सोवियत युक्राइनपर हमला कर दिया और कियेफ़पर अधिकार कर लिया। इसी समय रांगेलके आक्रमणसे दोन्येत्स प्रदेशकी स्थिति संकटपूर्ण हो गयी।

इसके उत्तरमें लाल फ़ौजने सारे मोर्चेपर विरोधी आक्रमण आरम्भ कर दिया। कियेफ़ ले लिया गया और पोलैंडके लड़ाकू ठाकुर युक्राइन और बायलोरूससे निकाल बाहर किये गये। दक्षिणी मोर्चेपर लाल फ़ौजकी अदम्य गतिसे वे गैलीशिआमें ल्वोफ़ के द्वार पर ही आकर ठिठके। पच्छिमी मोर्चेपर लाल फ़ौज वारसाके निकट पहुँच रही थी। पोलिश फ़ौजें एकदम परास्त होनेवाली थीं।

परन्तु लाल फ़ौजके जनरल हेडक्वार्टरमें त्रात्स्की और उसके अनुयायियोंके सन्देहा-स्पद कार्योंसे सफलता व्यर्थ होगयी। त्रात्स्की और तूखाचेव्स्कीके दोषसे पच्छिमी मोर्चे पर लाल फ़ौज वारसाकी ओर एकदम असंगठित रूपसे बढ़ती गयी थी। जीती जगहोंमें अपनी व्यवस्था क़ायम करनेका अवसर फ़ौजको न दिया गया था। अगले दस्ते बहुत आगे बढ़ जाते थे और रिज़र्व टुकड़ियाँ और गोला-बारूद बहुत पीछे छूट जाता था। इसका नतीजा यह होता था कि अगले दस्ते रिज़र्व टुकड़ियों और गोला-बारूदसे विलग हो जाते थे और मोर्चा शैतानकी आंतकी तरह फैलता जाता था। इस बातसे मोर्चेमें दरार डालना आसान हो गया था। फलतः पच्छिमी मोर्चेपर जब थोड़ेसे पोल एक जगह घुस आये तो गोला-बारूदके अभावमें हमारी फ़ौजोंको पीछे हटना पड़ा। दक्षिणी मोर्चेपर लाल फ़ौज निर्ममतासे पोलोंको खदेड़ रही थी और अब ल्वोफ़ तक पहुँच गयी थी, परन्तु उस समय "क्रान्तिकारी सैनिक समितिके सभापति" उस मनहूस त्रात्स्कीने फ़ौजको आज्ञा दी कि वह ल्वोफ़पर अधिकार न करे। उसने घुड़सवार फ़ौजको, जो दक्षिणी मोर्चेकी

खास फ़ौज थी, सुदूर उत्तर-पूर्वकी ओर जानेकी आज्ञा दी। पच्छिमी मोर्चेको मदद पहुँचानेके नामपर यह सब किया गया यद्यपि यह स्पष्ट ही था कि पच्छिमी मोर्चेकी मदद करनेका सबसे अच्छा और एकमात्र उपाय ल्वौफ़पर अधिकार कर लेना है। परन्तु दक्षिणी मोर्चेसे ल्वौफ़से, घुड़सवार फ़ौजके हट जानेका यही अर्थ था कि दक्षिणी मोर्चेसे ही हमारी फ़ौजें पीछे हट जायँ। त्रात्स्कीकी इस विध्वंसक आज्ञासे हमारी फ़ौजको अकारण ही और अनावश्यक रूपसे दक्षिणी मोर्चेसे हटना पड़ा जिससे पोलैंडके ठाकुर खुशीसे उछल पड़े।

वास्तवमें इस कार्यसे पच्छिमी मोर्चेको मदद न मिली वरन प्रत्यक्ष रूपसे मित्र-देशों और पोलैंडके ठाकुरोंको सहायता मिली।

कुछ दिनोंमें पोलोंका बढ़ना रोक दिया गया और हमारी फ़ौज नये जवाबी हमलेकी तैयारी करने लगी। परन्तु पोलैंड युद्ध जारी रखनेमें असमर्थ था और लाल फ़ौजके जवाबी हमलेसे भयभीत हो गया था। इसलिये मजबूर होकर नीपरके पच्छिममें युक्राइनके राज्य तथा बायलोरूसपरसे उसे अपना हाथ खींचना पड़ा। उसने इस समय सन्धि करना ही उचित समझा। २० अक्तूबर १९२० को रीगाकी सन्धि हुई। इस सन्धिके अनुसार गैलीशिया और बायलोरूसके एक भागपर पोलैंडका अधिकार बना रहा।

पोलैंडसे सन्धि करके सोवियत प्रजातंत्रने रांगेलका अंत करनेका विचार किया। अंग्रेजों और फ्रान्सीसियोंने उसे नये ढंगकी तोपें, राइफलें हथियारबन्द गाड़ियाँ, हवाई जहाज और गोली-बारूद भेजी थी। उसके पास गद्दार लड़ाकू दस्ते थे जिनमें अधिकांशतः अफ़सर थे। परन्तु रांगेलने कूबान और दॉन प्रदेशमें जो फ़ौजें उतारी थीं उनकी सहायताके लिये वह यथेष्ट किसानों और कज्ज़ाकोंको न बटोर सका। फिर भी वह दोन्येत्स प्रदेशकी देहरी तक बढ़ता ही चला आया जिससे कोयलेकी खानोंपर संकट आ गया। सोवियत सरकारकी स्थिति इस बातसे और भी चिन्ताजनक हो गयी कि लाल फ़ौज बहुत थकी हुई थी। फ़ौजको बहुत ही विकट परिस्थितिमें बढ़ना पड़ा। रांगेलपर आक्रमण करते हुए उसे मास्नोकी अराजकवादी टुकड़ियोंको भी ठिकाने लगाना था जो रांगेलकी सहायता कर रही थीं। परन्तु यद्यपि रांगेलकी अस्त्र-सज्जा अच्छी थी और लाल फ़ौजके पास टैंक न थे, फिर भी उसने रांगेल को क्राइमिआके प्रायद्वीपमें खदेड़कर उसे वहीं बन्द कर दिया। नवम्बर १९२० में लाल फ़ौज पेरीकोपके सुरक्षित स्थानको लेकर क्राइमिआमें घुस पड़ी और रांगेलकी फ़ौजको तहस-नहस करके गद्दारों और हस्त-क्षेप करनेवाली फ़ौजोंसे उसने प्रायद्वीपको साफ़ कर दिया। क्राइमिया सोवियत प्रदेश हो गया।

पोलैंडकी साम्राज्यवादी योजनाके विफल होनेसे और रांगेलकी पराजयसे हस्तक्षेपके युगका अंत हुआ।

१९२० के अन्तमें कॉकेशस प्रदेशका उद्धार आरंभ हुआ। पूँजीवादी राष्ट्रवादी मुस्सावतिस्तोंसे आज़रबैजान मुक्त हुआ; मेन्शेविक राष्ट्रवादियोंसे ज्योर्जिया स्वाधीन

हुआ और दाश्नकोंसे आर्मीनिया पाक हुआ। आज़रबैजान, आर्मीनिया और जॉर्जियामें सोवियत शक्तिकी विजय हुई।

इसका अभी यह अर्थ न था कि हस्तक्षेपका बिल्कुल अन्त हो गया। सुदूर पूर्वमें जापानी अपनी कतर ब्योंतमें १९२२ तक लगे रहे। इसके सिवा हस्तक्षेपके नये प्रयत्न भी हुए। पूर्वमें आत्मन सीम्योनौफ़ और बैरन उंगेर्नने तथा करेलियामें, १९२१ में, फिन ग़द्दारोंने इस तरहके प्रयत्न किये। परन्तु सोवियत देशके मुख्य शत्रु, हस्तक्षेप करनेवाली मुख्य शक्तियाँ, १९२० के अन्त तक परास्त कर दी गयीं।

विदेशी हस्तक्षेपकारियों और रूसी ग़द्दारोंके सोवियतविरोधी युद्धमें सोवियतोंकी विजय हुई। सोवियत प्रजातन्त्रने अपनी स्वाधीनता और स्वराजको बनाये रखा।

विदेशी सैनिक हस्तक्षेप और गृहयुद्धका अन्त हुआ। सोवियत शक्तिकी यह ऐतिहासिक विजय थी।

५. सोवियत प्रजातंत्रने अंग्रेज-फ्रांसीसी-जापानी-पोलिश हस्तक्षेपकी संगठित शक्तियोंको और रूसके पूँजीवादी-ज़मींदार-ग़द्दार क्रान्ति-विरोधियोंको कैसे और क्यों परास्त किया?

यदि हम हस्तक्षेपके दिनोंकी प्रमुख योरपियन और अमरीकन पत्रिकाओं तथा समाचार पत्रोंको पढ़ें तो हम आसानीसे देखेंगे कि सैनिक या साधारण एक भी ऐसा प्रमुख लेखक न था, एक भी ऐसा सैनिक विशेषज्ञ न था जिसे विश्वास हो कि सोवियत सरकार जीत जायगी। इसके विपरीत सभी देशों और जातियोंके प्रमुख लेखक, सैनिक विशेषज्ञ, और क्रान्तिके इतिहासकार, नामचारके विद्वान एक स्वरसे घोषित कर रहे थे कि सोवियत शासनके दिन गिने हुए हैं और उसकी पराजय अनिवार्य है।

हस्तक्षेप करनेवालोंकी विजय वे इस बातसे निश्चित समझते थे कि सोवियत रूसके पास तो संगठित फ़ौज है नहीं और कहना चाहिये कि लड़ाईकी भट्टीमें ही उसे लाल फ़ौज तैयार करनी है, परन्तु ग़द्दारों और हस्तक्षेप करनेवालोंके पास बहुत कुछ पहलेसे ही तैयार फ़ौज मौजूद है।

उनके निश्चयका यह आधार भी था कि लाल फ़ौजके पास अनुभवी सैनिक नहीं हैं, अनुभवी सिपाहियोंमेंसे अधिकांश क्रान्तिविरोधियोंसे जा मिले हैं। उधर ग़द्दारों और हस्तक्षेप करनेवालोंके पास ऐसे आदमी हैं।

उनके निश्चयका यह आधार था कि रूसी उद्योग-धन्धोंके पिछड़े हुए होनेसे लाल फ़ौजके पास हथियारों और गोली-बारूदकी कमी है। उसके पास जो हथियार वगैरह हैं,

व पुराने ढंगके हैं और वाहरसे उसे कुछ मिल नहीं सकता क्योंकि चारों तरफ़से उसकी नाकेवन्दी हो गयी है। इसके विपरीत ग़द्दारों और हस्तक्षेपकारियोंके पास अच्छे हथियार और वढ़िया लड़ाईका सामान है और आगे उन्हें मिलता भी जायगा।

अन्तमें उनके निश्चयका यह आधार था कि ग़द्दारों और हस्तक्षेपकारियोंकी फ़ौजके पास रूसके श्रेष्ठ अन्न उपजानेवाले प्रदेश हैं परन्तु लाल फ़ौजके पास ऐसे प्रदेश नहीं हैं और खाद्य सामग्रीकी तंगी हो रही है।

और यह सत्य है कि लाल फ़ौजके सामने ये सब वाधाएँ थीं, उस पर ये सब प्रतिवन्ध थे।

इस दृष्टिसे—परन्तु इस दृष्टिसे ही—हस्तक्षेप करनेवाले महानुभाव जो कुछ कह रहे थे, वह विल्कुल ठीक था।

तव इसका क्या कारण है कि ऐसे भयानक प्रतिवन्ध होनेपर भी लाल फ़ौज ग़द्दारों और हस्तक्षेपकारियोंकी उस फ़ौजको हरा सकी जिसपर ये प्रतिवन्ध लागू न होते थे?

(१) लाल फ़ौज विजयी हुई क्योंकि सोवियत सरकारकी जिस नीतिके लिये लाल फ़ौज लड़ रही थी, वह सही थी। नीति जन-हितोंके अनुकूल थी और जनता इस वातको समझती और अनुभव करती थी कि यह नीति सही है, यह उसीकी नीति है; वह उसका हृदयसे समर्थन करती थी।

वोल्शेविक जानते थे कि जो फ़ौज ग़लत नीतिके लिये लड़ती है, ऐसी नीतिके लिये लड़ती है जिसका जनता समर्थन नहीं करती, वह जीत नहीं सकती। ग़द्दारों और हस्तक्षेपकारियोंकी ऐसी ही फ़ौज थी। उसके पास सव कुछ था—अनुभवी सेनापति, वढ़िया हथियार, गोला-वारूद, सैनिक सज्जा और खाद्य सामग्री। उसके पास एक ही चीज़ की कमी थी,—रूसी जनताके सहयोग और सहानुभूतिकी। रूसी जनता हस्तक्षेपकारियों और ग़द्दार "शासकों" की नीतिका समर्थन न करती थी क्योंकि उनकी नीति जन-हितोंके प्रतिकूल थी। इसलिये हस्तक्षेपकारियों और ग़द्दारोंकी फ़ौज हार गयी।

(२) लाल फ़ौजकी जीत हुई क्योंकि वह जनताके प्रति विल्कुल सच्ची और वफ़ादार थी। इसलिये जनता उसे प्यार करती थी, उसकी मदद करती थी और उसे अपनी ही फ़ौज समझती थी। लाल फ़ौज जनताकी सन्तान है और सन्तानकी भाँति यदि वह माताके प्रति सच्ची रहेगी तो उसे जनताका सहयोग प्राप्त होगा और वह अवश्य जीतेगी। परन्तु जो फ़ौज अपनी जनताके विरुद्ध आचरण करती है, वह अवश्य हारेगी।

(३) लाल फ़ौजकी जीत हुई क्योंकि सोवियत सरकार मोर्चेके पीछे समग्र देश को मोर्चेकी आवश्यकताएँ पूरी करनेके लिये संगठित कर सकी। जिस फ़ौजको मोर्चेके पीछे हर तरहसे मज़वूत सहारा न मिलेगा, वह जरूर हार जायगी। वोल्शेविक इस वातको जानते थे, इसीलिये लिये उन्होंने समग्र देशको ऐसा वना दिया था जैसे वह

अस्त्र-सज्जित शिविर हो। इस तरहसे देश मोर्चेपरकी फ़ौजके लिये अस्त्र-शस्त्र, युद्ध-सामग्री, खाद्य सामग्री, युद्ध-सज्जा, और कुमक पहुंचा सका।

(४) लाल फ़ौजकी जीत हुई क्योंकि (क) लाल फ़ौजके सिपाही युद्धके लक्ष्य और उद्देश्यको समझते थे और जानते थे कि उनका पक्ष उचित है; (ख) युद्धके लक्ष्यों और उद्देश्योंको उचित समझनेसे उनके अनुशासन और युद्ध-कौशलमें उन्नति हुई; (ग) इसके फलस्वरूप दुश्मनसे लोहा लेते हुए फ़ौजने अपूर्व आत्मत्याग और सामूहिक रूपसे अतुल वीरताका परिचय दिया।

(५) लाल फ़ौजकी जीत हुई क्योंकि उसका हिरावल, क्या मोर्चे पर क्या पीछे, बोल्शेविक पार्टी थी जो अपने एके और अनुशासनसे इस्पाती दीवारकी तरह अडिग थी। उसमें क्रान्तिकारी जोश था और जनताके हितोंके लिये वह हर तरहके आत्मत्यागके लिये प्रस्तुत रहती थी। कोटि-कोटि जनताको संगठित करके विषम परिस्थितियोंमें उसका नेतृत्व करनेकी उसमें अतुल क्षमता थी।

लेनिनने कहा था,—

"मित्र देशोंके और सारी दुनियाके साम्राज्यवादियोंने बार-बार चढ़ाई की, फिर भी हम जीत सके, यह चमत्कार इसीलिये हुआ कि पार्टीमें कठोर अनुशासन था और वह सदा सतर्क रहती थी, पार्टीने साधिकार सभी सरकारी विभागों और संस्थाओंको संयुक्त कर लिया, पार्टीकी केन्द्रीय समितिने जो नारे लगाये उनके पीछे चलने वाले सैकड़ों, हजारों, लाखों और करोड़ों संगठित आदमी थे, और लोगोंने अविश्वसनीय आत्मत्यागका परिचय दिया।" **(लेनिन ग्रंथावली—रूसी सं., खं. २५, पृ. ९६)**

(६) लाल फ़ौजकी जीत हुई क्योंकि (क) वह अपनी पाँतिसे ही फ्रुन्से, वोरोशिलोफ़, बुदयोन्नी आदि जैसे नये ढंगके सेनापति उत्पन्न कर सकी; (ख) उसकी पाँतिमें कोतोव्स्की, चापायेफ़, लाजो, श्चोर्स, पार्खोमेंको आदि चतुर योद्धा थे; (ग) लाल फ़ौजकी राजनीतिक शिक्षाका भार लेनिन, स्तालिन, मोलोतोफ़, कालीनिन, स्वेर्द-लोफ़, कगानोविच, ओर्जोनिकित्से, किरोफ़, क्यूबिशेफ़, मिकोयान, ज्दानोफ़, आन्द्रियेफ़, पेत्रोव्स्की, यारोस्लाव्स्की, येज़ोफ़, जेरजिन्स्की, श्चादेंको, मेख्लिस, ख्रुश्चेफ़, श्वेर्निक, श्कियांतोफ़ आदि जैसे लोगोंपर था। (घ) लाल फ़ौजके पास सैनिक जन-प्रतिनिधियों जैसे उच्चकोटिके संगठनकर्ता और प्रचारक थे जिन्होंने लाल फ़ौजको सुदृढ़ रूपसे संगठित किया, सैनिकोंमें अनुशासन और सामरिक वीरताकी भावना जाग्रत की और बलपूर्वक, शीघ्रतासे और निर्ममतासे कुछ सेनापतियोंकी विश्वासघाती कार्यवाहीका अंकुर फूटते ही उसे निर्मूल कर दिया। साथ ही जो सेनापति सोवियत शासनके प्रति ईमानदार सिद्ध हुए और जो दृढ़तासे फ़ौजी दस्तोंका नेतृत्व कर सकते थे, वे चाहे पार्टीके हों चाहे बाहरके, सैनिक जन-प्रतिनिधि उनकी कीर्ति और गौरवके साहसी और दृढ़ प्रशंसक बने रहे।

लेनिनने कहा था,—

" सैनिक जन-प्रतिनिधि न होते तो लाल फ़ौज भी न होती "

(७) लाल फ़ौजकी जीत हुई क्योंकि ग़द्दार फ़ौजोंके पीछे कोल्चक, देनीकिन, क्रास्नौफ़, और रांगेलके पिछायेमें बोल्शेविक वीर, पार्टी और ग़ैर-पार्टीके वीर, गुप्त रूपसे कार्य कर रहे थे। उन्होंने ग़द्दारों और आततायियोंके विरुद्ध किसानों और मजदूरोंको विद्रोहके लिये उभारा; सोवियत शासनके दुश्मनोंके पृष्ठभागको खोखला कर दिया और इस प्रकार लाल फ़ौजकी प्रगतिमें सहायता की। सभी जानते हैं कि युक्राइन, साइबेरिया, सुदूरपूर्व, यूराल, बायलोरूस, और वोलगा प्रदेशके छापामार सैनिकोंने ग़द्दारों और आततायियोंके पृष्ठभागको खोखला करके लाल फ़ौजकी अमूल्य सहायता की थी।

(८) लाल फ़ौजकी जीत हुई क्योंकि ग़द्दार क्रान्ति-विरोधियों और विदेशी हस्तक्षेप-कारियोंसे युद्ध करनेमें सोवियत प्रजातन्त्र अकेला न था। सोवियत सरकारके युद्ध और उसकी सफलतासे दुनियाभरके सर्वहारा वर्गकी सहानुभूति और सहयोग सोवियत प्रजातंत्रके साथ हो गया। एक ओर साम्राज्यवादी यह चेष्टा कर रहे थे कि हस्तक्षेप और नाकेबन्दी करके सोवियत प्रजातंत्रका गला घोंट दें तो दूसरी ओर साम्राज्यवादी देशोंके मजदूर सोवियतोंके पक्षमें हो गये और उनकी सहायता करने लगे। सोवियतविरोधी देशोंके पूँजीपतियोंसे संघर्ष छिड़ जानेसे साम्राज्यवादियोंको मजबूर होकर हस्तक्षेप बन्द करना पड़ा। ब्रिटेन, फ्रान्स और दूसरे हस्तक्षेपकारी देशोंके मज़दूरोंने हड़तालें कर दीं, ग़द्दारों और आततायियोंके लिये जहाज़ोंमें गोला बारूद भरनेसे उन्होंने इनकार कर दिया। उन्होंने अपनी कार्य समितियाँ बनायी जिनका नारा था,—

" सोवियत रूसके विरुद्ध आक्रमण बन्द करो।"

लेनिनने कहा था,—

" अन्तरराष्ट्रीय पूँजीवादने हमारे विरुद्ध अपना हाथ उठाया नहीं कि उसके अपने मज़दूरोंने ही उसे पकड़ लिया।" (उपरोक्त—पृ. ४०५)

सारांश

अक्तूबर क्रान्तिमें हारकर जमींदारों और पूँजीपतियोंने ग़द्दार सेनापतियोंके साथ अपने ही देशके विरुद्ध मित्रदेशोंकी सरकारोंसे दुरभिसन्धि की कि सोवियत शासनका ध्वंस करनेके लिये सोवियत भूमिपर संयुक्त आक्रमण किया जाय। इसी आधारपर रूसके सीमान्त प्रदेशोंमें मित्र देशोंका सैनिक हस्तक्षेप और ग़द्दारोंका विद्रोह हुआ जिसके फलस्वरूप कच्चे माल और खाद्य सामग्रीके प्राप्ति-स्थानोंसे रूस अलग कर दिया गया।

जर्मनीकी पराजय तथा योरपके साम्राज्यवादी गुटोंमें युद्ध बन्द होजानेसे मित्र-देशोंके हाथ खाली हो गये और हस्तक्षेप अधिक शक्तिशाली हो गया। इससे सोवियत रूसके लिये नयी कठिनाइयाँ उत्पन्न होगयीं।

साथ ही जर्मन क्रान्ति और योरपके देशोंमें क्रान्तिकारी आन्दोलनके उपक्रमसे सोवियत शक्तिके लिये अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति अनुकूल हो गयी और सोवियत प्रजातंत्रकी स्थिति सँभल गयी।

बोल्शेविक पार्टीने **मातृभूमिकी रक्षाके लिये**, विदेशी आततार्इयों और पूंजी-वादियों, जमींदारों और गद्दारोंसे लड़नेके लिये, मजदूरों और किसानोंको उभारा। सोवियत प्रजातंत्र और उसकी लाल फ़ौजने मित्र देशोंके पिठ्ठुओंको—कोलचक, यूदेनिच, देनीकिन, क्रास्नोफ और रांगेलको—एक एक करके हरा दिया। मित्र देशोंके दूसरे पिठ्ठू पिलसुद्स्कीको उन्होंने युक्राइन और वायलोरूससे निकाल वाहर किया और तव विदेशी हस्तक्षेपकारियोंकी फ़ौजोंको खदेड़कर सोवियत देशसे वाहर किया।

इस प्रकार समाजवादकी भूमिपर अन्तरराष्ट्रीय पूँजीवादका पहला सशस्त्र आक्रमण व्यर्थ गया।

हस्तक्षेपके युगमें सामाजिक-क्रान्तिकारी, मेन्शविक, अराजकवादी और राष्ट्रवादी पार्टियाँ जो पहले कुचल दी गयी थीं, सिर उठाकर गद्दार सेनापतियों और आक्रमण-कारियोंका समर्थन करने लगीं। वे सोवियत प्रजातंत्रके विरुद्ध क्रान्तिविरोधी षड्यंत्र रचने लगीं और सोवियत नेताओंका नाश करनेके लिये आतंकवादी उपायोंसे काम लेने लगीं। अक्तूबर क्रान्तिके पहले इन पार्टियोंकी मजदूर-वर्गमें थोड़ी वहुत साख थी परन्तु गृहयुद्धमें जनताकी आँखोंके आगे वे उघरकर अपने क्रान्तिविरोधी रूपमें प्रकट होगयी।

गृहयुद्ध और हस्तक्षेपके युगमें इन पार्टियोंका राजनीतिक ध्वंस हो गया और सोवियत रूसमें कम्युनिस्ट पार्टीकी पूर्ण विजय हुई।

★

नवाँ अध्याय

आर्थिक पुनर्संगठनकी शान्तिमय कार्यवाहीकी ओर संक्रमणके युगमें बोल्शेविक पार्टीका कार्य
(१९२१-१९२५)

१. हस्तक्षेपकी पराजय और गृहयुद्धके अन्तके बाद सोवियत प्रजातन्त्र—पुनर्संगठन-युगकी कठिनाइयाँ ।

युद्ध समाप्त करके सोवियत प्रजातन्त्रने शान्तिपूर्ण आर्थिक विकासकी ओर ध्यान दिया । युद्धके घावोंको भरना था; देशके ध्वस्त आर्थिक जीवनको फिर अनुप्राणित करना था; रेलवे, उद्योग-धन्धों और कृषिको पुनः व्यवस्थित करना था ।

परन्तु अत्यन्त कठिन परिस्थितियोंमें इस शान्तिपूर्ण विकासके कार्यमें हाथ लगाना था । गृहयुद्धमें सरलतासे विजय न मिल गयी थी । चार सालके साम्राज्यवादी युद्ध और तीन सालके हस्तक्षेप युद्धसे देश तबाह हो गया था ।

१९२० में कृषिका उत्पादन युद्धके पहलेके उत्पादनका, ज़ारशाहीके त्रस्त रूसी किसानोंके उत्पादनका, **आधा** रह गया था । **कम्बख्तीमें** आटा गीला हुआ इस बातसे कि १९२० में बहुतसे प्रान्तोंमें फसल ख़राब हो गयी । खेतीकी बुरी हालत थी ।

उद्योग-धन्धोंकी दशा और भी गयी बीती थी । विशृंखलताका पूर्ण साम्राज्य था । १९२० में बड़े उद्योग-धन्धोंका उत्पादन युद्धके पहलेके उत्पादनका प्रायः **एक-सप्तमांश** रह गया था । बहुतसी मिलें और कारखाने ठप थे । लोहे और कोयलेकी खानोंमें तोड़फोड़ मचायी गयी थी और वहाँ पानी बह रहा था । लोहे और इस्पातके धन्धोंकी दशा सबसे शोचनीय थी । १९२१ में कच्चा लोहा कुल १,१६,३०० टन निकला था जो युद्धपूर्वके उत्पादनका लगभग ३ प्रतिशत था । ईंधनकी कमी अलग थी । यातायातके साधन छिन्न-भिन्न हो रहे थे । देशमें कपास और धातुओंके गोदाम प्रायः खाली होगये थे । रोटी, चर्बी, गोश्त, जूते, कपड़े, माचिसें, नमक, मिट्टीका तेल और साबुन जैसी आवश्यक वस्तुओंकी भारी कमी होरही थी ।

जब तक लड़ाई चलती रही, तब तक लोग यह कमी सहते रहे और कभी-कभी उसे भुला भी देते थे । लेकिन युद्ध बंद हो जानेपर उन्होंने सहसा अनुभव किया कि यह कमी असहनीय है । वे इस बातकी मांग करने लगे कि यह कमी शीघ्र पूरी की जाय ।

किसानोंमें असन्तोष फैल गया । गृहयुद्धकी आँचमें मजदूरों और किसानोंकी सैनिक और राजनीतिक एकता तपकर पक्की हुई थी । इस सहयोगका एक निश्चित आधार था,—किसानोंको सोवियत सरकारसे भूमि मिली थी और कुलकों तथा ज़मीं-

दारोंसे वह उनकी रक्षा करती थी; मजदूरोंको अतिरिक्त अन्नकी जब्तीकी व्यवस्थासे किसानोंसे खाद्य–सामग्री मिलती थी ।

अब यह आधार पर्याप्त न था ।

देशकी रक्षाके लिये सोवियत सरकारको किसानोंसे सभी फ़ालतू (अतिरिक्त—सं.) अन्न जब्त कर लेना पड़ा था । फालतू अन्नकी ज़ब्तीकी व्यवस्थाके बिना, युद्धकालीन कम्युनिज़्मके बिना, गृहयुद्धमें विजय असंभव होती । युद्ध और हस्तक्षेपके कारण यह नीति आवश्यक हो गयी थी । परन्तु युद्ध बन्द हो जानेपर जब जमींदारोंके लौटनेकी कोई शंका न रही तो फालतू अन्नकी ज़ब्तीकी व्यवस्थासे, फालतू अन्न देनेसे, किसान असन्तोष प्रकट करने लगे और इस बातकी माँग करने लगे कि उन्हें काफी पक्का माल दिया जाय ।

जैसा कि लेनिनने बताया था, युद्धकालीन कम्युनिज़्मकी सम्पूर्ण व्यवस्थासे किसान-हितोंकी मुठभेड़ हो गयी थी ।

असन्तोषकी भावनासे मज़दूर-वर्ग भी प्रभावित हुआ । गृहयुद्धमें सर्वहारा वर्गने लोहा लिया था; विदेशी और ग़द्दार फ़ौजोंसे तथा आर्थिक विश्रृंखलताकी तबाही और भुखमरीसे वीरता और आत्मत्यागके साथ युद्ध किया था । सबसे अच्छे, सबसे श्रेणी-सजग, आत्मत्यागी और अनुशासन माननेवाले मजदूर समाजवादी उत्साहसे प्रेरित थे । परन्तु आर्थिक व्यवस्थाके एकदम चौपट हो जानेसे मज़दूर-वर्ग भी प्रभावित हुआ । जो फैक्ट्रियाँ और कारख़ाने चल रहे थे, वे भी जब-तब ही चलते थे । जीविकाके लिये मज़दूरोंको जो भी काम सामने आये, करना पड़ता था । कभी वे सिगरेट जलानेकी डिबिया बनाते थे और कभी झोला डाले हुए गाँवोंमें अन्नके बदले अपना माल बेचते फिरते थे । सर्वहारा–एकाधिपत्यका वर्गाधार निःशक्त हो रहा था । मज़दूर बिखर रहे थे, गाँवोंको भाग रहे थे और मज़दूरोंकी हैसियत खोकर वर्ग–भ्रष्ट हो रहे थे । भूख और थकानसे कुछ मजदूरोंमें असन्तोषके चिन्ह दिखायी देने लगे थे ।

पार्टीके सामने यह आवश्यक कार्य था कि देशके आर्थिक जीवनसे सम्बन्ध रखने वाले सभी प्रश्नोंपर वह एक नयी नीति निर्धारित कर जो नयी परिस्थितिमें काम आ सके ।

और पार्टी आर्थिक विकासके प्रश्नोंपर ऐसी नीति निर्धारित करनेमें लग गयी ।

परन्तु वर्ग-शत्रुकी आँखें बन्द न थी । कठिन आर्थिक परिस्थिति और किसानोंके असन्तोषसे उसने अपना उल्लू सीधा करनेका विचार किया । ग़द्दारों और सामाजिक–क्रान्तिकारियोंकी प्रेरणासे साइबेरिया, युक्राइन और ताम्बोफ़ प्रान्त (अन्तोनोफ़की बगावत) में कुलक–विद्रोह हुए । हर रंगके क्रान्तिविरोधी लोग—मेन्शेविक, सामाजिक-क्रान्तिकारी, अराजकवादी, ग़द्दार, पूँजीवादी राष्ट्रवादी—फिर सरगर्मी दिखाने लगे । शत्रुने सोवियत शासनसे लड़नेके लिये नये दाँव–पेंच लगाये । उसने सोवियत पोशाक पहनी और " सोवियत मुर्दाबाद ! " का पुराना खोखला नारा न लगाकर उसने एक नया नारा लगाया,—" सोवियत जिन्दाबाद; कम्युनिस्ट मुर्दाबाद ! "

वर्ग–शत्रुकी नवीन कार्यनीतिका एक ज्वलन्त उदाहरण क्रोन्स्तातका क्रान्तिकारी विद्रोह था । दसवीं पार्टी कांग्रेसके एक हफ़्ते पहले मार्च १९२१ में यह आरम्भ हुआ

सामाजिक-क्रान्तिकारियों, मेन्शेविकों और विदेशी राज्योंके प्रतिनिधियोंसे मिलकर गद्दारोंने विद्रोहका नेतृत्व किया। पूँजीपतियों और जमींदारोंकी सम्पत्ति और शक्तिको पुनः प्रतिष्ठित करनेके उद्देश्यको छिपानेके लिये विद्रोहियोंने पहले "सोवियत" वाना धारण किया। उन्होंने यह नारा लगाया कि "सोवियतोंसे कम्युनिस्टोंको निकाल बाहर करो!" क्रान्ति-विरोधियोंने प्रयत्न किया कि नामचारको सोवियतोंकी जय बोलकर सोवियत शासनका ध्वंस करनेके लिये वे निम्न-पूँजीवादी जनताके असन्तोषका उपयोग करलें।

परिस्थितियोंसे—जहाजी मल्लाहोंके निम्न श्रेणीके होनेसे, क्रोन्स्तातमें बोल्शेविक संगठनकी निर्बलतासे—क्रोन्स्तात विद्रोहके फूटनेमें सरलता हुई। जिन मल्लाहोंने अक्तूबर क्रान्तिमें भाग लिया था, वे प्रायः सभी मोर्चेपर लाल फौजकी पाँतिमें वीरतापूर्वक लड़ रहे थे। जहाजोंमें नये आदमी भर्ती हुए थे जिन्हें क्रान्तिकी पाठशालामें शिक्षा न मिली थी। ये लोग कच्चे और ठेठ किसान थे जिनमें फालतू अन्नकी जब्तीकी व्यवस्थासे असन्तोष था। और क्रोन्स्तातका बोल्शेविक संगठन अनेक बार फ़ौजी भर्तीके कारण बहुत क्षीण हो गया था। इससे सामाजिक-क्रान्तिकारियों, मेन्शेविकों और गद्दारोंको क्रोन्स्तात में घुसने और उसपर अधिकार जमा लेनेका अवसर मिला।

विद्रोहियोंको एक प्रथम श्रेणीका दुर्ग मिल गया, एक जहाजी बेड़ा हाथ लग गया, और ढेरके ढेर अस्त्र-शस्त्र और युद्ध सामग्री मिल गयी। अन्तरराष्ट्रीय क्रान्तिविरोधी फूले न समाये परन्तु उनका हर्षातिरेक क्षणिक था। सोवियत सैनिकोंने शीघ्र ही विद्रोहका दमन कर दिया। पार्टीने क्रोन्स्तात विद्रोहियोंका दमन करनेके लिये अपनी श्रेष्ठ संतान को, कॉ. वोरोशिलौफके नेतृत्वमें दसवीं पार्टी कांग्रेसके प्रतिनिधियोंको, भेजा। लाल सैनिक क्रोन्स्तातकी ओर पतली बर्फके ऊपर होते हुए बढ़े। कई जगह बर्फ टूट गयी और बहुतसे डूब गये। क्रोन्स्तातके प्रायः दुर्भेद्य दुर्गोंको एकबारगी हल्ला बोलकर ले लेना था। परन्तु क्रान्तिके प्रति वफ़ादारीकी, सोवियतोंके लिये जानपर खेलनेवाली वीरताकी, जीत हुई। लाल सैनिकोंने हल्ला बोलकर क्रोन्स्तातपर अधिकार कर लिया। क्रोन्स्तातके विद्रोहका दमन किया गया।

२. ट्रेड यूनियनोंपर पार्टी द्वारा विचार—दसवीं पार्टी कांग्रेस—विरोधकी पराजय—नवीन आर्थिक नीतिकी स्वीकृति।

पार्टीकी केन्द्रीय समितिने, उसके लेनिनवादी बहुमतने, स्पष्ट ही देखा कि युद्ध का अंत हो जानेपर जब देश शान्तिमय आर्थिक विकासमें लग गया है, तब युद्धकालीन कम्युनिज़्मके कठोर शासनको बनाये रखनेका कोई कारण नहीं है। इस

शासनका जन्म युद्ध और नाकेबंदीसे हुआ था।

केन्द्रीय समितिने अनुभव किया कि फालतू-जब्ती व्यवस्थाकी अब आवश्यकता न रह गयी थी वरन् अब समय आ गया था कि उसके बदले शस्य-कर लगाया जाय जिससे कि किसान फालतू अन्नके अधिकांशका स्वेच्छासे उपयोग कर सकें। केन्द्रीय समितिने अनुभव किया कि इस तरहसे कृषिको पुनर्जीवित करना संभव होगा, उद्योग-धन्धोंके विकासके लिये अनाजकी खेती और औद्योगिक फ़सलोंके विस्तारको बढ़ाना संभव होगा। इस उपायसे पक्के मालका पुनः वितरण होगा, शहरोंको खाद्य सामग्री आदि अधिक मिल सकेगी और किसानों और मजदूरोंके सहयोगके लिये एक नया आधार, एक आर्थिक आधार, बन सकेगा।

केन्द्रीय समितिने अनुभव किया कि मुख्य कार्य उद्योग-धन्धोंको पुनर्जीवित करना है। परन्तु उसका विचार था कि बिना मजदूर-वर्ग और उसके सहयोगके यह सब करना असंभव होगा। उसका विचार था कि इस कार्यमें मजदूरोंका तब सहयोग मिल सकता है जब उन्हें यह समझाया जाय कि आर्थिक विशृंखलता जनताकी वैसी ही भयानक शत्रु है जैसे हस्तक्षेप और नाकेबन्दी थे। पार्टी और ट्रेड यूनियन इस कार्यमें अवश्य सफल हो सकती हैं यदि वे मोर्चेकी तरह, जहाँ फ़ौजी हुकुमोंकी ज़रूरत थी, मजदूर–वर्गपर फ़ौजी हुकुम न चलायें वरन उसे समझा-बुझाकर प्रभावित करें।

परन्तु पार्टीके सभी मेम्बरोंका वही विचार न था जो केन्द्रीय समितिका था। शांतिमय आर्थिक निर्माणकी ओर बढ़नेमें जो कठिनाइयाँ सामने आ रही थीं, उनसे विचलित होकर विभिन्न विरोधी गुट, त्रात्स्कीपंथी, "श्रमिक-विरोध", "गरम कम्युनिस्ट", "जनवादी-मध्यवादी" आदि इधरसे उधर झोंके खाते हुए एक दूसरेसे उलझ रहे थे। पार्टीमें अब भी मेन्शेविक, सामाजिक-क्रान्तिकारी, बुन्द और बोरोतबिस्ट पार्टियोंके पुराने काफ़ी सदस्य और रूसके सीमान्त प्रदेशोंके बहुरंगी अर्द्ध-राष्ट्रवादी विद्यमान थे। इनमेंसे अधिकांश एक न एक विरोधी गुटसे जा मिले। ये लोग खरे मार्क्सवादी न थे; वे आर्थिक विकासके नियमोंसे अनभिज्ञ थे; उन्हें लेनिनवादी पार्टीकी पाठशालामें शिक्षा न मिली थी। उनके रहनेसे विरोधी गुट और भी झोंके खाते और एक दूसरेसे उलझते रहे। उनमेंसे कुछका विचार था कि युद्धकालीन कम्युनिज़्मके कठोर शासनमें ढील डालना गलती होगी वरन् इसके विपरीत "लगाम को ज़रा और खींचना चाहिये।" कुछका विचार था कि पार्टी और शासनको आर्थिक पुनर्संगठनके कार्यसे अलग रहना चाहिये और यह सब काम ट्रेड यूनियनोंपर छोड़ देना चाहिये।

यह स्पष्ट था कि पार्टीके कुछ गुटोंमें जब इस तरहकी उलझन है तब वाद–विवादके प्रेमी, एक न एक तरहके विरोधी "नेता" पार्टीको विवाद करनेके लिये अवश्य बाध्य करेंगे। यही हुआ भी।

विवाद आरम्भ हुआ इस बातको लेकर कि ट्रेड यूनियनोंका क्या कार्य है, यद्यपि ट्रेड यूनियनोंका कार्य उस समय पार्टी–नीतिकी मूल समस्या थी।

इस विवादका आरंभ, लेनिनसे और केन्द्रीय समितिके लेनिनवादी बहुमतसे युद्धका आरम्भ, त्रात्स्कीने किया। नवंबर १९२० के आरम्भमें पाँचवी अखिल रूसी ट्रेड यूनियन कान्फ्रेंस हुई। इसमें आये हुए कम्युनिस्ट प्रतिनिधियोंकी एक बैठकमें स्थितिको और भी शोचनीय बनानेकी इच्छासे त्रात्स्कीने "रास खींचने" और "ट्रेड यूनियनोंमें फुर्ती लाने" के सन्दिग्ध नारे लगाये। त्रात्स्कीने माँग की कि ट्रेड यूनियनोंको तुरन्त "सरकारी रूप दे दिया जाय।" मज़दूर-वर्गसे व्यवहार करनेमें वह समझाने-बुझानेका विरोधी था। वह चाहता था कि ट्रेड यूनियनोंमें सैनिक उपायोंसे काम लिया जाय। ट्रेड यूनियनोंमें जनवादके प्रसारका वह विरोधी था और यह न चाहता था कि ट्रेड यूनियन संस्थाएँ निर्वाचित हों।

समझाने-बुझानेके उपायोंके बदले, जिनके बिना मज़दूर-संगठनोंकी कार्यवाही कल्पनातीत है, त्रास्कीका कहना था कि दबाव और हुकूमतसे ही काम लिया जाय। ट्रेड यूनियनोंमें जहाँ भी त्रात्स्कीपंथी महत्वपूर्ण पदोंपर थे, वहाँ उन्होंने यह नीति बरती, झगड़े-बखेड़े किये, फूटके बीज बोये और ट्रेड यूनियनोंके मनोबलको क्षीण किया। त्रात्स्की-पंथी अपनी नीतिसे आम गैर-पार्टी मज़दूरोंको पार्टीकी तरफ़से भड़का रहे थे और मज़दूर-वर्गमें फूट डाल रहे थे।

वास्तवमें ट्रेड यूनियन-सम्बन्धी विवाद ट्रेड यूनियन प्रश्नके घेरेमें ही बन्द नहीं रहा। जैसा कि रूसी कम्युनिस्ट (बोल्शेविक) पार्टीकी केन्द्रीय समितिके १८ जनवरी १९२५ के अधिवेशनमें कहा गया था, विवादकी मूल समस्या यह थी कि,—

> "किसानोंके प्रति, जो युद्धकालीन साम्यवादका विरोध कर रहे थे, कौन-सी नीति बरती जाय, गैर-पार्टी मज़दूर-समुदायके प्रति कौन-सी नीति बरती जाय और जब गृहयुद्ध समाप्त हो रहा था, तब साधारणतः जनताके प्रति पार्टीका क्या रुख हो।" **[सोवियत संघकी कम्युनिस्ट (बोल्शेविक) पार्टीका प्रस्ताव—रूसी सं., खं. १, पृ. ६५१]**

त्रात्स्कीकी बनायी हुई लीकपर दूसरे पार्टी-विरोधी गुट—"श्रमिक-विरोध" (श्लियाप्निकौफ़, मेद्वेदेफ़, कोलोन्ताई आदि), "जनवादी-मध्यवादी" (साप्रोनौफ़, द्रोब्निस, बोगुस्लावस्की, ओसिन्स्की, व स्मिर्नौफ़ आदि), "गरम कम्युनिस्ट" (बुख़ारिन प्रिओब्राजेन्स्की) भी चल पड़े।

"श्रमिक-विरोध" ने यह नारा लगाया कि देशकी समस्त आर्थिक व्यवस्थाका संचालन एक "अखिल रूसी उत्पादक कांग्रेस" को सौंप दिया जाय। वे चाहते थे कि पार्टीकी भूमिका नगण्य हो जाय। आर्थिक विकासमें सर्वहारा-एकाधिपत्यके महत्वको वे अस्वीकार करते थे। "श्रमिक विरोध" का कहना था कि ट्रेड यूनियनोंके और सोवियत शासन तथा कम्युनिस्ट पार्टीके हितोंमें विरोध है। उनका कहना था कि मज़दूर-वर्गके संगठनका उच्चतम रूप ट्रेड यूनियन है न कि पार्टी। "श्रमिक-विरोध" मूलतः एक अराजकवादी-संघवादी पार्टीविरोधी गुट था।

"जनवादी-मध्यवादी" चाहते थे कि गुटों और दलबंदीके लिये पूर्ण स्वच्छंदता हो। त्रात्स्कीपंथियोंकी तरह "जनवादी-मध्यवादी" भी सोवियतों और ट्रेड यूनियनोंमें पार्टीके नेतृत्वको शिथिल कर देना चाहते थे। लेनिनने "जनवादी-मध्यवादियों" को "गला फाड़कर चीखनेवालों" का गुट कहा था और उनके दृष्टिकोणको सामाजिक-क्रान्तिकारी-मेन्शेविक दृष्टिकोण बताया था।

लेनिन और पार्टीसे लड़नेमें बुखारिनने त्रात्स्कीकी सहायता की। प्रिओब्राजेन्स्की, सेरेबिआकोफ़, और सोकोलनिकोफ़के साथ बुखारिनने एक "बिचवानी गुट" बनाया। यह दल निकृष्टतम गुटबाज त्रात्स्कीपंथियोंके लिये ढालका काम करता था और उनकी रक्षा करता था। लेनिनने कहा था कि बुखारिनने अपने व्यवहारमें "सैद्धान्तिक पतनकी इति" कर दी है। थोड़े ही समयमें बुखारिनपन्थी लेनिनके विरुद्ध खुले आम त्रात्स्की-पंथियोंसे जा मिले।

पार्टीविरोधी गुटोंकी जड़ त्रात्स्कीपंथी थे, इसलिये लेनिन और लेनिनवादियोंने उन्हींपर भरपूर वार किया उन्होंने ट्रेड यूनियनों और सैनिक संस्थाओंके भेदको न माननेके लिये त्रात्स्कीकी निन्दा की। उन्होंने त्रात्स्कीपंथियोंको सूचित कर दिया कि ट्रेड यूनियनोंमें सैनिक उपायोंसे काम नहीं चल सकता। लेनिन और लेनिनवादियोंका दृष्टिकोण विरोधी दलोंके दृष्टिकोणसे नितान्त भिन्न था। इस दृष्टिकोणके अनुसार ट्रेड यूनियनोंको कार्यसंचालनकी पाठशाला, प्रबंधकार्यकी पाठशाला, कम्युनिज़्मकी पाठशाला कहकर उनकी व्याख्या की गयी। ट्रेड यूनियनोंके लिये यह आवश्यक था कि वे समझाने-बुझानेके उपायोंको ही अपनी समस्त कार्यवाहीका आधार बनायें। इस प्रणालीसे ही आर्थिक विशृंखलतासे लड़नेके लिये ट्रेड यूनियन आम मज़दूरोंको उभार सकती थीं और समाजवादी निर्माणके काममें लगा सकती थीं।

विरोधी दलबन्दीसे लड़नेमें पार्टी-संगठनोंने लेनिनका समर्थन किया। मॉस्कोमें यह संघर्ष विशेष कटु हो गया। राजधानीके पार्टी-संगठनपर हावी होनेके लिये विरोधियोंने यहाँ अपना सारा जोर लगा दिया। परन्तु मॉस्कोके बोल्शेविकोंके जोशीले विरोधसे दलबन्दीकी ये चालें व्यर्थ हो गयीं। युक्राइनके पार्टी-संगठनोंमें भी कटु संघर्ष उत्पन्न हो गया। उस समय युक्राइनकी कम्युनिस्ट पार्टीकी केन्द्रीय समितिके मंत्री कॉ. मोलोतोफ़ थे। उनके नेतृत्वमें युक्राइनके बोल्शेविकोंने त्रात्स्कीपंथियों और श्लियाप्निकोफ़वादियोंको परास्त कर दिया। युक्राइनकी कम्युनिस्ट पार्टी लेनिनकी पार्टीकी सच्ची समर्थक रही। बाकूमें कॉ. ओर्जोकिनिद्जेके नेतृत्वमें बोल्शेविकोंने विरोधियोंको परास्त किया। मध्य एशियामें कॉ. ए ल. कगानोविचके नेतृत्वमें पार्टीविरोधी दल परास्त किये गये।

पार्टीके सभी प्रमुख स्थानीय संगठनोंने लेनिनके दृष्टिकोणका अनुमोदन किया।

८ मार्च, १९२१ को दसवीं पार्टी कांग्रेस आरंभ हुई। इसमें ७,३२,५२१ पार्टी-मेम्बरोंके ६९४ प्रतिनिधि आये थे जिन्हें वोट देनेका अधिकार था और २९६ प्रतिनिधि ऐसे थे, जो बोल सकते थे परन्तु वोट न दे सकते थे।

कांग्रेसने ट्रेड यूनियन-सम्बन्धी विवादका सारांश स्पष्ट किया और बहुमतसे लेनिन के दृष्टिकोणका समर्थन किया।

कांग्रेसका उद्‌घाटन करते हुए लेनिनने कहा कि वाद-विवाद एक अक्षम्य विलासिता थी। विरोधियोंने सोचा था कि पार्टीमें भीतरी संघर्ष है, इसलिये उसमें फूट पड़ जायगी।

बोल्शेविक पार्टी और सर्वहारा-एकाधिपत्यके लिये पार्टीमें गुटबन्दीका होना कितना घातक है, इसका अनुभव करके दसवीं कांग्रेसने **पार्टी-एकता**की ओर विशेष ध्यान दिया। इस प्रश्नपर लेनिनने रिपोर्ट दी। कांग्रेसने सभी विरोधी गुटोंपर निन्दाका प्रस्ताव पास किया और घोषित किया कि वे "वास्तवमें सर्वहारा-क्रान्तिके वर्ग-शत्रुओं की सहायता कर रहे हैं।"

कांग्रेसने आज्ञा दी कि सभी गुट तुरन्त तोड़ दिये जायें और सभी पार्टी-संगठनों को निर्देश किया वे सतर्क होकर इस बातको देखें कि गुटबन्दी फिर न होने लगे, और जहाँ कहीं भी कांग्रेसका निर्णय न माना जाय, वहाँ विना किसी शर्तके तुरन्त लोगोंको पार्टीसे बाहर निकाल दें। कांग्रेसने केन्द्रीय समितिको यह अधिकार दे दिया कि यदि उसके सदस्य भी अनुशासन भंग करें या स्वयं गुटबन्दी करें या उसे होने दें तो उनको भी पार्टी-नियमोंके अनुसार केन्द्रीय समिति और पार्टीसे बाहर निकालने तकका दंड दिया जाय।

ये निर्णय "पार्टी-एकता" सम्बन्धी एक विशेष प्रस्तावमें सम्मिलित थे। इस प्रस्तावको लेनिनने रखा था और कांग्रेसने स्वीकार किया।

इस प्रस्तावमें कांग्रेसने सभी पार्टी-मेंबरोंको याद दिलाया कि पार्टी-पाँतिमें एकता और दृढ़ता, सर्वहारा वर्गके अग्रदलमें एकमतका होना, इस समयकी परिस्थिति में विशेष रूपसे आवश्यक था, जब दसवीं कांग्रेसके समय अनेक कारणोंसे देशकी निम्न-पूँजीवादी जनताकी अस्थिरता बढ़ गयी थी।

प्रस्तावमें कहा गया था,—

> "इसके अलावा भी, पार्टीके साधारण ट्रेड-यूनियन-सम्बन्धी विवादके पहले ही, पार्टीमें गुटबन्दीके कुछ चिन्ह दिखाई देने लगे थे। विभिन्न दृष्टिकोणवाले कुछ गुट बन गये थे जो अनेक अंशोंमें अपनेको अलग करके अपने गुटका अनुशासन क़ायम कर रहे थे। सभी श्रेणी-सजग मजदूरोंको स्पष्ट रूपसे अनुभव करना चाहिये कि पार्टीके अन्दर हर तरहकी गुटबन्दी निकृष्ट है। इसलिये पार्टी उसकी आज्ञा नहीं दे सकती। प्रत्यक्ष व्यवहारमें गुटबन्दीका अनिवार्य फल यही होता है कि दलका संगठित कार्य निःशक्त पड़ने लगता है। दूसरा अनिवार्य फल यह होता है कि पार्टीके वे दुश्मन जो इसलिये उससे लगे रहते हैं कि उसके हाथमें शासन-सूत्र है अन्दरसे ही पार्टीकी भीतरी दरारोंको चौड़ा करने और उनसे क्रान्ति-विरोधी लक्ष्य सिद्ध करनेकी बार-बार और जोर-शोरसे चेष्टा करने लगते हैं।"

उसी प्रस्तावमें कांग्रेसने आगे यह भी कहा था,—

"पूर्ण रूपसे संगत कम्युनिस्ट नीतिसे थोड़ा भी विचलित होनेसे सर्वहारा वर्गके शत्रु किस तरह लाभ उठाते हैं, इसका अति-ज्वलंत निदर्शन क्रोन्स्तातका विद्रोह है। संसारके सभी देशोंके क्रांति-विरोधियों और गद्दारोंने सोवियत-व्यवस्थाके नारे लगानेमें तत्परता दिखायी; बस वे यह चाहते थे कि इससे रूसी सर्वहारा-एकाधिपत्यका ध्वंस हो जाय। ऊपरसे सोवियत शक्तिके हितोंके नामपर सामाजिक-क्रांतिकारियों और आम पूँजीवादी क्रान्ति-विरोधियोंने क्रोन्स्तातमें रूस की सोवियत सरकारसे विद्रोह करनेके नारे लगाये। इन बातोंसे सिद्ध होता है कि गद्दार ऐसा भेस बनानेका प्रयत्न करते हैं कि वे कम्युनिस्ट या कम्युनिस्टोंसे भी "ज्यादा गरम दल" के मालूम हों। उन्हें इसमें सफलता भी मिल जाती है। उनका एकमात्र उद्देश्य यही रहता है कि रूसमें सर्वहारा-क्रान्तिके आधारस्तम्भको निःशक्त करके भूमिसात् कर दें। क्रोन्स्तात-विद्रोहके पहले पेत्रोग्रादमें बाँटे हुए मेन्शेविक पर्चोंसे भी मालूम होता है कि किस तरह मेन्शेविकोंने रूसी कम्युनिस्ट पार्टीके मतभेदसे इसीलिये लाभ उठाया कि वे क्रोन्स्तातके विद्रोहियों, सामाजिक-क्रान्तिकारियों और गद्दारोंको उभाड़कर उनकी सहायता करें। साथ ही वे यह भी कहते जाते थे कि वे विद्रोहके विरुद्ध हैं और सोवियत शक्तिके समर्थक हैं, केवल कहने भरको उससे जहाँ-तहाँ मतभेद है।"

प्रस्तावमें घोषित किया गया कि पार्टीको अपने प्रचारमें विस्तृत रूपसे समझाना चाहिये कि पार्टीकी एकताके लिये, और सर्वहारा वर्गके अग्रदलके उद्देश्योंकी एकताके लिये, यह गुटबन्दी कितनी घातक हो सकती है और यह एकता सर्वहारा-एकाधिपत्यकी सफलताके लिये कैसे अनिवार्य रूपसे आवश्यक है।

साथ ही प्रस्तावमें यह भी कहा गया था कि सोवियत शक्तिके वैरियोंने जो अपने नये दाँव-पेंच लगाये थे, पार्टीको अपने प्रचारमें उनकी विचित्रताकी भी व्याख्या करनी चाहिये।

प्रस्तावके शब्दोंमें,—

"खुले गद्दार झंडेके नीचे क्रान्तिविरोधकी विजयसे हताश होकर ये शत्रु रूसी कम्युनिस्ट पार्टीके भीतरी मतभेदसे यथासंभव लाभ उठानेका प्रयत्न कर रहे हैं। वे इस बातकी चेष्टा कर रहे हैं कि जो राजनीतिक गुट ऊपरसे सोवियत शक्तिको औरोंसे अधिक स्वीकार करनेको तैयार हैं, उनके हाथमें शासन-चक्र पहुँच जाय और इस प्रकार एक न एक तरहसे क्रान्तिविरोधी कार्य आगे बढ़ सके।" (**सो. सं. क. (बो.) पार्टीके प्रस्ताव,—रूसी सं., खंड १, पृ. ३७३-७४**)

प्रस्तावमें आगे और कहा गया था कि पार्टीको अपने प्रचारमें,—

"पिछली क्रान्तियोंसे भी शिक्षा देनी चाहिये जिनमें कि क्रान्तिविरोधियोंने अधिकतर उन निम्न-पूँजीवादी गुटोंकी सहायता की थी, जो पक्की क्रान्तिकारी

पार्टीके सबसे निकट थे। उनका उद्देश्य यही था कि क्रान्तिकारी एकाधिपत्यको निःशक्त करके उसे ध्वस्त कर दें और इस प्रकार आगे चलकर क्रान्तिविरोधियों अर्थात् पूँजीपतियों और जमींदारोंकी पूर्ण विजयके लिये मार्ग प्रशस्त कर दें।"

"पार्टी-एकता" वाले प्रस्तावसे बहुत मिलता-जुलता एक प्रस्ताव "पार्टीमें संघवादी और अराजकवादी प्रवृत्तियों" पर था। इसको भी लेनिनने रखा था और पार्टीने उसे स्वीकार किया था। इस प्रस्ताव द्वारा कांग्रेसने उस नामचारके "श्रमिक विरोध" की निन्दा की। कांग्रेसने कहा कि संघवादियों और अराजकवादियोंकी भ्रमात्मक प्रवृत्ति और कम्युनिस्ट पार्टीकी मेम्बरी दो चीज़ें हैं, जो साथ-साथ नहीं चल सकतीं; इसलिये पार्टीको ज़ोरोंसे इस प्रवृत्तिका विरोध करना चाहिये।

दसवीं कांग्रेसने वह अति महत्वपूर्ण प्रस्ताव पास किया, जिसके अनुसार फ़ालतू अन्नकी जब्तीके नियमके बदले शस्य-करकी व्यवस्था की गयी और एक **नवीन आर्थिक नीति** स्वीकृत हुई।

युद्धकालीन साम्यवाद छोड़कर नवीन आर्थिक नीतिकी स्वीकृतिसे लेनिनकी नीतिकी दूरदर्शिता और बुद्धिमानीका पुष्ट प्रमाण मिलता है।

कांग्रेसके प्रस्तावने यह नियम बनाया कि फ़ालतू अन्नकी ज़ब्तीके बदले शस्य-कर लिया जाय। ज़ब्तीकी व्यवस्थामें जितना अन्न लिया जाता था, उससे यह शस्य-कर छोटा होगा। चैतकी बुवाईके पहले हर साल यह बता दिया जायगा कि कितना अन्न कर-रूपमें लिया जायगा। कर देनेकी नियत तिथियाँ भी स्पष्ट बता दी जायँगी। कर देनेके बाद जितना भी फ़ालतू अन्न बचेगा, वह किसानका होगा और उसे उस अन्नको इच्छानुसार बेचनेकी स्वतंत्रता होगी। लेनिनने अपने भाषणमें कहा कि व्यापारकी स्वाधीनतासे देशमें पहले पूँजीवादकी पुनर्जागृति होगी। निजी व्यापार करनेकी स्वाधीनता देना आवश्यक होगा और छोटे कारबारियोंको अपना छोटा-मोटा कारबार चलानेकी स्वतंत्रता देनी होगी। परन्तु इसमें डरनेकी कोई बात नहीं है। लेनिनका विचार था कि व्यापारकी थोड़ी स्वाधीनता मिलनेसे किसानको आर्थिक प्रेरणा मिलेगी; वह पैदावार बढ़ाना चाहेगा और कृषिमें शीघ्रतासे उन्नति होगी। इस आधार पर सरकारी उद्योग-धन्धे प्रतिष्ठित हो जायँगे और व्यक्तिगत पूँजी नष्ट हो जायगी। एक बार अपनी शक्ति और साधनोंका संचय कर लेनेपर समाजके आर्थिक आधार-स्वरूप शक्तिशाली उद्योग-धंधोंका निर्माण हो सकेगा। और उस समय देशमें अवशिष्ट पूँजीवादका ध्वंस करनेके लिये उसपर प्रबल आक्रमण किया जा सकेगा।

युद्धकालीन साम्यवादने ग्राम और नगरके पूँजीवादी दुर्गको हल्ला बोलकर, सामनेसे धावा करके, ले लेनेका विचार किया था। इस धावेमें पार्टी बहुत आगे बढ़ गयी थी और अब भय यह था कि वह श्रमिक जनता से अलग न हो जाय। लेनिनका प्रस्ताव था कि थोड़ा पीछे लौट आवें, कुछ समय तक लौटकर जनताके और निकट आ जायँ,

और हल्ला बोल कर चढ़ दौड़नेके बदले धीरजसे घेरा डाल दें जिससे कि फिर धावा करनेके लिये शक्ति संचित की जा सके।

त्रात्स्कीपंथियों और दूसरे विरोधियोंका कहना था कि नयी आर्थिक नीतिका अर्थ पीछे हटना **छोड़कर और कुछ नहीं है**। यह टीका उनके उद्देश्यके अनुकूल थी क्योंकि वे पूँजीवादको पुनः प्रतिष्ठित करना चाहते थे। नयी आर्थिक नीतिकी यह बड़ी घातक और लेनिन-विरोधी टीका थी। सत्य यह है कि नीतिकी स्वीकृतिके एक वर्ष बाद ही लेनिनने ११ वीं पार्टी कांग्रेसमें कहा कि **पीछे हटनेका अंत हो गया है** और उन्होंने यह नारा लगाया,— "**व्यक्तिगत पूँजीपर धावा करनेकी तैयारी करो।**" **(लेनिन-ग्रंथावली—रू. सं., खं. २७, पृ. २१३)**

विरोधी लोग अधकचरे मार्क्सवादी और बोल्शेविक नीतिके मसलोंमें निरे मूर्ख तो थे ही, वे न तो नयी आर्थिक नीतिका मतलब समझते थे और न यह जानते थे कि उसके आरंभमें पीछे हटनेकी क्या विशेषता है। उसके अर्थकी हम ऊपर व्याख्या कर चुके हैं। जहाँ तक पीछे हटनेकी बात है, पीछे बहुत तरहसे हटा जाता है। पार्टी या फ़ौजके लिये ऐसे अवसर आते हैं जब उसे पराजित होनेसे पीछे हटना पड़ता है। ऐसे अवसरों पर पार्टी या फ़ौज इसलिये पीछे हटती है कि वह अपनेको, अपनी पाँतिको, नये युद्धोंके लिये बचा सके। नवीन आर्थिक नीतिके स्वीकृत होनेपर लेनिन इस तरहके पीछे हटनेकी बात न कह रहे थे। पराजय और पराजयकी छाया तो दूर, पार्टीने स्वयं ही गृहयुद्धमें हस्तक्षेपकारियों और गद्दारोंको परास्त किया था। लेकिन इनके सिवा ऐसे भी अवसर आते हैं जब एक विजयी पार्टी या फ़ौज अपने पीछे कोई व्यवस्थित आधार बनाये बिना बहुत आगे बढ़ जाती है। इससे भयानक संकट उत्पन्न हो जाता है। अपने आधारसे विलग न होनेके लिये एक अनुभवी पार्टी या फ़ौज ऐसे अवसरोंपर थोड़ा पीछे हटना आवश्यक समझती है। अपनी अवश्यकताओंकी पूर्तिके लिये वह अपने आधारके पास पहुँचकर उससे निकटका सम्बन्ध स्थापित करना चाहती है जिससे कि वह अधिक आत्मविश्वाससे फिर आक्रमण कर सके और उसकी सफलता निश्चित हो। नयी आर्थिक नीतिसे लेनिन इसी तरह पीछे हटे थे। कम्युनिस्ट इन्टरनेशनलकी चौथी कांग्रेसके सामने आर्थिक नीतिकी स्वीकृतिके कारणोंकी व्याख्या करते हुए लेनिनने स्पष्ट कहा था, " अपने आर्थिक आक्रमणमें हम बहुत आगे बढ़ गये थे, हमने अपने लिये उचित आधार न बनाया था; " इसलिये यह आवश्यक हो गया कि कुछ समयके लिये सुरक्षित पृष्ठ-भागकी ओर लौट चला जाय।

विरोधियोंका दुर्भाग्य यह था कि नवीन आर्थिक नीति द्वारा पीछे हटनेकी इस विशेषताको अपने अज्ञानके कारण वे आजीवन न समझ सके।

नयी आर्थिक नीतिपर दसवीं पार्टी कांग्रेसके निर्णयसे समाजवादके निर्माणके लिये मजदूरों और किसानोंमें एक दृढ़ आर्थिक सहयोग निश्चित हो गया।

यह मुख्य ध्येय कांग्रेसके एक दूसरे निर्णयसे, जातीय प्रश्नसम्बन्धी निर्णयसे, भी सिद्ध हो गया। जातीय प्रश्नपर रिपोर्ट कॉ. स्तालिनने दी। उन्होंने कहा कि हमने जातीय उत्पीड़नका अंत कर दिया है पर इतना ही पर्याप्त नहीं है। अब कर्तव्य है कि अतीतके अवशिष्ट पापोंको भी धो दिया जाय, पहलेकी उत्पीड़ित जातियोंकी आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक पुरोगामिताका अंत हो। मध्य रूसके बराबर आनेमें उनकी सहायता करनी चाहिये।

कॉ. स्तालिनने यह भी बतलाया कि जातीय प्रश्नपर लोग पार्टी-नीतिसे विलग हो कर दो तरहसे गुमराह हो रहे हैं। एक तो वे हैं जिनमें मुख्य जाति (बृहत्तर रूसी जाति) की अहम्मन्यता है और दूसरे वे हैं जिनमें स्थानीय राष्ट्रवाद है। कांग्रेसने इन दोनों तरहके गुमराहोंको कम्युनिज़्म और सर्वहारा अन्तरराष्ट्रीयवादके लिये घातक और अहितकर बताते हुए उनकी निन्दा की। साथ ही उसने अपना मुख्य प्रहार दूसरे और उससे भारी संकट अर्थात् श्रेष्ठ जातिकी अहम्मन्यताकी धारणापर किया। ज़ारशाहीमें बृहत्तर-रूसी-जातिवादियोंने ग़ैर-रूसी जातियोंके प्रति जिस मनोवृत्तिका परिचय दिया था, उसीके नाम लेवा और पानी देवा ये लोग अभी बचे हुए थे।

३. नयी आर्थिक नीतिके प्रथम फल—११ वीं पार्टी कांग्रेस—सोवियत समाजवादी प्रजातन्त्रोंके संघका निर्माण—लेनिनकी बीमारी—लेनिनकी सहकार योजना—१२ वीं पार्टी कांग्रेस।

पार्टीके अस्थिर लोगोंने नयी आर्थिक नीतिका विरोध किया। विरोधी दो तरहके थे। पहले तो कुछ "गरम" शोर मचानेवाले थे, लोमीनात्से, शात्स्किन आदि जैसे विचित्र राजनीति-विशारद, जिनका कहना था कि इस नीतिसे अक्तूबर क्रान्तिके किये-कराये पर पानी फिर गया है, सोवियत शक्तिका पतन हो गया है और पूँजीवाद पुनः प्रतिष्ठित हो गया है। राजनीतिमें अशिक्षित और आर्थिक विकासके नियमोंसे अनभिज्ञ होनेके कारण ये लोग पार्टीकी नीतिको न समझे, वरन स्वयं अपने पैर न संभालकर निराशा और निरुत्साह फैलाने लगे। इनके सिवा त्रात्स्की, रोदक, ज़िनोवियेफ़, सोकोलनीकौफ़, कामेनेफ़, श्ल्यापनीकौफ़, बुख़ारिन, राईकौफ़ आदि ठेठ पराजयवादी थे जिनका विश्वास था कि हमारे देशका समाजवादी विकास असम्भव है; इसलिये वे पूँजीवादको "सर्वशक्तिमान" समझ कर उसके सामने घुटने टेकने लगे। सोवियत देशमें पूँजीवादकी स्थितिको दृढ़ करनेकी इच्छासे वे व्यक्तिगत पूँजीके लिये बड़ी-बड़ी राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय सुविधाएँ माँगने लगे। वे चाहते थे कि आर्थिक

क्षेत्रमें सोवियत शक्तिके अनेक महत्वके स्थान व्यक्तिगत पूँजीवालोंके लिये रिक्त कर दिये जायँ और ये लोग सरकारके साझीदार होकर या उससे विशेष सुविधाएँ प्राप्त करके सम्मिलित कंपनियोंमें काम करें

ये दोनों तरहके लोग मार्क्सवाद और लेनिनवादसे दूर थे।

पार्टीने दोनोंका पर्दाफाश करके उन्हें अकेला छोड़ दिया और पराजयवादियों और हड़कम्पवादियों दोनोंकी ही तीव्र निन्दा की।

पार्टी-नीतिके इस विरोधसे फिर पता लगा कि पार्टीको अस्थिर लोगोंसे शुद्ध करनेकी जरूरत है। इसलिये १९२१ में केन्द्रीय समितिने पार्टी-शुद्धि संगठित की जिससे पार्टी यथेष्ट रूपसे दृढ़ हुई। लेनिनने सलाह दी कि पार्टीसे "बदमाशों, नौकरशाहों, बेईमान या अस्थिर कम्युनिस्टोंको और उन मेन्शेविकोंको, जिन्होंने एक नया "चेहरा" लगा लिया है परन्तु भीतरसे जो मेन्शेविक ही बने रहे हैं", निकाल बाहर किया जाय और पार्टीकी शुद्धि की जाय। (**लेनिन-ग्रंथावली—रू. सं., खं. २७, पृ. १३**)

इस शुद्धिके फलस्वरूप लगभग १,७०,००० आदमी या कुल मेम्बरोंके २५ फी सैकड़ा लोग निकाल दिये गये।

शुद्धिसे पार्टीमें बहुत दृढ़ता आयी, उसकी सामाजिक रूपरेखा उन्नत हुई, जनताका उसमें विश्वास बढ़ा, और उसके गौरवमें वृद्धि हुई। पार्टीका संगठन दृढ़तर और अनुशासन उन्नत हुआ।

नयी आर्थिक नीति सही है, यह पहले ही साल साबित हो गया। उसकी स्वीकृतिसे एक नये आधारपर मजदूर-किसान सहयोगके दृढ़ होनेमें बड़ी सहायता मिली। सर्वहारा-एकाधिपत्य अधिक शक्तिशाली हुआ। कुलकोंकी लूटपाट नेस्तनाबूद सी हो गयी। फ़ालतू-जब्तीका नियम न होनेसे मँझले किसानोंने कुलक-जत्थोंसे लड़नेमें सोवियत सरकारकी मदद की। आर्थिक क्षेत्रमें महत्वके स्थानोंको—बड़े उद्योग-धन्धों, यातायातके साधनों, बैंकों, भूमि तथा देशी-विदेशी व्यापारको सोवियत सरकारने अपने हाथमें रखा। आर्थिक क्षेत्रमें पार्टीकी निश्चित प्रगति हुई। कृषिमें शीघ्र ही उन्नति होने लगी। रेलवे और उद्योग-धन्धोंको अपनी पहली सफलताएँ प्राप्त हुई। आर्थिक पुनर्जागरण आरम्भ हो गया; उसकी गति धीमी परन्तु अविराम थी। मजदूरों और किसानोंने देखा तथा अनुभव किया कि पार्टी सही लीकपर है।

मार्च १९२२ में पार्टीकी ११ वीं कांग्रेस हुई। इसमें ५,३२,००० पार्टी मेम्बरों का प्रतिनिधित्व करनेवाले ५२२ वोट देनेवाले बोल्शेविक थे। पिछली कांग्रेसकी तुलनामें यह संख्या कम थी। १६५ प्रतिनिधि ऐसे थे जिन्हें केवल बोलनेका अधिकार था। प्रतिनिधियोंमें कमीका कारण पार्टी-शुद्धि थी जो अब तक आरम्भ हो चुकी थी।

इस कांग्रेसमें पार्टीने नयी आर्थिक नीतिके पहले वर्षके परिणामोंकी विवेचना की। इन परिणामोंके आधारसे लेनिन कांग्रेसमें कह सके कि,—

"साल भर तक हम लोग पीछे हटते रहे हैं। पार्टीके नामपर अब हमें रुक जाना चाहिये। पीछे हटनेका उद्देश्य सिद्ध हो गया है। वह अवधि समाप्त हो रही है या हो गयी है। अब हमारा उद्देश्य दूसरा है—हमें अपनी शक्ति संगठित करनी चाहिये।" (उपरोक्त—पृ. २३८)

लेनिनका कहना था कि नयी आर्थिक नीति पूँजीवाद और समाजवादके बीच प्राणपणका संघर्ष था। प्रश्न था कि जीतेगा कौन ? हम जीतें, इसके लिये मजदूर-किसान संबन्धको, समाजवादी उद्योग-धन्धों और किसानोंकी खेतीके सम्बन्धको, दृढ़ करना था। यह सम्बंध ग्राम और नगरमें मालके आदान-प्रदानको यथाशक्ति विकसित करके हो सकता था। इस उद्देश्यके लिये प्रबन्ध-कार्य और कुशल व्यापारकी कलाको सीखना था।

उस समय पार्टीके सामने समस्याओंकी जो शृंखला थी, उसमें यह व्यापारवाली कड़ी ही मुख्य थी। इस समस्याको सुलझाये बिना ग्राम और नगरके बीच मालके आदान-प्रधानकी व्यवस्थाको विकसित करना असंभव था; उसे सुलझाये बिना मजदूर-किसानोंके आर्थिक सहयोगको दृढ़ करना, कृषिमें उन्नति करना तथा उद्योग-धन्धोंको विशृंखलतासे बचाना असंभव था।

उस समय तक सोवियत व्यापार बहुत अविकसित था। व्यापार-व्यवस्था अपरिपक्व थी। कम्युनिस्टोंने व्यापार-कला अभी सीखी न थी। उन्होंने अपने दुश्मन, अर्थनीतिसे लाभ उठानेवालोंको न जाँचा था, न उनसे लड़ना सीखा था। निजी व्यापार करनेवालों या अर्थनीतिसे लाभ उठानेवालोंने सोवियत व्यापारकी अविकसित अवस्थासे लाभ उठाकर सूती कपड़ों और दूसरी साधारण आवश्यकताकी वस्तुओंके व्यापारको अपने हाथमें कर लिया था। सहकारी और सरकारी व्यापारका संगठन एक अति महत्वपूर्ण कार्य हो गया था।

११ वीं कांग्रेसके बाद आर्थिक क्षेत्रमें दूने उत्साहसे काम होने लगा। हालकी फ़सल खराब हो जानेसे जो बातें पैदा होगयी थीं, उनका सफलतापूर्वक निराकरण किया गया। किसानोंकी खेती शीघ्रतासे चेतने लगी। रेलवेका काम ठीकसे चलने लगा। कल-कारखाने अब अधिक संख्यामें चालू होगये।

अक्तूबर १९२२ में सोवियत प्रजातंत्रने एक महान विजयका उत्सव मनाया। सोवियत राजमें व्लादीवास्तौक ही विदेशी आततायियोंके हाथमें रह गया था; इसे लाल फ़ौज और सुदूर पूर्वके छापेमार सैनिकोंने जापानियोंके हाथसे छीन लिया था।

सोवियत प्रजातंत्रकी संपूर्ण भूमि हस्तक्षेपकारियोंसे पाक हो गयी थी। समाजवादी निर्माण और राष्ट्रीय रक्षाकी माँग थी कि सोवियत जनता दृढ़तर सम्बन्ध सूत्रमें बँधे। इसलिये अब यह आवश्यकता उत्पन्न हुई कि सोवियत प्रजातंत्रोंको एक ही संघ-शासनमें दृढ़तासे बाँधा जाय। समाजवादके निर्माणके लिये जनताकी समग्र शक्तियोंको एकत्र करना था। देशको अभेद्य बनाना था। देशकी हर जातिके सर्वतोमुखी विकासके

लिये परिस्थितियाँ उत्पन्न करनी थीं। इसके लिये यह आवश्यक था कि सभी सोवियत जातियाँ दृढ़तर सम्बन्ध सूत्रमें बद्ध हों।

दिसंबर १९२२ में पहली अखिल संघकी सोवियत कांग्रेस हुई। इसमें लेनिनके प्रस्तावपर सोवियत जातियोंकी इच्छाके आधारपर उनका शासन-संघ बनाया गया जिसका नाम हुआ सोवियत समाजवादी प्रजातंत्र संघ (सो० स० प्र० स०)। पहले सोवियत संघमें रूस, कॉकेशस, युक्राईन तथा वायलोरूसके सोवियत संघबद्ध समाजवादी प्रजातंत्र थे। कुछ दिन बाद मध्य एशियामें—उज्बेक, तुर्कमान और ताजिक—तीन स्वतंत्र संयुक्त सोवियत प्रजातंत्र बनाये गये। ये सब प्रजातंत्र अब स्वेच्छा और समानताके आधारपर सोवियत राज्योंके एक ही संघमें आबद्ध हो गये हैं; इन सबको सोवियत संघसे स्वतंत्रतापूर्वक अलग होनेका पूर्ण अधिकार है।

सोवियत समाजवादी प्रजातंत्रोंका निर्माण जातीय प्रश्नपर बोल्शेविक पार्टीकी लेनिनवादी-स्तालिनवादी नीतिकी महान् विजय थी। उससे सोवियत शक्ति दृढ़ हुई।

नवम्बर १९२२ में मॉस्को सोवियतके एक अधिवेशनमें लेनिनने एक भाषण दिया जिसमें उन्होंने सोवियत शासनके पाँच वर्षोंके इतिहासकी विवेचना की। उन्होंने इस बातपर दृढ़ विश्वास प्रकट किया कि "नवीन आर्थिक नीतिका रूस समाजवादी रूस बन जायगा।" देशके लिये उनका यह अंतिम भाषण था। उसी शरद् ऋतुमें पार्टीपर एक महान् विपत्ति आगयी; लेनिन बुरी तरह बीमार पड़ गये। उनकी बीमारी सम्पूर्ण पार्टी और श्रमिक जनताके लिये असह्य और व्यक्तिगत शोककी बात थी। अपने प्रिय नेताके जीवनकी चिन्तामें सबके हृदय चिन्तित थे। परन्तु बीमारीमें भी लेनिनने अपना काम बन्द नहीं किया। बीमार पड़ जानेपर उन्होंने कई बहुत महत्वपूर्ण लेख लिखे। अपने इन अंतिम लेखोंमें उन्होंने पिछले कार्यकी विवेचना की; और समाजवादी निर्माणके उद्देश्यमें किसानोंका सहयोग प्राप्त करके अपने देशमें समाजवादको निर्मित करनेकी उन्होंने एक योजना बनायी। इसीमें समाजवादके निर्माण-कार्यमें किसानोंका सहयोग प्राप्त करनेके लिये उन्होंने अपनी सहकार-योजना भी रखी थी।

लेनिनकी दृष्टिमें सहकार-समितियाँ साधारण रूपसे और कृषिसम्बन्धी सहकार-समितियाँ विशेष रूपसे, संक्रमणका साधन थीं। यह संक्रमण छोटी और निजी किसानीसे बड़े-बड़े कृषि-संघों या पंचायती खेतोंकी ओर था। यह ऐसा साधन था जो लाखों किसानोंके लिये सुलभ तथा बोधगम्य था। लेनिनने बताया कि अपने देशमें कृषि-विकासके लिये हमें इस मार्ग पर चलना था कि पहले सहकार-समितियों द्वारा किसानोंको समाजवादके निर्माण-कार्यमें खींच लिया जाय; फिर किसानीमें क्रमशः पंचायती खेतीके सिद्धान्तका प्रवेश कराया जाय और यह सिद्धान्त पहले गल्लेको बेचनेमें लागू किया जाय और फिर उसके पैदा करनेमें। लेनिनका विचार था कि सर्वहारा-एकाधिपत्य और मजदूर-किसान सहयोग स्थापित हो जानेपर, किसानोंके सर्वहारा-नेतृत्वके स्थिर हो जानेपर, और समाजवादी उद्योग-व्यवस्थाके चालू होनेपर, अपने देशमें पूर्ण समाज-

वादी आधार पर समाजका निर्माण करनेके लिये सहकार-व्यवस्था एक साधन होगी जो लाखों किसानोंको समेटकर अपना उचित और दृढ़ संगठन बना देगी।

अप्रैल १९२३ में पार्टीकी १२ वीं कांग्रेस हुई। बोल्शेविकोंने जबसे शासन-सूत्र अपने हाथमें लिया था, तबसे यह पहली कांग्रेस थी जिसमें लेनिन उपस्थित न हो सके थे। कांग्रेसमें ३,८६,००० पार्टी मेम्बरोंकी ओरसे ४०८ मताधिकारवाले प्रतिनिधि आये थे। पहली कांग्रेसमें जितने पार्टी मेम्बरोंका प्रतिनिधित्व हुआ था, उससे यह संख्या कम थी। इस कमीका कारण यह था कि बीचमें पार्टी-शुद्धिका काम चलता रहा था और उसके फलस्वरूप काफ़ी पार्टी-मेम्बर निकाल दिये गये थे। ४१७ प्रतिनिधियोंको बोलने का अधिकार था, परन्तु वे वोट न दे सकते थे।

अपने लेखों और पत्रोंमें लेनिनने जिन बातोंकी सिफ़ारिश की थी, उन्हें १२ वीं पार्टी-कांग्रेसने अपने निर्णयोंमें समन्वित कर लिया।

कांग्रेसने उन लोगोंकी तीव्र भर्त्सना की जो समझ बैठे थे कि नवीन अर्थनीतिका यह अर्थ है कि हम समाजवादी लक्ष्यसे पीछे हट रहे हैं, पूँजीवादको आत्मसमर्पण कर रहे हैं; और जो इस बातका समर्थन करते थे कि पूँजीवादी बेड़ियाँ फिर पहन ली जायँ। रादेक और क्रासिन, त्रात्स्कीके इन दो अनुयायियोंने कांग्रेसमें इस तरहके प्रस्ताव किये थे। उनका कहना था कि हम विदेशी पूँजीवादियोंकी सहज कृपाके भरोसे अपनेको छोड़ दें और सोवियत राजके लिये जो उद्योग-धंधे संजीवन बूटीकी तरह हैं, उन्हें विशेष सुविधाओंके बहाने उन पूँजीवादियोंको समर्पित कर दें। उनका कहना था कि अक्तूबर क्रान्तिसे ज़ार सरकारके जो कर्ज़े रद्द कर दिये गये थे, वे अब भरे जायें। पार्टीने इन पराजयवादी प्रस्तावोंको विश्वासघात कहकर उनकी निन्दा की। उसने सुविधाएँ देनेकी नीतिको अस्वीकार नहीं किया परन्तु वह ऐसी सुविधाएँ उन्हीं उद्योग-धन्धोंमें और उसी हद तक देनेके पक्षमें थी, जिनमें और जहाँ तक सोवियत राजके लाभकी आशा थी।

बुख़ारिन और सोकोलनीकौफ़ने कांग्रेस होनेके पहले ही यह प्रस्ताव किया था कि विदेशी व्यापारके ऊपरसे सरकारी एकाधिकार हटा लिया जाय। इस प्रस्तावका आधार यह भावना भी थी कि नवीन अर्थनीतिका मतलब है पूँजीवादके आगे आत्म-समर्पण। लेनिनने बुख़ारिनको मुनाफ़ाख़ोर, अर्थनीतिसे लाभ उठानेवालों और कुलकोंका समर्थक कहा था। विदेशसे व्यापारपर सरकारी एकाधिकार हटानेके सभी प्रयत्नोंको १२ वीं कांग्रेसने व्यर्थ कर दिया।

कांग्रेसने त्रात्स्कीके पार्टी पर एक घातक किसान-सम्बन्धी नीति लादनेके प्रयत्न को भी व्यर्थ कर दिया। उसने किसानोंकी छोटी खेतीकी ओर भी ध्यान दिलाया और कहा कि यह एक वास्तविक सत्य है जिसे आँखोंसे ओझल नहीं किया जा सकता। उसने ज़ोरदार शब्दोंमें कहा कि छोटे और बड़े दोनों ही तरहके उद्योग-धन्धोंका विकास कृषक जनताके हितोंके प्रतिकूल न होना चाहिये वरन् समग्र श्रमिक जनताकी हित-साधनाके लिये उसे किसानोंसे एक दृढ़ सम्बन्ध स्थापित करके आगे बढ़ना चाहिये। ये निर्णय

त्रात्स्कीका मुँह बन्द करनेके लिये थे जिसका कहना था कि हमें किसानोंका शोषण करके अपने उद्योग-धन्धोंका निर्माण करना चाहिये। वह वास्तवमें मजदूर-किसान सहयोग की नीतिको स्वीकार ही न करता था।

साथ ही त्रात्स्कीका कहना था कि पुतिलौफ़ और ब्रियान्स्क जैसे बड़े कारखानोंको, जो देशरक्षाके लिये महत्वपूर्ण थे, बंद कर देना चाहिये क्योंकि उनसे लाभ न होता था। कांग्रेसने त्रात्स्कीके इन प्रस्तावोंको सरोष अस्वीकृत कर दिया।

कांग्रेसको भेजे हुए लेनिनके लिखित प्रस्तावपर १२ वीं कांग्रेसने पार्टीकी केन्द्रीय नियंत्रण-समिति और मजदूर-किसान निरीक्षण समितिको एक संस्था बना दिया। इस संयुक्त संस्थाको दृढ़ करने और हर तरहसे सोवियत शासन-तंत्रको उन्नत करनेके महत्वपूर्ण कार्य सौंपे गये।

कांग्रेसके विचारास्पद प्रश्नोंमें एक महत्वपूर्ण प्रश्न जातिसम्बन्धी था, जिसपर कॉ. स्तालिनने रिपोर्ट दी। कॉ. स्तालिनने जातीय प्रश्नपर हमारी नीतिके अन्तर-राष्ट्रीय महत्वपर जोर दिया। पूरब और पच्छिमकी पीड़ित जनताके लिये सोवियत संघ वह आदर्श था जहाँ जातीय उत्पीड़नका अंत कर दिया गया है और जहाँ जातीय समस्या हल कर दी गयी है। उन्होंने बताया कि सोवियत संघकी जनताकी आर्थिक एवं सांस्कृतिक विषमताका अन्त करनेके लिये जोरदार उपायोंसे काम लेना चाहिये। जातीय प्रश्न पर वृहत्तर रूसी जातिकी अहम्मन्यता और स्थानीय पूँजीवादी राष्ट्रवादकी विच्युतियों से डट कर लड़नेके लिये उन्होंने पार्टीका आह्वान किया।

कांग्रेसमें राष्ट्रवादी गुमराहोंका और अल्पसंख्यक जातियोंके प्रति उनकी वृहत्तर जातिवाली नीतिका पर्दाफाश हो गया। उस समय जॉर्जियाके राष्ट्रवादी गुमराह म्दिवानी आदि पार्टीका विरोध कर रहे थे। पहले कॉकेशसकी जातियोंमें मैत्री-व्यवहार बढ़ाने और उनका संघ बनानेके वे विरुद्ध थे। ये गुमराह जॉर्जियाकी अन्य जातियोंसे ठेठ वृहत्तर-जातिकी अहंभावना वाले लोगोंकी तरह ही व्यवहार कर रहे थे। वे तिफलिस से ग़ैर-जॉर्जियन लोगोंको, विशेषकर आर्मीनियनोंको सामूहिक रूपसे बाहर निकाल रहे थे। उन्होंने एक क़ानून बना दिया था कि जॉर्जियन औरतें ग़ैर-जॉर्जियन लोगोंसे ब्याह करनेपर अपनी नागरिकतासे हाथ धो बैठेंगी। त्रात्स्की, रादेक, बुख़ारिन, स्क्रिपनीक और राकोव्स्कीने जॉर्जियाके राष्ट्रीय गुमराहोंका समर्थन किया।

काँग्रेसके थोड़े ही दिन बाद जातीय प्रश्नपर विचार करनेके लिये जातीय प्रजा-तन्त्रोंसे पार्टी-कार्यकर्ताओंकी एक विशेष कांफ्रेन्स बुलायी गयी। यहाँपर सुल्तान गालियेफ़ आदि तातार पूँजीवादी-राष्ट्रवादियोंके एक गुटका और फ़ैजुल्ला, ख़ोजायेफ़ आदि उज्बेक राष्ट्रवादी गुमराहोंके एक गुटका भंडाफोड़ हो गया।

१२ वीं पार्टी कॉंग्रेसने पिछले दो वर्षोंमें नवीन आर्थिक नीतिके परिणामोंकी विवेचना की। ये परिणाम बढ़ावा देनेवाले थे और उनसे अंतिम विजयमें विश्वास दृढ़ होता था।

कॉ. स्तालिनने काँग्रेसमें कहा था,—

" हमारी पार्टी संयुक्त और दृढ़ बनी रही है। एक महान परिवर्तनकी कसौटी पर वह परखी जा चुकी है और अपनी विजय-पताका फहराती हुई आगे बढ़ रही है।"

४. आर्थिक पुनर्संगठनकी कठिनाइयोंसे युद्ध—लेनिनकी बीमारी से लाभ उठाकर त्रात्स्कीपंथियोंकी कार्यवाहीमें सरगर्मी—पार्टीमें नया विवाद—त्रात्स्कीपंथियोंकी पराजय—लेनिनकी मृत्यु—लेनिन-'भर्ती'—१३ वीं पार्टी कांग्रेस।

देशकी आर्थिक व्यवस्थाको प्रतिष्ठित करनेके लिये जो संघर्ष हुआ, उसके पहले वर्षोंमें ही यथेष्ट सफलता प्राप्त हुई। १९२४ तक सभी क्षेत्रोंमें प्रगति दिखायी देने लगी। १९२१ से खेतिहर भूमिमें काफ़ी विस्तार हो गया था और किसानोंकी खेती में बराबर उन्नति हो रही थी। समाजवादी उद्योग-धन्धोंका विकास और प्रसार हो रहा था। मजदूर-वर्गकी संख्यामें काफ़ी वृद्धि हो गयी थी। मजदूरी बढ़ गयी थी। १९२०-२१ की तुलनामें मज़दूरों और किसानोंके लिये जीवन सरल और सुन्दर हो गया था।

परन्तु आर्थिक विश्रृंखलताके चिन्ह अभी वर्तमान थे। उद्योग-धन्धे युद्ध-पूर्वके स्तरसे नीचे थे और उनका विकास देशकी माँगसे अब भी बहुत पीछे था। १९२३ के अन्तमें बेकारोंकी संख्या लगभग १० लाखके थी। देशकी आर्थिक व्यवस्थाकी प्रगति इतनी धीमी थी कि वह बेकारीको दूर न कर सकती थी। तैयार मालकी बहुत ज्यादा क़ीमत होनेसे व्यापारका विकास रुक रहा था। इन बड़ी-बड़ी क़ीमतोंको नवीन अर्थनीतिसे लाभ उठानेवाले और व्यापारी संस्थाओंमें उनके गुर्गे देशपर लाद रहे थे। इस कारण सोवियत रूबलके मूल्यमें भारी अस्थिरता आ गयी और उसका मूल्य गिरने लगा। इन सब बातोंसे मजदूरों और किसानोंकी दशा सुधरनेमें बाधा पड़ती थी।

१९२३ की शरत्में हमारी औद्योगिक और व्यापारी संस्थाओंने मूल्यसम्बन्धी सोवियत नीतिका उल्लंघन किया। इससे आर्थिक कठिनाइयाँ कुछ बढ़ गयीं। तैयार माल और ग़ल्लेकी क़ीमतोंमें आकाश-पातालका अन्तर पड़ गया। ग़ल्लेकी कीमत कम थी; उधर तैयार मालकी क़ीमत आसमानसे बातें करती थी। उद्योग-धन्धोंका ऊपरी ताम-झाम इतना महँगा कर दिया गया था कि मालकी क़ीमत अपने आप बढ़ जाती थी। किसानोंकी ग़ल्लेसे होनेवाली आमदनी तेज़ीसे घटने लगी। "मरेको मारे शाह मदार" की कहावत चरितार्थ करते हुए त्रात्स्कीपंथी पियाताकोफ़ने, जो उस समय आर्थिक व्यवस्थाकी प्रधान समितिमें था, प्रबन्धकों और निर्देशकोंको यह दुष्टतापूर्व आज्ञा दे दी कि तैयार मालकी

बिक्रीसे वे जितना मुनाफ़ा खा सकें खायें और जहाँ तक क़ीमतें चढ़ा सकें, चढ़ायें। इस नीतिका ऊपरी उद्देश्य यह था कि उद्योग-धन्धोंका विकास हो। वास्तवमें मुनाफ़ाखोरीकी यह नीति उद्योग-धन्धोंके आधारको संकुचित करके उसे खोखला ही कर सकती थी। तैयार मालको खरीदनेसे किसानोंको कोई लाभ न था, इसलिये उन्होंने उसे खरीदना बन्द कर दिया। इसका फल यह हुआ कि उद्योग-धन्धोंके लिये विक्रय-संकट उत्पन्न हो गया। मज़दूरी देनेमें कठिनाई होने लगी। इससे मज़दूरोंमें असन्तोष पैदा हुआ। कुछ कारखानोंमें पिछड़े हुए मज़दूरोंने काम भी बन्द कर दिया।

केन्द्रीय समितिने इन कठिनाइयों और असंगतियोंको दूर करनेके उपाय किये। विक्रय-संकटको दूर करनेका उपचार किया गया। बिक्रीके मालका दाम घटा दिया गया। यह निर्णय किया गया कि मुद्रासम्बन्धी सुधार हो और दृढ़ और स्थायी मुद्रा-चेर्वोनित्सको अपनाया जाय। साधारण रूपसे फिर मज़दूरी दी जाने लगी। निजी व्यापार करनेवालों और मुनाफ़ाखोरोंका अन्त करनेके लिये तथा सरकारी और सहकारी मार्गोंसे व्यापारका विकास करनेके लिये उपाय निश्चित किये गये।

अब जिस बातकी जरूरत थी, वह यह कि हर आदमी इस सार्वजनिक प्रयत्नमें भाग ले, कमर कस कर काममें जुट जाय। जो पार्टीके प्रति वफादार थे, उन्होंने इसी तरह सोचा और काम भी किया। लेकिन त्रात्स्कीपंथियोंकी राह न्यारी थी। अपनी भयानक बीमारीके कारण लेनिन असमर्थ हो गये थे; इन लोगोंने उनकी बीमारीसे लाभ उठाकर पार्टी और उसके नेतृत्वपर एक नया आक्रमण आरम्भ कर दिया। उन्होंने सोचा कि पार्टी और उसके नेतृत्वको ढेर कर देनेका यह अच्छा अवसर आया है। पार्टीके विरुद्ध उन्हें जो भी हाथ लगता दिखायी दिया, उसे ही उन्होंने उसके सिर पर दे मारा,—१९२३ की शरत्‌में जर्मनी और बल्गेरियामें क्रान्तिकी पराजय, घरेलू आर्थिक कठिनाइयाँ, और लेनिनकी बीमारी। सोवियत शासनकी इस कठिन घड़ीमें, जब पार्टीका नेता रोग-शय्यापर पड़ा हुआ था, त्रात्स्कीने बोल्शेविक पार्टीपर आक्रमण आरम्भ कर दिया। पार्टीके सभी लेनिनविरोधी लोगोंको बटोरकर उसने पार्टी, उसके नेतृत्व और उसकी नीतिके विरुद्ध एक दल बना लिया। इस दलने "४६ विरोधियोंकी घोषणा" निकाली। सभी विरोधी गुट—त्रात्स्कीपंथी, जनवादी-मध्यवादी और "गरम कम्युनिस्टों" तथा "श्रमिक विरोध" के बचे-खुचे लोग—लेनिनवादी पार्टीसे लड़नेके लिये एक साथ हो गये। अपनी घोषणामें उन्होंने यह भविष्यवाणी की कि एक महान् आर्थिक संकट आनेवाला है और उसमें सोवियत शासनका अन्त हो जायगा। उन्होंने इस बातकी माँग की कि गुटों और दलोंको पूर्ण स्वच्छंदता दे दी जाय क्योंकि परिस्थितिसे बचनेका बस यही एक तरीक़ा रह गया था।

लेनिनके प्रस्तावसे जिस गुटबन्दीके लिये दसवीं पार्टी-कांग्रेसने मना किया था, उसीको फिर चेतानेके लिये यह लड़ाई की जा रही थी।

कृषि या उद्योग-धन्धोंमें उन्नति करनेके लिये, मालके वितरणमें उन्नति करनेके लिये,

अथवा श्रमिक जनताकी दशामें उन्नति करनेके लिये त्रात्स्कीपंथियोंने एक भी निश्चित प्रस्ताव नहीं किया। इस सबमें उन्हें दिलचस्पी ही न थी। उन्हें दिलचस्पी थी केवल एक बातमें कि लेनिनकी बीमारीसे लाभ उठाकर गुटबन्दीको पार्टीमें फिर हरा-भरा किया जाय, पार्टीकी नाँव खोखली कर दी जाय और उसकी केन्द्रीय समितिको बैठा दिया जाय।

४६ आदमियोंका मोर्चा बनानेके बाद त्रात्स्कीने एक पत्र प्रकाशित किया जिसमें उसने पार्टी-कार्यकर्त्ताओंको बुरा-भला कहा और पार्टीपर गंदे आक्षेप किये। इस पत्रमें त्रात्स्कीने वही पुराना मेन्शेविक राग अलापा था जिसे पार्टी उसके मुँहसे अनेक बार पहले भी सुन चुकी थी।

सबसे पहले त्रात्स्कीपंथियोंने पार्टी-कार्यकर्त्ताओंकी श्रृंखलापर आघात किया। वे जानते थे कि कार्यकर्त्ताओंकी एक दृढ़ श्रृंखलाके बिना पार्टीका जीवन असंभव है; न उसके बिना वह काम कर सकती है। विरोधियोंने प्रयत्न किया कि इस श्रृंखलाको शिथिल करके उसे तोड़ दिया जाय, पार्टी-मेम्बरोंको भड़का दिया जाय और नये मेम्बरोंको पुराने महारथियोंसे भिड़ा दिया जाय। इस पत्रमें त्रात्स्कीने उन विद्यार्थियों और नौजवान पार्टी-मेम्बरोंको उकसानेकी चेष्टा की जो त्रात्स्कीवादसे, पार्टीके युद्धके इतिहाससे, अपरिचित थे। विद्यार्थियोंको मिलानेके लिये त्रात्स्कीने उनका बखान करते हुए कहा कि वे लोग ही "पार्टीके निश्चित तापमान यंत्र" हैं और लेनिनवादी पुराने महारथी अब असमर्थ हो गये हैं। दूसरे इन्टरनेशनलके नेताओंके पतनका उल्लेख करते हुए उसने यह नीच संकेत किया कि पुराने बोल्शेविक नेताओंकी भी वही दशा हो रही है। पार्टीके ह्रासका शोर मचाकर त्रात्स्की अपने पतन और पार्टी-विरोधी अभिसन्धियोंपर पर्दा डालना चाहता था।

त्रात्स्कीपंथियोंने उन दोनों अवसरवादी लेखोंको—४६ विरोधियोंके घोषणापत्र और त्रात्स्कीके पत्रको—जिलों और पार्टी केन्द्रोंमें वितरित किया और पार्टी मेम्बरोंके सामने उन्हें विवादके लिये रखा।

उन्होंने विवाद करनेके लिये पार्टीको चुनौती दी।

दसवीं पार्टी-काँग्रेसके पहले जैसे ट्रेड यूनियन संबन्धी प्रश्नपर उन्होंने विवाद कराया था, उसी तरह उन्होंने अब पार्टीको इस साधारण विवादमें भाग लेनेके लिये बाध्य किया।

यद्यपि पार्टी देशके आर्थिक जीवनसे सम्बन्ध रखनेवाली कहीं अधिक महत्वपूर्ण समस्याओंसे उलझी हुई थी, फिर भी उसने इस चुनौतीको स्वीकार कर लिया और विवाद आरम्भ किया।

इस विवादमें संपूर्ण पार्टी ग्रस्त हो गयी। विवाद अत्यन्त कटु था। मॉस्कोमें वह सबसे तीव्र था क्योंकि राजधानीमें पार्टी-संगठन पर हावी होनेके लिये त्रात्स्कीपंथियोंने एड़ी-चोटीका जोर लगा दिया था। परन्तु विवादसे त्रात्स्कीपंथियोंको कोई लाभ न

हुआ। उससे उन्हींके मुँहपर कालिख पुत गयी। मॉस्को और सोवियत संघके अन्य भागोंमें वे पूर्ण रूपसे परास्त हुए। विश्वविद्यालयों और दफ़्तरोंके कुछ थोड़ेसे केन्द्रोंने ही त्रात्स्कीपंथियोंको वोट दिये।

जनवरी १९२४ में पार्टीने अपनी तेरहवीं कान्फ्रेन्स की। कांग्रेसने विवादके परिणामोंपर कॉ. स्तालिनकी रिपोर्ट सुनी। कान्फ्रेन्सने त्रात्स्कीपंथी विरोधकी निन्दा की और कहा कि यह मार्क्सवादको छोड़कर **निम्न-पूँजीवादी** रास्ता लेनेके बराबर है। बादमें तेरहवीं पार्टी कांग्रेस तथा कम्युनिस्ट इण्टरनेशनलकी पाँचवीं कांग्रेसने कान्फ्रेन्सके निर्णयोंका अनुमोदन किया। त्रात्स्कीवादसे लड़नेमें अन्तरराष्ट्रीय कम्युनिस्ट सर्वहारावर्गने बोल्शेविक पार्टीका समर्थन किया।

परन्तु त्रात्स्कीपंथी अपनी हरकतोंसे बाज न आये। १९२४ की शरदमें त्रात्स्कीने "अक्तूबरकी शिक्षा" नामका एक लेख प्रकाशित किया जिसमें उसने लेनिनवादकी जगह त्रात्स्कीवादको प्रतिष्ठित करनेकी चेष्टा की। हमारी पार्टी और उसके नेता लेनिनकी निन्दा छोड़कर यह कुछ न था। कम्युनिज़्म और सोवियत शासनके सभी वैरी इस निन्दात्मक लेखको लेकर टूट पड़े। बोल्शेविज़्मके वीरतापूर्ण इतिहासको इस निरंकुशतासे तोड़ा-मरोड़ा जाता देखकर पार्टीको बड़ा क्रोध आया। कॉ. स्तालिनने लेनिनवादकी जगह त्रात्स्कीवादको प्रतिष्ठित करनेके इस प्रयत्नकी निन्दा की। उन्होंने कहा कि "यह पार्टीका कर्तव्य है कि एक सैद्धान्तिक विचारधाराके रूपमें वह त्रात्स्कीवादको दफ़ना दे।"

१९२४ में प्रकाशित कॉमरेड स्तालिनकी सैद्धान्तिक रचना **लेनिनवादके मुल सिद्धांतसे** त्रात्स्कीवादकी पराजय और लेनिनवादके समर्थनमें जबरदस्त सहायता मिली। इस पुस्तकमें लेनिनवादकी कुशल व्याख्या तथा उसकी गम्भीर सैद्धान्तिक पुष्टि है। दुनियाभरके बोल्शेविकोंके हाथमें यह पुस्तक मार्क्सवादी—लेनिनवादी सिद्धान्तोंका अव्यर्थ अस्त्र थी, और आज भी है।

त्रात्स्कीवादसे लड़नेमें कॉ. स्तालिनने पार्टीको केन्द्रीय समितिके चारों ओर संगठित किया और अपने देशमें समाजवादकी विजयके लिये युद्ध करनेको उसे सचेत किया। कॉ. स्तालिनने सिद्ध किया कि भविष्यमें समाजवादकी ओर अव्याहत प्रगति निश्चित करनेके लिये त्रात्स्कीवादका सैद्धान्तिक ध्वंस आवश्यक है।

त्रात्स्कीवादसे इस समयके युद्धकी विवेचना करते हुए कॉ. स्तालिनने कहा,—

> "नवीन आर्थिक नीतिकी परिस्थितियोंमें त्रात्स्कीवादकी पराजयके बिना विजय पाना असम्भव होगा, आजके रूसको समाजवादी रूसमें परिणत करना असंभव होगा।"

परन्तु इसी समय पार्टी और मजदूर-वर्गपर एक अत्यन्त दुःखप्रद विपत्ति आ पड़नेसे पार्टीकी लेनिनवादी नीतिकी सफलताओंका प्रकाश मंद पड़ गया। २१ जनवरी, १९२४ को हमारे नेता और शिक्षक, बोल्शेविक पार्टीके निर्माता लेनिनका,

मॉस्कोके पास गोर्की नामक गाँवमें, देहान्त होगया। दुनिया भरके मजदूर-वर्गके लिये लेनिनकी मृत्यु एक हृदयविदारक घटना थी। लेनिनके समाधिसंस्कारके दिन अन्तर-राष्ट्रीय सर्वहारा वर्गने पाँच मिनट तक काम बन्द रखनेकी घोषणा की। रेलगाड़ियाँ, मिलें और कारखाने बंद होगये। जब लेनिनको समाधिस्थानकी ओर लेजाया गया, तो समस्त संसारके सर्वहारा वर्गने अपने पिता और शिक्षक लेनिनके प्रति, अपने श्रेष्ठ मित्र और रक्षक लेनिनके प्रति, अपने असह्य दुःखसे श्रद्धा प्रकट की।

लेनिनकी मृत्युसे सोवियत संघका मज़दूर-वर्ग लेनिनवादी पार्टीके चारों ओर और भी दृढ़तासे संगठित हो गया। उन शोकके दिनोंमें प्रत्येक श्रेणी-सजग मजदूरने लेनिनकी आशाओंकी पूर्ति करनेवाली कम्युनिस्ट पार्टीके प्रति अपनी धारणा स्पष्ट की। पार्टीकी केन्द्रीय समितिके पास हज़ारों मज़दूरोंने पार्टीमें भर्ती होनेके प्रार्थनापत्र भेजे। केन्द्रीय समितिने इस आन्दोलनके उत्तरमें राजनीतिक दृष्टिसे अग्रसर मज़दूरोंको सामूहिक रूपसे पार्टी-पाँतिमें आने देनेकी घोषणा की। हज़ारों मज़दूर पार्टीमें खिंच आये। ये वे लोग थे जो पार्टी और लेनिनके नामपर अपने प्राण तक देनेको तैयार थे। थोड़े ही समय में दो लाख चालीस हज़ार मज़दूर बोल्शेविक पार्टीकी पाँतिमें आ गये। यह मज़दूर-वर्ग का सबसे अग्रसर, श्रेणी-सजग, क्रान्तिकारी, साहसी और अनुशासन-बद्ध दल था। यही **लेनिन-भर्ती** थी।

लेनिनकी मृत्युसे जनतामें जो प्रतिक्रिया हुई, उससे सिद्ध हो गया कि जनताके साथ हमारी पार्टीके बन्धन कितने दृढ़ हैं और मजदूरोंके हृदयमें लेनिनवादी पार्टीने कौनसा उच्च स्थान प्राप्त कर लिया है।

लेनिनके लिये शोक मनानेके दिनोंमें, सोवियत संघकी दूसरी सोवियत कांग्रेसमें, क़ॉ. स्तालिनने पार्टीके नामपर यह भीष्म प्रतिज्ञा की,—

> "हम कम्युनिस्ट एक दूसरे ही ढाँचेके लोग हैं। हम विशेष फौलादके बने हैं। हम लोग महान सर्वहारा-सेनापति कॉ. लेनिनकी फ़ौजके सिपाही हैं। इस फ़ौजके सिपाही बननेसे बढ़कर मनुष्यके लिये दूसरा गौरव नहीं है। जिस पार्टीकी नींव डालनेवाले और नेता कॉ. लेनिन थे, उसका सदस्य कहलानेसे बढ़कर और दूसरा गौरव नहीं है।...
>
> "हमसे बिछुड़ते हुए कॉ. लेनिनने कहा था कि हम पार्टी-सदस्यताके गौरवको अक्षुण्ण बनाये रक्खें और उसकी रक्षा करें। कॉ. लेनिन, हम प्रतिज्ञा करते हैं कि हम तुम्हारी आज्ञाका सफलतासे पालन करेंगे।...
>
> "हमसे बिछुड़ते हुए कॉ. लेनिनने कहा था कि हम आँखकी पुतलीकी तरह पार्टी-एकताकी रक्षा करें। कॉ. लेनिन, हम प्रतिज्ञा करते हैं कि हम इस आज्ञा का भी सफलतासे पालन करेंगे।
>
> "हमसे बिछुड़ते हुए कॉ. लेनिनने कहा था कि हम सर्वहारा-एकाधिपत्य की रक्षा करें और उसे सुदृढ़ करें। कॉ. लेनिन, हम प्रतिज्ञा करते हैं कि इस आज्ञाका भी सफलतासे पालन करनेमें कुछ उठा न रखेंगे।...

"हमसे बिछुड़ते हुए कॉ. लेनिनने कहा था कि हम अपनी पूरी शक्तिसे मजदूरों और किसानोंके सहयोगको दृढ़ करें। कॉ. लेनिन, हम प्रतिज्ञा करते हैं कि इस आज्ञाका भी हम सफलतासे पालन करेंगे।...

"कॉ. लेनिनने हमें बार-बार बताया था कि अपने देशकी जातियोंके स्वेच्छित संघको बनाये रखना आवश्यक है, प्रजातंत्र संघके ढाँचेमें उनके भाईचारेके सहयोगको बनाये रखना आवश्यक है। हमसे बिछुड़ते हुए कॉ. लेनिनने कहा था कि हम इस प्रजातंत्र-संघको सुदृढ़ और विस्तृत करें। कॉ. लेनिन, हम प्रतिज्ञा करते हैं कि इस आज्ञाका भी हम सफलतासे पालन करेंगे।...

"कॉ. लेनिनने हमें कई बार बताया था कि लाल फ़ौजको शक्तिशाली बनाना और उसकी अवस्थामें सुधार करना पार्टीका एक अति महत्वपूर्ण कार्य है। ...तो साथियो, प्रतिज्ञा करो हम अपनी लाल फ़ौज और लाल जलसेनाको शक्तिशाली बनानेमें कुछ भी उठा न रखेंगे।...

"हमसे बिछुड़ते हुए कॉ. लेनिनने कहा था कि हम कम्युनिस्ट इण्टर-नेशनलके सिद्धान्तोंके प्रति सच्चे रहें। कॉ. लेनिन, हम प्रतिज्ञा करते हैं कि समस्त संसारकी श्रमिक जनताके इस संघ, कम्युनिस्ट इण्टरनेशनलको, सुदृढ़ और विस्तृत करनेकी हम प्राणपणसे चेष्टा करेंगे।"

अपने नेता लेनिनके प्रति, जिनकी स्मृति युग-युग तक जीवित रहेगी, बोल्शेविक पार्टीने यह प्रतिज्ञा की थी।

मई १९२४ में पार्टीने अपनी तेरहवीं कांग्रेस की। इसमें ७,३५,८८१ पार्टी मेम्बरोंकी ओरसे ७४८ मताधिकार देनेवाले प्रतिनिधि आये थे। पहली कांग्रेससे इस बार की स्पष्ट वृद्धिका कारण लेनिन-भर्तीमें लगभग दो लाख ढाई हजार नये पार्टी-मेम्बर बनने वाले लोग थे। ४१६ प्रतिनिधियोंको बोलनेका अधिकार था परन्तु वे वोट न दे सकते थे

कांग्रेसने एकमत होकर त्रात्स्कीपंथी विरोधी दृष्टिकोणका खंडन किया और बताया कि वह मार्क्सवादको छोड़कर निम्न-पूँजीवादी रास्ता अपनानेके बराबर है, लेनिनवादका "संशोधन" है। कांग्रेसने "पार्टीकी वार्ता" पर तथा "विवादके परिणामों" पर १३ वीं पार्टी कान्फ्रेन्सके निर्णयोंको स्वीकृत किया।

ग्राम और नगरके सम्बन्धोंको दृढ़ करनेके लिये कांग्रेसने आज्ञा दी कि उद्योग-धन्धोंका, मुख्यतः हल्के उद्योग-धन्धोंका, विस्तार हो। लोहे और इस्पातके उद्योग-धन्धोंके द्रुत विकासपर उसने विशेष जोर दिया।

कांग्रेसने घरेलू व्यापारके लिये एक नये जन-प्रतिनिधि विभागके निर्माणको स्वीकृत किया और व्यापारसम्बन्धी संस्थाओंके सामने यह कार्य रखा कि वे बाजारपर हावी हों और व्यापार-क्षेत्रसे व्यक्तिगत पूँजीको निकाल बाहर करें।

कांग्रेसने किसानोंको सस्ती दरपर कर्ज देनेका निर्देश किया जिससे कि देहातमें महाजन न रह जायँ।

कांग्रेसने किशानोंमें सहकार-आन्दोलनको यथासंभव विकसित करनेका निर्देश किया। उसने बताया कि गाँवोंमें यही मुख्य कार्य है।

अन्तमें कांग्रेसने लेनिन-भर्तीके व्यापक महत्व पर जोर दिया और पार्टीको ध्यान दिलाया कि नौजवान पार्टी मेम्बरोंको—विशेषकर लेनिन-भर्तीके नये मेम्बरोंको—शिक्षित करनेके लिये अधिक प्रयत्न करना अत्यावश्यक है।

५. पुनर्संगठन-युगके समाप्तिकालमें सोवियत संघ—समाजवादी निर्माण तथा एक देशमें समाजवादकी विजयका प्रश्न—ज़िनोवियेफ़-कामेनेफका "नव-विरोध"—१४ वीं पार्टी-कांग्रेस—देशके समाजवादी औद्योगीकरणकी नीति।

बोल्शेविक पार्टी तथा मजदूर-वर्गको नयी आर्थिक नीतिकी लीकपर सप्रयास बढ़ते हुए चार सालसे ऊपर हो गये थे। आर्थिक पुनर्संगठनके साहसी कार्यका अब अंत होनेवाला था। सोवियत संघकी आर्थिक और राजनीतिक शक्ति अव्याहत गतिसे बढ़ रही थी।

इस समय तक अन्तरराष्ट्रीय परिस्थितिमें परिवर्तन हो गया था। साम्राज्यवादी युद्धके बाद जनताके पहले क्रान्तिकारी आक्रमणको पूँजीवाद सह गया था। जर्मन, इटली, बल्गेरिया, पोलैंड और कुछ अन्य देशोंमें क्रान्तिकारी आन्दोलन कुचल दिया गया था। पूँजीपतियोंके इस कार्यमें अवसरवादी सामाजिक-जनवादी पार्टियोंने सहायता की थी। क्रान्तिका ज्वार अस्थायी रूपसे घटने लगा। पच्छिमी योरपमें आंशिक और अस्थायी रूपसे पूँजीवाद स्थिर होने लगा; आंशिक रूपसे पूँजीवादकी स्थितिमें दृढ़ता आ गयी। परंतु पूँजीवादकी स्थिरतासे उसकी उन असंगतियोंका अंत नहीं हो गया जो पूँजीवादी समाजको भीतरसे विदीर्ण कर रही थीं। इसके विपरीत पूँजीवादकी इस आंशिक स्थिरतासे मजदूरों और पूँजीवादियोंमें, विभिन्न देशोंके साम्राज्यवादी गुटोंमें, असंगतियाँ और तीव्र हो उठीं। पूँजीवादकी स्थिरता पूँजीवादी देशोंमें नये संकटके लिये, असंगतियोंके एक नये विस्फोटके लिये, सुरंग लगा रही थी।

पूँजीवादकी स्थिरताके साथ-साथ सोवियत-संघमें भी स्थिरता उत्पन्न हुई परन्तु स्थिरताकी ये दो क्रियाएँ मूलतः भिन्न थीं। पूँजीवादकी स्थिरता उसके एक नये संकटकी सूचना दे रही थी। सोवियत संघकी स्थिरताका अर्थ था, समाजवादी देशकी आर्थिक और राजनीतिक शक्तिमें और वृद्धि होगी।

पच्छिममें क्रान्तिकी पराजय हो जाने पर भी अंतरराष्ट्रीय क्षेत्रमें सोवियत संघकी स्थिति दृढ़ होती गयी, यद्यपि यह सही है कि उसकी गति पहलेसे मंद थी।

१९२२ में सोवियत संघको जिनोआ (इटली) में एक अन्तरराष्ट्रीय आर्थिक कान्फ्रेन्समें बुलायी गयी। पूँजीवादी देशोंमें क्रान्तिकी पराजयसे साहस पाकर जिनोआ कान्फ्रेन्समें साम्राज्यवादी सरकारोंने सोवियत प्रजातंत्रपर फिर नया दबाव डालनेकी चेष्टा की। इस बार यह दबाव कूटनीतिके रूपमें था। साम्राज्यवादियोंने सोवियत संघके सामने निर्लज्ज माँगें रखीं। उन्होंने कहा कि जो कल-कारखाने अक्तूबर क्रान्तिसे राष्ट्रकी सम्पत्ति बन गये थे वे विदेशी पूँजीपतियोंको वापस लौटा दिये जायँ। ज़ार-सरकारके कर्ज़े चुकाये जायँ। इसके बदले साम्राज्यवादी देशोंने कुछ यों ही रकम उधार देनेका वादा किया।

सोवियत संघने इन माँगोंको ठुकरा दिया।

जिनोआ कान्फ्रेन्स निष्फल हुई।

१९२३ में ब्रिटेनके वैदेशिक सचिव लार्ड कर्जनने अपने अल्टीमेटम (अन्तिम चेतावनी) में नये हस्तक्षेपकी धमकी दी। इस धमकीको भी जो मुहँतोड़ जवाब मिलना चाहिये था, वह दिया गया।

सोवियत सरकारकी शक्तिका परिचय पाकर और उसकी स्थिरतामें विश्वास जमने पर एकके बाद एक पूँजीवादी देश सोवियत संघसे राजनीतिक सम्बन्ध स्थापित करने लगे। १९२४ में ब्रिटेन, फ्रान्स, जापान तथा इटलीसे राजनीतिक सम्बन्ध पुनः स्थापित होगया।

यह स्पष्ट था कि सोवियत संघको एक लंबे अर्सेके लिये साँस लेनेका अवकाश मिला है। उसके लिये शान्तिका युग आया है।

घरेलू परिस्थिति भी बदल गयी थी। बोल्शेविक पार्टीके नेतृत्वमें मज़दूरों और किसानोंके त्यागमय प्रयत्न सफल हुए थे। देशकी आर्थिक व्यवस्थाका द्रुत विकास भी स्पष्ट था। १९२४-२५ के आर्थिक वर्षमें कृषिका उत्पादन युद्धपूर्वके स्तरका ८७% हो गया था, इस प्रकार उसके निकट पहुँच गया था। १९२५ में सोवियत संघके बड़े उद्योग-धन्धे युद्धपूर्वके स्तरका **तीन-चौथाई** उत्पादन कर रहे थे। १९२४-२५ के आर्थिक वर्षमें सोवियत संघने नये निर्माण कार्यमें ३२ करोड़ ५० लाख रूबलका मूलधन लगाया। देशमें बिजली लगानेकी योजना भी सफलतापूर्वक चालू थी। देशकी आर्थिक व्यवस्थामें महत्वके स्थानोंको समाजवाद दृढ़ कर रहा था। उद्योग-धन्धों और व्यापारमें व्यक्तिगत पूँजीसे लड़नेमें महत्वपूर्ण सफलता मिली थी।

आर्थिक प्रगतिके साथ मजदूरों और किसानोंकी दशामें उन्नति हुई। मजदूर-वर्गमें द्रुत वृद्धि हो रही थी। मजदूरी बढ़ गयी थी; वैसे ही श्रमिक-उत्पादन भी बढ़ा था। किसानोंके जीवनमें उन्नति हुई थी। १९२४-२५ में मजदूरों और किसानोंकी सरकार छोटे किसानोंकी सहायताके लिये २९ करोड़ रूबल निकाल सकी। मजदूरों और किसानोंकी दशामें उन्नति होनेसे अब उनकी राजनीतिक कार्यवाही भी बढ़ गयी। सर्वहारा-एकाधिपत्य पहलेसे और दृढ़ हो गया। बोल्शेविक पार्टीके गौरव और प्रभावमें वृद्धि हुई।

देशकी आर्थिक व्यवस्थाके पुनर्संगठनकी अवधि अब समाप्त होनेको थी। परन्तु समाजवादी निर्माणमें निरत सोवियत संघके लिये आर्थिक पुनर्संगठन ही, युद्धपूर्वके स्तर तक पहुँचना ही, पर्याप्त न था। युद्धपूर्वका स्तर तो एक पिछड़े हुए देशका स्तर था। उस मंजिलसे आगे बढ़ते जाना था। सोवियत राजको साँस लेनेका जो लंबा अवकाश मिला, उससे भावी विकासकी संभावना निश्चित हो सकी।

परन्तु इससे अब इन तमाम प्रश्नोंका तात्कालिक उत्तर देना आवश्यक हो गया कि हमारे विकास और निर्माणकी दिशा क्या होगी, उसके लक्षण क्या होंगे, सोवियत संघमें समाजवादका भविष्य क्या होगा? सोवियत संघके आर्थिक विकासको किस दिशामें चलना होगा, समाजवादकी दिशामें या अन्य किसी दिशामें? क्या हमें समाजवादी आर्थिक व्यवस्थाका निर्माण करना चाहिये और क्या हम ऐसा कर सकते हैं या किसी दूसरी आर्थिक व्यवस्थाके लिये, पूँजीवादी आर्थिक व्यवस्थाके लिये, हमारी तक़दीरमें खाद डालना ही लिखा है? क्या सोवियत संघमें समाजवादी आर्थिक व्यवस्थाके निर्माण की कोई संभावना भी है और यदि है तो क्या पूँजीवादी देशोंमें क्रान्तिके थमनेपर भी, पूँजीवादके स्थिर होनेपर भी, यह संभावना बनी रह सकती है? क्या नयी आर्थिक नीतिके आधारपर समाजवादी व्यवस्थाके निर्माणकी कोई संभावना है जब कि इस नीतिसे देशमें समाजवादकी शक्तियाँ तो हर प्रकारसे पुष्ट और विकसित होती थीं परन्तु उससे किसी हद तक पूँजीवादकी भी बढ़ती होती थी? समाजवादी आर्थिक व्यवस्थाका निर्माण कैसे हो, किस सिरेसे इस निर्माणमें हाथ लगाया जाय?

पुनर्संगठनकी अवधिके समाप्त होते-होते ये सब प्रश्न पार्टीके सामने आये और अब वे केवल सैद्धान्तिक प्रश्न न थे वरन् क्रियात्मक प्रश्न बन गये थे, आये दिनके आर्थिक जीवनके प्रश्न बन गये थे।

इन सब प्रश्नोंका सीधा और स्पष्ट उत्तर चाहिये था जिससे कि उद्योग-धन्धों और कृषिके विकासमें लगे हुए हमारे पार्टी-मेम्बर और जन-साधारण भी यह जान सकें कि उन्हें किस दिशामें कार्य करना है, समाजवादकी दिशामें या पूँजीवादकी दिशामें?

इन प्रश्नोंका स्पष्ट उत्तर दिये बिना निर्माणसम्बन्धी हमारा सभी प्रत्यक्ष कार्य दिग्भ्रान्त, अंधकारमय तथा विफल प्रयासके समान होता।

पार्टीने इन सभी प्रश्नोंका स्पष्ट और निश्चित उत्तर दिया।

पार्टीने उत्तर दिया,—हाँ, अपने देशमें समाजवादी आर्थिक व्यवस्था ही बननी चाहिये और वह बन सकती है, क्योंकि उसके निर्माणके लिये, पूर्ण सोशलिस्ट समाजके निर्माणके लिये, हमारे पास सभी आवश्यक साधन और उपकरण हैं। अक्तूबर १९१७ में अपना राजनीतिक एकाधिपत्य करके मजदूर-वर्गने पूँजीवादको राजनीतिके मैदानमें पछाड़ा था। तबसे सोवियत सरकार इस बातके लिये बराबर उपाय करती रही थी कि पूँजीवादकी आर्थिक शक्तिका ध्वंस हो और समाजवादी आर्थिक व्यवस्थाके निर्माणके लिये उपयुक्त परिस्थितियाँ तैयार हों। सोवियत सरकारके उपाय ये थे—पूँजीपतियोंकी पूँजी

और जमींदारोंकी जमीनकी ज़ब्ती; ज़मीन, मिलों; कारखानों, रेलों और बैंकोंका राष्ट्रीय संपत्तिमें रूपान्तर; नवीन आर्थिक नीतिकी स्वीकृति; सरकारी अधिकारमें समाजवादी उद्योग-धन्धोंका निर्माण; लेनिनकी सहकार-योजनाके अनुसार कार्य। अब मुख्य कर्तव्य यह था कि देशभरमें एक नयी समाजवादी आर्थिक व्यवस्थाके निर्माणमें हाथ लगायें और इस प्रकार **आर्थिक क्षेत्रमें भी** पूँजीवादको बैठा दें। हमारी सभी राजनीतिक कार्यवाहीसे, हमारे सभी कार्योंसे इसी मुख्य ध्येयकी सिद्धि होनी चाहिये। मजदूर-वर्ग इस कार्यको सिद्ध कर सकता था और करेगा। इस भगीरथ प्रयासको हमने हृदयंगम किया है, इसका प्रमाण देशके औद्योगिक निर्माणका आरम्भ होना चाहिये। देशका समाजवादी औद्योगिक निर्माण ही इस शृंखलाकी मूल कड़ी थी। उसीसे समाजवादी आर्थिक व्यवस्थाका निर्माण कार्य आरम्भ होना चाहिये। न तो पच्छिममें क्रान्तिके विलम्बसे और न गैर-सोवियत देशोंमें पूँजीवादकी आंशिक स्थिरतासे समाजवादकी ओर हमारी प्रगति रुक सकती थी। नवीन आर्थिक नीतिसे इस कार्यमें सरलता ही हो सकती थी क्योंकि हमारी आर्थिक व्यवस्थाकी समाजवादी नींव डालनेके निश्चित उद्देश्यसे ही पार्टीने इस नीतिको स्वीकृत किया था।

क्या एक देशमें समाजवादी निर्माणकी विजय संभव है, इस प्रश्नका पार्टीने उपरोक्त ढंगसे उत्तर दिया।

लेकिन पार्टी जानती थी कि एक देशमें समाजवादकी विजयकी समस्याका यहीं अन्त नहीं हो जाता। सोवियत संघमें समाजवादका निर्माण मानवजातिके इतिहासमें युग परिवर्तनके समान होगा; सोवियत संघके मजदूरों और किसानोंके लिये यह एक विजय होगी जिससे विश्व-इतिहासमें एक नये अध्यायका पृष्ठ खुलेगा। समस्याका एक दूसरा अन्तरराष्ट्रीय पहलू भी था। समाजवाद एक देशमें सफल हो सकता है, इस धारणाकी पुष्टि करते हुए, कॉ. स्तालिनने बार-बार कहा था कि इस प्रश्नके घरेलू और अन्तरदेशीय दो पहलू हैं। घरेलू पहलूमें अर्थात् देशके भीतरी वर्ग-सम्बन्धमें, सोवियत संघके मजदूर-किसान अपने पूँजीपतियोंका **आर्थिक** ध्वंस करनेमें और एक पूर्ण सोशलिस्ट समाजका निर्माण करनेमें भली भाँति समर्थ थे। परन्तु प्रश्नका अन्तरदेशीय पहलू भी था, अर्थात् वैदेशिक सम्बन्धोंका क्षेत्र था, सोवियत संघ और पूँजीवादी देशोंके सम्बन्धका क्षेत्र था, सोवियत जनता तथा उन अन्तरराष्ट्रीय पूँजीपतियोंके सम्बन्धका क्षेत्र था जो सोवियत व्यवस्थासे घृणा करते थे और सोवियत संघमें पुनः सशस्त्र हस्तक्षेप करनेका, सोवियत संघमें पूँजीवादको पुनः प्रतिष्ठित करनेके लिये नये प्रयत्न करनेका, अवसर ढूँढ़ रहे थे। सोवियत संघ अभी एकमात्र समाजवादी देश था और शेष सभी देश पूँजीवादी थे, इसलिये सोवियत संघ एक पूँजीवादी संसारसे घिरा हुआ था। जब तक यह पूँजीवादी घेरा बना हुआ था तब तक इस संसार द्वारा पूँजीवादी हस्तक्षेपका संकट भी बना हुआ था। क्या इस **बाह्य** संकटको, सोवियत संघमें पूँजीवादी हस्तक्षेपके संकटको, सोवियत जनता अपने ही प्रयत्नोंसे व्यर्थ कर सकती थी? नहीं, वह ऐसा नहीं कर सकती थी। इसलिये न वह, उपरत

थी कि पूँजीवादी हस्तक्षेपके संकटको दूर करनेके लिये पूँजीवादी घेरेको ही नष्ट करना पड़ेगा; और यह घेरा तभी नष्ट हो सकता था, जब कमसे कम कई देशोंमें सर्वहारा-क्रान्ति सफलतासे हो जाय। इससे यह परिणाम निकलता था कि सोवियत संघमें पूँजीवादी आर्थिक व्यवस्थाके नाशसे और एक समाजवादी आर्थिक व्यवस्थाके निर्माणसे समाजवादकी जो विजय हुई है, वह **अंतिम** विजय नहीं है क्योंकि विदेशी सशस्त्र हस्तक्षेप तथा पूँजीवादको पुनः प्रतिष्ठित करनेके संकटका अभी अंत न हुआ था और इस संकटसे अपनी रक्षा करनेके लिये समाजवादी देशके पास कोई कवच न था। विदेशी पूँजीवादी हस्तक्षेपके संकटको दूर करनेके लिये पूँजीवादी घेरेको तोड़ना आवश्यक होगा।

यह ठीक है कि सोवियत सरकार जब तक सही नीतिका पालन करेगी, तब तक सोवियत जनता और उसकी लाल फ़ौज नये विदेशी पूँजीवादी हस्तक्षेपके हाथ-पाँव तोड़ देगी जैसे कि उसने १९१८–२० के पहले पूँजीवादी हस्तक्षेपके साथ किया था। परन्तु इसका यह अर्थ न था कि इससे नये पूँजीवादी हस्तक्षेपके संकटका अंत हो जायगा। पहले हस्तक्षेपकी पराजयसे नये हस्तक्षेपका संकट नष्ट नहीं हो गया क्योंकि हस्तक्षेपके संकटका मूलाधार, वह पूँजीवादी घेरा अब भी बना हुआ था। इसी तरह नये हस्तक्षेपकी पराजय होनेपर भी यदि पूँजीवादी घेरा बना रहा तो हस्तक्षेपका संकट भी दूर न होगा।

इससे सिद्ध होता था कि पूँजीवादी देशोंमें सर्वहारा–क्रान्तिकी विजय सोवियत संघकी श्रमिक जनताके हित–अनहितका प्रश्न है।

एक देशमें ही समाजवादकी विजयके प्रश्नपर पार्टीकी नीति उपरोक्त ढंगकी थी।

केन्द्रीय समितिने इस बातकी मांग की कि अगली १४ वीं पार्टी कान्फ्रेन्समें इस नीतिपर विचार किया जाय और उसे पार्टी–नीति मानकर स्वीकार किया जाय जो पार्टी–नियमकी भाँति सब मेम्बरोंपर **लागू हो**।

विरोधियोंको यह नीति वज्रपात-सी ही लगी क्योंकि पार्टीने उसे एक स्पष्ट और प्रत्यक्ष रूप दे दिया था, देशके समाजवादी औद्योगिक निर्माणकी एक प्रत्यक्ष योजनासे उसे सम्बद्ध कर दिया था और इस बातकी माँग की थी कि उसे पार्टी–नियमके रूपमें निर्धारित किया जाय, १४ वीं पार्टी कान्फ्रेन्समें उसे एक प्रस्तावके रूपमें रखा जाय, और वह सभी पार्टी मेम्बरोंके लिये दुर्लंघ्य हो।

त्रात्स्कीपंथियोंने इस पार्टी–नीतिका विरोध किया और उसके विरुद्ध उन्होंने मेन्शेविकोंके "अविराम क्रान्तिके सिद्धान्त" को प्रतिष्ठित किया। इसे मार्क्सीय सिद्धान्त कहना मार्क्सवादका अपमान करना होगा। इसके अनुसार सोवियत संघमें समाजवादी निर्माण असंभव था।

बुखारिनपंथियोंने खुले आम पार्टी-नीतिका विरोध करनेका साहस न किया। परन्तु उन्होंने लुकाचोरीसे, अपने एक नये "सिद्धान्त" से उसका विरोध किया। वह सिद्धान्त यह था कि पूँजीवादी वर्ग शांतिपूर्ण मार्गसे समाजवाद तक पहुँच जायगा। एक नया "नारा" लगाकर उन्होंने इसकी व्याख्या भी की—"पैसा पैदा करो।"

बुखारिनपंथियोंके अनुसार समाजवादकी विजयसे पूँजीवादी वर्ग और फले-फूलेगा, न कि नष्ट होगा।

जिनोवियेफ़ और कामेनेफ़ने हिम्मत करके कहा कि देश आर्थिक और कौशल के क्षेत्रोंमें पिछड़ा हुआ है, इसलिये सोवियत संघमें समाजवादकी विजय असम्भव है। परन्तु उन्होंने शीघ्र ही अनुभव किया कि बुद्धिमानी इसीमें है कि किसी आड़में दुबक रहें।

१४ वीं पार्टी कान्फ़ेन्सने (अप्रैल १९२५ में) गुप्त और प्रकट विरोधियोंके इन पराजयवादी सिद्धान्तोंकी निन्दा की और एक प्रस्ताव द्वारा सोवियत संघमें समाजवादकी विजयके लिये कार्य करनेकी नीतिको स्वीकार किया।

हताश होकर जिनोवियेफ़ और कामेनेफ़ने प्रस्तावके पक्षमें मत देना ही उचित समझा। लेकिन पार्टी जानती थी कि वे लेनिनग्रादमें अपने अनुयायियोंको एकत्र कर रहे थे और चौदहवीं पार्टी कान्फ़ेन्समें उसका विरोध करनेके लिये अपने तथाकथित "नव विरोध" का निर्माण कर रहे थे।

दिसम्बर १९२५ में १४ वीं पार्टी कांग्रेस हुई।

पार्टीका वातावरण विषम और उत्तेजनापूर्ण था। पार्टीके इतिहासमें आज तक ऐसा न हुआ था कि लेनिनग्राद जैसे प्रमुख पार्टी-केन्द्रसे पूराका पूरा प्रतिनिधि मंडल केन्द्रीय समितिका विरोध करनेको तुलकर आया हो।

पार्टीके ६,४३,००० मेम्बरों और ४,४५,००० उम्मीदवार मेम्बरोंकी ओरसे ६६५ वोट देनेवाले प्रतिनिधि आये थे और ६४१ को केवल बोलनेका अधिकार था। पिछली पार्टी कांग्रेससे यह संख्या कुछ ही कम थी। विश्वविद्यालयों और दफ़्तरोंके पार्टी-संगठनोंमें जो पार्टी विरोधी लोग घुस गये थे, यह कमी उनकी शुद्धिके कारण हो गयी थी।

कॉ. स्तालिनने केन्द्रीय समितिकी राजनैतिक रिपोर्ट पेश की। सोवियत संघकी आर्थिक और राजनीतिक शक्तिका उन्होंने सजीव चित्र खींचा। सोवियत आर्थिक व्यवस्थाके गुणोंके कारण यथा समयके पहले ही कृषि और उद्योग-धन्धोंका पुनर्संगठन हो गया था और अब वे युद्धपूर्वके स्तर तक पहुँच रहे थे। परन्तु यद्यपि ये परिणाम अच्छे थे, फिर भी कॉ. स्तालिनने कहा कि हमें उनसे सन्तुष्ट होकर न बैठ रहना चाहिये। इन परिणामोंसे इन सत्यपर परदा न पड़ सकता था कि हमारा देश अब भी एक पिछड़ा हुआ कृषिप्रधान देश ही है। देशके कुल उत्पादनमें दो तिहाई भाग खेतीका होता था और केवल एक तिहाई उद्योग-धन्धोंका। कॉ. स्तालिनने कहा कि पार्टीके सामने यह स्पष्ट समस्या है कि वह अपने देशको उद्योग-धन्धोंवाला देश बनाये और आर्थिक दृष्टिसे पूँजीवादी देशोंके ऊपर निर्भर रहनेसे उसे मुक्त करे। यह सब हो सकता था, और उसे होना ही चाहिये। अब यह पार्टीका मुख्य कर्तव्य था कि वह देशको समाजवादी उद्योग-धन्धोंसे भरापूरा बनानेके लिये, समाजवादकी विजयके लिये, युद्ध करे।

कॉ. स्तालिनने कहा था,—

"हम अपने देशको कृषिप्रधानसे औद्योगिक बनायें, जो अपने ही प्रयत्नसे अपनी आवश्यक मशीनें तैयार कर सके,—यही हमारी पार्टी—नीतिका तत्व और मूलाधार है।"

देशके औद्योगिक होनेसे उसकी आर्थिक स्वाधीनता निश्चित होगी, उसकी आत्म-रक्षाकी शक्ति दृढ़ होगी और सोवियत संघमें समाजवादकी विजयके अनुकूल परिस्थिति उत्पन्न होगी।

जिनोवियेफ़पंथियोंने पार्टीकी आम नीतिका विरोध किया। स्तालिनकी समाजवादी उद्योगसम्बन्धी योजनाके बदले जिनोवियेफ़पंथी सोकोलनीकोफ़ने एक पूंजीवादी योजना रखी जो उस समय साम्राज्यवादी भेड़ियोंको बहुत प्रिय थी। इस योजनाके अनुसार सोवियत संघको कृषिप्रधान देश रहना चाहिये जो मुख्यतः कच्चा माल और खाद्यसामग्री उत्पन्न करे, उन्हें बाहर भेजे, और मशीनोंको खुद न बनाये, उसे उन्हें न बनाना चाहिये, वह उन्हें बाहरसे मँगवाये। १९२५ की परिस्थितिमें यह योजना सोवियत संघको आर्थिक दृष्टिसे उन देशोंका दास बना देनेकी योजनाके समान थी, जो उद्योग-धन्धोंमें आगे बढ़े हुए थे। पूंजीवादी देशोंके साम्राज्यवादी भेड़ियोंके लाभके लिये देशको उद्योग-धन्धोंमें सदा पिछड़ा हुआ रखनेकी यह योजना थी।

इस योजनाकी स्वीकृतिसे हमारा देश एक असमर्थ, कृषिप्रधान देश मात्र रह जाता जो पूंजीवादी देशोंके खलिहानका काम देता। चारों ओरके पूंजीवादी संसारमें वह निःशक्त और अरक्षित हो जाता और यह बात अंतमें, सोवियत संघमें समाजवादके हितोंके लिये घातक होती।

काँग्रेसने जिनोवियेफ़पंथियोंकी आर्थिक योजनाको सोवियत संघकी आर्थिक पराधीनताकी योजना कहकर उसकी निन्दा की।

"नव-विरोध" के दूसरे आक्रमण भी ऐसे ही विफल हुए। उदाहरणके लिये, (लेनिनके प्रतिकूल), उन्होंने कहा कि राजके उद्योग-धन्धे समाजवादी उद्योग-धन्धे नहीं हैं। और भी (पुनः लेनिनके विरोधमें), उनका कहना था कि समाजवादी निर्माण-कार्यमें मँझले किसान मज़दूर-वर्गके सहायक नहीं हो सकते।

कांग्रेसने "नव-विरोध" के इन आक्रमणोंको लेनिनविरोधी कहकर उनका खण्डन किया।

कॉ. स्तालिनने "नवविरोध" के त्रात्स्कीपंथी-मेन्शेविक सार तत्वको निचोड़कर रख दिया। उन्होंने दिखाया कि जिनोवियेफ़ और कामेनेफ़ पार्टी-शत्रुओंके उन्हीं सूत्रोंकी आवृत्ति कर रहे हैं जिनसे लेनिनने डटकर युद्ध किया था।

यह स्पष्ट था कि जिनोवियेफ़पंथी भद्दा भेस बनाये हुए त्रात्स्कीपंथियोंको छोड़कर और कुछ नहीं हैं।

कॉ. स्तालिनने इस बातपर जोर दिया कि पार्टीका मुख्य कार्य समाजवादी

निर्माणमें मजदूर-वर्ग और मँझले किसानोंका दृढ़ सहयोग बनाये रखना है। उन्होंने बताया कि किसान-समस्यापर पार्टीमें दो तरहके गुमराह लोग हैं और ये दोनों ही इस सहयोगके लिये खतरनाक हैं। पहली तरहके वे लोग हैं जो कुलक-संकटको छोटा करके बताते हैं और उसे नगण्य ठहराते हैं। दूसरी तरहके वे लोग हैं जिनके पैरों तलेसे कुलकका नाम लेते ही धरती खिसक जाती है और जो मँझले किसानोंकी भूमिकाको छोटा करके आँकते हैं। किस तरहकी विच्युति अधिक भयंकर है, इस प्रश्नका कॉ. स्तालिनने उत्तर दिया कि " जैसी भयंकर पहली है, वैसी ही दूसरी है। यदि इनको पनपने दिया गया तो पार्टीमें फूट डालकर ये उसे नष्ट कर सकती हैं। सौभाग्यसे पार्टीमें ऐसे लोग हैं जो उसे इनसे मुक्त कर सकते हैं।"

और वास्तवमें पार्टीने दोनों तरहकी " गरम " और नरम कुप्रवृत्तियोंको पछाड़ दिया और पार्टीको उससे मुक्त किया।

आर्थिक विकाससम्बंधी विवादका सार संग्रह करते हुए १४ वीं पार्टी कांग्रेसने एकमत होकर विरोधियोंकी पराजयवादी योजनाओंको ठुकरा दिया। अपने प्रसिद्ध प्रस्ताव में उसने कहा कि,—

> " कांग्रेसका मत है कि आर्थिक विकासके क्षेत्रमें सर्वहारा एकाधिपत्यके इस देशके पास ' पूर्ण सोशलिस्ट समाजका निर्माण करनेके लिये हर साधन प्रस्तुत हैं ' (लेनिन)। कांग्रेसकी दृष्टिमें पार्टीका मुख्य कार्य यह है कि वह सोवियत संघमें समाजवादी निर्माणकी विजयके लिये युद्ध करे।"

१४ वीं पार्टी-कांग्रेसने नयी पार्टी-नियमावली स्वीकृत की।

> १४ वीं पार्टी-कांग्रेससे हमारी पार्टी सोवियत संघकी कम्युनिस्ट (बोलशेविक) पार्टी [सो. स. क. पा. (बो.)] कहलाती है।

कांग्रेसमें हारकर भी जिनोवियेफ़पंथी पार्टीके सामने न झुके। उन्होंने १४ वीं कांग्रेसके निर्णयोंसे युद्ध ठान लिया। कांग्रेसके बादही जिनोवियेफ़ने नौजवान कम्युनिस्ट सभाकी लेनिनग्राद प्रांतीय समितिकी एक सभा की। इसका प्रमुख दल जिनोवियेफ़, ज़लुत्सी, ब्कायेफ़, येव्दोकिमोफ़, कुक्लिन, साफ़री, आदि दुरंगी चाल चलनेवालोंके हाथों पाला-पोसा गया था। उसे पार्टीकी लेनिनवादी केन्द्रीय समितिसे घृणा करना सिखाया गया था। इस बैठकमें लेनिनग्राद प्रान्तीय समितिने एक प्रस्ताव पास किया जो नौजवान कम्युनिस्ट सभा (नौ. क. सभा) के इतिहासमें अनोखा था। उसने १४ वीं पार्टी कांग्रेस के निर्णयको माननेसे इनकार किया।

परन्तु लेनिनग्रादके इन जिनोवियेफ़पंथी नौजवान सभावालोंकी भावना वहाँके आम नौजवान सभावालोंकी भावना न थी। इसलिये वे आसानीसे परास्त कर दिये गये और शीघ्र ही लेनिनग्राद संगठनको नौजवान कम्युनिस्ट सभाओंमें वह स्थान प्राप्त होगया जिसके वह उपयुक्त था।

१४ वीं कांग्रेसके समाप्त होते-होते कॉ. मोलोतौफ़, किरौफ़, वोरोशिलौफ़, कालीनिन, आन्द्रेयेफ़ आदि कांग्रेस-प्रतिनिधियोंका एक दल लेनिनग्रादको भेजा गया कि वह लेनिनग्राद पार्टी संगठनके मेम्बरोंको समझाये कि झूठे बहानोंसे लेनिनग्राद प्रतिनिधि मंडलने अपना प्रतिनिधित्वका अधिकार प्राप्त करके कांग्रेसमें जो कुछ किया था, वह बोल्शेविक-विरोधी और अपराधपूर्ण था। जिन सभाओंमें कांग्रेसकी रिपोर्ट दी गयी, वहाँ खूब हो-हल्ला मचा। लेनिनग्राद पार्टी संगठनकी एक विशेष कान्फ्रेंस बुलायी गयी। लेनिनग्राद पार्टी-मेम्बरोंके बहुसंख्यक भागने (९७ % से ऊपरने) १४ वीं पार्टी कांग्रेसके निर्णयोंको पूर्ण रूपसे स्वीकृत किया और पार्टीविरोधी ज़िनोवियेफ़पंथी "नव विरोध" की निन्दा की। ये ज़िनोवियेफ़पंथी अब बिना फ़ौजके सिपहसालार रह गये थे।

लेनिनग्रादके बोल्शेविक लेनिन-स्तालिनकी पार्टीकी अगली पाँतियोंमें रहे।

१४ वीं पार्टी कांग्रेसका सार ग्रहण करते हुए कॉ. स्तालिनने लिखा था,—

"सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टीकी १४ वीं कांग्रेसका महत्व इस बातमें है कि वह "नव विरोध"की भूलोंके मूल कारणोंको प्रकट कर सकी, उसने उनकी दुविधाओं और भिन-भिन करनेकी प्रवृत्तिको ठुकरा दिया, उसने स्पष्ट और निश्चित रूपसे समाजवादके लिये अगले संघर्षका मार्ग दिखाया, पार्टीके सामने विजयकी संभावना रखी और इस प्रकार सर्वहारा वर्गमें समाजवादी निर्माणकी विजयमें दुर्जय विश्वास भर कर उसे शक्तिशाली बनाया।"

(स्तालिन : लेनिनवाद—अं. सं.)

सारांश

आर्थिक पुनर्संगठनके शांतिमय कार्यका संक्रमणकाल बोल्शेविक पार्टीके इतिहासमें संघर्ष और परिवर्तनका समय था। विषम परिस्थितिमें पार्टी युद्धकालीन साम्यवादसे नवीन आर्थिकनीतिकी ओर मुड़नेका कठिन काम कर सकी। पार्टीने एक नये आर्थिक आधारपर मज़दूरों और किसानोंके सहयोगको और दृढ़ किया। सोवियत समाजवादी प्रजातंत्र संघका निर्माण हुआ।

देशके आर्थिक जीवनके पुनर्संगठनमें नयी आर्थिक नीतिसे निश्चित सफलता मिली। सोवियत संघने आर्थिक पुनर्संगठनके युगको सफलतासे पार किया और देशके औद्योगिक निर्माणके नवीन युगमें प्रवेश किया।

गृहयुद्धसे समाजवादी निर्माणकी ओर बढ़नेमें बड़ी कठिनाइयाँ पड़ीं, विशेषकर पहली मंज़िलोंमें। इस समूची अवधिमें बोल्शेविज़मके शत्रुओंने, सोवियत संघकी कम्यु-

निस्ट (बोल्शेविक) पार्टीकी पाँतिमें रहनेवाले पार्टीविरोधी लोगोंने, लेनिनवादी पार्टीसे घनघोर संग्राम किया। इनका सरदार त्रात्स्की था। लड़ाईमें उसके सहायक कामेनेफ़, जिनोवियेफ़, और बुखारिन थे। लेनिनकी मृत्युके बाद विरोधियोंने सोचा कि वे बोल्शेविक पार्टीका मनोबल क्षीण कर देंगे, पार्टीमें फूट डाल देंगे और उसके अन्दर यह संदेह पैदा कर देंगे कि सोवियत संघमें समाजवादकी विजय संभव नहीं है। वस्तुतः त्रात्स्कीपंथी सोवियत संघमें एक नयी पार्टी बनानेका प्रयत्न कर रहे थे जो नये पूंजीपतियोंका संगठन होती, पूँजीवादको पुनः प्रतिष्ठित करनेकी पार्टी होती।

पार्टी लेनिनके झंडेके नीचे अपनी लेनिनवादी केन्द्रीय समितिके चारों ओर, कॉ॰ स्तालिनके चारों ओर, संगठित हो गयी और त्रात्स्कीपंथियों तथा लेनिनग्रादमें उनके नये साथियों, जिनोवियेफ़-कामेनेफ़के " नव विरोध "को उसने परास्त किया।

शक्ति और साधन बटोरकर बोल्शेविक पार्टी देशको उसके इतिहासकी एक नयी मंजिलपर ले आयी। यह मंजिल समाजवादी औद्योगिक निर्माणकी मंज़िल थी।

दसवाँ अध्याय

देशके समाजवादी औद्योगिक निर्माणके संघर्षमें बोल्शेविक पार्टी

(१९२६—१९२९)

१. समाजवादी औद्योगिक निर्माणके मार्गमें बाधाएँ और उन पर विजय पानेके लिये संघर्ष—त्रात्स्कीपंथियों और ज़िनोवियेफ़के अनुयायियों द्वारा पार्टी विरोधी गुटका निर्माण—गुटके सोवियत-विरोधी कार्य—गुटकी पराजय।

१४ वीं कांग्रेसके बाद सोवियत सरकारकी मूल नीति—देशके **समाजवादी औद्योगिक निर्माण**को चरितार्थ करनेके लिये पार्टीने भरपूर संघर्ष किया।

पुनर्संगठनकालमें मुख्य कार्य यह था कि सबसे पहले खेतीको चेतायें जिससे कच्चा माल और अन्न मिल सके; इसके साथ उद्योग-धन्धोंको व्यवस्थित करके चालू करें; जो मिलें और कारखाने पहलेसे थे, उनसे काम लें।

सोवियत सरकारने इस कार्यको बहुत कुछ सरलतासे कर लिया।

परन्तु पुनर्संगठनकालमें तीन बड़ी खामियाँ थीं। पहले तो मिलें और कारखाने पुराने थे, उनमें घिसी हुई बाबा आदमके ज़मानेकी मशीनें लगी थीं, यह संभव था कि वे बहुत जल्दी बोल जायँ। उन्हें अब नये ढंगके कल-पुर्जोंसे सजाकर अप-टू-डेट करना था।

इसके सिवा पुनर्संगठनकालमें उद्योग-धन्धोंका आधार बहुत संकुचित था। देशके लिये अत्यावश्यक मशीनें तैयार करने वाले कारखाने थे ही नहीं। इस तरहके सैकड़ों कारखाने बनाने थे क्योंकि इनके बिना किसी भी देशके उद्योग-धन्धोंको विकसित नहीं समझा जा सकता। अब कार्य यह था कि ऐसे कारखाने बनें और उनमें नये ढंगका साज-सामान हो।

तीसरे, इस समयके उद्योग-धन्धे अधिकतर हल्के थे। इन्हींको बढ़ाकर अपने पैरों खड़ा किया गया था। परन्तु एक हद तक ही इनका विकास हो सकता था; आगे चल कर बड़े उद्योग-धन्धोंके अभावसे गाड़ी रुक जाती। देशकी दूसरी आवश्यकताएँ जो बड़े उद्योग-धन्धोंसे ही पूरी हो सकती थीं, वे अलग थीं। अब कार्य यह था कि बड़े उद्योग-धन्धोंके विकासमें जोर लगाया जाय।

समाजवादी औद्योगिक निर्माणकी नीतिसे ही इन सब कार्योंको पूरा करना था।

अब यह आवश्यक था कि हम एक बहुत बड़ी तादादमें नये उद्योग-धन्धोंको शुरू करें. ऐसे धंधोंको जो ज़ारशाही रूसमें थे ही नहीं,—नयी मशीनरी, कल-पुर्जे, मोटरें, रसायन और लोहे तथा इस्पातके कारखाने। इसके साथ इंजिनोंके निर्माण और बिजलीके सामान बनानेका प्रबन्ध करें, और लोहे और कोयलेकी खानोंका काम बढ़ायें। सोवियत संघमें समाजवादकी विजयके लिये यह अत्यावश्यक था।

यह आवश्यक था कि हम युद्ध सामग्री तैयार करनेवाले कारखाने बनायें, तोपों, गोलों, हवाई जहाजों, टैंकों और मशीनगनोंको तैयार करनेके लिये नये उद्योग धन्धोंका आरम्भ करें। पूँजीवादी समुद्रसे घिरे हुए सोवियत संघकी आत्मरक्षाके लिये यह अत्यावश्यक था।

यह आवश्यक था कि कृषिसम्बन्धी आधुनिक मशीनें तैयार करनेके लिये नये कारखाने खोलें और कृषिके लिये इन मशीनोंको भेजें जिससे निजी खेती करने वाले लाखों किसान बड़े पैमानेकी पंचायती खेतीमें भाग ले सकें। देहातमें समाजवादकी विजयके लिये यह अत्यावश्यक था।

यह सब औद्योगिक निर्माणकी ही नीतिसे करना था। देशके समाजवादी औद्योगिक निर्माणका अर्थ ही यह था।

यह स्पष्ट था कि इतने बड़े पैमानेपर काम शुरू करनेके लिये लाखों-करोड़ों रूबल की आवश्यकता पड़ेगी। बाहरसे उधारकी कोई आशा न थी क्योंकि पूँजीवादी देश उधार देनेमें आनाकानी करते थे। हमें अपने ही भरोसे, बिना बाहरी सहायताकी आशा किये, काम चलाना था। लेकिन हमारा देश गरीब भी था।

यही कठिनाई मुख्य थी।

पूँजीवादी देश साधारणतः पराधीन देशोंको लूट-खसोट कर या दूसरे देशोंसे उधार लेकर अपने बड़े उद्योग-धन्धोंका निर्माण करते हैं। सोवियत संघ सिद्धान्ततः उपनिवेशों या पराधीन देशोंकी लूट-खसोट जैसे जघन्य उपायोंसे काम न ले सकता था। विदेशी ऋणका तो सोवियत संघके लिये द्वार बन्द ही था क्योंकि पूँजीवादी देशोंने उसे ऋण देनेसे साफ़ इनकार कर दिया था। देशके **भीतरसे ही** जोड़-बटोरकर धन इकट्ठा करना था।

और वह इकट्ठा हो भी गया। सोवियत संघमें धनके वे स्रोत निकाले गये जो किसी पूँजीवादी देशमें मिल ही न सकते थे। अक्तूबर क्रान्तिने जो मिलें, कारखाने और जमीन पूँजीपतियों और जमींदारोंसे छीनी थी, वह सोवियत सरकारके हाथमें थी। वैसे ही उसके पास यातायातके सभी साधन, बैंक और घरेलू तथा विदेशी व्यापार भी था। सरकारी मिलों, कारखानों, यातायातके साधनों, व्यापार और बैंकोंसे जो लाभ होता था; वह जाँगरचोर पूँजीपतियोंकी जेबोंमें न चला जाता था, वरन् वह उद्योग-धंधोंके विस्तारमें लगाया गया।

सोवियत सरकारने ज़ारके ऋणको रद कर दिया था। इसके लिये जनताको

प्रति वर्ष केवल ब्याजमें करोड़ों सोनेके रूबल देने पड़ते थे। जमीनपरसे जमींदारोंके अधिकारका अंत करके सोवियत सरकारने वार्षिक लगानके ५० करोड़ रूबलसे किसानोंको मुक्त कर दिया था। इस बोझसे हल्के होकर किसान अब नये और शक्तिशाली उद्योग-धन्धोंका निर्माण कर सकते थे। ट्रैक्टरों और खेतीकी दूसरी मशीनोंको पानेमें किसानोंका निजी स्वार्थ था।

आमदनीके ये सब उद्‌गम सोवियत राजके पास थे। नये और बड़े उद्योग-धन्धोंके निर्माणके लिये इनसे करोड़ों रूबलकी आमदनी हो सकती थी। जिस बातकी जरूरत थी, वह केवल यह कि लोगोंका कामकाजी रवैया हो, धनको नपे-तुले ढंगसे आवश्यकताओं पर खर्च किया जाय, उद्योग-धन्धोंका उचित संचालन हो, उत्पादनमें खर्चेकी कमी हो, जिस खर्चेसे उत्पादन न हो उसे बंद कर दिया जाय, इत्यादि।

इन्हीं सब बातोंको सोवियत सरकारने करना शुरू किया।

नपी-तुली अर्थ-व्यवस्थाके कारण औद्योगिक विकासके लिये आवश्यक मूलधन प्रति-वर्ष बढ़ता गया। इसीसे यह संभव हुआ कि अति विशाल परिमाणमें नीपर जल-विद्युत् गृह, तुर्किस्तान-साइबेरियन रेलवे, स्तालिनग्रादके ट्रैक्टर-कारखाने, कल-पुर्जे बनानेके कई कारखाने, ज़िस (ZIS) मोटरके कारखाने आदि जैसे बड़े-बड़े कारखाने बन सके।

१९२६–२७ में एक अरब रूबल उद्योग-धन्धोंमें लगाये जाते थे परन्तु तीन साल बाद लगभग पाँच अरब रूबल लगाना संभव हुआ।

औद्योगिक निर्माण निश्चित गतिसे आगे बढ़ रहा था।

पूँजीवादी देश सोवियत संघमें समाजवादी आर्थिक व्यवस्थाकी बढ़तीको अपनी पूँजीवादी व्यवस्थाके लिये संकटपूर्ण समझते थे। इसलिये साम्राज्यवादी सरकारोंने हर तरहसे कोशिश की कि सोवियत संघपर नया दबाव डाला जाय, देशमें अशान्ति और दुविधाकी भावना फैलायी जाय, और सोवियत संघके औद्योगिक निर्माणको बंद कर दिया जाय या कमसे कम उसके मार्गमें रोड़े तो अटकाये ही जायँ।

मई १९२७ में ब्रिटेनके पुरानपंथियोंने, जिनका उस समय मंत्रिमंडल था, आर्कौस (ब्रिटेनमें सोवियत व्यापारी संस्था) पर भड़कानेवाला आक्रमण किया। २६ मई १९२७ को ब्रिटेनकी कंजरवेटिव (टोड़ी) सरकारने सोवियत संघसे राजनीतिक और व्यापारिक सम्बन्ध विच्छेद कर लिया।

७ जून १९२७ को एक रूसी गद्दारने जो पोलैंडकी प्रजा बन गया था, वार्साके सोवियत राजदूत कॉ. वोइकोफ़की हत्या कर डाली।

इसी समय सोवियत संघमें ही ब्रिटेनके जासूसों और गोयन्दोंने लेनिनग्रादके एक पार्टी-क्लबकी बैठकमें बम फेंके जिससे लगभग ३० व्यक्ति घायल हो गये, कुछ तो गंभीर रूपसे।

प्रायः इसीके साथ-साथ १९२७ की ग्रीष्म ऋतुमें बर्लिन, पेकिन, शांघाई और

तिनचिनके सोवियत राजदूत-भवनों और व्यापारी प्रतिनिधियोंके निवासस्थान पर हमला किया गया।

इससे सोवियत सरकारकी कठिनाइयाँ और बढ़ गयीं।

परन्तु सोवियत संघ विचलित न हुआ। साम्राज्यवादियों और उनके दलालोंके भड़कानेके इन प्रयत्नोंका उसने सरलतासे निवारण कर दिया।

त्रात्स्कीपंथियों और अन्य विरोधियोंकी ध्वंसात्मक कार्यवाहीसे पार्टी और सोवियत सरकारके लिये कम कठिनाइयाँ न उत्पन्न हुई। कॉ. स्तालिनने कहा था कि सोवियत सरकारके विरुद्ध "चेम्बरलेनसे लेकर त्रात्स्की तक एक संयुक्त मोर्चा-सा" बन गया है; तब उनके ऐसा कहनेका यथेष्ट कारण था। चौदहवीं पार्टी-कांग्रेसके निर्णयोंके होते हुए और बार-बार पार्टी-भक्तिकी घोषणा करते हुए भी विरोधियोंने हथियार न डाले थे। इसके विपरीत पार्टीमें फूट डालने और उसकी जड़ खोदनेमें वे और भी जी-जानसे जुट गये।

१९२६ की ग्रीष्म ऋतुमें त्रात्स्कीपंथी और जिनोवियेफ़के अनुयायी एक पार्टीविरोधी गुट बनानके लिये एक दूसरेसे मिल गये, सभी पराजित गुटोंके बचे-खुचे लोगोंके संगठन का इसे केन्द्र बनाया और अपनी गुप्त लेनिनवाद-विरोधी पार्टीका शिलान्यास किया। इस प्रकार उन्होंने गुटबन्दीके विरुद्ध पार्टीके नियमों और पार्टी-कांग्रेसके निर्णयोंका धृष्टतासे उल्लंघन किया। पार्टीकी केन्द्रीय समितिने चेतावनी दी कि यदि यह पार्टीविरोधी मेन्शेविकोंके गुट—जो उस मनहूस अगस्त गुटसे मिलता जुलता था—भंग न किया गया, तो उसके अनुयायियोंके लिये आगे बड़े अहितकर परिणाम हो सकते हैं। परन्तु गुटके समर्थकोंने एक न सुनी।

उसी वर्षकी शरत्‌में, पंद्रहवीं पार्टी कांग्रेसके पहले, मॉस्को, लेनिनग्राद और दूसरे शहरोंके कारखानोंमें, इन लोगोंने पार्टीकी सभाओंमें धावा बोला और चेष्टा की कि पार्टीको एक नये विवादमें पड़नेके लिये बाध्य करें। जिस दृष्टिकोणपर वे पार्टी-मेंबरोंका विवाद कराना चाहते थे, वह उसी पुराने त्रात्स्कीपंथी मेन्शेविक लेनिनवाद-विरोधी दृष्टिकोणका रूपान्तर था। विरोधियोंको पार्टी मेम्बरोंके सामने मुँहकी खानी पड़ी और कहीं-कहीं तो वे सीधे कान पकड़कर सभाओंसे बाहर निकाल दिये गये। केन्द्रीय समिति ने गुटके समर्थकोंको फिर चेतावनी दी कि पार्टी उनकी ध्वंसात्मक कार्यवाहीको अब अधिक तरह नहीं दे सकती।

तब विरोधियोंने केन्द्रीय समितिको एक वक्तव्य दिया जिसपर त्रात्स्की, जिनोवियेफ़, कामेनेफ़ और सोकोल्नीकोफ़के हस्ताक्षर थे। इसमें उन्होंने अपनी गुटबाजीकी निन्दा की और भविष्यमें वफ़ादार रहनेकी प्रतिज्ञा की। फिर भी गुटका अस्तित्व बना रहा और उसके अनुयायियोंने पार्टीके विरुद्ध अपने गुप्त कार्यको बन्द न किया। वे अपनी लेनिनवाद-विरोधी पार्टीको संगठित करते रहे, अपना एक गैर-क़ानूनी छापखाना

खोल लिया, अपने समर्थकोंसे सदस्यताका शुल्क वसूल किया और अपने दृष्टिकोणका प्रचार करने लगे।

त्रात्स्कीपंथियों और ज़िनोवियेफ़के अनुयायियोंके इस व्यवहारके कारण पन्द्रहवीं पार्टीकान्फ्रेन्स (नवम्बर १९२६) और कम्युनिस्ट इण्टरनेशनलकी स्थायी समितिके परिवर्द्धित अधिवेशन (दिसम्बर १९२६) ने त्रात्स्की और ज़िनोवियेफ़के गुटोंपर विचार किया और उनपर निन्दात्मक प्रस्ताव पास किये जिनमें कहा कि उनका गुट फूट डालने वाला है और उनका दृष्टिकोण शुद्ध मेन्शेविक दृष्टिकोण है।

लेकिन इससे भी उनके होश ठीक न हुए। १९२७ में जब ब्रिटिश पुरानपंथियों ने सोवियत संघसे व्यापारिक और राजनीतिक सम्बंध विच्छेद किया था, तब इस गुटने पार्टीपर नये ज़ोरसे आक्रमण किया। उन्होंने एक नया लेनिनवाद-विरोधी मोर्चा तैयार किया और इसे " ८३ आदमियोंका मोर्चा " का नाम दिया। वे अपने मोर्चेका पार्टी-मेम्बरोंमें प्रचार करने लगे और साथ ही इस वातकी माँग करने लगे कि केन्द्रीय समिति एक नये पार्टी-विवादका आरम्भ करे।

विरोधी मंचोंमें यह सबसे झूठा और हास्यास्पद था।

अपने मोर्चेकी विज्ञप्तिमें त्रात्स्की और ज़िनोवियेफ़के अनुयायियोंने कहा कि वे पार्टीके प्रति वफ़ादारी निभानेके ही पक्षमें हैं। परन्तु वास्तवमें वे धृष्टता से पार्टीके निर्णयोंका उल्लंघन करते थे और पार्टी और उसकी केन्द्रीय समितिकेप्रति वफ़ादारीकी खिल्ली उड़ाते थे।

अपनी विज्ञप्तिमें उन्होंने कहा था कि वे फूटके विरुद्ध हैं और पार्टी-एकतासे उन्हें कोई विरोध नहीं है परन्तु वास्तवमें वे पार्टी-एकताके विरुद्ध थे और फूट डालनेका प्रयत्न करते थे। वे अपनी अवैध लेनिनवाद-विरोधी पार्टी बना चुके थे। उसमें सोवियतविरोधी, क्रान्तिविरोधी पार्टीके सभी लक्षण विद्यमान थे।

अपनी विज्ञप्तिमें उन्होंने कहा था कि वे औद्योगिक निर्माणकी नीतिके पक्षमें हैं और केन्द्रिय समितिपर उन्होंने इस वातका दोष भी लगाया था कि वह काफ़ी तेज़ीसे औद्योगिक निर्माण नहीं कर रही। परन्तु वास्तवमें उन्होंने उस पार्टी-प्रस्तावकी नुक्ताचीनी छोड़ कर और कुछ नहीं किया जिसमें सोवियत संघमें समाजवादी विजयका उल्लेख था। समाजवादी औद्योगिक निर्माणकी नीतिका वे मखौल करते थे, और विशेष सुविधाओंके नामपर कुछ मिलों और कारखानोंको विदेशियोंको सौंपनेकी माँग करते थे। उनकी मुख्य आशाएँ सोवियत संघमें विदेशी पूँजीपतियोंको प्राप्त होनेवाली विशेष सुविधाओंपर लगी हुई थीं।

अपनी विज्ञप्तिमें उन्होंने कहा था कि वे पंचायती कृषि आन्दोलनके पक्षमें हैं और केन्द्रीय समितिपर उन्होंने यह दोष भी लगाया था कि पंचायती खेतीके काममें वह काफ़ी तेजी नहीं दिखा रही। परन्तु वास्तवमें समाजवादी निर्माण कार्यमें किसानोंका सहयोग प्राप्त करनेकी वे खिल्ली उड़ाते थे। वे इस वातका प्रचार करते थे कि मज़दूर-वर्ग और किसानोंके बीचका " निष्पत्तिहीन संघर्ष " अनिवार्य है। उनकी आशाएँ देहातके " सुसंस्कृत इज़ारादारों " पर, अर्थात् कुलकोंपर, लगी हुई थीं।

विरोधी मंचोंमें यह विज्ञप्ति सबसे झूठी थी।

इस विज्ञप्तिका उद्देश्य था पार्टीको धोखा देना। केन्द्रीय समितिने तुरन्त ही विवाद आरम्भ करना अस्वीकार किया। उसने विरोधियोंको सूचित किया कि यह आम विवाद पार्टी-नियमोंके अनुसार ही, अर्थात् पार्टी-कांग्रेसके दो महीने पहले ही, शुरू हो सकता है।

अक्तूबर १९२७ में, पंद्रहवीं कांग्रेसके दो महीने पहले, केन्द्रीय समितिने आम पार्टी-विवादकी सूचना दी और युद्ध छिड़ गया। उसका परिणाम त्रात्स्कीपंथियों और जिनोवियेफ़के अनुयायियोंको सचमुच चुल्लू भर पानीमें डुबाने वाला था,—७ लाख २४ हजार पार्टी-मेम्बरोंने केन्द्रीय समितिकी नीतिके लिये वोट दिया और केवल ४ हजार अथवा एक प्रतिशतसे भी कमने त्रात्स्की और जिनोविवेफ़के गुटके लिये वोट दिया। पार्टी-विरोधी गुटको धूल चाटनी पड़ी। पार्टी-मेम्बरोंके दलबलने एकमत होकर गुटकी विज्ञप्तिको ठुकरा दिया।

जिस पार्टीके फ़ैसलेके लिये विरोधियोंने स्वयं अपील की थी, उसका यही स्पष्ट मत था।

परन्तु गुटबाजोंने इस अनुभवसे भी सबक़ न सीखा। पार्टी-मतके सामने झुकनेके बदले उन्होंने उसे विफल करनेकी चेष्टा की। विवाद समाप्त होनेके पहले ही यह जान कर कि उनके भाग्यमें धूल चाटना ही बदा है, उन्होंने यह ते कर लिया कि पार्टी और सोवियत सरकारसे लड़नेके लिये और गहरे दाँव करना चाहिये। उन्होंने निश्चय किया था कि वे मॉस्को और लेनिनग्रादमें खुला विरोध प्रदर्शन करेंगे। अपने प्रदर्शनके लिये उन्होंने ७ नवम्बरको, अक्तूबर क्रान्तिकी वर्षीके दिनको, चुना जब कि सोवियत संघकी श्रमिक जनता प्रतिवर्ष अपना देशव्यापी क्रान्तिकारी प्रदर्शन करती है। त्रात्स्कीपंथियों और जिनोव्येफ़के अनुयायियोंने इसी समय प्रदर्शन करनेकी योजना की। जैसा कि अनुमान किया जा सकता था, गुटबाज केवल मुट्ठी भर गुर्गोंको सड़कोंपर इकट्ठा कर सके। ये गुर्गे और उनके दाता लोग आम प्रदर्शनमें खो गये और सड़कोंसे न जाने किस ओर बह गये।

अब इसमें कोई सन्देह न रह गया था कि त्रात्स्कीपंथी और जिनोविवेफ़के अनुयायी निश्चितरूपसे सोवियतविरोधी बन गये हैं। आम पार्टी-विवादमें उन्होंने केन्द्रीय समितिके विरुद्ध पार्टीसे अपील की थी। अपने इस टुटपूँजिये प्रदर्शनमें पार्टी और सोवियत राजके विरुद्ध उन्होंने विरोधी वर्गोंसे अपील करनेकी राह पकड़ी थी। एक बार बोल्शेविक पार्टी की जड़ काटनेका विचार करनेपर उनके लिये सोवियत राजकी जड़ काटना भी लाजमी था क्योंकि सोवियत संघमें बोल्शेविक पार्टी और शासन सत्ता अभिन्न हैं। ऐसी स्थितिमें त्रात्स्की-जिनोविवेफ गुटोंके नेताओंने अपनेको पार्टीसे बहिष्कृत कर लिया था। जो लोग इतने गिर गये हों कि सोवियत-विरोधी काम करनेपर उतर आये हों, उन्हें बोल्शेविक पार्टीकी पाँतिमें न रहने दिया जा सकता था।

१४ नवंबर १९२७ को केन्द्रीय समिति और केन्द्रीय नियंत्रण मंडलके संयुक्त अधिवेशनने त्रात्स्की और ज़िनोवियेफ़को पार्टीसे निकाल दिया।

२. समाजवादी औद्योगिक निर्माणकी प्रगति—कृषिकी विलंबित गति—१५ वीं पार्टी कांग्रेस—पंचायती खेतीकी नीति—त्रात्स्कीपंथियों और ज़िनोवियेफ़के अनुयायियोंके गुटकी पराजय—राजनीतिक दुरंगापन।

१९२७ के अन्त तक समाजवादी औद्योगिक निर्माणकी नीतिकी निर्णायक सफलतामें सन्देह न रह गया। नवीन आर्थिक नीतिसे थोड़े ही समयमें औद्योगिक निर्माणमें यथेष्ट प्रगति हुई। उद्योग-धन्धों और कृषिका उत्पादन, जिसमें लकड़ीके धन्धे और मछलियाँ भी शामिल थीं, युद्धपूर्वके स्तर तक पहुँच गया था और उससे आगे भी बढ़ गया था। औद्योगिक उत्पादन देशके समूचे उत्पादनका ४२% था। यही युद्धपूर्वका अनुपात था।

व्यक्तिगत उद्योग-धन्धे मंद पड़ रहे थे और समाजवादी धन्धे बढ़ रहे थे। १९२४–२५ में इनका उत्पादन ८१% था; १९२६–२७ में बढ़कर यह ८६% हो गया। व्यक्तिगत उद्योग-धन्धोंका उत्पादन उसी अवधिमें १९% से गिरकर १४% हो गया।

इसका यह अर्थ था कि सोवियत संघमें औद्योगिक निर्माण मुख्य रूपसे समाजवादी है, औद्योगिक विकास उत्पादनकी समाजवादी प्रणाली की ओर हो रहा है; और जहाँ तक उद्योग-धन्धोंका सम्बन्ध था, इस प्रश्नका उत्तर कि "जीतेगा कौन ?" अभीसे समाजवादके पक्षमें निश्चित हो गया है।

इतनी ही शीघ्रतासे व्यापारके क्षेत्रमें सेठजीका भी टाट उलट दिया गया। खुदरा बाजारमें उनका हिस्सा १९२४–२५ में ४२% था। अब १९२६–२७ में गिरकर वह ३२% रह गया। थोक बाजारमें तो इसी अवधिमें उनका हिस्सा ७% से गिरकर ५% ही रह गया।

बड़े उद्योग-धन्धोंके विकासकी गति और भी तीव्र थी। पुनःसंगठन कालके एक साल बाद, १९२७ में उसका उत्पादन पहले सालसे १८% बढ़ गया। औद्योगिक विकासका यह एक रिकार्ड था, जो सबसे बढ़े हुए पूँजीवादी देशोंके भी उद्योग-धन्धोंकी पहुँचके बाहर था।

परन्तु कृषिमें, विशेषकर अन्नकी खेतीमें, इससे उल्टा हाल था। यद्यपि कुल मिलाकर कृषिने युद्धपूर्वके स्तरको पारकर लिया था परन्तु उसकी सबसे महत्वपूर्ण शाखा, अन्नकी खेती की कुल पैदावार युद्धपूर्वके स्तरका ८१% प्रतिशत ही थी। फ़सल

का अलग किया हुआ भाग, अर्थात् शहरोंके लिये बेचा जानेवाला अन्न, युद्धपूर्वके स्तरका मुश्किलसे ३७% था। इसके सिवा सब लक्षण यही कह रहे थे कि बिकाऊ अन्नमें अभी और कमी होगी।

इसका यह अर्थ था कि १९१८ में जो विभाजन-क्रिया आरंभ हुई थी, वह अभी चालू थी। बाज़ारके लिये अन्न पैदा करनेवाले बड़े खेत छोटे खेतोंमें बँट गये, इन छोटे खेतोंकी बरिया बनीं। ये खेत और बरियां किसानोंको प्रत्यक्ष रूपसे बाबा आदमकी आर्थिक व्यवस्थाकी ओर ढकेल रही थीं। बाज़ारके लिये ज़रूरी नाजका एक बहुत छोटा हिस्सा इससे पूरा होता था। १९२७ में अनाजकी फसल युद्धपूर्वके स्तरसे कुछ ही कम थी परन्तु शहरोंके लिये जो बिकाऊ फालतू अन्न बचा, वह युद्धपूर्वके बिकाऊ फालतू अन्न के एक तिहाईसे कुछ ही ज़्यादा था।

इसमें कोई सन्देह न था कि अनाजकी खेतीकी यही दशा रही तो फ़ौज और शहर के लोगोंको एक अविराम दुर्भिक्षका सामना करना पड़ेगा।

यह अनाजकी खेतीका संकट था और इसके बाद पशुपालनमें भी संकट उत्पन्न होता।

इस दुर्दशासे बचनेका एक ही उपाय था कि बड़े पैमानेपर खेती शुरू की जाय जिससे ट्रैक्टरों और खेतीकी बड़ी मशीनोंका उपयोग किया जा सके और बिकाऊ फालतू अन्नमें कई गुना बढ़ती हो सके। देशके सामने दो मार्ग थे। या तो हम बड़े पैमानेपर **पूँजीवादी** खेती शुरू करें जिससे किसान तबाह हो जायँ, किसान-मजदूरोंका सहयोग नष्ट हो जाय, कुलकोंकी शक्ति बढ़े और देहातमें समाजवादका पतन हो। या हम छोटे खेतोंको बड़े-बड़े समाजवादी खेतोंमें परिणत करें, पंचायती खेत बनायें जो अनाजकी खेतीकी तीव्र प्रगतिके लिये और बिकाऊ फालतू अन्नकी तेजीसे बढ़तीके लिये ट्रैक्टरों और दूसरी आधुनिक मशीनोंका उपयोग कर सकें।

यह स्पष्ट था कि बोल्शेविक पार्टी और सोवियत शासन दूसरे मार्गको ही, कृषि-विकासके पंचायती खेतीवाले मार्गको ही, अपना सकते थे।

इस कार्यमें लेनिनके निर्देशोंने पार्टीका मार्गदर्शन किया। ये निर्देश छोटी किसानीसे बड़ी, सहकारिता वाली, पंचायती खेती, की ओर बढ़नेकी आवश्यकतापर थे और इस प्रकार थे,—

(क) "छोटी किसानी करते हुए गरीबीसे बचाव नहीं हो सकता।" (संक्षिप्त लेनिन-ग्रंथावली—अं. सं., खं. ८, पृ. १९५)

(ख) "यदि पुराने ढर्रेपर अपनी छोटी किसानी करते ही जायेंगे तो स्वतंत्र भूमिपर स्वतंत्र नागरिक हो जानेसे भी हम तबाह हुए बिना न रहेंगे।"
(उपरोक्त—खंड ६, पृ. २७०)

(ग) "अगर खेतीको आगे बढ़ना है तो दूसरी मंज़िल तक उसके विकासको निश्चित कर लेना चाहिये। यह दूसरी मंज़िल अनिवार्य रूपसे यह होगी जिसमें

सबसे पिछड़े हुए और सबसे कम मुनाफेवाले बिखरे हुए छोटे-छोटे खेत क्रमशः मिलकर बड़े पंचायती खेत बनेंगे।" **(उपरोक्त—खंड ९, पृ. १५१)**

(घ) "यदि हम प्रत्यक्षतः व्यवहारमें किसानोंको सम्मिलित, पंचायती, सहकारी, संघबद्ध खेतीके लाभ समझा सकें, यदि हम सहकारी या संघबद्ध खेतीसे किसानोंकी सहायता कर सकें, तभी मजदूर-वर्ग, जिसके हाथमें शासन-सूत्र है, वास्तवमें किसानोंको विश्वास दिला सकेगा कि उसकी नीति सही है, तभी वह लाखों किसानोंको अपना वास्तविक और स्थायी अनुयायी बना सकेगा।"

(उपरोक्त—खंड ८, पृ. १९८)

१५ वीं पार्टी कांग्रेसके पहले यही परिस्थिति थी। २ दिसम्बर, १९२७ को १५ वीं पार्टी कांग्रेस शुरू हुई। इसमें ८,८७,२३३ पार्टी मेम्बरों और ३,४८,९५७ उम्मीदवार मेम्बरोंकी ओरसे ८९८ वोट देनेवाले और ७७१ केवल बोलनेका अधिकार रखनेवाले प्रतिनिधि आये।

केन्द्रीय समितिकी ओरसे रिपोर्ट देते हुए कॉ. स्तालिनने औद्योगिक निर्माणकी सफलता और समाजवादी उद्योग-धन्धोंके द्रुत प्रसारका उल्लेख किया। पार्टीके सामने उन्होंने यह काम रखा,—

"ग्राम और नगरमें आर्थिक व्यवस्थाकी सभी शाखाओंमें महत्वके समाजवादी स्थानोंको विस्तृत और दृढ़ किया जाय और आर्थिक व्यवस्थासे पूँजीवादी लोगोंको खदेड़नेकी नीतिका अनुसरण किया जाय।"

कॉ. स्तालिनने कृषि और उद्योग-धन्धोंकी तुलना की, कृषिके पिछड़े होनेकी चर्चा की और उसका कारण खेतीका बिखरा होना बताया जिससे वह आधुनिक मशीनोंका उपयोग न कर सकती थी। उन्होंने इस बातपर जोर दिया कि कृषिकी इस दुरवस्थासे देशकी सम्पूर्ण आर्थिक व्यवस्थापर संकट आ रहा है।

उन्होंने पूछा, "इस संकटसे बचनेका क्या उपाय है ?"

और उत्तर दिया,—

"बचनेका यह उपाय है कि बिखरे हुए छोटे खेतोंसे बड़े संयुक्त खेत बनाये जायँ। इनका आधार सम्मिलित खेती होना चाहिये। नये और उच्चतर कौशलके आधारपर पंचायती खेतीका श्रीगणेश करना चाहिये। बचनेका यही उपाय है कि बरिया और छोटे खेतोंको धीरे-धीरे परन्तु निश्चित गतिसे, दबावसे नहीं वरन् समझा-बुझाकर और आचरणसे, संयुक्त करके उनके बड़े खेत बनाये जायँ। इनका आधार सम्मिलित, सहकारितामूलक, पंचायती खेती होना चाहिये जिसमें खेतीकी मशीनों और ट्रैक्टरोंका उपयोग किया जाय और घनी खेती करनेके वैज्ञानिक उपायोंसे काम लिया जाय। और बचनेका दूसरा उपाय नहीं है।"

पन्द्रहवीं कांग्रेसने एक प्रस्ताव पास किया; जिसमें उसने खेतीमें **पंचायती पद्धति**को यथासंभव आगे बढ़ानेका निर्देश किया। पंचायती और सरकारी खेतोंको विस्तृत और दृढ़ करनेके लिये कांग्रेसने एक योजना स्वीकार की। खेतीमें पंचायती पद्धतिको जमानेके लिये संघर्ष करते हुए किन उपायोंसे काम लिया जाय, इसका भी उसने स्पष्ट निर्देश किया।

इसके साथ ही कांग्रेसने यह भी निर्देश किया कि,—

"कुलकविरोधी मुहीमको और आगे बढ़ाया जाय, और कुछ विशेष उपायोंसे काम लिया जाय जिससे देहातमें पूँजीवादका विकास नियंत्रित हो और छोटी किसानी करनेवालोंका समाजवादकी ओर मार्गदर्शन हो। **(रूसी कम्युनिस्ट पार्टीके प्रस्ताव—रूसी सं., भाग २, पृ. २६०)**

अंतमें, यह देखते हुए कि आर्थिक योजनाकी जड़ जम चुकी है, और सारे आर्थिक मोर्चेपर पूँजीवादी लोगोंपर समाजवादका व्यवस्थित आक्रमण करना है, कांग्रेसने उपयुक्त संस्थाओंको निर्देश किया कि वे देशके आर्थिक विकासके लिये **प्रथम पंचवर्षीय योजना** बनायें।

समाजवादी निर्माणकी समस्याओंपर निर्णय स्वीकृत करनेके बाद कांग्रेसने त्रात्स्की-पंथियों और जिनोवियेफके अनुयायियोंके गुटको समाप्त करनेके प्रश्नपर विचार किया।

कांग्रेसने स्वीकार किया कि,—

"सैद्धान्तिक रूपसे विरोधी दल लेनिनवादसे अलग जा पड़ा है, गिरकर वह एक मेन्शेविक गुट बन गया है, अब उसने घरेलू और अन्तरदेशीय पूंजीपतियोंके सामने घुटने टेकनेकी बान पकड़ी है, और वस्तुतः सर्वहारा-एकाधिपत्यके शासनके विरुद्ध क्रान्तिविरोधियोंका अस्त्र बन गया है।" **(रूसी कम्युनिस्ट पार्टीके प्रस्ताव—रूसी सं, भाग २, पृ. २२२)**

कांग्रेसने देखा कि पार्टी और विरोधी दलका भेद अब दो कार्यक्रमोंका भेद बन गया है; अब त्रात्स्कीपंथी विरोधने सोवियत शासनसे विरोध करनेकी राह पकड़ी है। इसलिये कांग्रेसने घोषित किया कि त्रात्स्कीपंथी विरोधकी अनुगति और उसका प्रचार बोल्शेविक पार्टीकी सदस्यताके प्रतिकूल है। दोनों एक साथ नहीं चल सकते।

कांग्रेसने केन्द्रीय समिति तथा केन्द्रीय नियंत्रण मंडलके संयुक्त अधिवेशनके इस निर्णयका अनुमोदन किया कि त्रात्स्की और जिनोवियेफको पार्टीसे निकाल दिया जाय। कांग्रेसने निश्चय किया कि त्रात्स्की-जिनोवियेफ गुटके सभी क्रियाशील सदस्योंको, जैसे रादेक, प्रिओब्राजेन्स्की, राकोव्स्की, पियाताकोफ, सेरेब्रियाकोफ, इ. स्मिर्नोफ, कामेनेफ, सारकिस, साफ्रोनोफ, लिफ्शित्स, म्दिवानी, स्मिल्गा आदियों, और पूरे "जनवादी—मध्यवादी" गुटको (साप्रोनोफ, वी. स्मिर्नोफ, बोगुस्लावस्की, द्रोब्निस आदियों) पार्टीसे निकाल दिया जाय।

सिद्धान्त और संगठनके क्षेत्रोंमें परास्त होकर त्रात्स्की-जिनोवियेफ़ गुटके अनुयायियोंका जनतामें नाममात्रको भी प्रभाव न रह गया।

१५ वीं पार्टी कांग्रेसके वाद ही निकाले हुए लेनिनवाद-विरोधी त्रात्स्कीवादकी कालिख धोते हुए वक्तव्य देने लगे और पार्टीमें फिर लिये जानेकी प्रार्थना करने लगे। अवश्य ही, उस समय पार्टी यह न जान सकती थी कि त्रात्स्की, राकोव्स्की, रादेक, क्रेस्तिन्स्की, सोकोलनीकौफ़ आदि वहुत दिन पहलेसे ही जनताके दुश्मन बने हुए हैं, और वे विदेशी जासूस विभागोंके खरीदे हुए गुप्तचर हैं। पार्टी यह भी न जानती थी कि कामेनेफ़, जिनोवियेफ़, पियाताकौफ़ आदिने पूँजीवादी देशोंमें सोवियत संघके शत्रुओंके साथ सोवियत जनताके विरुद्ध उनसे "मेल करने" के लिये अभी भी सम्बन्ध जोड़ना शुरू कर दिया है। लेकिन अनुभवसे पार्टी जानती थी कि इन व्यक्तियोंसे, जिन्होंने लेनिन और लेनिनवादी पार्टीपर अनेक वार संकटकालमें आक्रमण किया था, किसी भी तरहकी दुष्टताकी आशा की जा सकती है। इसलिये उन्होंने पार्टीमें फिर आनेके जो प्रार्थनापत्र दिये, उनके प्रति उसे संदेह वना रहा। *उनकी सचाईकी पहली कसौटी यह रखी गयी कि पार्टीमें आनेके पहले वे इन शर्तोंको पूरा करें,—*

(क) वे खुले आम त्रात्स्कीवादको बोल्शेविक-विरोधी और सोवियत-विरोधी कहकर उसकी निन्दा करें।

(ख) वे खुले आम पार्टी-नीतिको एकमात्र सही नीति स्वीकार करें।

(ग) वे विना किसी शर्तके पार्टी और उसकी संस्थाओंके निर्णयोंको मानें।

(घ) वे कुछ समय उम्मेदवारीमें वितायें जिसमें पार्टी उन्हें परखे। इस अवधिके समाप्त होनेपर परीक्षा-फलके अनुसार पार्टी हर उम्मेदवारको अपनी पाँतिमें लेनेपर विचार करे।

पार्टीने सोचा कि निकाले हुए लोग इन बातोंको खुले आम स्वीकार करेंगे तो उससे पार्टीका भला ही होगा। इससे त्रात्स्कीपंथियों और जिनोवियेफ़के अनुयायियोंकी पाँतिकी एकता नष्ट हो जायगी, उनका मनोवल क्षीण होगा, एक वार फिर पार्टीका औचित्य और उसकी सामर्थ्य प्रदर्शित होगी, और यदि प्रार्थी ईमानदार हुए तो पार्टी अपने पुराने कार्यकर्ताओंको फिर अपनी पाँतिमें ले सकेगी। यदि वे ईनामदार न हुए तो जनताके सामने उनका पर्दाफाश किया जा सकेगा कि वे गुमराह लोग नहीं है वरन् सिद्धान्तहीन कमाऊ-खाऊ लोग हैं, मजदूर-वर्गको धोखा देनेवाले और घिसे हुए धोखेबाज़ हैं।

निकाले हुए लोगोंमेंसे अधिकांशने इन शर्तोंको मान लिया और पत्रोंमें इस आशयके खुले आम वक्तव्य प्रकाशित किये।

उनसे सहृदयताका व्यवहार करनेकी इच्छासे और पार्टी तथा मजदूर-वर्गके आदमी वननेका अवसर छीननेकी अनिच्छासे पार्टीने उन्हें अपनी पाँतिमें मिला लिया।

फिर भी समयने दिखा दिया कि कुछ अपवाद छोड़कर त्रात्स्की-जिनोवियेफ़ गुटके

"सरदारों" का पश्चाताप आदिसे लेकर अन्त तक मिथ्या और धूर्ततापूर्ण था।

आगे चलकर मालूम हुआ कि प्रार्थनापत्र देनेके पहले ही ये लोग किसी राजनीतिक मतके प्रतिनिधि न रह गये थे जो जनताके सामने उसका समर्थन करते। वे ऐसे सिद्धान्तहीन कमाऊ-खाऊ लोग बन गये थे जो जनताके सामने अपने ही मतके ध्वंसावशेषको रौंदनेके लिये तैयार थे, पार्टीका मत जो उनके लिये अमान्य था, उसकी जनताके सामने वाह-वाह करनेको तैयार थे, और गिरगिटोंकी तरह वे हर तरह रंग बदलनेको तैयार थे यदि इससे वे केवल पार्टी और मजदूर-वर्गकी पाँतिमें रह सकते और मजदूर-वर्ग तथा उसकी पार्टीका अनहित करनेका अवसर पा सकते।

त्रात्स्की-जिनोवियेफ़ गुटके "सरदार" राजनीतिक धोखेबाज और दुरंगी चाल चलनेवाले साबित हुए।

राजनीतिक धोखेबाज साधारणतः धोखेसे ही श्रीगणेश करते हैं और जनता, मजदूर-वर्ग और मजदूर-वर्गकी पार्टीको धोखा देकर अपने दुष्ट लक्ष्योंकी सिद्धि करते हैं। परन्तु राजनीतिक धोखेबाजोंको धोखेकी टट्टी न समझना चाहिये। राजनीतिक धोखेबाज सिद्धान्तहीन राजनीतिक कमाऊ-खाऊ लोग होते हैं जो बहुत पहले ही जनताका विश्वास गँवाकर धोखेसे, गिरगिटोंकी तरह रंग बदलकर, प्रपंच करके, किसी भी उपायसे फिर उसका विश्वासपात्र बननेकी चेष्टा करते हैं जिससे केवल उनकी राजनीतिक नेतागीरी बनी रहे। राजनीतिक धोखेबाज सिद्धान्तहीन राजनीतिक कमाऊ-खाऊ लोग होते हैं जो कहीं भी, जरायम-पेशा लोगोंमें भी, समाजके पतितसे पतित लोगोंमें भी, जनताके कट्टर दुश्मनोंमें भी, अपने सहायक बनानेके लिये तैयार रहते हैं जिससे कि "शुभ घड़ी" आनेपर वे फिर राजनीतिक मंचपर आ कूदें और जनताके "शासक" बनकर उसकी पीठपर लद जायँ।

त्रात्स्की-जिनोवियेफ़ गुटके "सरदार" इसी तरहके राजनीतिक धोखेबाज थे।

३. कुलक विरोधी मुहीम—पार्टीविरोधी बुखारिन-राइकोफ़ गुट—प्रथम पंचवर्षीय योजनाकी स्वीकृति—समाजवादी होड़—सामूहिक पंचायती खेतीका आन्दोलन।

एक ओर त्रात्स्की-जिनोवियेफ़ गुट पार्टीनीतिके विरुद्ध, समाजवादके निर्माणके विरुद्ध, और पंचायती खेतीको चालू करनेके विरुद्ध, आन्दोलन कर रहा था, दूसरी ओर बुखारिनवादी यह प्रचार कर रहे थे कि पंचायती खेतोंसे कुछ न होगा; कुलकोंको अकेले छोड़ देना चाहिये, वे अपने "स्वतः विकास" से समाजवादकी ओर आ जायँगे, और पूँजीवादियोंका घेरा समाजके लिये संकटपूर्ण नहीं है। इन सब बातोंको

देशके पूँजीवादी लोगोंने, विशेषकर कुलकोंने, बड़े ध्यानसे सुना। समाचारपत्रोंकी टीका-टिप्पणीसे कुलक यह जान गये कि वे अकेले नहीं हैं वरन् त्रात्स्की, जिनोविरेफ़, कामेनेफ़, बुखारिन, राइकोफ़ आदि उनके समर्थक और उनकी वकालत करनेवाले लोग हैं। यह स्वाभाविक था कि इससे कुलक और भी डटकर सोवियत सरकारकी नीतिका विरोध करने लगें। और वास्तवमें कुलकोंका विरोध दृढ़तर बनता गया। उन्होंने सोवियत सरकारको अपना फालतू अन्न—जो उनके पास काफ़ी था, सामूहिक रूपसे बेचने से इनकार कर दिया। पंचायती खेतोंके किसानों, पार्टीके कार्यकर्ताओं, और देहातके सरकारी अफ़सरोंको आतंकवादी उपायोंसे मारने-सताने लगे और पंचायती खेतों तथा सरकारी खलिहानोंमें आग लगाने लगे।

पार्टीने अनुभव किया कि जब तक कुलक-विरोधकी रीढ़ न तोड़ दी जायगी, जब तक खुले मैदानमें सब किसानोंके सामने उन्हें पछाड़ा न जायगा, तब तक मज़दूर-वर्ग और लाल फ़ौजको अन्नकी तंगी बनी रहेगी और किसानोंमें पंचायती खेतीका आन्दोलन सामूहिक रूप न धारण कर सकेगा।

१५ वीं पार्टी कांग्रेसका आदेश पालन करते हुए पार्टीने जमकर कुलक-विरोधी मुहीम शुरू कर दी। उसने नारा लगाया—ग़रीब किसानोंका भरोसा करो, मँझले किसानोंसे सहयोग बढ़ाओ और कुलकोंसे निर्मम संग्राम ठानो। इसी नारेके अनुसार उसने कार्य किया। नियंत्रित मूल्यपर फालतू अन्न न बेचनेपर पार्टी और सरकारने कुछ विशेष उपाय किये। दण्ड विधानकी १०७ वीं धारा लागू की गयी जिससे सरकारको बँधे मूल्यपर अन्न न बेचनेपर अदालतें कुलकों और मुनाफ़ाखोरोंसे अन्न ज़ब्त कर सकती थी। ग़रीब किसानोंको कुछ विशेषाधिकार दिये गये जिससे कुलकोंसे छीने हुए अन्नका २५% उन्हें दिया जाता था।

ये विशेष उपाय कारगर हुए। ग़रीब और मँझले किसान कुलकोंसे डटकर लड़नेमें शामिल हुए। कुलकों और मुनाफ़ाखोरोंका विरोध तोड़ दिया गया। १९२८ के अन्त तक सोवियत सरकारके पास काफ़ी अन्न आ गया था और पंचायती खेतीका आन्दोलन निश्चित गतिसे आगे बढ़ने लगा।

उसी वर्ष कोयलेकी खानोंवाले दोन्येत्स प्रदेशके शाख्ती ज़िलेमें एक तोड़-फोड़ करनेवालोंके संगठनका पता लगा। इसमें पूँजीवादी विशेषज्ञ थे। खानोंके पहलेके मालिकों—रूसी और विदेशी पूँजीपतियों—से, और विदेशी सैनिक जासूस विभागोंसे इन लोगोंका घनिष्ठ सम्बन्ध था। इनका उद्देश था कि समाजवादी उद्योग-धन्धोंके विकासको विच्छिन्न कर दिया जाय और सोवियत संघमें पूँजीवादको पुनः प्रतिष्ठित करनेमें सहायता की जाय। कोयलेका उत्पादन कम करनेके लिये तोड़-फोड़ करनेवालोंने जान-बूझकर खानोंका प्रबन्ध बिगाड़ दिया था, मशीनों और हवा पहुँचानेके यंत्रोंको बिगाड़ दिया था, विस्फोट करके छतें गिरा दी थीं, और खानों, कारखानों और बिजली घरोंमें आग लगा दी थी। तोड़-फोड़ करनेवालोंने जान-बूझकर मज़दूरोंकी अवस्था सुधारनेके

काममें रोड़े अटकाये थे और सोवियतके मज़दूरोंकी रक्षा सम्बंधी क़ानूनोंको तोड़ा था।

तोड़फोड़ करने वालोंकी पेशी हुई और उन्हें अपने कियेकी सजा मिल गयी।

केन्द्रीय समितिने सभी पार्टी-संगठनोंको आदेश किया कि शाख्तीके उदाहरणसे शिक्षा ग्रहण करें। कामरेड स्तालिनने कहा कि बोल्शेविक प्रबंध समितियोंको स्वयं उत्पादन-कौशलमें विशेषज्ञ बनना चाहिये जिससे कि पुराने पूँजीवादी विशेषज्ञोंकी पाँतिके तोड़ फोड़ करनेवाले उनकी आखोंमें धूल न झोंक सकें; मजदूर-वर्गमें ही कौशलकी शिक्षा देनेके कार्यको आगे बढ़ाना चाहिये।

केन्द्रीय समितिके निर्णयके अनुसार टेकनीकल कालेजोंमें नौजवान विशेषज्ञोंके शिक्षण-कार्यमें उन्नति हुई। हजारों पार्टी मेम्बर, नौजवान कम्युनिस्ट सभाके मेम्बर और पार्टीके बाहरके लोग जो मज़दूर-वर्गका हित चाहते थे, शिक्षाके लिये बुलाये गये।

कुलक-विरोधी मुहीम शुरू करनेके पहले जब पार्टी त्रात्स्की-ज़िनोविफ़ गुटका निपटारा कर रही थी, तब बुखारिन-राइकोफ़ गुटवाले सिर झुकाये पड़े थे कि पार्टी-विरोधी लोगोंके लिये रिजर्वका काम करें। खुलकर त्रात्स्कीपंथियोंका समर्थन करनेका उनमें साहस न था: कभी-कभी तो वे त्रात्स्कीपंथियोंके विरुद्ध पार्टीका साथ भी दे जाते थे। परन्तु जब पार्टीने कुलक-विरोधी मुहीम शुरू की और उनके विरुद्ध विशेष उपायोंसे काम लिया तो बुखारिन-राइकोफ़ गुटने अपनी नकाब उतार फेंकी और वे लोग खुले आम पार्टीका विरोध करने लगे। बुखारिन-राइकोफ़ गुट अपनी कुलक-आत्मासे पराभूत होकर खुले आम कुलक-पक्षका समर्थन करने लगा। वे इस बातकी माँग करने लगे कि विशेष उपायोंको रद कर दिया जाय; सीधे आदमियोंको यह कहकर डराने लगे कि इसके बिना कृषिका "पतन" होने लगेगा, और यहाँ तक कहने लगे कि पतनकी यह क्रिया अभी भी आरम्भ हो चुकी है। पंचायती और सरकारी खेतोंकी बढ़तीको वे न देख रहे थे, जो कृषि-संगठनके उच्चतर रूप थे। कुलक-खेतीको घटते देखकर वे कहने लगे कि कृषिका ही पतन होने लगा है। अपनी बातको सैद्धान्तिक आधार देनेके लिये उन्होंने बेसिर पैरका "वर्ग संघर्षके मद्धिम पड़नेका सिद्धान्त" भी गढ़ डाला। इसके अनुसार उनका कहना था कि, पूँजीवादी लोगोंके विरुद्ध समाजवादकी प्रत्येक विजयसे वर्ग-संघर्ष मद्धिम पड़ेगा और शीघ्र ही मद्धिम पड़ते-पड़ते शान्त हो जायगा। वर्ग-शत्रु बिना लड़े ही मोर्चेसे हट जायगा और इसलिये कुलक-विरोधी मुहीमकी भी कोई आवश्यकता नहीं है। इस प्रकार उन्होंने अपने नंगे-बूचे पूँजीवादी सिद्धान्तको सजानेकी कोशिश की कि कुलक-शान्तिपूर्ण उपायोंसे ही समाजवादकी ओर बढ़ आवेंगे। लेनिनवादके इस सुविदित सिद्धान्तको वे रौंदते चले गये कि समाजवादकी विजयसे जैसे-जैसे वर्ग-शत्रु के पैरोंके नीचेसे धरती खिसकेगी, वैसे-वैसे उनका विरोध और तीव्र होगा और वर्ग-शत्रुके ध्वंसके बाद ही वर्ग-संघर्ष "शान्त" होगा।

यह देखना सरल था कि पार्टीके सामने बुखारिन-राइकोफ़ गुट नरम अवसर-वादियोंका गुट है। यह गुट त्रात्स्की-ज़िनोविफ़ गुटसे केवल रूपमें भिन्न है, केवल इस

बातमें भिन्न है कि इन पराजयवादियोंको "अविराम क्रान्ति" के गरम, क्रान्तिकारी नारोंसे अपनी वास्तविकतापर पर्दा डालनेका कुछ अवसर मिला था। परन्तु बुखारिन-राइकौफ़ गुट कुलक-विरोधी मुहीमके आड़े आकर, पार्टीपर आक्रमण करके, अपने पराजयवादी लक्षणोंको न छिपा सकता था; उसे खुले आम, बिना किसी पर्दे या नक़ाब के, अपने देशके प्रतिक्रियावादी लोगों, विशेषकर कुलकोंका पक्ष समर्थन करना पड़ा।

पार्टी समझ गयी कि पार्टीपर संयुक्त आक्रमण करनेके लिये बुखारिन-राइकौफ़ गुट आगे-पीछे त्रात्स्की-जिनोवियेफ़ गुटके बचे-खुचे लोगोंसे अवश्य मिल जायगा।

अपनी राजनीतिक विज्ञप्तियोंके साथ बुखारिन-राइकौफ़ गुट अपने अनुयायियोंको जोड़-बटोरकर संगठित करनेका भी "कार्य करता रहा"। उसने बुखारिन द्वारा स्लेप्कौफ़, मेरेत्स्की, आइखेनवॉल्ड, गोल्डेनबर्ग आदि नौजवान पूँजीवादी लोगोंको इकट्ठा किया; तौम्स्की द्वारा मेलनीचान्स्की, दोगादौफ़ आदि ट्रेड यूनियनोंके ऊँचे नौकरशाहोंको इकट्ठा किया और राइकौफ़ द्वारा ए. स्मिनौंफ़, आइज़मौंट, वी. श्मित, आदि मनोबलहीन सोवियत अफ़सरोंको इकट्ठा किया। जिन लोगोंका राजनीतिक पतन हो गया था, और जो अपने पराजयवादी भावोंपर पर्दा न डालते थे, वे तुरन्त ही इस गुटकी ओर आकृष्ट हुए।

इसी समयके लगभग बुखारिन-राइकौफ़ गुटको मॉस्को पार्टी-संगठनके उच्च पदाधिकारी उगलानौफ़, कोतौफ़, ऊखानौफ़, रियूतिन, यागोदा, पोलोन्स्की आदिकी सहायता मिल गयी। गरम दलके कुछ लोग छिपे रहे और पार्टी-नीतिपर खुला आक्रमण करनेसे बचते रहे। मॉस्कोके पार्टी-प्रकाशन और पार्टी सभाओंमें यह कहा जाने लगा कि कुलकोंको सुविधाएँ देनी चाहिये, कुलकोंपर भारी कर लगाना अवांछित है, औद्योगिक निर्माणसे जनतापर बोझ पड़ रहा है और बड़े उद्योग-धन्धोंका निर्माण असामयिक है। उगलानौफ़ने जल विद्युत-योजनाका विरोध किया और इस बातकी माँग की कि बड़े उद्योग-धन्धोंकी रकम छोटे उद्योग-धन्धोंमें लगायी जाय। उगलानौफ़ और दूसरे नरम पराजयवादियोंका कहना था कि मॉस्को हल्के उद्योग-धन्धोंका शहर रहा है और रहेगा, इसलिये मॉस्कोमें बड़े इन्जिनियरिंगके कारखाने बनाना अनावश्यक है।

मॉस्को पार्टी-संगठनने उगलानौफ़ और उसके अनुयायियोंका पर्दाफ़ाश कर दिया, उन्हें अंतिम बार चेतावनी दी और पार्टीकी केन्द्रीय समितिके और भी निकट आगया। १९२८ में सोवियत संघकी कम्युनिस्ट (बोल्शेविक) पार्टीकी मॉस्को कमिटीके एक अधिवेशनमें कॉ. स्तालिनने कहा कि हमें दो मोर्चोंपर लड़ना है और इनमें नरम दलके गुमराहोंपर मुख्य वार करना है। उन्होंने बतलाया कि ये नरम दलवाले पार्टीके भीतर कुलकोंके दलाल हैं।

कॉ. स्तालिनने कहा,

> पार्टीमें गरमदलके गुमराहोंकी जीत होनेसे पूँजीवादी शक्तियोंको छूट मिल जायगी, सर्वहारा-वर्गकी क्रांतिकारी स्थितिमें शिथिलता आ जायगी और अपने

देशमें पूँजीवादके पुनः प्रतिष्ठित होनेका अवसर बढ़ जायगा।" (स्तालिन: लेनिनवाद "रूसी कम्युनिस्ट पार्टीमें नरमदलकी गुमराही"—अं. सं.)

१९२९ के आरंभमें पता लगा कि नरम दलके पराजयवादियोंकी आज्ञासे बुखारिन ने कामेनेफ़को बिचवानी बनाकर त्रात्स्कीपंथियोंसे सम्बन्ध स्थापित कर लिया है और पार्टीसे संयुक्त युद्ध छेड़नेके लिये उनसे समझौतेकी बात चला रहा है। केन्द्रीय समितिने नरम दलवाले पराजयवादियोंकी इस अपराधी कार्यवाहीका भंडाफोड़ कर दिया और उन्हें यह चेतावनी दी कि इस घटना-क्रमका अंत बुखारिन, राइकौफ़, तौम्स्की आदिके लिये शोचनीय हो सकता है। केन्द्रीय समितिकी एक बैठकमें उन्होंने, एक घोषणाके रूपमें, एक नया पार्टी-विरोधी मोर्चा बनाया। केन्द्रीय समितिने इसकी निन्दा की। उसने उन्हें फिर चेतावनी दी और त्रात्स्कीपन्थियों और जिनोवियेफवादियोंपर जैसी बीती थी, उसका उन्हें स्मरण कराया। परन्तु इस सबके होनेपर भी बुखारिन-राइकौफ़ गुट अपनी पार्टी-विरोधी कार्यवाहीसे विचलित न हुआ। राइकौफ़, तौम्स्की और बुखारिनने केन्द्रीय समितिसे त्यागपत्र दे दिये; उनका विचार था कि इस तरह वे पार्टीको बदनाम कर सकेंगे। केन्द्रीय समितिने त्यागपत्र देनेकी इस ध्वंसात्मक नीतिपर निन्दाका प्रस्ताव पास किया। अंतमें, नवम्बर १९२९ में केन्द्रीय समितिके एक अधिवेशनने घोषित किया कि नरम दलके पराजयवादियोंका मत और पार्टीकी सदस्यता दो चीजें हैं जो एक साथ नहीं चल सकतीं। अधिवेशनने निश्चय किया कि नरम दलके पराजयवादियोंका नेता और पथदर्शक बुखारिन है, इसलिये उसे केन्द्रीय समितिकी राजनीतिक कार्यकारिणी (पोलिटिकल ब्यूरो) से निकाल दिया जाय। राइकौफ, तौम्स्की तथा विरोधी गुटके अन्य सदस्योंको गंभीर चेतावनी दी गयी।

हवाका रूख बदलते देखकर नरम दलवाले पराजयवादियोंके सरदारोंने अपनी भूलें स्वीकार करते हुए और पार्टीके राजनीतिक मार्गदर्शनको उचित ठहराते हुए एक वक्तव्य दिया।

अपनी सफ़ोंको टूटकर बिखरनेसे बचानेके लिये नरम पराजयवादियोंने कुछ समयके लिये पीछे हटनेका विचार किया।

नरम पराजयवादियोंसे पार्टीके युद्धका यह पहला पर्व समाप्त हुआ।

पार्टीके भीतर यह नया मतभेद सोवियत संघके बाहरी शत्रुओंकी दृष्टिसे छिपा न रहा। यह समझकर कि पार्टीमें यह "नयी फूट" उसकी निर्बलताका प्रमाण है, उन्होंने फिर एक बार सोवियत संघको युद्धमें फँसानेका प्रयत्न किया। उन्होंने कोशिश की कि औद्योगिक निर्माणका ठीक-ठीक श्रीगणेश होनेके पहले ही उसकी हानि कर दी जाय। १९२९ के ग्रीष्मकालमें साम्राज्यवादियोंने चीन और सोवियत संघके बीच झगड़ा खड़ा कर दिया। उन्होंने चीनके फ़ौजी सरदारोंको भड़काया कि वे चीनकी पूर्वी रेल्वे (चाइनीज़ ईस्टर्न रेल्वे) को, जिसपर सोवियत संघका अधिकार था, छीन लें। हमारी सुदूर पूर्वी सीमापर उन्होंने चीनी सरदारोंसे हमला करवा दिया। चीनके फ़ौजी

सरदारोंका यह हमला शीघ्र ही ठिकाने लगा दिया गया। लाल फ़ौजसे परास्त होकर सरदार लोग पीछे हट गये। मंचूरियाके अधिकारियोंसे सुलह हो गयी और इस तरह यह फ़साद खतम हुआ।

सोवियत संघकी शान्तिसम्बन्धी नीति सभी तरहकी विघ्न-बाधाओंपर, विदेशी शत्रुओंकी दुरभिसंधि और पार्टीकी भीतरी "फूट" पर विजयी हुई।

ब्रिटेनके पुरानपंथी लोगोंने सोवियत संघसे जो राजनीतिक और व्यापारी सम्बन्ध-विच्छेद कर लिया था, वह इसके थोड़े दिन बाद ही पुनः स्थापित हो गया।

बाह्य और आन्तरिक शत्रुओंके आक्रमणोंका सफलतासे निवारण करते हुए पार्टी मुस्तैदीसे बड़े उद्योग-धन्धोंके विकासमें भी लगी हुई थी; वह समाजवादी प्रतियोगिताका संगठन कर रही थी, सरकारी और पंचायती खेतोंका निर्माण कर रही थी, और अंतमें देशकी आर्थिक व्यवस्थाके विकासके लिये प्रथम पंचवर्षीय योजनाकी स्वीकृति और उसकी कार्यरूपमें परिणतिके लिये पृष्ठभूमि तैयार कर रही थी।

अप्रैल १९२९ में पार्टीकी १६ वीं कान्फ्रेन्स हुई। विचार-विषयोंमें प्रथम पंचवर्षीय योजना मुख्य थी। कान्फ्रेन्सने प्रथम पंचवर्षीय योजनाके नरम पराजयवादी "लघुतम" संस्करणको ठुकरा दिया और निश्चय किया कि उसका "महत्तम" संस्करण सभी परिस्थितियोंमें मान्य हो।

इस प्रकार पार्टीने समाजवादके निर्माणके लिये इस सुप्रसिद्ध प्रथम पंचवर्षीय योजनाको स्वीकार किया।

प्रथम पंचवर्षीय योजनाने निश्चित किया कि १९२८–३३ की अवधिमें, देशकी आर्थिक व्यवस्थामें, ६४ अरब ६० करोड़ रूबल पूँजी लगायी जाय। इस धनमेंसे १९ अरब ५० करोड़ रूबल उद्योग-धन्धों और विजलीके कामको आगे बढ़ानेके लिये थे। १० अरब रूबल आवाजाहीके साधनोंको बढ़ानेके लिये और २३ अरब २० करोड़ रूबल कृषिके विकासके लिये थे।

सोवियत संघकी कृषि और उसके उद्योग-धन्धोंको आधुनिक कौशलसे सुसज्जित करनेके लिये यह एक भगीरथ-योजना थी।

कामरेड स्तालिनके शब्दोंमें,—

"प्रथम पंचवर्षीय योजनाका मूल कर्तव्य यह था कि देशमें ऐसे उद्योग-धन्धोंका निर्माण हो जिनसे कि समाजवादी रीतिसे, संपूर्ण उद्योग-धन्धोंको ही नहीं, वरन् यातायात और कृषिको भी पुनः सुसज्जित तथा पुनः संगठित किया जा सके।" (**स्तालिन: लेनिनवादकी समस्याएँ—रू. सं., पृ. ४८५**)

इस वृहत्काय योजनासे बोल्शेविक चकित या विचलित नहीं हुए। औद्योगिक निर्माण और पंचायती खेतीके विकाससे उसका मार्ग प्रशस्त किया गया था। उसके पहले श्रमिक उत्साहकी एक लहर दौड़ गयी थी जिसने मजदूरों और किसानोंको अपनेमें समेट लिया था और जो **समाजवादी प्रतियोगिता**का नामरूप ग्रहण करके प्रकट हुई थी।

१६ वीं पार्टी कान्फ्रेन्सने समाजवादी प्रतियोगिताको और आगे बढ़ानेके लिये सारी श्रमिक जनताके नाम एक अपील निकाली।

समाजवादी प्रतियोगितासे श्रमके प्रति एक नये दृष्टिकोणका जन्म हुआ। उससे अनुकरणीय श्रमिक वीरताके अनेक निदर्शन सामने आये। बहुतसे कारखानों तथा पंचायती और सरकारी खेतोंमें मजदूरों और पंचायती खेतिहरोंने अपनी **प्रतियोजनाएँ** बनायीं जिनमें सरकारी योजनाओंमें निश्चित किये हुए उत्पादनसे आगे बढ़नेका कार्यक्रम रखा गया। उन्होंने श्रम करनेमें वीरताका परिचय दिया। पार्टी और सरकारने समाजवादी विकासकी जो योजनाएँ बनायी थीं, उन्हें उन्होंने पूरा ही नहीं किया वरन् उनसे आगे भी बढ़ गये। श्रमके प्रति लोगोंका दृष्टिकोण बदल गया था। पूँजीवादी व्यवस्थामें मेहनत करनेवाले मन मारकर चक्की पीसते थे। अब मेहनत करना "सम्मान की बात थी, गौरवकी बात थी, शूरता और वीरताकी बात थी।" (स्तालिन)

समग्र देशमें, एक विशाल परिमाणमें, औद्योगिक निर्माणका काम चालू था। नीपर नदीकी जल-विद्युत् योजना पूरे जोरपर थी। दोन्येत्स प्रदेशमें क्रामोतोर्स्क और गोरलोव्काके लोहे और इस्पातके कारखाने बन रहे थे और लुगान्स्कके रेलवेके कारखाने फिरसे बन रहे थे। लोहेकी नयी खानें और लुहारोंकी बड़ी-बड़ी धौंकनियाँ चलने लगीं। यूरालमें मशीन बनानेके कारखाने और बेरज़ेनीकी तथा सोलीकाम्स्कके रसायन-गृह बन रहे थे। माग्नीतोगोर्स्कमें लोहे और इस्पातकी मिलें बनानेका काम शुरू हो गया था। मॉस्को और गोर्कीमें मोटरोंके बड़े-बड़े कारखाने बन रहे थे। ऐसे ही दॉन नदीके तटपर रोस्तौफ़ नगरमें ट्रैक्टर बनानेके बड़े-बड़े कारखाने, हार्वेस्टर कम्बाइन बनानेके कारखाने और खेतीके मशीनें बनानेका एक जंगी कारखाना बन रहा था। कुज़नेत्स्कमें कोयलेकी खानोंका विस्तार हो रहा था। सोवियत संघके कोयला पानेके स्थानोंमें यह द्वितीय था। स्तालिनग्रादके पास कुसरमें ट्रैक्टर बनानेका एक भीमकाय कारखाना ग्यारह महीनेमें ही बन कर तैयार हो गया। नीपर नदीके जल-विद्युत्गृह और स्तालिनग्रादके ट्रैक्टर कारखानेके निर्माणमें मजदूरोंने श्रमिक-उत्पादनका रिकार्ड तोड़ दिया।

ऐसे विशाल परिमाणमें औद्योगिक निर्माण, नये विकासके लिये ऐसा उत्साह, कोटि-कोटि श्रमिक जनताकी ऐसी श्रमसम्बन्धी वीरता—इतिहासने इन्हें पहले न देखा था, न सुना था।

समाजवादी प्रतियोगितासे जनित और प्रेरित श्रमिक-उत्साहकी बाढ़-सी आ गयी थी।

इस बार किसान मजदूरोंसे पीछे न रहे। गावोंमें भी श्रमिक जनतामें, जो पंचायती खेतीका संगठन कर रही थी, यह उत्साह फैल गया। किसानोंका झुकाव निश्चित रूपसे पंचायती खेतीकी ओर हो रहा था। इस कार्यमें सरकारी खेतों तथा मशीनों और ट्रैक्टरोंके स्टेशनोंने बड़ी सहायता की। ट्रैक्टरों और खेतीकी दूसरी मशीनोंका चलाना देखनेके लिये झुंडके झुंड किसान सरकारी खेतों और मशीनों तथा ट्रैक्टरोंके स्टेशनोंमें

इकट्ठा हो जाते थे। मशीनोंका चलाना देखकर वे प्रभावित थे और वहींपर, उसी समय, निश्चय करते थे,—"आओ, हम भी पंचायती खेतीमें शामिल हों।" किसान पहले असंगठित थे, उनमें फूट थी, हरेक अपने छोटेसे खेत और छोटी-सी बरियामें खेती करता था, ट्रैक्टर या किसी भी तरहके काम-चलाऊ औजार किसानोंके पास थे ही नहीं, ग़रीबीसे वे तबाह थे, दुनियासे दूर उनसे जैसे बन पड़ता था, लष्टम-पष्टम चले जा रहे थे। अंतमें इन्हीं किसानोंको एक नयी राह देख पड़ी, एक सुन्दरतर जीवनकी ओर बढ़नेकी उन्हें एक पगडंडी दिखायी दी। छोटे-छोटे खेतोंको मिलाकर सहकारी खेती करनेका, पंचायती किसानी करनेका, यह नया मार्ग था। यह मार्ग उन्हें ट्रैक्टरोंमें मिला जो कैसी भी "बञ्जर" धरतीको, अछूती भूमिको, तोड़ सकते थे। सरकारसे मशीन, धन आदमी और मंत्रणाके रूपमें उन्हें सहायता मिली। उन्हें कुलकोंके बन्धन तोड़नेका अवसर मिला। सोवियत सरकारने अभी हालमें ही कुलकोंको हराकर उन्हें धूल चटायी थी। लाखों किसान उनकी पराजयसे फूले न समाये थे।

इस आधारपर पंचायती खेतीका आन्दोलन सामूहिक रूपसे आरम्भ हुआ। उसका द्रुत विकास हुआ, विशेषकर १९२९ का अंत होते-होते; और यह विकास ऐसे वेगसे हुआ कि हमारे समाजवादी उद्योग-धन्धोंके लिये भी वह अभूतपूर्व था।

१९२८ में पंचायती खेतोंकी कुल जोती-बोयी जानेवाली जमीन १३ लाख ९० हज़ार हेक्तार थी। १९२९ में इस भूमिका क्षेत्रफल ४२ लाख ६२ हज़ार हेक्तार था। १९३० में पंचायती खेतोंने १ करोड़ ५० लाख हेक्तार भूमि जोतनेकी योजना बनायी थी।

> "महान परिवर्तनका वर्ष" (१९२९), नामके अपने लेखमें कॉ. स्तालिन ने पंचायती खेतोंके बारेमें लिखा था,—"यह मानना पड़ेगा कि विकासका ऐसा अप्रतिहत वेग हमारे उन समाजवादी बड़े उद्योग-धन्धोंके लिये भी अतुलनीय है जो साधारणत: अपने विकासकी विशिष्ट गतिके लिये विख्यात हैं।"

पंचायती खेतीके आन्दोलनके विकासमें यह एक नये अध्यायका आरम्भ था। पंचायती खेतीके सामूहिक आन्दोलनका यहाँसे श्रीगणेश होता है।

अपने उपरोक्त लेखमें कॉ. स्तालिनने पूछा था,—"वर्तमान पंचायती खेतीके आन्दोलनका नया लक्षण क्या है?" और उन्होंने उत्तर दिया था,—

> "वर्तमान पंचायती खेतीके आन्दोलनका नया और निश्चित लक्षण यह है कि पहलेकी तरह किसान अलग-अलग गुटोंमें आकर पंचायती खेतोंमें शामिल नहीं होते वरन् गाँवके गाँव, पूरे **वोलोस्त** (देहाती जिले); पूरे जिले और प्रदेशके प्रदेश पंचायती खेतीमें शामिल हो रहे हैं। इसका क्या अर्थ है? इसका यह अर्थ है कि **मँझले किसान पंचायती खेतीके आन्दोलनमें सम्मिलित हो गये हैं**। कृषिके उस विकासमें आमूल परिवर्तनका यही आधार है जो सोवियत सरकारकी सबसे महत्वपूर्ण सफलता है।..."

इसका यह अर्थ था कि पंचायती खेतीको ठोस तरीक़ेसे चालू करनेके आधारपर वर्गके रूपमें कुलकोंका सफाया करनेका समय आ रहा है, अथवा आ ही गया है।

सारांश

१९२६-२९ की अवधिमें पार्टीने देशमें समाजवादी औद्योगिक निर्माणके लिये देशी और विदेशी मोर्चोंपर घोर कठिनाइयोंका सामना किया और उनपर विजय प्राप्त की। पार्टी और मजदूर-वर्गके प्रयत्नोंका अंत समाजवादी औद्योगिक निर्माणकी नीतिकी विजयमें हुआ।

मूलत: औद्योगिक निर्माणकी एक अति कठिन समस्या हल हो गयी थी कि बड़े उद्योग-धंधोंके निर्माणके लिये धन कैसे इकट्ठा हो। अब ऐसे बड़े उद्योग-धंधोंकी नींव पड़ चुकी थी जो देशकी संपूर्ण आर्थिक व्यवस्थाको पुन: सज्जित कर सकते थे।

समाजवादी निर्माणकी प्रथम पंचवर्षीय योजना स्वीकृत हुई। नये कारखानों, सरकारी और पंचायती खेतोंके निर्माणकार्यका एक विशाल परिमाणमें विस्तार हुआ।

समाजवादकी ओर इस प्रगतिके साथ देशमें वर्ग संघर्ष और तीव्र हुआ और पार्टीके भीतरका संघर्ष भी और तीव्र हुआ। इस संघर्षके मुख्य परिणाम ये थे कि कुलक-विरोधकी कमर तोड़ दी गयी, त्रात्स्कीपंथियों और जिनोवियेफवादियोंके पराजयवादी गुटका भंडाफोड़ करके दिखा दिया गया कि वह सोवियत-विरोधी गुट है, नरम पराजयवादियोंका भंडाफोड़ करके दिखा दिया गया कि वे कुलकोंके दलाल हैं, त्रात्स्की-पंथी पार्टीसे निकाल दिये गये और यह घोषित किया गया कि त्रात्स्कीपंथियों और नरम अवसरवादियोंका मत और सोवियत संघकी कम्युनिस्ट (बोल्शेविक) पार्टीकी सदस्यता दो चीजें हैं जो एक साथ नहीं चल सकतीं।

सैद्धान्तिक क्षेत्रमें बोल्शेविक पार्टीसे परास्त होकर और मजदूर-वर्गमें सभी तरह का समर्थन खोकर त्रात्स्कीपंथ एक राजनीतिक प्रवृत्ति न रह गया। त्रात्स्कीपंथियोंका दल सिद्धान्तहीन, कमाऊ-खाऊ, राजनीतिक चालबाजों और धोखेबाजोंका दल रह गया।

बड़े उद्योग-धन्धोंकी नींव डालकर, पार्टीने सोवियत संघमें समाजवादी पुनर्निर्माणकी प्रथम पंचवर्षीय योजनाकी पूर्तिके लिये मजदूर-वर्ग और किसानोंको बटोरा। सारे देशमें, कोटि-कोटि श्रमिक जनतामें, समाजवादी प्रतियोगिताका विकास हुआ जिससे श्रमिक उत्साहकी शक्तिशाली लहर दौड़ गयी और एक नये श्रमिक अनुशासनका जन्म हुआ।

इस अवधिका अंत महान् परिवर्तनके उस वर्षसे हुआ जब उद्योग-धन्धोंमें समाजवादकी जीत पर जीत हुई, कृषिमें पहली महत्वपूर्ण सफलता मिली, मँझले किसान पंचायती खेतोंकी ओर झुके, और पंचायती खेतीका आन्दोलन सामूहिक रूपसे आरम्भ हुआ।

ग्यारहवाँ अध्याय

पंचायती कृषि व्यवस्थाके संघर्षमें बोल्शेविक पार्टी

(१९३०—१९३४)

१. १९३०-३४ में गृह-परिस्थिति—पूंजीवादी देशोंमें आर्थिक संकट—मंचूरियापर जापानका अधिकार—जर्मनीमें फासिज़्म द्वारा राज्यसत्तापर अधिकार—युद्धके दो क्षेत्र।

सोवियत संघमें समाजवादी उद्योग-धंधोंके प्रसारमें महत्वपूर्ण प्रगति हो चुकी थी और इस प्रसारकी गति तीव्रतर होती जाती थी परन्तु पूंजीवादी देशोंमें एक अभूतपूर्व परिमाणमें विश्वव्यापी अर्थ-संकट फैल गया था और बादके तीन वर्षोंमें वह और भी विषम होता गया। औद्योगिक संकटके साथ-साथ कृषि-संकटके आ जानेसे पूँजीवादी देशोंके लिये परिस्थिति और भी गंभीर होगयी थी।

आर्थिक संकटके तीन वर्षोंमें (१९३०-३३) १९२९ के उत्पादनकी तुलनामें अमरीकामें औद्योगिक उत्पादन ६५ प्रतिशत रह गया था और ब्रिटेनमें ८६, जर्मनीमें ६६ और फ्रांसमें ७७ प्रतिशत। परन्तु इसी अवधिमें सोवियत संघका औद्योगिक उत्पादन दुगनेसे अधिक होगया था; १९३३ में यह उत्पादन १९२९ की पैदावारका २०१ फ़ी सैकड़ा हो गया था।

पूंजीवादकी आर्थिक व्यवस्थासे समाजवादकी आर्थिक व्यवस्था कितनी अच्छी है, इसका यह एक और प्रमाण था। इसने दिखा दिया कि समाजवादका देश ही संसारमें ऐसा देश है जहां आर्थिक संकटकी छाया नहीं पड़ी।

संसारके आर्थिक संकटसे २ करोड़ ४० लाख आदमी मुहताज होगये और बेकारीमें उन्हें भुखमरी और दूसरी मुसीबतोंका सामना करना पड़ा। कृषिके संकटसे करोड़ों किसान तबाह होगये।

संसारके अर्थ-संकटसे साम्राज्यवादी राष्ट्रोंकी असंगतियाँ और विषम हो गयीं। विजयी और विजित देशोंमें, साम्राज्यवादी तथा औपनिवेशिक और पराधीन देशोंमें, मज़दूरों और पूंजीपतियोंमें, किसानों और ज़मींदारोंमें, आपसी कशमकश बढ़ गयी।

केन्द्रीय समितिकी ओरसे १६ वीं पार्टी काँग्रेसमें अपनी रिपोर्ट पेश करते हुए का. स्तालिनने कहा था कि पूँजीपति अर्थ-संकटसे बचनेके लिये यह उपाय करेंगे कि एक ओर वे फ़ासिस्ट तानाशाही बनाकर, यानी परले सिरेके प्रतिक्रियावादियों, साम्राज्यवादी पूंजीपतियोंकी तानाशाही बनाकर, मज़दूर-वर्गको कुचल देना चाहेंगे और दूसरी

ओर उपनिवेशों और व्यापार क्षेत्रोंके नये बँटवारके लिये अरक्षित देशोंकी बलि देकर लड़ाईकी आग भड़कानेकी कोशिश करेंगे।

यही हुआ भी।

१९३२ में जापानने युद्ध-संकटको बहुत बढ़ा दिया। अर्थ संकटके कारण योरप और अमरीकाके राष्ट्रोंको अपनी घरेलू समस्याओंमें फँसा देखकर जापानी साम्राज्य-वादियोंने इस अवसरसे लाभ उठाकर अरक्षित चीनको दबानेका विचार किया जिससे कि उसे जीतकर वे उसके मालिक बन जायँ। "स्थानीय घटनाओं" से निर्द्वन्द होकर उन्होंने लाभ उठाया। इन घटनाओंके बीज जापानी साम्राज्यवादियोंने ही बोये थे। चीनसे लड़ाईका ऐलान किये बिना ही उन्होंने मंचूरियामें फ़ौजें भेज दीं। जापानी फ़ौजने पूरे मंचूरियापर अधिकार कर लिया और वहांपर अपने लिये एक उपयोगी **शस्त्रागार** बना लिया जहांसे वे उत्तरी चीनको जीत सकते थे और सोवियत संघपर आक्रमण कर सकते थे। जापान लीग आफ़ नेशन्स (राष्ट्र संघ) से अलग होगया जिससे कि वह बिल्कुल छुट्टा होजाय। इसके बाद वह तावड़तोड़ लड़ाईकी तैयारीमें लग गया।

यह देखकर ब्रिटेन, फ्रांस और अमरीकाने सुदूर पूर्वमें अपनी जल सेनाकी तैयारी बढ़ा दी। यह स्पष्ट था कि जापान चीनको जीतना चाहता है और उस देशसे योरप और अमरीकाकी साम्राज्यवादी शक्तियोंको निकालना चाहता है। इसका उत्तर उन शक्तियोंने अपनी सैनिक तैयारीको बढ़ा कर दिया।

लेकिन जापानका एक दूसरा उद्देश्य भी था—सोवियत संघके सुदूर पूर्वी भागको हड़प लेना। यह स्वाभाविक था कि सोवियत संघ इस संकटकी ओरसे आंखें मूँद कर न बैठ सकता था। इसलिये वह डटकर अपने सुदूर पूर्वी राज्यकी रक्षाका प्रबन्ध करने लगा।

इस प्रकार सुदूर पूर्वमें जापानी फ़ासिस्ट साम्राज्यवादियोंके कारण पहला युद्ध क्षेत्र बना।

लेकिन अर्थ-संकटसे पूंजीवादकी असंगतियाँ केवल सुदूर पूर्वमें ही नहीं विषम हुईं। अर्थ-संकटने उन्हें योरपमें भी तीव्र कर दिया। कृषि और उद्योग-धंधोंमें संकटके बने रहनेसे, बेकारोंकी संख्यामें जबरदस्त बढ़ती होनेसे और निर्धन वर्गोंकी रोजीका ठिकाना न रहनेसे मजदूरों और किसानोंका असन्तोष भड़क उठा। मजदूर-वर्गका असन्तोष बढ़कर क्रान्तिकारी विरोध भावना बन गया। यह दशा विशेष रूपसे जर्मनीमें थी जो युद्धसे और अंग्रेज-फ्रांसीसी विजेताओंको दंड देनेसे दिवालिया हो रहा था। अर्थ-संकटने उसे खोखला बना दिया था। वहांके मजदूर-वर्गके हाथोंमें दुहरी हथकड़ी थी, एक तो देशी और दूसरी ब्रिटिश और फ्रांसीसी पूंजीपतियोंकी विदेशी। फ़ासिस्टोंके हाथमें शासन-सूत्र आनेके पहले राइशटागके अन्तिम चुनावमें जर्मन कम्युनिस्ट पार्टीको ६० लाख वोट मिले थे। इससे वहाँके असंतोषका स्पष्ट अनुमान हो जाता है। जर्मन पूंजीपतियोंको भय हुआ कि उनके देशमें जो पूंजीवादी-जनवादी स्वाधीनता

बनी है, वह दगा न करें और इस स्वाधीनतासे लाभ उठाकर मजदूर-वर्ग क्रान्तिकारी आन्दोलनका विस्तार न कर बैठे। इसलिये उन्होंने निश्चय किया कि जर्मनीमें पूंजीपतियोंकी शक्तिको बनाये रखनेका एक ही उपाय है कि इस पूँजीवादी स्वाधीनताका अन्त कर दिया जाय, राइश्टागको मिटाकर शून्यके बराबर कर दिया जाय और पूंजीवादी राष्ट्रवादियोंकी एक ऐसी आतंकवादी तानाशाही क़ायम की जाय जो मजदूर-वर्गको दबा दे और उस निम्न-पूंजीवादी जनतामें अपना आधार बनाये जो युद्धमें जर्मनीकी पराजयका बदला लेना चाहती थी। इसलिये उन्होंने शासनसूत्र फ़ासिस्ट पार्टीको सौंप दिया। जनताको धोखा देनेके लिये फ़ासिस्टोंने अपनी पार्टीका नाम रखा 'राष्ट्रीय **समाजवादी** पार्टी'। वे अच्छी तरह जानते थे कि फ़ासिस्ट पार्टी सबसे पहले उन साम्राज्यवादी पूजीपतियोंका प्रतिनिधित्व करती है जो सबसे अधिक प्रतिक्रियावादी हैं और मजदूर-वर्गसे सबसे ज़्यादा दुश्मनी मानते हैं। वे जानते थे कि फ़ासिस्ट पार्टी बदला लेनेवालोंकी सबसे खुली पार्टी है जो करोड़ों निम्न-पूंजीवादी राष्ट्र-भक्तोंको बरगला सकती है। इस कार्यमें मजदूर-वर्गके ग़द्दारोंने, जर्मनीकी-सामाजिक जनवादी पार्टीके नेताओंने, उनकी मदद की और अपनी समझौतेकी नीतिसे फ़ासिज़्मके लिये राह सुगम बना दी।

ये परिस्थितियां थीं जिनसे १९३३ में जर्मन फ़ासिस्टोंके हाथमें राज्यशक्ति आ गयी।

जर्मनीकी घटनाओंकी छानबीन करते हुए १७ वीं पार्टी कांग्रेसमें कामरेड स्तालिनने अपनी रिपोर्टमें कहा था,—

> "जर्मनीमें फ़ासिज़्मकी विजय मजदूर-वर्गकी निर्बलता और उसके प्रति सामाजिक-जनवादी पार्टीके विश्वासघातका ही चिन्ह नहीं है जिसने फ़ासिज़्म का मार्ग प्रशस्त किया है। फ़ासिज़्मकी विजय पूंजीवादी वर्गकी निर्बलताका भी चिन्ह है। वह इस बातका संकेत है कि यह वर्ग वैधानिक और पूंजीवादी-जनवादके पुराने अस्त्रोंसे अब शासन नहीं कर सकता। फलतः उसे अपनी गृहनीतिमें आतंकवादी उपायोंका आसरा लेना पड़ा है।"......
> **(यो. स्तालिन: सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टीकी १७ वीं कांग्रेस, सोवियत संघकी कम्युनिस्ट (बोल्शेविक) पार्टीकी केन्द्रीय समितिका कार्य-विवरण—अं. सं., पृ० १७)**

राइश्टागमें आग लगाकर, मजदूर-वर्गका बर्बरतासे दमन करके, उसकी संस्थाओंका ध्वंस करके और पूंजीवादी जनवादमें प्राप्त स्वाधीनताका अन्त करके, जर्मन फ़ासिस्टोंने अपनी गृहनीतिका मंगलाचरण किया। लीग आफ़ नेशन्स (राष्ट्र संघ) से निकलकर और जर्मनीके लाभके लिये योरपके देशोंकी सीमाओंमें **बलपूर्वक** संशोधन करनेके लिये खुले आम तैयारी करते हुए उन्होंने अपनी वैदेशिक नीतिका श्रीगणेश किया।

इस प्रकार योरपके मध्यमें जर्मन फ़ासिस्टोंके कारण दूसरा युद्ध क्षेत्र तैयार हो गया।

यह स्वाभाविक था कि ऐसी गम्भीर परिस्थिति होनेपर सोवियत संघ आंखें मूंद कर न बैठ सकता था। पच्छिमके घटनाक्रम पर वह चौकसी रखने लगा और पच्छिमी सीमाओंपर अपनी रक्षाके साधनोंमें उन्नति करने लगा।

२. कुलक या धनी किसानोंपर नियन्त्रण रखनेके बदले उन्हें वर्ग रूपमें समाप्त करनेकी नीति—पंचायती कृषि आन्दोलन में पार्टी नीतिकी विकृतिसे संघर्ष—पूंजीवादी तत्वोंपर प्रत्येक मोर्चेपर आक्रमण—१६ वीं पार्टी कांग्रेस।

१९२९ और १९३० में सामूहिक रूपसे जो तमाम किसान पंचायती खेतोंमें शामिल होगये, वह पार्टी और सरकारके सम्पूर्ण पिछले कार्योंका परिणाम था। सोशलिस्ट उद्योग-धंधोंके विकाससे खेतीके लिये मशीनों और ट्रैक्टरोंका सामूहिक उत्पादन होने लगा था। १९२८ और १९२९ में अनाज खरीदनेकी मुहीममें धनी किसानोंके विरुद्ध कठोर नीतिका पालन किया गया था। किसानोंके लिये सहयोग-समितियाँ खुल गयी थीं जिनसे किसान धीरे-धीरे पंचायती खेतीके आदी होगये और प्राथमिक पंचायती और सरकारी खेतोंसे बड़ा अच्छा फल निकला। इन सब बातोंसे किसान सामूहिक रूपसे पंचायती खेतीमें शामिल हो सके। गावों, ज़िलों और प्रदेशोंके किसान एक साथ पंचायती खेतीमें आ मिले।

सामूहिक रूपसे पंचायती खेतीका प्रचलन कोई शांतिपूर्ण कार्य न था जिसमें कि झुण्डके झुण्ड किसान सहसा पंचायती खेती करने लगे हों। यह सारी क्रिया धनी किसानों से साधारण किसानोंके संघर्षकी क्रिया थी। सामूहिक रूपसे पचायती खेतीका यह मतलब था कि जिस गांवमें पंचायती खेत बनता था वहांकी सारी जमीन पंचायती खेतिहरोंकी हो जाती थी। लेकिन इस जमीनका काफ़ी हिस्सा धनी किसानोंका था और इसलिये खेतिहर उनकी जमीन छीन लेते थे और उनके हरहा-गोरू और हल-माची हथिया लेते थे। इसके साथ वे सोवियत अफ़सरोंसे फ़रियाद करते थे कि उन्हें पकड़ लिया जाय और ज़िलोंसे निकाल बाहर किया जाय।

इसलिये सामूहिक पंचायती खेतीका मतलब था धनी किसानोंका निकालना।

सामूहिक पंचायती खेतीके आधारपर वर्ग रूपमें यह धनी किसानोंको निकालनेकी नीति थी।

इस समय तक सोवियत संघने काफ़ी दृढ़ आधार बना लिया था जिससे कि वह धनी किसानोंका अंत कर सके, उनके विरोधको तोड़ सके, वर्ग रूपमें उनका सफ़ाया

कर सके और कुलक खेतीके बदले पंचायती और सरकारी खेतीका चलन कर सके।

१९२७में कुलक ६० करोड़ पूड अनाज पैदा करते थे जिसमेंसे १३ करोड़ पूड बिकाऊ होता था। उस साल पंचायती और सरकारी खेतोंके पास बिक्रीके लिये कुल ३ करोड़ ५० लाख पूड अनाज था। १९२९ में सरकारी और पंचायती खेतोंमें उन्नति करनेके लिये वोल्शेविक पार्टीकी दृढ़ नीतिके कारण, साथ ही सोशलिस्ट उद्योग-धंधोंकी उन्नति और खेतीके औजार और ट्रैक्टर बनानेके कारण, पंचायती और सरकारी खेत पहलेसे बहुत मजबूत हो गये थे। उस सालमें ही पंचायती और सरकारी खेतोंमें ४० करोड़ पूड से कम अनाज पैदा नहीं हुआ जिसमेंसे १३ करोड़ पूडसे ऊपर अनाज बेचा गया। १९२७ में धनी किसानोंने जितना अनाज बेचा था यह राशि उससे ज़्यादा थी। १९३० में पंचायती और सरकारी खेतोंको ४० करोड़ पूडसे ऊपर अनाज बिक्रीके लिये पैदा करना था और उन्होंने सचमुच इतना पैदा कर लिया। १९२७ में धनी किसानोंने जितना कुछ बेचा था, उससे यह राशि बहुत बढ़ी-चढ़ी थी।

इस प्रकार देशके आर्थिक जीवनमें वर्ग-शक्तियोंके नये संगठनके कारण, और धनी किसानोंके अनाजके बदले पंचायती और सरकारी खेतोंसे अनाज देनेकी आवश्यकताकी पूर्ति होनेसे, वोल्शेविक पार्टी धनी किसानोंका नियन्त्रण करनेके बदले **वर्ग रूपमें उन्हें निर्मूल करने**की ओर अग्रसर हो सकी। इस नीतिका आधार था सामूहिक रूपसे पंचायती खेती।

१९२९ से पहले सोवियत सरकारने धनी किसानोंपर नियन्त्रण करनेकी नीति बरती थी। उसने धनी किसानोंपर ऊंचे टैक्स (कर) लगाये थे और उन्हें बाध्य किया था कि नियमित मूल्यपर वे सरकारको अनाज बेचें। जमीनको लगानपर देनेके कानूनके अनुसार किसी हद तक उनकी खेतीकी जमीन भी कम हो गयी थी। निजी खेतोंमें मज़दूरी करानेके क़ानूनके अनुसार उनकी खेती और भी कम हो गयी थी। परन्तु अभी तक सरकारने धनी किसानोंको निर्मूल करनेकी नीतिका पालन न किया था। जमीनको उठाने और मजदूरी करानेके क़ानूनोंसे उनका काम चलता जाता था। उनकी भूमि जब्त न की जाय, इस प्रतिबन्धसे कुछ-कुछ उनकी हिफ़ाजत भी हो रही थी। इस नीतिके फलस्वरूप कुलक वर्गकी वृद्धि रुक गयी थी और उसका एक अंश नियन्त्रण न सहकर काम-काज बन्द करके तबाह हो गया था। लेकिन इस नीतिने इस वर्गके आर्थिक आधारका ध्वंस नहीं किया, न वह वर्ग रूपमें धनी किसानों का अंत कर रही थी। यह नीति नियन्त्रणकी थी, न कि निर्मूल करनेकी। एक समय तक अर्थात् जब तक पंचायती और सरकारी खेत कमजोर थे और अनाजकी पैदावार में धनी किसानोंकी जगह न ले सकते थे तब तक, यह नीति आवश्यक थी।

पंचायती और सरकारी खेतोंकी बढ़तीसे १९२९ के अंतमें सोवियत सरकार इस नीतिको एकदम बदलकर धनी किसानोंका वर्ग रूपमें ध्वंस करनेकी नीतिपर आ गयी। जमीन उठाने और मजदूरी करानेके क़ानून रद कर दिये गये और इस तरह धनी किसान जमीन और मज़दूर दोनोंसे हाथ धो बैठे। उनकी जमीन जब्त न की जाय, यह बन्धेज

उठा लिया गया। सोवियत सरकारने किसानोंको इस बातकी अनुमति दी कि वे पंचायती खेतोंके लाभके लिये धनी किसानोंके गोरू, मशीनों और खतीके दूसरे सामानको हड़प कर लें। धनी किसानोंकी खेती जब्त कर ली गयी। यह जब्ती वैसे ही हुई थी जैसे १९१८ में पूंजीपतियोंके उद्योग-धंधे जब्त कर लिये गये थे। अन्तर केवल इतना था कि धनी किसानोंके पास उत्पादनके जो साधन थे, उनपर सरकारका अधिकार न हुआ वरन् उनपर पंचायती खेतोंमें संगठित होनेवाले किसानोंका अधिकार हुआ।

यह एक व्यापक क्रान्ति थी। समाजकी पुरानी गुणात्मक दशासे एक नयी गुणात्मक दशाकी ओर यह एक छलांग थी। इसका परिणाम १९१७ की अक्तूबर क्रांतिके समान ही था।

इस क्रान्तिकी यह विशेषता थी कि उसकी पूर्ति **ऊपरसे** हुई; उसमें पहल-कदमी सरकारकी थी और लाखों किसान जो धनी किसानोंकी पराधीनतासे छुटकारा पानेके लिये लड़ रहे थे और पंचायती खेतोंमें आजादीसे रहना चाहते थे, **नीचेसे** इसका प्रत्यक्ष समर्थन कर रहे थे।

इस क्रान्तिने एक ही वारमें समाजवादी निर्माणकी तीन मूल समस्याओंको सुलझा दिया,—

(क) पूँजीवादी व्यवस्थाको पुनः प्रतिष्ठित करनेके लिये कुलक-वर्ग ही एक आधार रह गया था। इस क्रान्तिने शोषकोंके इस बहुसंख्यक वर्गको निर्मूल कर दिया।

(ख) गावोंके बहुसंख्यक मजदूर-वर्ग अर्थात् किसान वर्गको पूँजीवादका बीजारोपण करनेवाले निजी खेतीके मार्गसे हटाकर सहकारिता, पंचायती और समाजवादी खेतीके मार्गपर लगाया।

(ग) सोवियत शासनको उसने कृषिमें एक समाजवादी आधार दिया। देशके आर्थिक जीवनमें खेती सबसे व्यापक और जीवनके लिये आवश्यक थी परन्तु उसीका सबसे कम विकास हुआ था।

देशमें पूँजीवादको पुनः प्रतिष्ठित करनेका अंतिम आधार भी नष्ट हो गया साथ ही समाजवादी आर्थिक व्यवस्थाके निर्माणके लिये नयी और समुचित परिस्थितियाँ उत्पन्न हुई।

वर्ग रूपमें कुलकोंका नाश करनेके कारणोंकी व्याख्या करते हुए और ठोस पंचायती खेतीके सामूहिक कृषक आन्दोलनके परिणामोंका सार व्यक्त करते हुए कॉ. स्तालिन ने १९२९ में लिखा था,—

"सभी देशोंके पूंजीवादी सोवियत संघमें पूंजीवादको—'व्यक्तिगत सम्पत्ति के पवित्र सिद्धान्तको'—पुनः प्रतिष्ठित करनेका स्वप्न देख रहे थे। उनकी अन्तिम आशापर पानी फिर रहा है और वह नष्ट हो रही है। जिन किसानोंको वे पूंजीवादी जमीनके लिये खाद समझते थे, वे **सामूहिक रूपसे** 'व्यक्तिगत

सम्पत्ति' की प्रशंसित पताका छोड़कर पंचायती खेती और समाजवादके मार्गको अपना रहे हैं। पूंजीवादको पुनः प्रतिष्ठित करनेकी अन्तिम आशा क्षीण हो रही है।" (**स्तालिनः लेनिनवाद, "महान परिवर्तनका एक वर्ष"—अं. सं.**)

पाँच जनवरी १९३० को कम्युनिस्ट पार्टीकी केन्द्रीय समितिने "पंचायती खेतोंके विकासमें सहायता देनेके सरकारी उपाय और पंचायती खेतीकी गति" पर अपने ऐतिहासिक प्रस्तावमें वर्ग-रूपमें कुलकोंका नाश करनेकी नीति निर्धारित की। सोवियत संघके विभिन्न जिलोंकी विभिन्न परिस्थितियों और पंचायती खेतीके लिये विभिन्न प्रदेशोंकी अनुकूलताका इस निर्णयमें ध्यान रक्खा गया था।

पंचायती खेतीकी गति विभिन्न रूपसे निश्चित की गयी। इसके लिये पार्टीकी केन्द्रीय समितिने सोवियत संघके प्रदेशोको तीन भागोंमें बाँट दिया।

पहले भागमें अन्न पैदा करनेवाले मुख्य क्षेत्र थे, अर्थात उत्तरी काकेशस (कूबान, दॉन, और तेरेक), मध्य वोलगा और निम्न वोलगा,—ये क्षेत्र पंचायती खेतीके लिये एकदम तैयार थे क्योंकि इनके पास सबसे ज़्यादा ट्रैक्टर थे, सबसे ज़्यादा सरकारी खेत थे और अनाज खरीदनेके पिछले आन्दोलनोंमें पाया हुआ कुलकोंसे मोर्चा लेनेका सबसे ज़्यादा अनुभव था। केन्द्रीय समितिने यह प्रस्ताव किया कि इन उपजाऊ क्षेत्रोंमें पंचायती खेतीको चालू करनेका काम मुख्यतः १९३१ के वसन्त काल तक समाप्त हो जाना चाहिये।

दूसरा भाग युक्राइन, काली मिट्टीका मध्य प्रदेश, साइबेरिया, कजाकिस्तान आदिका था। यहाँ पर १९३२ के वसन्त काल तक काम समाप्त हो सकता था।

दूसरे प्रदेश, राज्य-भाग और प्रजातन्त्र (मॉस्को प्रदेश, काकेशस, मध्य एशियाके प्रजातंत्र आदि) पंचायती खेतीको चालू करनेका काम पंचवर्षीय योजनाके अन्त तक, अर्थात् १९३३ तक जारी रख सकते थे।

पंचायती खेतीके काममें द्रुत गतिको देखकर पार्टीकी केन्द्रीय समितिने यह आवश्यक समझा कि ट्रैक्टर, हार्वेस्टर कम्वाइन, ट्रैक्टरोंसे खींची जाने वाली मशीनोंको बनानेके लिये कारखाने खोलनेमें जल्दी की जाय। साथ ही केन्द्रीय समितिने निर्देश किया कि "पंचायती खेतीकी वर्तमान अवस्थामें घोड़ोंका महत्व कम करनेकी जो प्रवृत्ति है और जिससे घोड़े वेहिसाव बेचे और निकाले जा रहे हैं, उसे डटकर रोका जाय।"

पंचायती खेतोंको १९२९-३० के लिये जो सरकारी रकम उधार दी जाने वाली थी, उसे अब मूल योजनासे दुगना करके पचास करोड़ रूबल कर दिया गया।

पंचायती खेतीकी ज़मीनको नापने-जोखनेका खर्चा सरकारके माथे रहा।

प्रस्तावमें यह अति महत्वपूर्ण निर्देश था कि वर्तमान अवस्थामें पंचायती खेतीके आन्दोलनका **मुख्य रूप** कृषि-संघ ही होगा जिसमें उत्पादनके **मुख्य** साधन ही पंचायती बनाये जायेंगे।

केन्द्रीय समितिने गम्भीरतासे पार्टी संगठनोंको सावधान कर दिया कि वे,—

"ऊपरसे 'आज्ञापत्र' निकालकर पंचायती खेती आन्दोलनको बढ़ानेका कोई प्रयत्न न करें। इससे यह भय था कि पंचायती खेतोंके संगठनमें वास्तविक समाजवादी प्रतियोगिताके बदले झूठी पंचायती खेतीका चलन हो जायगा।"

(रूसी कम्युनिस्ट (बोल्शेविक) पार्टीके प्रस्ताव—रूसी सं., भाग दो, पृष्ठ ६६२)

पार्टीकी नयी नीति गाँवोंमें कैसे बरती जायगी, इस बातको केन्द्रीय समितिने इस प्रस्ताव द्वारा स्पष्ट कर दिया।

वर्ग-रूपमें कुलकोंको ध्वंस करने और ठोस पंचायती खेतीको स्थापित करनेकी नीतिसे इस तरहकी खेती करनेका एक तगड़ा आन्दोलन चल पड़ा। किसानोंके गाँवके गाँव और जिलेके जिले कुलक-दासताके बन्धन तोड़ते हुए और अपनी राहसे कुलकोंको हटाते हुए पंचायती खेतीमें लग गये।

परन्तु जहाँ पंचायती खेतीकी यह अद्भुत प्रगति थी, वहाँ पार्टी-कार्यकर्ताओंके कुछ दोष प्रकट हुए। पंचायती खेतीके आन्दोलनमें पार्टी नीतिको तोड़ा-मरोड़ा गया, यद्यपि केन्द्रीय समितिने पार्टी कार्यकर्ताओंको सावधान कर दिया था कि आन्दोलनकी सफलतासे वे असावधान न हो उठें, फिर भी बहुतोंने देशकालकी परिस्थितियोंका ध्यान रक्खे बिना और पंचायती खेतीमें आनेके लिये किसानोंकी तत्परताका विचार किये बिना कृत्रिम रूपसे आन्दोलनका वेग बढ़ा दिया।

यह पता लगा कि पंचायती खेत बनानेमें जो **अपनी-अपनी इच्छाका** सिद्धान्त था, उसका उल्लंघन किया जा रहा है। कई जिलोंमें किसानोंको बेदखली आदिकी धमकी देकर पंचायती खेतोंमें आनेके लिये **बाध्य किया जा रहा है।**

कई जिलोंमें पंचायती खेतीके सम्बन्धमें पार्टी-नीतिके मूल सिद्धान्तोंको धीरजसे समझाकर किसानोंको तैयार न किया जा रहा था। इसके बदले ऊपरसे नौकरशाही आज्ञापत्र निकाले जाते थे, पंचायती खेतोंके अतिरंजित और झूठे आँकड़े दिखाये जाते थे, पंचायती खेतोंके औसतको कृत्रिम रूपसे बढ़ाकर दिखाया जाता था।

यद्यपि केन्द्रीय समितिने यह स्पष्ट निर्देश किया था कि पंचायती खेतीके आन्दोलनका मुख्य रूप कृषि-संघ ही होंगे, जिनमें उत्पादनके मुख्य साधन ही पंचायती बनाये जायँगे, फिर भी कई जगह कृषि-संघको लाँघकर पंचायतकी ओर दौड़नेके मूर्खतापूर्ण प्रयास किये गये। घर, गाय, छोटे पशु, मुर्गी आदि जो कुछ बाजारसे बचा, सब पंचायती बना डाला गया।

आन्दोलनकी प्राथमिक सफलतासे मदान्ध होकर कई प्रदेशोंमें अधिकारियोंने केन्द्रीय समितिके आन्दोलनकी गति और कालसम्बन्धी स्पष्ट आदेशोंका उल्लंघन किया। बड़े-बड़े आँकड़े दिखानेके जोशमें मॉस्को प्रदेशके नेताओंने अपनेसे नीचेके कार्यकर्ताओंको आदेश किया कि वे १९३० के वसन्त काल तक पंचायती खेतीको चालू करनेका काम समाप्त कर दें, यद्यपि उनके पास इस कार्यके लिये (१९३२ के अन्त

तक) अभी तीन सालका समय था। काकेशस प्रदेश और मध्य एशियामें पार्टी निर्देश का और भी भोंड़े रूपमें उल्लंघन किया गया।

नीतिके इस तोड़ने–मरोड़नेसे अपना ही उल्लू सीधा करनेके लिये कुलक और उनके गुर्गे स्वयं यह प्रस्ताव रखते थे कि कृषि-संघोंके बदले पंचायतें (कम्यून) बनायी जायँ और घरबार, छोटे पशुओं और मुर्गी-बतखों आदिपर पंचायती अधिकार हो जाय। कुलक किसानोंको भड़का देते थे कि पंचायती खेतोंमें शामिल होनेके पहले वे अपने पशुओंको मार डालें। वे कहते कि "आखिर हाथसे तो उन्हें जाना ही है।"

वर्ग-शत्रुने सोचा था कि पंचायती खेतीको चालू करनेमें स्थानीय संगठनोंने जो भूलें की हैं और जिस तरह पार्टीकी नीतिको तोड़ा-मरोड़ा है, उससे किसान भड़क जायँगे और सोवियत सरकारसे विद्रोह कर बैठेंगे।

पार्टी–संगठनोंकी भूलोंके कारण और वर्ग–शत्रुके भड़कानेके कारण फरवरी १९३० के दूसरे पखवारेमें पंचायती खेतीको चालू करनेमें स्पष्ट सफलता मिलने परभी कई ज़िलोंके किसानोंमें असन्तोषके संकटजनक चिन्ह दिखायी दिये। जहाँ-तहाँ कुलकों और उनके दलालोंने किसानोंको भड़काकर उनसे सोवियतविरोधी काम करा भी लिये।

पार्टी नीतिके तोड़े-मरोड़े जानेके कई भयसूचक चिन्ह देखकर पार्टीकी केन्द्रीय समितिने यह समझकर कि पंचायती खेतीके चलनपर ही संकट न आ जाय, तुरंत ही परिस्थितिको सँभालना आरंभ कर दिया। उसने पार्टीके कार्यकर्ताओंको निर्देश किया कि वे यथा संभव शीघ्रतासे अपनी भूलोंको सुधारें। २ मार्च १९३० को केन्द्रीय समितिके निर्णयसे कॉ. स्तालिनका लेख "**सफलतासे उन्मत्त**" प्रकाशित हुआ। यह लेख उन सभी लोगोंके लिये चेतावनी था, जो पंचायती खेतीकी सफलतासे इतना फूले न समाये थे कि भद्दी भूलें करने लगे थे और पार्टी नीतिसे बहक गये थे, जो किसानों पर दबाव डाल रहे थे कि वे पंचायती खेतोंमें शामिल हो जायँ। लेखमें इस सिद्धान्तपर भरसक ज़ोर दिया गया कि पंचायती खेतोंका निर्माण स्वेच्छा पर निर्भर होना चाहिये और पंचायती खेतीका चलन करनेके उपायों और उसकी गति को निश्चित करते हुए सोवियत संघके विभिन्न ज़िलोंमें परिस्थितियोंकी विभिन्नताका बराबर ध्यान रखना चाहिये। कॉ. स्तालिनने दोहराया कि पंचायती खेती आन्दोलनका मुख्य रूप कृषि-संघ है जिसमें उत्पादनके मुख्य साधनोंपर, मुख्यतः उनपर जिनसे अनाज पैदा किया जाता है, पंचायती अधिकार होता है; घरेलू भूमि, मकान, कुछ दूध देनेवाले पशु, छोटे पशु, मुर्गी-बतख आदिपर पंचायती अधिकार नहीं होता।

कॉ. स्तालिनके लेखका तात्कालिक राजनीतिक महत्व बहुत था। इससे अपनी भूलें सुधारनेमें पार्टी-संगठनोंको सहायता मिली। सोवियत सरकारके शत्रु, जो आस लगाये बैठे थे कि नीतिके तोड़े-मरोड़े जानेसे वे किसानोंको सोवियत सरकारसे भिड़ा देंगे, मुहकी खा गये। किसान जन–समूहने देख लिया कि स्थानीय अधिकारियोंने "गरम

दल वाले " बन कर जिस तरह नीतिको तोड़ा-मरोड़ा था, वह बोल्शेविक पार्टीकी नीतिसे भिन्न है। लेखसे किसानोंका चित्त शान्त हुआ।

नीतिके तोड़-मरोड़ और भूलोंको सुधारनेका जो काम कॉ. स्तालिनके लेखसे आरम्भ हुआ था, उसे पूरा करनेके लिये सो० स० की क० (बो०) पार्टीकी केन्द्रीय समितिने एक दूसरा वार करनेका विचार किया। १५ मार्च १९३० को उसने "पंचायती खेती आन्दोलनमें पार्टी नीतिके तोड़-मरोड़से लड़नेके उपायों" पर अपना प्रस्ताव प्रकाशित किया।

प्रस्तावमें भूलोंका विस्तृत विश्लेषण किया गया और यह दिखाया गया कि ये भूलें पार्टीकी लेनिनवादी-स्तालिनवादी नीतिसे विपथके कारण हैं, ये पार्टी-निर्देशोंके खुले उल्लंघनका परिणाम हैं।

केन्द्रीय समितिने बताया कि यह "गरम दलवाली" तोड़-मरोड़ वर्गशत्रुके लिये भयंकर रूपसे लाभप्रद होगी।

केन्द्रीय समितिने निर्देश किया कि,—

"जो लोग पार्टी-नीतिके तोड़-मरोड़को रोक नहीं सकते या रोकना नहीं चाहते, उन्हें उनके पदोंसे **हटा देना चाहिये** और उनकी जगह **दूसरे आदमी रखे जाने चाहिये**।" (सो० सं० की क० (बो.) पार्टीके **प्रस्ताव, भाग २, पृ. ६६३**)

केन्द्रीय समितिने कुछ प्रादेशिक और मांडलिक संगठनोंके (मॉस्को-प्रदेश, काकेशस) नेतृत्वको, जिसने राजनीतिक भूलें की थीं और फिर उन्हें सुधारनेमें असमर्थ सिद्ध हुआ था, बदल दिया।

३ अप्रैल १९३० को कॉ. स्तालिनका "पंचायती खेतोंमें काम करने वाले साथियोंको उत्तर" प्रकाशित हुआ। इसमें उन्होंने किसान-समस्यामें भूलों और पंचायती खेती आन्दोलनमें बड़ी भूलोंके मूल कारणोंकी आलोचना की। ये मूल कारण इस प्रकार थे: मँझले किसानोंके प्रति दृष्टिकोण गलत था, इस लेनिनवादी सिद्धान्तका उल्लंघन किया गया था कि पंचायती खेतोंका स्वेच्छासे निर्माण होना चाहिये, इस लेनिनवादी सिद्धान्तका उल्लंघन किया गया था कि सोवियत संघके विभिन्न जिलोंकी विभिन्न परिस्थितियोंका सदा ध्यान रखना चाहिये, और लोगोंने इस बातका प्रयत्न किया था कि कृषि संघको लाँघकर सीधे पंचायतपर पहुँच जायँ।

इन सब उपायोंका यह फल हुआ कि कई जिलोंमें स्थानीय पार्टी-कार्यकर्ताओंने नीतिको जो तोड़ा-मरोड़ा था, उसमें सुधार हो गया।

ऐसे कार्यकर्ताओंकी काफी संख्या थी जो सफलतासे उन्मत्त होकर शीघ्रतासे पार्टी-नीतिसे दूर होते चले जा रहे थे। इन्हें सही राहपर लानेके लिये यह आवश्यक था कि केन्द्रीय समितिमें यथासंभव दृढ़ता हो और **धाराके विरुद्ध** चलनेकी सामर्थ्य हो।

पंचायती खेती आन्दोलनमें पार्टी-नीतिके तोड़-मरोड़को ठीक करनेमें पार्टी सफल हुई।

इससे पंचायती खेती आन्दोलनकी सफलताको सुदृढ़ करना संभव हुआ।

इससे पंचायती खेती आन्दोलनमें एक नवीन और शक्तिशाली प्रगति संभव हुई।

वर्ग-रूपमें कुलकोंका ध्वंस करनेकी नीति पार्टी द्वारा स्वीकृत होनेके पहले, औद्योगिक मोर्चेपर, पूंजीवादी लोगोंको निर्मूल करनेके उद्देशसे उनपर शक्तिशाली आक्रमण किया गया था। अभी तक गाँव शहरोंसे पिछड़े हुए थे अर्थात् खेती उद्योग-धन्धोंसे पीछे थी। इसीलिये आन्दोलन सम्यक रूपसे व्यापक और पूर्ण न बन सका था। लेकिन अब गाँवोंका पिछड़ापन बीती बात हो रहा था, कुलक-वर्गका ध्वंस करनेके लिये किसान-संघर्षकी रूपरेखा निश्चित हो चुकी थी, पार्टीने कुलक-वर्गको निर्मूल करनेकी नीतिको स्वीकृत किया था, इसलिये पूँजीवादी लोगोंपर यह आक्रमण व्यापक बन गया; आंशिक आक्रमण सारे मोर्चेपर फैला हुआ एक विशाल आक्रमण बन गया। १६ वीं पार्टी कांग्रेस होने तक पूँजीवादी लोगोंके विरुद्ध यह व्यापक आक्रमण सारे मोर्चेपर चालू था।

२६ जून १९३० को १६ वीं पार्टी कांग्रेस हुई। १२,६०,८७४ पार्टी मेम्बरों और ७,११,६०९ उम्मेदवार मेम्बरोंकी ओरसे इसमें १,२६८ वोट देनेवाले और ८९१ केवल भाषणका अधिकार रखनेवाले प्रतिनिधि आये।

पार्टीके इतिहासमें १६ वीं पार्टी कांग्रेस "**पूरे मोर्चेपर** समाजवादके प्रशस्त आक्रमण, कुलक-वर्गके ध्वंस और पंचायती खेतीके डटकर चालू होनेकी कांग्रेस" (स्तालिन) कही जाती है।

केन्द्रीय समितिका राजनीतिक विवरण पेश करते हुए कॉ. स्तालिनने बताया कि समाजवादी आक्रमणका प्रसार करनेमें बोल्शेविक पार्टीको कौन-सी महान् सफलताएँ मिली हैं।

समाजवादी औद्योगिक निर्माणमें यहाँ तक प्रगति हो गयी थी कि देशके समग्र उत्पादनमें कृषिसे उद्योग-धन्धोंका अनुपात बढ़ा-चढ़ा था। १९२९-३० के आर्थिक वर्षमें देशके समग्र उत्पादनमें उद्योग-धन्धोंका हिस्सा ५३% था और खेतीका ४७%।

१५ वीं पार्टी कांग्रेसके अवसरपर १९२६-२७ के सालमें **समग्र** औद्योगिक उत्पादन युद्धपूर्वके स्तरका १०२-५% ही था; १६ वीं पार्टी कांग्रेसके समय ही, १९२९-३० के आर्थिक वर्षमें, यह उत्पादन बढ़ कर १८०% हो गया था।

भारी उद्योग-धन्धे निश्चित गतिसे बढ़ रहे थे; उत्पादनके साधनोंका उत्पादन, मशीनोंका निर्माण, चालू था।

कॉ. स्तालिनने तुमुल करतल-ध्वनिके बीच कांग्रेसमें घोषित किया,—

> "...अब हमारा देश **कृषिप्रधान** देशसे **औद्योगिक** देश बननेवाला है।"

फिर भी, कॉ. स्तालिनने समझाया कि औद्योगिक विकासकी इस द्रुत **गतिसे** यह न समझ लेना चाहिये कि हम औद्योगिक विकासके **उच्च स्तरपर** भी पहुँच गये हैं। समाजवादी औद्योगिक विकासकी गति अपूर्व थी, फिर भी औद्योगिक विकासके

स्तरको देखते हुए हम अग्रसर पूँजीवादी देशोंसे **बहुत पिछड़े हुए** थे। बिजली लगाने के काममें सोवियत संघमें अभूतपूर्व प्रगति हुई थी, फिर भी उसका स्तर निचला था। यही बात धातु-शिल्पकी थी। १९२९-३० में योजनाके अनुसार सोवियत संघमें कच्चे लोहेका उत्पादन ५५ लाख टन होना चाहिये था; १९२९ में जर्मनीमें कच्चे लोहेका उत्पादन १ करोड़ ३४ लाख टन था और फ्रांसमें १ करोड़ ४ लाख ५० हजार टन था। कौशल और आर्थिक क्षेत्रमें अपने पिछड़ेपनको कमसेकम समयमें दूर करनेके लिये हमें अपने औद्योगिक विकासकी गतिको और भी बढ़ाना था, और जो अवसरवादी लोग समाजवादी उद्योग-धन्धोंके विकासकी गतिको मद्धिम करना चाहते थे, उनसे खूब डटकर लड़ना था।

कॉ. स्तालिनने कहा था,—

> "...जो लोग कहते हैं कि हमें अपने औद्योगिक विकासकी गतिको **मद्धिम** करना चाहिये, वे समाजवादके शत्रु हैं, वे हमारे वर्ग-शत्रुओंके दलाल हैं।" **(स्तालिन : लेनिनवाद, "रूसी कम्युनिस्ट पार्टीकी १६ वीं कांग्रेसमें केन्द्रीय समितिका राजनीतिक विवरण—" अं. सं.)**

प्रथम पंचवर्षीय योजनाके पहले सालका कार्यक्रम जब पूरा ही नहीं कर लिया गया वरन् उससे ज्यादा काम भी हो गया तो जनतामें एक नया नारा सुनायी दिया,— "पाँच बरसका काम चार बरसमें पूरा हो।" कुछ उद्योग-धन्धे (तेल, 'पीट', मशीनें बनानेका काम, खेतीकी मशीनें, बिजली लगानेका काम) अपनी योजना इतनी सफलतासे पूरी कर रहे थे कि उनकी पंचवर्षीय योजना ढाई-तीन सालमें ही पूरी हो सकती थी। इससे यह सिद्ध हुआ कि "पाँच बरसका काम चार बरसमें पूरा हो" यह नारा सार्थक हो सकता था; जो इसे शककी निगाहसे देख रहे थे, उनके अवसर-वादका भी पर्दाफाश हो गया।

१६ वीं कांग्रेसने पार्टीकी केन्द्रीय समितिको निर्देश किया कि वह "निश्चित रूपसे समाजवादी निर्माणकी **उत्साहपूर्ण बोल्शेविक गतिको बनाये रखे और पंचवर्षीय योजना चार वर्षमें ही पूरी हो।"**

१६ वीं पार्टी कांग्रेस होने तक सोवियत संघके कृषि-विकासमें एक महत्वपूर्ण परिवर्तन हो चुका था। किसान-समुदाय समाजवादकी ओर हो गया था। १ मई १९३० तक अन्न उपजाने वाले मुख्य प्रदेशोंमें पंचायती खेती ४०-५०% किसान-कुटम्बोंको समेट चुकी थी (१९२८ में यह औसत २-३% ही था !)। पंचायती खेतीकी जोती-बोयी जाने वाली जमीन ३ करोड़ ६० लाख हेक्तार हो गयी थी।

इस प्रकार केन्द्रीय समितिने ५ जनवरी १९३० को अपने प्रस्तावमें ३ करोड़ हेक्तारका जो विस्तृत कार्यक्रम रखा था, वह पूरेसे अधिक हो गया था। पंचायती खेती के विकासका पाँच साला मसौदा दो सालमें ही ड्योढ़ा पूरा हो गया।

तीन सालमें पंचायती खेतोंकी बिकाऊ राशि चालीस गुनेसे ज्यादा बढ़ गयी थी।

१९३० में ही देशमें जितना अनाज बिकता था, उसका आधेसे ज़्यादा पंचायती खेतोंसे आता था; सरकारी खेतोंमें जो अन्न पैदा होता था, उससे कुछ मतलब नहीं।

इससे यह सिद्ध हुआ कि खेतीका भाग्य-निर्णय अलग-अलग किसानोंके खेतोंसे न होगा वरन् पंचायती और सरकारी खेतोंसे होगा।

पंचायती खेतीमें किसानोंके सामूहिक रूपसे आनेके पहले सोवियत शासनने मुख्यतः समाजवादी उद्योग-धन्धोंका सहारा लिया था; अब वह शीघ्रतासे विकसित होनेवाले खेतीके समाजवादी अंशका, पंचायती और सरकारी खेतोंका भी सहारा लेने लगा।

जैसा कि १६ वीं पार्टी कांग्रेसने अपने एक प्रस्तावमें कहा था, पंचायती खेतोंके किसान "सोवियत शासनके वास्तविक और दृढ़ आधार" बन गये थे।

२. देशकी अर्थ-व्यवस्थाके सभी अंगोंकी पूर्तिकी नीति—कौशलका महत्व—पंचायती खेती आन्दोलनका प्रसार—मशीन और ट्रैक्टर स्टेशनोंके राजनीतिक विभाग—पंच-वर्षीय योजनाकी चतुर्वर्षीय पूर्तिके परिणाम—पूरे मोर्चेपर समाजवादकी विजय—१७ वीं पार्टी कांग्रेस।

जब बड़े-बड़े उद्योग-धन्धों, विशेषकर मशीन बनानेके उद्योग-धन्धोंका निर्माण हो गया और वे अपने पैरों आप खड़े हो गये और यह भी स्पष्ट हो गया कि काफ़ी तेज़ीसे उनका विकास हो रहा है, तब पार्टीके सामने यह कार्य आया कि देशकी अर्थ-व्यवस्थाके सभी अंगोंका आधुनिक और नवीनतम प्रणालीसे गठन हो। ईंधन, धातु-शोधन, खाद्य, काष्ठ, शस्त्रास्त्रके उद्योग-धन्धों, हलके धन्धों, यातायातके साधनों और कृषिमें नये कौशल, नयी मशीनोंका प्रयोग करना था। किसानीकी पैदावार और तैयार मालकी भारी माँग होनेसे यह आवश्यक हो गया कि उत्पादनके सभी अंगोंमें दुगनी और तिगुनी पैदावार बढ़ायी जाय परन्तु यह तब तक न हो सकता था जब तक कि मिलों और कार-खानोंको, सरकारी और पंचायती खेतोंको, उचित मात्रामें नये ढंगके सामान न मिलते, क्योंकि पुराने ढंगके साज-सामानसे आवश्यक उत्पादन न हो सकता था।

देशकी अर्थ-व्यवस्थाके प्रधान अंगोंका पुनर्गठन किये बिना देश और उसकी आर्थिक व्यवस्थाकी नित नयी माँगोंको पूरा करना असंभव था।

पुनर्गठनके बिना पूरे मोर्चेपर समाजवादके आक्रमणको भरा-पूरा बनाना असंभव था क्योंकि शहर और देहातके पूँजीवादी लोगोंको एक नये श्रम और संपत्तिके संगठन द्वारा ही नहीं परास्त करना था, वरन् उन्हें एक नये कौशल द्वारा, कौशलमें विशेष चातुरीसे भी, परास्त करना था।

पुनर्गठनके विना अर्थ और कौशलमें आगे बढ़े हुए पूँजीवादी देशोंतक पहुँचन और उन्हें पीछे छोड़ देना असंभव था। यद्यपि सोवियत संघने औद्योगिक विकासकी गतिमें पूँजीवादी देशोंको पछाड़ दिया था, फिर भी औद्योगिक विकासके स्तरपर, औद्योगिक उत्पादनकी मात्रामें, वह उनसे स्वयं बहुत पिछड़ा हुआ था।

उन तक पहुँचनेके लिये उत्पादनके सभी अंगोंका नये कौशल सहित पुनर्गठित होना आवश्यक था; कौशलकी नवीनतम प्रणालीके अनुसार उनका पुनर्निर्माण करना था।

इस प्रकार कौशलका प्रश्न अब निर्णायक महत्वका प्रश्न बन गया था।

मुख्य बाधा नयी मशीनों और कल-पुर्जोंकी कमी इतनी न थी—क्योंकि हमारे मशीन बनानेवाले उद्योग-धन्धे नये ढंगका साज-सामान तैयार कर सकते थे—जितना कि व्यवसायमें हमारे कार्यकर्ताओंका कौशलके प्रति भ्रान्त दृष्टिकोण था, जितना कि पुनर्निर्माणके युगमें कौशलको तुच्छ समझने और उससे घृणा करनेकी उनकी मनोवृत्ति थी। उनके विचारसे कौशलकी बातें "विशेषज्ञों" के लिये थीं, ऐसी गौण बातें जिन्हें "पूँजीवादी विशेषज्ञों" के भरोसे छोड़ा जा सकता था। उनकी धारणा थी कि व्यवसायमें कम्युनिस्ट निर्देशकोंको उत्पादनकी कौशलसम्बन्धी बातोंमें न बोलना चाहिये; उन्हें इनसे अधिक महत्वपूर्ण बातोंकी ओर, उद्योग-धन्धोंकी "आम" देखरेखकी ओर, ध्यान देना चाहिये।

इसलिये उत्पादनके मामलोंमें "पूँजीवादी विशेषज्ञों" को छूट मिली हुई थी; और व्यवसायके कम्युनिस्ट निर्देशकोंने अपने लिये "आम" देखरेख और कागज-पत्रों पर दस्तखत करनेका काम छोड़ रखा था।

कहना न होगा इस मनोवृत्तिसे अवश्य ही आम देखरेख देखरेखकी नक़ल बन जाती थी; इस देखरेखका मतलब होता था कागजोंपर दस्तखतोंका खिलवाड़, कागज़-पत्रोंसे बेकारकी उलझन।

स्पष्ट ही है कि व्यवसायके कम्युनिस्ट निर्देशक कौशलके प्रति अपनी यही घृणा-सूचक मनोवृत्ति बनाये रहते, तो पूँजीवादी देशोंको पीछे छोड़ना तो दूर, हम उन तक पहुँच भी न पाते। इस मनोवृत्तिके कारण हमारा देश, विशेषकर पुनर्गठनके युगमें, पिछड़ा ही बना रहता और हमारे विकासकी गति मद्धिम पड़ जाती। वास्तवमें कौशलके प्रति यह मनोवृत्ति व्यवसायके कुछ कम्युनिस्ट निर्देशकोंके लिये एक आड़ थी, उनकी इस गुप्त इच्छाके लिये बहाना था कि विकासकी गतिको मद्धिम कर दिया जाय, उसमें देर लगायी जाय, जिससे कि उत्पादनका उत्तरदायित्व पूँजीवादी विशेषज्ञोंके सिर मढ़ कर वे स्वयं "सुखकी नींद" सो सकें।

यह आवश्यक था कि कम्युनिस्ट व्यवसाय-संचालकोंका ध्यान कौशलकी ओर, उसमें दक्षता प्राप्त करनेकी ओर, आकृष्ट किया जाय। उन्हें यह दिखाना था कि बोल्शेविक व्यवसाय-संचालकोंके लिये आधुनिक कौशलमें दक्षता प्राप्त करना नितांत आवश्यक है। इसके बिना देशके सदा पिछड़ा रहने और गारत होनेका खतरा है।

इस समस्याको सुलझाये बिना और प्रगति असंभव थी।

इस सम्बन्धमें फरवरी १९३१ में औद्योगिक प्रबन्धकोंकी कान्फ्रेन्समें कॉ. स्तालिनने जो भाषण दिया वह अति महत्वपूर्ण था। कॉ. स्तालिनने कहा,—

"कभी-कभी लोग पूछते हैं, रफ़्तारको थोड़ा धीमा करनेसे काम नहीं चल सकता? क्या हम अपनी रफ्तार कम नहीं कर सकते? नहीं साथियो, यह असंभव है! रफ़्तार कम न होना चाहिये! ... रफ़्तार कम करनेका मतलब होगा पीछे पड़े रहना। जो पीछे रह जाते हैं, वे हारते हैं। परन्तु हम हारना नहीं चाहते। नहीं, हम हारनेसे इनकार करते हैं।

"पुराने रूसका इतिहास उसके पीछे रह जानेके कारण, हारपर हार खानेका इतिहास है। उसने मंगोल खानोंसे हार खायी। तुर्कीके सरदारोंने उसे परास्त किया। स्वीडनके सामन्तोंने उसे हराया। पोलैंड और लिथुआनियाके ठाकुरोंने उसे ठोका-पीटा। ब्रिटेन और फ्रान्सके पूंजीपतियोंसे उसने हार खायी। जापानी सरदारोंसे उसे पराजित होना पड़ा। पिछड़े होनेके कारण उसने सबसे मुँहकी खायी।......

"हम आगे बढ़े हुए देशोंसे पचास या सौ साल पीछे हैं। यह फ़ासला हमें दस सालमें तै करना है। या तो हम यह फ़ासला तै करते हैं, या फिर मुहँकी खाते हैं।...

"आगे बढ़े हुए पूँजीवादी देशोंसे हम जितना पिछड़े हैं, वह सब फ़ासला हमें अधिकसे अधिक दस सालमें तै करना है। ऐसा करनेके लिये हम सबको "बाह्य" सुविधाएँ प्राप्त हैं। बस एक बातकी कमी है, इन सुविधाओंसे लाभ उठानेकी योग्यताकी। इसका उत्तरदायित्व हमपर है, **केवल** हमपर। इन सुविधाओंसे लाभ उठाना हमें अब सीख ही लेना चाहिये। अब समय आ गया है कि उत्पादनमें हस्तक्षेप न करनेकी सड़ी-गली नीतिका अन्त कर दिया जाय। अब समय आ गया है कि हम एक नयी नीति, समयोपयोगी नीति, हर बातमें दखल की नीति, स्वीकार करें। अगर तुम कारखानेके प्रबन्धक हो तो कारखानेके सब मामलोंमें दख़ल दो, हर चीजको देखो भालो, किसी चीजको भी आँखकी ओट न होने दो, काम सीखो और फिर सीखो। बोल्शेविकोंको कौशलपर हावी होना चाहिये। अब समय आ गया है कि स्वयं बोल्शेविक ही विशेषज्ञ बनें। **पुनर्गठनके युगमें सब कुछ कौशलपर ही निर्भर है।" (स्तालिन: लेनिनवाद, "व्यवसाय प्रबन्धकोंके कार्य"—अं. सं.)**

कॉ. स्तालिनके भाषणका ऐतिहासिक महत्व इस बातमें था कि उससे कौशलके प्रति कम्युनिस्ट व्यवसाय-संचालकोंकी घृणासूचक भावनाका अन्त हुआ, कौशलकी ओर ध्यान देनेके लिये वे बाध्य हुए, स्वयं बोल्शेविकों द्वारा कौशलमें योग्यता प्राप्त करनेके अध्यवसायका आरम्भ हुआ, और इस प्रकार आर्थिक पुनर्गठनका काम आगे बढ़ानेमें उससे सहायता मिली।

उस समयसे कौशलसम्बन्धी ज्ञानपर पूँजीवादी 'विशेषज्ञों' के सर्वाधिकार सुरक्षित न रह गये। यह ज्ञान बोल्शेविक व्यवसाय-सञ्चालकोंके लिये भी अति महत्वपूर्ण बन गया। "विशेषज्ञ" शब्द निरादर सूचक न रहकर कौशलमें योग्यता प्राप्त करने वाले बोल्शेविकोंकी आदर सूचक पदवी बन गया।

उस समयसे कौशलमें योग्यता प्राप्त किये हुए उद्योग-धन्धोंका निर्देश करनेमें समर्थ हजारों कम्युनिस्ट विशेषज्ञों, झुंडके झुंड लाल विशेषज्ञोंका तैयार होना अनिवार्य था, जैसा कि हुआ भी।

कौशलके क्षेत्रमें यह नवीन सोवियत बुद्धिजीवी वर्ग था, मज़दूरों और किसानोंका बुद्धिजीवी वर्ग था; उद्योग-धन्धोंका संचालन मुख्यतः इसी वर्ग द्वारा होता है।

इस सबसे आर्थिक पुनर्गठनके कामका आगे बढ़ना अनिवार्य था, जैसा कि हुआ भी।

पुनर्गठनका कार्य यातायात और उद्योग-धन्धों तक ही सीमित न रहा। कृषिमें उसकी गति और भी तीव्र हुई। इसका कारण भी स्पष्ट था। और धन्धोंकी अपेक्षा कृषिमें मशीनोंकी कमी थी। यहाँपर और धन्धोंकी अपेक्षा मशीनोंके अभावका तीव्र अनुभव हुआ। अब महीनेवार, और हफ्तेवार पंचायती खेतोंकी संख्या बढ़ रही थी, और उसके साथ हजारों ट्रैक्टरों और खेतीकी मशीनोंकी मांग भी बढ़ रही थी, इसलिये खेतीकी आधुनिक मशीनें पहुँचाना तुरन्त आवश्यक था।

१९३१ में पंचायती खेतीके आन्दोलनमें और प्रगति हुई। अन्न उपजाने वाले मुख्य ज़िलोंमें ८०% से ऊपर निजी खेत मिलाकर पंचायती खेत बन गये थे। यहाँपर अधिकांशतः पंचायती खेती ठोस रूपमें चालू हो गयी थी। दूसरे नम्बरके अन्न उपजानेवाले ज़िलोंमें और औद्योगिक-फसलें पैदा करने वाले ज़िलोंमें लगभग ५०% खेत पंचायती खेतीमें आ गये थे। अब दो लाख तो पंचायती खेत थे, चार हज़ार सरकारी खेत थे और देश भरमें जितनी ज़मीन जोती-बोयी जाती थी, उसका दो-तिहाई भाग पंचायती और सरकारी खेतोंके पास था और केवल एक तिहाई भाग अलग खेती करने वाले किसानोंके पास।

गाँवोंमें यह समाजवादकी महान् विजय थी।

परन्तु पंचायती खेतीके आन्दोलनकी प्रगतिमें फैलाव अधिक था, गहराई कम थी पंचायती खेतोंकी संख्या बढ़ रही थी, और एक ज़िलेसे दूसरे ज़िलेमें पंचायती खेती फैल रही थी, परन्तु पंचायती खेतोंके काममें, या उनमें काम करने वालोंकी कुशलतामें वैसी ही उन्नति न हुई थी। इसका कारण यह था कि मुख्य कार्यकर्ताओं और शिक्षित खेतिहरोंकी संख्या पंचायती खेतोंकी संख्याका साथ न दे रही थी। इसका फल यह हुआ कि नये पंचायती खेतोंका काम सदा सन्तोषप्रद न होता था और पंचायती खेत अभी कमज़ोर थे। देहातमें पढ़े-लिखे लोगोंकी कमी होनेसे भी काममें रुकावट हुई क्योंकि हिसाब-किताब रखने वालों, स्टोर-मैनेजरों, सेक्रेटरियों आदिके लिये पढ़े लिखे आदमी चाहिये थे। बड़े परिमाणमें पंचायती धन्धोंको चलानेका अनुभव न होनेसे भी उनकी प्रगतिमें

बाधा पड़ी। पंचायती खेतीके किसान कल तक निजी खेती करते रहे थे; उन्हें छोटे खेतोंमें काम करनेका अनुभव था, न कि बड़े खेतोंमें काम करनेका। यह अनुभव एक दिनमें प्राप्त न हो सकता था।

इसलिये पंचायती खेतीकी पहली मंज़िलोंमें काफी ठोकरें खानी पड़ीं। पता चला कि पंचायती खेतोंमें कार्य संगठन लचर और श्रमसम्बधी अनुशासन ढीला था। बहुतसे पंचायती खेतोंमें आमदनीका बँटवारा काम करनेके दिनोंके हिसाबसे न होता था वरन् परिवारमें कितने लोगोंका पेट भरना है, इस हिसाबसे होता था। बहुधा ऐसा होता था कि ढील डालने वालोंको सच्चे और मेहनती खेतिहरोंसे कम मिलता था। पंचायती खेतोंके प्रबन्धमें यह दोष होनेसे खेतिहरोंमें काम करनेकी प्रेरणा कम हो जाती थी। ऐसा भी कई जगह देखनेमें आया कि ठीक कामके दिनोंमें लोग नागा कर रहे हैं, कुछ फसल जाड़ेमें बरफ गिरने तक बिनकटी छोड़े हुए हैं, कटाई इतनी असावधानीसे होती है कि बहुत-सा अनाज यों ही बरबाद हो जाता है। मशीनों, घोड़ों और साधारण कार्यके लिये व्यक्तिगत उत्तरदायित्व न होनेसे पंचायती खेत निर्बल पड़ गये और उनकी आमदनी कम हो गयी।

परिस्थिति वहाँ विशेषरूपसे चिन्ताजनक थी जहाँ कुलक या उनके दलाल पंचायती खेतोंमें पैठ गये थे और उनमें विश्वासके स्थानों पर जम गये थे। अनेक बार कुलक उन जिलोंमें पहुँच जाते जहाँके लोग उन्हें जानत न थे, और वहाँ जानबूझकर तोड़-फोड़ और शरारत करनेके विचारसे पंचायती खेतोंमें धँस जाते थे। कभी-कभी पार्टीके कार्यकर्ताओं और सोवियत अधिकारियोंकी असावधानीसे वे अपने ज़िलोंमें ही पंचायती खेतोंमें घुस जाते थे। पंचायती खेतोंमें कुलकोंका प्रवेश इसलिये आसान हो गया था कि उन्होंने अपने दाँव और पैंतरे एकदम बदल दिये थे। पहले वे खुलकर पंचायती खेतोंका विरोध करते थे, पंचायती खेतोंके प्रमुख कार्यकर्ताओं और अग्रसर खेतिहरोंको दुष्टतासे सताते थे, पाजीपनसे उनकी हत्या कर डालते थे, उनके घरों और खलिहानोंमें आग लगा देते थे। उन्होंने सोचा था कि इन उपायोंसे वे किसानोंको डरा-धमकाकर पंचायती खेतोंमें शामिल न होने देंगे। पंचायती खेतोंसे खुली लड़ाई में हारकर उन्होंने अपनी नीति बदल दी। उन्होंने अपनी चिड़ियामार बन्दूकें एक तरफ़ रख दीं, और शान्तिप्रिय अहिंसावादी लोगोंका एसा भेस बनाया मानों इनके लिये मक्खी मारना भी हराम है। वे कहने लगे कि हम सोवियत शासनके सच्चे समर्थक हैं। एक बार पंचायती खेतोंमें घुस पानेपर वे चोरीसे अपना तोड़-फोड़का काम करने लगे। वे कोशिश करने लगे कि पंचायती खेतोंको भीतरसे असंगठित करें, श्रम-अनुशासनको शिथिल करें, और फसल और कामके हिसावम गड़बड़ी कर दें। उनके जघन्य कार्यक्रममें यह भी था कि पंचायती खेतोंके घोड़ोंमें गलतोड़, खाज और दूसरी छूतकी बीमारियाँ लगाकर उन्हें जान-बूझकर मार डालें या उनकी देखभाल न करके और ऐसे ही दूसरे उपायोंसे, जिनमें उन्हें बहुधा सफलता भी मिलती थी, उन्हें काम करनेसे रोक लें। ट्रैक्टरों और खेतकी मशीनोंको वे बिगाड़ देते थे।

पंचायती खेत अभी कमजोर थे और उनमें काम करने वाले खेतिहर अभी अनुभवहीन थे, इसलिये कुलक बहुधा पंचायती खेतिहरोंकी आखोंमें धूल झोंक पाते थे और मज़ेसे तोड़-फोड़का काम कर लेते थे।

कुलकोंकी तोड़-फोड़ बन्द करनेके लिये और पंचायती खेतोंको शीघ्रतासे दृढ़ करनेके लिये यह आवश्यक था कि इन खेतोंको तुरन्त ही आदमी, सलाह और नेतृत्वकी कारगर सहायता दी जाय।

यह सहायता बोल्शेविक पार्टीसे मिल रही थी। जनवरी १९३३ में पार्टीकी केन्द्रीय समितिने एक प्रस्ताव स्वीकृत किया कि पंचायती खेतोंसे सम्बन्धित मशीनों और ट्रैक्टरोंके स्टेशनोंमें **राजनीतिक विभाग** संगठित किये जायँ। इन राजनीतिक विभागोंमें काम करने और पंचायती खेतोंकी मदद करनेके लिये लगभग १७,००० पार्टी मेम्बर देहात भेजे गये।

यह सहायता खूब कारगर हुई।

दो साल (१९३३ और १९३४) में मशीन और ट्रैक्टर स्टेशनोंके राजनीतिक विभागोंने पंचायती खेतिहरोंका एक कामकाजी समुदाय बनानेमें, पंचायती खेतोंके दोष दूर करनेमें, उन्हें मज़बूत बनानेमें, और कुलक–शत्रुओं और तोड़-फोड़ करनेवालोंसे उन्हें पाक करनेमें बड़ा काम किया।

राजनीतिक विभागोंने अपने कार्योंकी गौरवसे पूर्ति की। संगठन और कार्य-कुशलता, दोनोंमें ही उन्होंने पंचायती खेतोंको दृढ़ किया। उन्होंने उनके लिये शिक्षित खेतिहर तैयार किये, उनका प्रबन्ध उन्नत किया और पंचायती खेतोंके सदस्योंका राजनीतिक स्तर ऊँचा किया।

अग्रसर पंचायती खेतिहरोंकी पहली अखिल सोवियत संघकी कांग्रेस और उसमें कॉ. स्तालिनके भाषणने पंचायती किसानोंको महत्त्वपूर्ण प्रेरणा दी कि वे पंचायती खेतोंको मज़बूत करें।

गाँवोंकी पुरानी कृषि व्यवस्थाकी नयी पंचायती खेतीसे तुलना करते हुए कॉ. स्तालिनने कहा,—

> "पुरानी व्यवस्थामें किसान अलग-थलग होकर काम करते थे। वे अपने पुराने बाप-दादोंकी लकीर पीटे जाते थे और उसी पुरानी हल-मान्चीसे काम लेते थे। वे मेहनत करते थे जमींदारों और पूँजीपतियोंके लिये, कुलकों और मुनाफ़ाखोरोंके लिये। दूसरोंको वे धनी बनाते थे परन्तु स्वयं गरीबीमें दिन काटते थे। नयी, पंचायती खेतीमें, वे मिलकर काम करते हैं. उनमें सहकारिता है; नये औज़ारोंसे, ट्रैक्टरों और मशीनोंसे, वे खेती करते हैं। वे मेहनत करते हैं अपने लिये और पंचायती खेतोंके लिये। अब पूँजीपति और जमींदार नहीं हैं, कुलक और मुनाफ़ाखोर नहीं हैं। वे मेहनत करते हैं इस उद्देश्यसे कि उनके रहन-सहन और संस्कृतिका स्तर दिन प्रतिदिन ऊँचा हो।" **(स्तालिन : लेनिनवादकी समस्याएँ—रू. सं., पृ. ५२८)**

कॉ. स्तालिनने अपने भाषणमें बताया कि पंचायती खेती अपनानेसे किसानोंको क्या लाभ हुआ है। बोल्शेविक पार्टीने लाखों गरीब किसानोंकी सहायता की थी कि वे पंचायती खेतोंमें शामिल हों और कुलक-दासतासे मुक्ति पायें। पंचायती खेतोंमें शामिल होकर अपने पास अच्छीसे अच्छी भूमि और अच्छेसे अच्छे खेतीके औजार होनेसे लाखों गरीब किसान जो पहले मुसीबतके दिन काटते थे, अब मँझले किसानोंकी हैसियतके बन गये थे और अब उन्हें जीविकासम्बन्धी आश्वासन मिल गया था।

पंचायती खेतोंके विकासमें यह पहला क़दम था, उनकी पहली सफलता थी।

कॉ. स्तालिनने कहा कि दूसरा क़दम यह है कि पंचायती खेतिहरों—पहलेके गरीब और मँझले किसान, दोनों—के स्तरको और ऊँचा उठाया जाय; सभी पंचायती खेतिहरोंको समृद्ध और सभी पंचायती खेतोंको बोल्शेविक बनाया जाय।

कॉमरेड स्तालिनने कहा—

> "पंचायती किसानोंके समृद्ध बननेके लिये एक ही बातकी आवश्यकता रह गयी है और वह यह कि वे पंचायती खेतोंमें ईमानदारीसे काम करें, ट्रैक्टरों और मशीनोंका कुशलतासे उपयोग करें, जानवरोंका कुशलतासे उपयोग करें, कुशलतासे जमीनको जोतें-बोयें और पंचायती खेतोंकी सम्पत्तिकी रक्षा करें।"
> **(उपरोक्त—पृ. ५२२-२३)**

लाखों पंचायती खेतिहरोंपर कॉ. स्तालिनके भाषणका गंभीर प्रभाव पड़ा और वह पंचायती खेतोंका प्रत्यक्ष कार्यक्रम बन गया।

१९३४ के अंत तक पंचायती खेत एक अजेय और दुर्धर्ष शक्ति बन गये। सोवियत संघके तीन चौथाई किसान परिवारों और खेतीकी ९०% भूमिको उन्होंने अपने भीतर समेट लिया था।

१९३४ में सोवियत गाँवोंमें २ लाख ८१ हजार ट्रैक्टर और ३२ हजार हारवेस्टर कम्बाइन काम करते थे। उस साल चैतकी बुवाई १९३३ से पंद्रह-बीस दिन पहले, और १९३२ से तीस-चालीस दिन पहले, पूरी हो गयी। राज्यको अनाज देनेका कार्यक्रम १९३२ की अपेक्षा तीन महीने पहले पूरा हो गया।

इससे सिद्ध हो गया कि दो सालमें ही पंचायती खेतोंकी जड़ कितनी मजबूत हो गयी। इसका कारण उन्हें पार्टी और मजदूर-किसानोंके राजसे मिलनेवाली सहायता थी।

पंचायती कृषि-व्यवस्थाकी ठोस जीत और उसके साथ खेतीकी उन्नतिसे सोवियत सरकारने अन्न और दूसरी खाद्य सामग्रीकी खूराक़बन्दी (राशनिंग) हटा दी और अब यह सामान अनियंत्रित रूपसे बिकने लगा।

मशीन और ट्रैक्टर स्टेशनोंके राजनीतिक विभाग जिस उद्देश्यके लिये अस्थायी रूपसे बनाये गये थे, वह सिद्ध हो गया था, इसलिये केन्द्रीय समितिने निश्चय किया कि उन्हें स्थानीय जिला पार्टी-समितियोंमें मिलाकर उन्हें साधारण पार्टी-संस्थाएँ बना दिया जाय।

कृषि और उद्योग-धंधोंमें यह सब सफलता प्रथम पंचवर्षीय योजनाकी पूर्तिसे संभव हुई।

१९३३ के आरम्भमें यह स्पष्ट होगया था कि प्रथम पंचवर्षीय योजनाकी पूर्ति समयसे पहले हो गयी थी, अर्थात् यह योजना चार साल तीन महीनेमें पूरी हो गयी थी।

सोवियत संघके मजदूर वर्ग और किसानोंकी यह एक महान् युगप्रवर्तक विजय थी।

जनवरी १९३३ में केन्द्रीय समिति और केन्द्रीय नियंत्रण मंडलके अधिवेशनमें रिपोर्ट देते हुए कॉ. स्तालिनने प्रथम पंचवर्षीय योजनाके परिणामोंका विवेचन किया। रिपोर्टसे यह स्पष्ट हो गया कि प्रथम पंचवर्षीय योजनाकी पूर्तिकी अवधिमें पार्टी और सोवियत सरकारने निम्नलिखित मूल सफलताएँ प्राप्त की हैं,—

(क) सोवियत संघ एक कृषि-प्रधान देशसे औद्योगिक देश बन गया था क्योंकि देशके समग्र उत्पादनकी तुलनामें औद्योगिक उत्पादनका अनुपात बढ़कर ७०% तक पहुँच गया था।

(ख) समाजवादी आर्थिक व्यवस्थाने औद्योगिक क्षेत्रसे पूँजीवादी लोगोंको निकाल बाहर किया था और अब उद्योग-धन्धोंमें यही एक आर्थिक व्यवस्था रह गयी थी।

(ग) समाजवादी आर्थिक व्यवस्थाने कृषिमें कुलकोंका वर्गरूपमें नाश कर दिया था और खेतीमें अब यह व्यवस्था ही सर्वेसर्वा थी।

(घ) पंचायती कृषि-व्यवस्थाने गाँवोंमें दरिद्रता और अभावका अन्त कर दिया था और अब लाखों—करोड़ों ग़रीब किसान रोटी कपड़ेके मोहताज न रह गये थे।

(ङ) उद्योग-धन्धोंमें समाजवादी व्यवस्थाने बेकारी दूर कर दी थी। कुछ धन्धोंमें मज़दूरीके आठ घंटे अब भी थे परंतु उद्योग-धन्धोंके बहुभागमें मजदूरीका दिन सात घंटेका होता था और अस्वास्थ्यकर कामोंमें ६ ही घंटोंका।

(च) देशकी आर्थिक व्यवस्थाके सभी अंगोंमें समाजवादकी विजयसे मनुष्य द्वारा मनुष्यके उत्पीड़नका अन्त हुआ।

प्रथम पंचवर्षीय योजनाकी सफलताका सारतत्व यह था कि मज़दूर और किसान शोषणसे पूर्ण मुक्त हो गये थे, और सोवियत संघकी **समग्र** श्रमिक जनताके लिये समृद्ध और सुसंस्कृत जीवनका द्वार खुल गया था।

जनवरी १९३४ में पार्टीकी १७ वीं कांग्रेस हुई। इसमें १८,७४,४८८ पार्टी मेम्बरों और ९,३५,२९८ उम्मीदवार मेम्बरोंकी ओरसे १, २२५ वोट देनेवाले प्रतिनिधि और ७३६ केवल भाषणका अधिकार रखनेवाले प्रतिनिधि सम्मिलित हुए।

पिछली कांग्रेससे अब तकके पार्टी-कार्यकी कांग्रेसने विवेचना की। आर्थिक और सांस्कृतिक जीवनके सभी अंगोंमें समाजवादको जो निश्चित सफलता मिली थी, कांग्रेसने उसका उल्लेख किया और यह भी लेखबद्ध किया कि सारे मोर्चेपर पार्टीकी साधारण नीति सफल हुई है।

१७ वीं पार्टी कांग्रेसको इतिहासमें "विजेताओंकी कांग्रेस" कहा जाता है।

केन्द्रीय समितिके कार्यपर रिपोर्ट देते हुए इस अवधिमें सोवियत संघमें जो मूल परिवर्तन हुए थे, कॉ. स्तालिनने उनकी ओर निर्देश किया।

"इस अवधिमें सोवियत संघमें आमूल परिवर्तन हुआ है। उसने पिछड़ेपन और सामन्तशाहीकी केंचुलको उतार फेंका है। कृषिप्रधान देशसे वह औद्योगिक देश बन गया है। छोटी और बँटी हुई खेतीके देशसे वह बड़े पैमानेपर, यंत्रसज्जित पंचायती खेतीका देश बन गया है। अशिक्षित, असंस्कृत और अज्ञानी देशसे वह एक शिक्षित और संस्कृत देश बन गया है अथवा बन रहा है। इस देशमें ऊंचे, मध्यम और साधारण स्कूलोंका एक भारी जाल बिछा हुआ है जहाँ जहाँ सोवियत संघकी जातियोंकी भाषामें शिक्षा दी जाती है।" **(स्तालिन : सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टीकी १७ वीं कांग्रेस, कम्युनिस्ट पार्टीकी केन्द्रीय समितिका कार्यविवरण—अं. सं., पृ. ३०)**

इस समय तक देशके ९९% उद्योग-धन्धे समाजवादी उद्योग-धन्धे बन गये थे। समाजवादी कृषि—पंचायती और सरकारी खेतों—में देशकी ९०% खेतीकी ज़मीन आ जाती थी। व्यापारमें पूंजीवादी लोग एकदम बाहर निकाल दिये गये थे।

जब नयी आर्थिक नीति चालू की जा रही थी तब लेनिनने कहा था कि, देशमें पाँच सामाजिक-आर्थिक रूपोंके तत्व हैं। पहला रूप दादापंथी अर्थ-व्यवस्थाका है। यह व्यवस्था बहुत कुछ प्राकृतिक थी अर्थात् उसमें प्रायः कुछ भी व्यापार न होता था। दूसरा रूप साधारण मालके उत्पादनका था जिसके प्रतिनिधिरूप अधिकांश खेत थे, जो खेतकी पैदावार बेचते थे, और दस्तकारी करनेवाले लोग थे। नयी आर्थिक नीतिके पहले वर्षोंमें, अधिकांश जनता इस आर्थिक रूपके अन्तर्गत थी। तीसरा रूप व्यक्तिगत पूँजीवादका था जो नयी आर्थिक नीतिके प्रारंभिक कालमें फिर चेतने लगा था। चौथा रूप राज्यगत पूँजीवादका था। यह रूप मुख्यतः विशेष सुविधाओंमें विद्यमान था परन्तु इसका कोई महत्वपूर्ण विकास नहीं हुआ। पाँचवाँ रूप समाजवादका था। उसमें समाजवादी उद्योग-धन्धे थे; जो अब भी कमज़ोर थे सरकारी और पँचायती खेत जो नवीन आर्थिक नीतिके प्रारंभिक समयमें आर्थिक दृष्टिसे महत्वशून्य थे; और सरकारी व्यापार और सहकार-समितियाँ जो इस समय कमज़ोर ही थीं।

लेनिनका कहना था कि इन सब रूपोंमें समाजवादी रूपको सिरमौर बनना है।

नवीन आर्थिक नीतिका उद्देश था कि आर्थिक व्यवस्थाके समाजवादी रूपोंकी पूर्ण विजय हो।

१७ वीं पार्टी कांग्रेसके समय तक इस उद्देश्यकी पूर्ति हो चुकी थी।

कॉ. स्तालिनने कहा था,—

"हम अब कह सकते हैं कि पहले, तीसरे और चौथे रूपोंका अब अन्त हो चुका है। दूसरे सामाजिक-आर्थिक रूपको बाध्य होकर गौण स्थान लेना पड़ा है।

पाँचवें सामाजिक-आर्थिक रूप—समाजवादी रूप—का अब अविकल राज्य है और देशकी समग्र आर्थिक व्यवस्थामें वही एकमात्र विधायक शक्ति है।"

(उपरोक्त—पृ. ३२)

कॉ. स्तालिनकी रिपोर्टमें सैद्धान्तिक--राजनीतिक नेतृत्वके प्रश्नको महत्वपूर्ण स्थान दिया गया। उन्होंने पार्टीको चेतावनी दी कि यद्यपि उसके शत्रु, अवसरवादी और सभी तरहके राष्ट्रवादी गुमराह, परास्त कर दिये गये हैं, फिर भी उनके सिद्धान्तोंका ध्वंसावशेष अब भी कुछ पार्टी मेम्बरोंके मस्तिष्कमें बना है और कभी-कभी उभर आता है। आर्थिक जीवनमें बचा-खुचा पूँजीवाद और विशेषकर मनुष्योंके चित्तमें उसके संस्कार हार खाये हुए लेनिनविरोधी गुटोंके सिद्धान्तोंके लिये बड़ी उर्वर भूमि थे। लोगोंकी मनोवृत्तिका विकास उनकी आर्थिक स्थितिके साथ नहीं बढ़ पाता। फलतः पूँजीवादी आदर्शोंका ध्वंसावशेष अब भी लोगोंके चित्तमें जमा हुआ था और आर्थिक जीवनमें पूँजीवादके निर्मूल होनेपर भी बना रहेगा। यह भी याद रखना चाहिये कि चारों ओरका पूँजीवादी संसार, जिसके लिये हमें अपनी तोप-तलवार दुरुस्त रखना है, इस ध्वंसावशेषको पुनर्जीवित करने और उसे पोसनेका प्रयत्न कर रहा है।

कॉ. स्तालिनने लोगोंके चित्तमें पूँजीवादके जातिसम्बन्धी ध्वंसावशेषका भी उल्लेख किया जो विशेषरूपसे वहाँ चिपका हुआ था। बोल्शेविक पार्टी दो मोर्चोंपर लड़ रही थी, वृहत्तर रूसी राष्ट्रवादकी गुमराहीके विरुद्ध और स्थानीय राष्ट्रवादके विरुद्ध भी। कई प्रजातंत्रोंमें—युक्राइन, वायलो रूस आदिमें—पार्टी संगठनोंने स्थानीय राष्ट्रवादसे लोहा लेना बन्द कर दिया था और, उसे यहाँ तक बढ़ जाने दिया था कि वह विरोधी शक्तियोंसे, हस्तक्षेप करनेवाले देशोंसे, मिल गया था और राज्यके लिये संकट बन गया था। जातीय प्रश्नपर कौनसी गुमराही अधिक भयानक है, इस प्रश्नका उत्तर देते हुए कॉ. स्तालिनने कहा था,—

"अधिक भयानक वह गुमराही है जिससे हमने लड़ना बन्द किया है और इस तरह उसे राज्यके लिये एक संकट बन जाने दिया है।" **(उपरोक्त-पृष्ठ ८१)**

कॉ. स्तालिनने पार्टीसे कहा कि वह अपने सैद्धान्तिक कार्योंमें अधिक क्रियाशील रहे और क्रमपूर्वक विरोधी वर्गोंके सिद्धान्तों और उनके ध्वंसावशेष तथा लेनिनवादकी विरोधी प्रवृत्तियोंका भंडाफोड़ करे।

उन्होंने यह भी बताया कि उपयुक्त निर्णय स्वीकार कर लेनेसे ही किसी बातकी सफलता निश्चित नहीं हो जाती। सफलता निश्चित करनेके लिये **ठीक जगहपर ठीक आदमी** रखना आवश्यक होता है—ऐसे आदमियोंको जो निर्देशक संस्थाओंके निर्णयोंको चरितार्थ कर सकें। और **निर्णयोंकी पूर्तिकी देखभाल रख सकें**। बिना इन संगठनात्मक उपायोंके यह संकट रहता है कि निर्णय कागजके टुकड़े मात्र न बने रहें जिनका प्रत्यक्ष जीवनसे कोई सम्बन्ध न हो। इस बातके समर्थनमें कॉ. स्तालिनने लेनिनकी प्रसिद्ध उक्तिका उल्लेख किया कि संगठनात्मक कार्योंमें मुख्य बात है **लोगोंका**

चुनाव और निर्णयों की पूर्तिकी देखभाल । कॉ. स्तालिनने कहा कि हमारे प्रत्यक्ष कार्योंका मुख्य दोष है, स्वीकृत निर्णयों और उनको चरितार्थ करनेवाली संगठनात्मक कार्यवाहीकी विषमता, उनकी पूर्तिमें देखभालका अभाव ।

पार्टी और सरकारके निर्णयोंकी पूर्तिकी देखभाल करनेके लिये १७ वीं पार्टी कांग्रेसने केन्द्रीय नियंत्रण मंडल और मजदूर-किसान निरीक्षणके बदले पार्टीकी केन्द्रीय समितिकी देख-रेखमें एक पार्टी नियंत्रण मंडल और सोवियत संघके जन-प्रतिनिधियोंकी समितिकी देख-रेखमें एक सोवियत नियंत्रण मंडल बनाया। १२ वीं पार्टी कांग्रेसने जिस उद्देश्यसे केन्द्रीय नियंत्रण मंडल और मजदूर-किसान निरीक्षण बनाये थे वह पूरा हो गया था।

कॉ. स्तालिनने इस नयी अवस्थामें पार्टीके संगठनात्मक कार्योंका उल्लेख इस प्रकार किया,—

(१) हमारा संगठनात्मक कार्य पार्टीके राजनीतिक मार्गकी आवश्यकताओंके अनुकूल होना चाहिये ।

(२) संगठनात्मक नेतृत्वको राजनीतिक नेतृत्वके स्तर तक उठाना चाहिये ।

(३) संगठनात्मक नेतृत्वको पार्टीके राजनीतिक नारों और निर्णयोंको चरितार्थ करनेमें पूर्ण रूपसे सक्षम बनाना चाहिये ।

अन्तमें कॉ. स्तालिनने पार्टीको चेतावनी दी कि यद्यपि समाजवादको महान सफलताएँ मिली हैं जिनपर हम उचित गर्व कर सकते हैं, फिर भी हमें होश-हवास न खो देना चाहिये, " मदान्ध " न हो जाना चाहिये, सफलतासे पाँव फैलाकर सो न जाना चाहिये।

कॉ. स्तालिनने कहा था,—

> " हमें पार्टीको थपकी देकर न सुलाना चाहिये वरन् उसकी जागरूकताको बढ़ाना चाहिये, उसे काम करनेके लिये तैयार रखना चाहिये, उसे निःशस्त्र न करके सशस्त्र करना चाहिये, उसका संगठन तोड़नेके बदले दूसरी पंचवर्षीय योजनाकी पूर्तिके लिये उसे मुस्तैद रखना चाहिये । " **(उपरोक्त—पृ. ९६)**

१७ वीं कांग्रेसने देशकी आर्थिक व्यवस्थाके विकासके लिये दूसरी पंचवर्षीय योजनापर कॉ. मोलोतौफ और क्यूबिशेफकी रिपोर्टें सुनीं । दूसरी पंचवर्षीय योजनाका कार्यक्रम पहलेसे भी बढ़ा-चढ़ा था । १९३७ में, दूसरी योजनाकी पूर्ति तक औद्योगिक उत्पादनको युद्धपूर्वके स्तरसे लगभग अठगुना बढ़ जाना चाहिये था । इस अवधिमें सभी धन्धोंमें १ खरब ३३ अरब रूबल पूँजी लगनी थी, पहली योजनामें ६४ अरब रूबलसे कुछ ही ऊपर पूँजी लगी थी ।

नये निर्माण कार्यमें इतनी पूँजी लगनेसे देशके आर्थिक जीवनके सभी अंग आधुनिक कौशलके कील-काँटोंसे दुरुस्त हो जाते ।

दूसरी पंचवर्षीय योजनासे मुख्यतः कृषिको यंत्रसज्जित करना था । ट्रैक्टर-शक्तिको कुल मिलाकर १९३३ के २२,५०,००० हॉर्स पावरसे १९३७ में ८०,००,०००

हॉर्स पावर तक बढ़ना था। इस योजनामें कृषिकी वैज्ञानिक पद्धति (फसलोंकी सही अदल-बदल, चुने हुए बेसारका उपयोग, शरतमें जुताई आदि) का विस्तारसे उपयोग करनेका कार्यक्रम बनाया गया।

यातायातके साधनोंका नये कौशलके अनुसार निर्माण करनेके लिये एक विशाल योजना बनायी गयी।

दूसरी पंचवर्षीय योजनामें मज़दूरों और किसानोंके भौतिक और सांस्कृतिक स्तर को और भी ऊंचा करनेके लिये एक विस्तृत कार्यक्रम बनाया गया।

सत्रहवीं पार्टी कांग्रेसने संगठनसम्बन्धी बातोंकी ओर विशेष ध्यान दिया। कॉ. कागानोविचकी दी हुई रिपोर्टोंके सम्बन्धमें पार्टी और सोवियतोंके कार्यपर निर्णय स्वीकृत किये। अब संगठनके प्रश्नका महत्व और भी बढ़ गया था क्योंकि पार्टीकी साधारण नीतिकी विजय हुई थी और लाखों मज़दूरों और किसानोंके अनुभवसे पार्टी नीति परखी जा चुकी थी। दूसरी पंचवर्षीय योजनाके नये और अटपटे कार्योंकी पूर्तिके लिये सभी क्षेत्रोंमें और ऊँचे दर्जेके कामकी जरूरत थी।

संगठनात्मक प्रश्नोंपर कांग्रेसके निर्णयोंमें कहा गया था,—

> "दूसरी पंचवर्षीय योजनाके मुख्य कार्य हैं पूँजीवादी तत्वोंका पूर्ण विध्वंस, आर्थिक जीवनमें और लोगोंके चित्तमें पूँजीवादके ध्वंसावशेषपर विजयप्राप्ति, आधुनिक कौशलके अनुसार देशकी समग्र आर्थिक व्यवस्थाके पुनर्गठनकी पूर्ति, कौशलके साज-सामान और कारखानोंका उपयोग करनेकी योग्यता-प्राप्ति, कृषिको यंत्रसज्जित करना और उसकी उत्पादन-शक्तिमें वृद्धि। ये कार्य बार-बार हमारे सामने यह समस्या रखते हैं कि हम तुरंत ही **सभी क्षेत्रोंमें, और सबसे पहले, प्रत्यक्ष संगठनात्मक नेतृत्वमें** अपना कार्य उन्नत करें।" **(सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टीके प्रस्ताव—रूसी सं., भाग २, पृ. ५९१)**

१७ वीं कांग्रेसने नये पार्टी नियम स्वीकृत किये। पहली नियमावलीसे मुख्य भेद इस बारकी एक भूमिका थी। इस भूमिकामें कम्युनिस्ट पार्टीकी संक्षिप्त व्याख्या है, और सर्वहारा-संघर्षमें उसकी कार्यवाही तथा सर्वहारा-एकाधिपत्यके संगठनमें उसके स्थानकी व्याख्या है। नयी नियमावलीमें पार्टी-मेम्बरोंके कर्तव्य विस्तारसे दिये हुए हैं। नये मेम्बरोंकी भर्तीके सम्बन्धमें कठोर नियमोंका उल्लेख किया गया और एक उपनियम हम-दर्दोंके बारेमें भी रखा गया। इस नयी नियमावलीसे पार्टीके संगठनात्मक कलेवरकी और विस्तृत व्याख्या होती है और उन पार्टी-केन्द्रोंके सम्बन्धमें नये उपनियम मिलते हैं जो १७ वीं कांग्रेससे प्राथमिक संगठन कहलाने लगे हैं। पार्टीके आन्तरिक जनवादी और पार्टीसम्बन्धी अनुशासनके उपनियम भी फिरसे बनाये गये।

४. बुखारिनपंथियोंका राजनीतिक धोखेबाज़ोंके रूपमें पतन—त्रात्स्कीपंथी धोखेबाज़ोंका भेदियों और हत्यारोंके ग़द्दार जत्थेके रूपमें पतन—कॉमरेड किरौफकी जघन्य हत्या—वोल्शेविक जागरूकताको बढ़ानेके लिय पार्टीके उपाय।

हमारे देशमें समाजवादकी सफलतासे पार्टीको और मज़दूरों और पंचायती खेतिहरोंको ही खुशी न हुई वरन् सोवियत बुद्धिजीवी वर्गको और सोवियत संघके सभी ईमानदार नागरिकोंको प्रसन्नता हुई।

परन्तु पराजित शोषक-वर्गोंके रहे-सहे लोगोंको इससे खुशी न हुई। इसके विपरीत जैसे-जैसे दिन वीतते गये, वैसे-वैसे ही उनके क्रोधका पारा भी चढ़ता गया।

पराजित वर्गोंके दास—बुखारिन और त्रात्स्कीके समर्थकोंके क्षुद्र अवशेष—क्रोधसे पागल हो उठे।

ये लोग मज़दूरों और पंचायती खेतिहरोंकी सफलताका मूल्यांकन जनताके हितोंको देखकर न करते थे। जनता इस तरहकी सफलता मिलनेपर हर्षध्वनि करती थी परन्तु ये लोग इस सफलताका मूल्यांकन अपनी उस तुच्छ और सड़ी-गली गुटवन्दीको देखकर करते थे जिसका जीवनकी वास्तविकतासे अब कोई सम्वन्ध न रह गया था। देशमें समाजवादकी विजयका अर्थ था पार्टी—नीतिकी विजय और इन लोगोंकी। नीतिका दिवालियापन परन्तु स्पष्ट तथ्यको स्वीकार करने और सामान्य उद्देश्यके लिये कार्य करनेके वदले वे अपनी असफलता और अपने दिवालियापनके लिये पार्टी और जनतासे वदला लेने लगे। मज़दूरों और पंचायती खेतिहरोंके हितके विरुद्ध वे तोड़-फोड़ और शरारतें करने लगे, खानोंको वारूदसे उड़ाने, कारखानोंमें आग लगाने, और पंचायती तथा सरकारी खेतोंमें तोड़-फोड़ करने लगे जिससे कि मज़दूरों और पंचायती खेतिहरोंकी मेहनतपर पानी फिर जाय और सोवियत सरकारके विरुद्ध जनता विगड़ खड़ी हो। ऐसा करते समय अपने क्षुद्र गुटको लोगोंकी आँखसे वचाने और नष्ट न होने देनेके लिये वे पार्टी—भक्तिका स्वांग भरते थे, उसकी प्रशंसा करते थे, उसके गीत गाते थे, उसके सामने और भी ज़्यादा दुम हिलाते थे जब कि वास्तवमें वे मज़दूरों और किसानोंके विरुद्ध अपनी गुप्त और घातक कार्यवाहीमें वरावर लगे हुए थे।

१७ वीं पार्टी कांग्रेसमें बुखारिन, राइकौफ़, और तौम्स्कीने पश्चाताप प्रकट किया और पार्टी और उसके कार्योंकी प्रशंसा करते हुए आकाश-पाताल एक कर दिया। परन्तु कांग्रेसने उनकी वक्तृतामें वेईमानी और दुरंगेपनको ताड़ लिया। पार्टी अपने मेम्वरोंसे अपनी सफलताओंपर प्रशंसा और वधाईके गीत नहीं गवाना चाहती, वरन चाहती है कि समाजवादी मोर्चेपर ईमानदारीसे वे काम करें। परन्तु वहुत दिनसे वुखारिनपंथियोंने

इस कामका कोई सबूत न दिया था। पार्टी समझ गयी कि इन लोगोंके खोखले व्याख्यान वास्तवमें कांग्रेसके बाहर उनके साथियोंके लिये हैं कि देखो, दगाबाजी यों की जाती है और तुम निराश होकर हथियार न डाल देना।

सत्रहवीं कांग्रेसमें त्रात्स्कीपंथियोंने, तथा जिनोवियेफ़ और कामेनेफ़ने भी भाषण दिये जिनमें उन्होंने अपनी गलतियोंके लिये अपनेको खूब फटकारा और वैसे ही पार्टीके कार्योंकी सफलताके लिये उसकी तारीफ़के पुल बाँधे। परन्तु पार्टीसे यह छिपा न रह सकता था कि उनका यह पश्चात्ताप और पार्टीकी भद्दी प्रशंसा उनके दुष्ट और सशंक मनको छिपानेके लिये हैं। फिर भी पार्टीको अभी यह ज्ञान न था, न इसका सन्देह ही था कि जब ये लोग कांग्रेसमें अपने मीठे-मीठे व्याख्यान दे रहे थे, तभी वे कॉमरेड किरौफ़की हत्या करनेके लिये नीच षड़यंत्र भी रच रहे थे।

१ दिसम्बर १९३४ को लेनिनग्रादमें, स्मोलनीमें, एस. एम. किरौफ़ पिस्तौलकी गोलीसे मारे गये।

हत्यारा तुरन्त ही पकड़ लिया गया और वह एक गुप्त क्रान्तिविरोधी गुटका सदस्य निकला जिसमें लेनिनग्रादके जिनोवियेफ़पंथियोंके एक सोवियत विरोधी गुटके लोग भरे हुए थे।

किरौफ़को पार्टी और मजदूर-वर्ग प्यार करता था। उनकी हत्यासे जनतामें भारी हलचल मच गयी और सारे देशमें क्रोध और क्षोभकी लहर दौड़ गयी।

जाँचसे पता लगा कि १९३३ और १९३४ में लेनिनग्रादमें एक गुप्त क्रांतिविरोधी आतंकवादी दल बनाया गया था। इसमें पुराने जिनोवियेफपंथी विरोधी दलके लोग थे और इसका नेतृत्व तथाकथित "लेनिनग्राद केन्द्र" के हाथमें था। इस गुटका उद्देश्य कम्युनिस्ट पार्टीके नेताओंकी हत्या करना था। किरौफ़को प्रथम बलिके लिये चुना गया। इस क्रान्तिविरोधी गुटके सदस्योंके बयानसे यह साबित हो गया कि इन लोगोंका बाहरके पूंजीवादी देशोंसे संपर्क है और उन्हें वहाँसे रुपया मिलता है।

सोवियत संघकी प्रधान अदालतके सैनिक विभागने इस संगठनके दोषी सदस्योंको चरम दण्ड—गोली मारनकी सज़ा दी।

इसके कुछ दिन बाद "मॉस्को केन्द्र" नामके एक गुप्त क्रान्तिविरोधी संगठनका पता लगा। प्राथमिक जाँच-पड़ताल और पेशियोंसे पता लगा कि जिनोवियेफ़, कामेनेफ़, येवदोकिमौफ़ और इस गुटके दूसरे नेताओंने अपने अनुयायियोंमें आतंकवादी मनोवृत्ति जगाने और पार्टीकी केन्द्रीय समिति तथा सोवियत सरकारके सदस्योंकी हत्या का षड़यंत्र रचनेका दुष्ट कार्य किया है।

ये लोग दगाबाजी और बदमाशीमें इतने नीचे गिर गये थे कि जिनोवियेफने, जो किरौफ़की हत्याका एक संगठनकर्ता और प्रेरक था और जिसने हत्या करनेकी जल्दी की थी, किरौफ़पर एक प्रशंसात्मक लेख लिखा और उसके प्रकाशन की माँग की।

अदालतमें जिनोवियेफपंथियोंने खेद प्रदर्शनका अभिनय किया परन्तु कठघरेमें भी वे अपनी दगाबाज़ीसे न चूके। त्रात्स्कीसे अपने सम्बन्धको उन्होंने गुप्त रखा। उन्होंने इस बातको गुप्त रखा कि त्रात्स्कीपंथियोंके साथ उन्होंने अपनेको फासिस्त जासूसोंके हाथ बेच दिया है। अपने भेद लेने और तोड़-फोड़के कामोंको उन्होंने छिपाया! उन्होंने इस बातको अदालतसे छिपाया कि बुखारिनपंथियोंसे उनका सम्बन्ध है और फासिस्टोंका दलाल कहीं एक संयुक्त त्रात्स्की-बुखारिन गुट भी है।

जैसा कि आगे मालूम हुआ, कॉ. किरोफ़की हत्या इस त्रात्स्की-बुखारिन गुटका कार्य था।

फिर भी, १९३५ में ही, यह स्पष्ट हो गया था कि जिनोवियेफ़ गुट एक छिपा हुआ गद्दार संगठन है जिसके सदस्योंसे गद्दारोंका-सा व्यवहार करना बिलकुल उचित होगा।

एक साल बाद पता लगा कि किरौफ़-हत्याकांडके वास्तविक और प्रत्यक्ष संगठन-कर्ता त्रात्स्की, ज़िनोवियेक, कामेनेफ और उनके साथी हैं और उन्होंने केन्द्रीय समितिके अन्य सदस्योंकी हत्याकी भी तैयारी की है। जिनोवियेफ़, कामेनेफ, बाकायेफ़, येवदोकिमोफ़, पिकेल, स्मिर्नोफ़, त्राचकोव्स्की, तेर-वागान्यान, राइनगोल्ड आदिपर मुक़दमा चलने लगा। सीधा सबूत सामने होनेपर उन्हें खुले आम, भरी अदालतमें यह स्वीकार करना पड़ा कि उन्होंने किरौफ़-हत्याकांडका ही संगठन नहीं किया वरन् वे पार्टी और सरकारके अन्य सभी नेताओंकी हत्याकी योजना बनाते रहे थे। बादकी जाँच-पड़तालसे पता लगा कि ये दुष्ट जासूसीके और तोड़-फोड़के काममें लगे हुए थे। इन लोगोंके नैतिक और राजनीतिक पतनकी सीमा, उनकी ज़घन्य क्षुद्रता और विश्वासघात, जो पार्टी-भक्तिके झूठे प्रचारसे छिपे हुए थे, १९३६ में मॉस्कोके मुक़दमेमें प्रगट हो गये।

हत्यारों और जासूसोंके इस गुटका सरदार और उनका पथदर्शक विभीषण त्रात्स्की था। त्रात्स्कीके क्रान्तिविरोधी निर्देशोंका पालन करनेवाले उसके सहायक और दलाल जिनोवियेफ़, कामेनेफ़ और त्रात्स्कीपंथी लगुए-भगुए थे। साम्राज्यवादी देशों द्वारा आक्रमण होनेपर वे सोवियत संघके पराजयकी तैयारी कर रहे थे। मज़दूरों और किसानोंके राजसे वे निराश हो गये थे। अब वे जर्मन और जापानी फासिस्टोंके घृणित दलाल और गुर्गे बन गये थे।

किरौफ़-हत्याकांडके अभियुक्तोंके मुक़दमेसे पार्टी संगठनोंको यह खास सबक़ सीखना था कि उन्हें अपने राजनीतिक अंधेपन और राजनीतिक लापरवाहीका अन्त करना चाहिये और अपनी तथा सभी पार्टी-मेम्बरोंकी सतर्कता बढ़ानी चाहिये।

इस दुष्ट हत्याकांडके सम्बन्धमें पार्टी संगठनोंके नाम एक गश्ती चिट्ठीमें केन्द्रीय समितिने लिखा था,—

> "(क) हमें अपनी अवसरवादी संतोष-भावनाका अन्त कर देना चाहिये जिसका जन्म इस भ्रान्त धारणासे होता है कि जैसे-जैसे हम शक्तिशाली होंगे, वैसे-वैसे शत्रु अधिक निर्दोष और संयत बनता जायगा। यह धारणा एकदम

मिथ्या है। यह वही नरम दलवाली गुमराही फिरसे उभरी है जो सभीको आश्वासन देती थी कि हमारे दुश्मन धीरे-धीरे समाजवादकी ओर बढ़ आयेंगे और सच्चे समाजवादी बन जायँगे। बोल्शेविक अपनी विजयसे प्रसन्न होकर हाथपर हाथ धरे बैठे रहें, अपनी लड़नेकी जगहपर सो रहें, यह अक्षम्य है। हमें संतोष-भावना न चाहिये, वरन् सतर्कता, सच्ची बोल्शेविक क्रान्तिकारी सतर्कता चाहिये। यह याद रखना चाहिये कि दुश्मनकी स्थिति जितना ही निराशाजनक होगी, उतना ही वे "चरम उपायों" का सहारा लेंगे कि सोवियत शासनसे लड़नेमें अब इन्हींसे बच निकलें। हमें यह याद रखना चाहिये और सतर्क रहना चाहिये।

"(ख) हमें संगठित ढंगसे पार्टी-मेम्बरोंको पार्टीके इतिहासकी शिक्षा देनी चाहिये, पार्टीके इतिहासमें सभी छोटे-बड़े पार्टी-विरोधी गुटोंका अध्ययन करना चाहिये, कैसे उन्होंने पार्टी-नीतिका विरोध किया, उनकी कार्यनीति क्या थी और विशेषकर इन पार्टी-विरोधी गुटोंसे लड़नेमें हमारी पार्टीकी कौनसी कार्य-नीति थी और उसने किन उपायोंसे काम लिया, किस कार्यनीति और किन-किन उपायोंसे हमारी पार्टी इन गुटोंको परास्त करके उन्हें निर्मूल कर सकी। पार्टी-मेम्बरोंको यही न जानना चाहिये कि पार्टीने कैसे वैधानिक-जनवादियों, सामाजिक क्रान्तिकारियों, मेन्शेविकों और अराजकतावादियोंसे लोहा लिया, वरन यह भी कि उसने कैसे त्रात्स्कीपंथियों, "जनवादी-मध्यवादियों," "श्रमिक-विरोध," जिनोवियेफपंथियों, नरमदल वाले गुमराहों, गरम-नरम भ्रान्तियों आदिसे लोहा लिया और उन्हें परास्त किया। यह कभी न भूलना चाहिये कि पार्टीके इतिहासको जानना और समझना एक महत्वपूर्ण और अत्यावश्यक साधन है जिससे पार्टी-मेम्बरोंकी क्रान्तिकारी सतर्कता पूर्ण रूपसे निश्चित हो सकती है।"

१९३३ में पार्टीकी पाँतिसे बाहरी और गैर लोगोंका जो बहिष्कार आरम्भ हुआ था, वह इस समय अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ, विशेषकर किरोफकी नृशंस हत्याके बाद पार्टी-मेम्बरोंके पुराने इतिहासकी विस्तृत परीक्षा और पुराने पार्टी-कार्डोंके बदले नये पार्टी-कार्डोंका देना।

पार्टी-मेम्बरोंके इतिहासकी परीक्षाके पहले बहुतसे पार्टी-संगठनोंमें पार्टी-कार्डोंके सम्बन्धमें अनुत्तरदायित्व और असावधानीसे काम लिया जाता था। कई संगठनोंमें **कम्युनिस्टोंकी रजिस्ट्री करनेमें पूर्ण विशृंखलता**का साम्राज्य मिला। इस अवस्थासे दुश्मन लाभ उठा रहे थे और जासूसी तोड़-फोड़ आदिके लिये पार्टी-कार्डोंकी आड़ ले लेते थे। पार्टी-संगठनोंके बहुतसे नेताओंने नये मेम्बरोंकी भर्ती और पार्टी-कार्ड बाँटनेका काम उन लोगोंको दे रखा था जो साधारण पदोंपर थे और कभी-कभी, ऐसे पार्टी-मेम्बरोंको भी दे दिया था जिनकी सचाईकी परीक्षा न हुई थी।

१३ मई १९३५ को सभी संगठनोंके नाम एक गश्ती चिट्ठीमें इस रजिस्ट्री और पार्टी-कार्डोंको बाँटने और सुरक्षित रखनेके विषयपर केन्द्रीय समितिने सभी संगठनोंको

निर्देश किया कि पार्टी-मेम्बरोंके पुराने इतिहासकी भली भाँति परीक्षा करें और "अपने पार्टी-घरमें ही बोल्शेविक-व्यवस्था कायम करें।"

पार्टी-मेम्बरोंके इतिहासकी परीक्षा राजनीतिक दृष्टिसे अत्यन्त महत्वपूर्ण थी। पार्टी-मेम्बरोंके इतिहासकी परीक्षाके परिणामोंपर केन्द्रीय समितिके मंत्री कॉ. येजोफकी रिपोर्टके सम्बन्धमें पार्टीकी केन्द्रीय समितिके एक अधिवेशनने यह प्रस्ताव स्वीकृत किया कि पार्टीकी पाँति दृढ़ करनेके लिये यह परीक्षा एक अति महत्वपूर्ण संगठनात्मक और राजनीतिक उपाय है।

पार्टी-मेम्बरोंके इतिहासकी परीक्षा और पार्टी-कार्डोंके बदलनेके बाद पार्टीमें नये मेम्बरोंकी भर्ती शुरू हुई। इस सम्बन्धमें पार्टीकी केन्द्रीय समितिने माँग की कि पार्टीमें नये मेम्बरोंको सामूहिक रूपसे भर्ती न करना चाहिये वरन् व्यक्तिगत भर्तीके आधार पर उन्हीं लोगोंको लेना चाहिये "जो सचमुच आगे बढ़े हुए हैं और मज़दूर-वर्गके हितोंके प्रति सच्चे हैं, देशके वे सबसे अच्छे लोग, विशेषकर मज़दूर-वर्गके, और किसानों तथा क्रियाशील बुद्धिजीवी वर्गसे भी, जो समाजवादके संघर्षमें विभिन्न मोर्चोंपर जाँचे-परखे जा चुके हैं।"

पार्टीमें नये मेम्बरोंकी भर्ती शुरू करनेके साथ केन्द्रीय समितिने पार्टी-संगठनोंको यह स्मरण रखनेका निर्देश किया कि विरोधी लोग पार्टीकी पाँतिमें घुस आनेकी बराबर चेष्टा करेंगे। इसलिये,—

> "हर पार्टी संगठनका कर्तव्य है कि वह भरसक अपनी बोल्शेविक सतर्कताको बढ़ाये, लेनिनवादी पार्टीके झंडेको ऊँचा रखे और बाहरी, ग़ैर और विरोधी लोगोंसे पार्टी-पाँतिकी रक्षा करे।" **(सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टीकी केन्द्रीय समितिका प्रस्ताव—२९ सितम्बर, १९३६; प्रावदाकी संख्या २७०, १९३६ में प्रकाशित)**

अपनी पाँतिको शुद्ध और दृढ़ करते हुए, पार्टी शत्रुओंका नाश करते हुए और पार्टी नीतिके तोड़ने-मरोड़नेका निर्ममतासे विरोध करते हुए बोल्शेविक पार्टी अपनी केन्द्रीय समितिके पहलेसे और भी निकट खिंच आयी, जिसके नेतृत्वमें पार्टी और सोवियत भूमिने एक नयी अवस्थामें एक वर्गहीन सोशलिस्ट समाजके निर्माणकी पूर्तिकी अवस्थामें पदार्पण किया था।

सारांश

शासन सूत्र हाथमें आनेके बाद १९३०–३४ की अवधिमें बोल्शेविक पार्टीने सर्वहारा क्रान्तिकी इस सबसे कठिन राजनीतिक समस्याको सुलझाया कि लाखों छोटे किसानोंको पंचायती खेतीके मार्गपर, समाजवादके मार्गपर कैसे लाया जाय।

शोषक वर्गोंमें सबसे बहुसंख्यक कुलकोंके निर्मूल होनेसे और किसानोंके बहुभाग द्वारा पंचायती खेतीके अपनाये जानेसे देशमें पूंजीवादकी आखिरी जड़ें भी कट गयीं, खेतीमें समाजवादकी अंतिम विजय हुई और गाँवोंमें सोवियत शासन पूर्ण रूपसे दृढ़ हुआ।

संगठनसम्बन्धी अनेक कठिनाइयाँ दूर करके पंचायती खेतोंकी जड़ मजबूत हुई और वे समृद्धिके पथपर अग्रसर हुए।

प्रथम पंचवर्षीय योजनाका यह परिणाम निकला कि गाँवोंमें समाजवादी आर्थिक व्यवस्थाकी अडिग नींव पड़ गयी। यह नींव उच्च कोटिके समाजवादी बड़े उद्योग-धन्धों और पंचायती यंत्रसज्जित कृषिके रूपमें पड़ी। बेकारीका अंत हुआ, मनुष्य द्वारा मनुष्यके उत्पीड़नका अंत हुआ, और श्रमिक जनताके भौतिक और सांस्कृतिक जीवन-स्तरकी निरंतर उन्नतिके लिये परिस्थिति उत्पन्न हुई।

पार्टी और सरकारकी साहसी, क्रान्तिकारी और बुद्धिमानीकी नीतिसे मजदूर-वर्ग, पंचायती खेतिहरों और देशके श्रमिक जन-साधारणको ये महान् सफलताएँ प्राप्त हुईं।

चारों ओरका पूँजीवादी संसार जो सोवियत संघकी शक्तिको छिन्न-भिन्न करना चाहता था, देशके भीतर हत्यारों, तोड़-फोड़ करने वालों और जासूसोंके दलको और भी प्राणपनसे संगठित करने लगा। जर्मनी और जापानमें फासिज्मके अभ्युदयसे पूँजीवादी घेरेकी यह विरोधी कार्यवाही और भी स्पष्ट हो गयी। त्रात्स्कीपंथियों और जिनोवियेफ़-वादियोंमें फासिज्मको सच्चे सेवक मिल गये जो भेद लेने, तोड़-फोड़ करने, आतंकवाद और विध्वंसके कार्य करनेके लिये तथा पूँजीवादको पुनः प्रतिष्ठित करनेको, सोवियत संघकी पराजयके लिये काम करनेको तैयार थे।

जनताके शत्रुओं और देशके प्रति विश्वासघात करने वालोंसे निर्ममताका व्यवहार करके सोवियत सरकारने इन पतित लोगोंको कठोरतासे दंड दिया।

बारहवाँ अध्याय

सोशलिस्ट समाजके निर्माणकी पूर्तिके लिये बोल्शेविक पार्टीका संघर्ष—नया विधान।

(१९३५-१९३७)

१. १९३५-३७ में अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति—आर्थिक संकटका अस्थायी शमन—नये आर्थिक संकटका आरम्भ—इटली द्वारा अबीसीनियाका अपहरण—स्पेनमें जर्मनी और इटलीका हस्तक्षेप—मध्य चीनपर जापानी आक्रमण—दूसरे साम्राज्यवादी युद्धका आरम्भ।

१९२९ के उत्तरार्द्धमें पूँजीवादी देशोंपर जो आर्थिक संकट छा गया था वह १९३३ के अंत तक बना रहा। उसके बाद उद्योग-धंधोंका पतन होना बंद हुआ ; संकटके बाद गतिरोधका समय आया। फिर जागरणके चिन्ह दिखायी दिये और विकासमें गति आयी। लेकिन यह गति ऐसी नहीं थी जैसी कि एक नये और ऊँचे स्तरपर होनेवाले औद्योगिक विस्तारके आरम्भमें दिखाई देती है। संसारके पूंजीवादी उद्योग-धंधे १९२९ की सतह तक भी न पहुँच सके। १९३७ के मध्यमें उस सतहके ९५-९६ प्रतिशत भाग तक ही उनकी पहुँच हुई थी। १९३७ के उत्तरार्द्ध में एक नये आर्थिक संकटका पुनः आरम्भ होगया जिसकी छाया सबसे पहले संयुक्त राष्ट्र अमरीका पर पड़ी। १९३७ के अंतमें वहाँपर बेकारोंकी संख्या फिर एक करोड़ तक पहुँच गयी थी। ग्रेट ब्रिटेन में भी बेकारी तेजीसे बढ़ रही थी।

इस प्रकार अभी पुराने संकटसे उद्धार भी न हुआ था कि पूँजीवादी देशोंने अपने सामने एक नये आर्थिक संकटको मुँह बाये हुए देखा।

इसका परिणाम यह हुआ कि पूँजीवादी देशोंकी असंगतियाँ, और वैसे ही पूँजीवादी और सर्वहारा वर्गोंकी असंगतियाँ, और भी तीव्र हो उठीं। फलतः आक्रमणकारी राष्ट्र इस बातके लिये फिर जी-तोड़ कोशिश करने लगे कि आर्थिक संकटसे देशको जो क्षति हुई है, उसकी पूर्ति विदेशके अरक्षित राष्ट्रोंसे की जाय। जर्मनी और जापान—इन दुष्ट आक्रमणकारी राष्ट्रोंके साथ इटली भी मिल गया।

१९३५ में फासिस्ट इटलीने अबीसीनियापर आक्रमण किया और उसे अपने आधीन कर लिया। "अन्तरराष्ट्रीय विधान" के अनुसार इटलीके पास ऐसा करनेके

लिये कोई तर्क या कारण नहीं था। बिना लड़ाईका ऐलान किये उसने डाकूकी तरह हमला कर दिया जैसी कि अब फ़ासिस्टोंकी रीति हो गयी है। यह आघात अबीसीनिया पर ही नहीं था वरन् ग्रेट ब्रिटेनपर भी था। इसका प्रभाव योरपसे भारतवर्ष और साधारणतया एशियाकी ओर आनेवाले जल–मार्गोंपर पड़ता था। ग्रेट ब्रिटेनने इटलीको अबीसीनियामें जमनेसे रोकनेके विफल प्रयत्न किये। आगे चलकर इटली 'लीग आफ नेशन्स' (राष्ट्र संघ) से अलग हो गया जिससे कि उसके ऊपर कोई प्रतिबन्ध न रहे। अब वह एक बड़े पैमानेपर लड़ाईकी तैयारी करने लगा।

इस प्रकार योरप और एशियाके बीचके सबसे छोटे जल–मार्गों पर लड़ाईकी एक नयी गिरह पड़ गयी थी।

फासिस्ट जर्मनीने स्वेच्छासे वार्साईके सन्धि-पत्रको रद्द कर दिया और योरपके मानचित्रमें **बलपूर्वक** परिवर्तन करनेके लिये उसने एक योजनाको स्वीकार किया। जर्मन फासिस्ट इस बातको छिपाते न थे कि वे पड़ोसी राष्ट्रोंको हड़प लेना चाहते हैं या कमसे कम उनके उन प्रदेशोंको छीन लेना चाहते हैं जहाँ जर्मन रहते थे। तदनुसार उन्होंने पहले आस्ट्रियाको हड़प लेनेका विचार किया, उसके बाद चेकोस्लोवाकियाको, उसके बाद सम्भवत: पोलैण्डको जिसमें जर्मनीकी सीमापर ऐसे प्रदेश हैं जहाँ जर्मन रहते हैं। और इसके बाद...खैर, इसके बाद "देखा जायगा।"

१९३६ की ग्रीष्म ऋतु में जर्मनी और इटलीने स्पेनिश प्रजातंत्रके विरुद्ध सैनिक हस्तक्षेप करना आरम्भ कर दिया। स्पेनके फासिस्टोंकी सहायता करनेके बहाने उन्होंने इसके लिये भी अवसर ढूँढ़ निकाला कि फ्राँसके पीछे, स्पेनिश राज्यमें, गुप्त रूपसे अपनी फ़ौज उतार द। स्पेनके निकटवर्ती समुद्रमें—दक्षिणमें बेलीरिक द्वीप और जिब्राल्टरके आस–पास, पच्छिममें अटलांटिक समुद्रमें और उत्तरमें बिस्केकी खाड़ीमें—अपने जहाज टिका देनेका सुयोग उन्होंने ढूँढ़ निकाला। १९३९ के आरम्भमें जर्मन फासिस्टोंने आस्ट्रियापर अधिकार कर लिया और इस प्रकार वे डैन्यूब नदीके मध्य-भागमें जम गये, और दक्षिणी योरपमें ऐड्रियाटिक समुद्रकी ओर पसरने लगे।

जर्मनी और इटलीके फासिस्ट स्पेनमें हस्तक्षेप कर रहे थे और संसारको विश्वास दिलाते जाते थे कि वे स्पेनिश "कम्युनिस्टोंसे" लड़ रहे हैं; उनका और कोई उद्देश्य नहीं है। यह एक भोंड़ी चाल थी जिससे कि बुद्धू लोग चकमेमें आ जाते। वास्तमें वे ग्रेट ब्रिटेन और फ्राँसपर आघात कर रहे थे क्योंकि अफ्रीका और एशियाके विशाल उपनिवेशों की ओर जानेवाले जलमार्गोंपर ही वे हावी हो रहे थे।

जहाँ तक आस्ट्रियाके अपहरणका संबंध था, उसके लिये यह न कहा जा सकता था कि जर्मनी वार्साई सन्धि–पत्रकी शर्तोंके विरुद्ध लड़ रहा है, और पहले साम्राज्य-वादी युद्धमें उसकी जो भूमि हर ली गयी थी, उसे फिर लेकर वह अपने 'राष्ट्रीय हितों' की रक्षा करनेका प्रयत्न कर रहा है। आस्ट्रिया कभी जर्मनीका अंग न रहा था; न लड़ाईके पहले न बादको। आस्ट्रियाका **बलपूर्वक** अपहरण इस बातका ज्वलंत निदर्शन था

कि साम्राज्यवादी राष्ट्र दूसरोंके राज्यको कैसे जीत लेते हैं। फासिस्ट जर्मनी पश्चिमी योरपमें एक प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त करना चाहता है, इसमें कोई दुविधा न रह गयी थी।

सबसे अधिक यह फ्रांस और ग्रेट ब्रिटेनके हितोंपर आघात था।

इस प्रकार दक्षिणी योरपमें, आस्ट्रिया और ऐड्रियाटिकके समुद्रतट पर, एकदम पश्चिमी योरपमें तथा स्पेन और उसके निकटवर्ती समुद्रपर लड़ाईकी नयी गिरह लगती रही।

१९३७ में जापानके फासिस्ट समरवादियोंने पेकिंगपर अधिकार कर लिया और मध्य चीनपर आक्रमण किया तथा शांघाईपर भी अधिकार कर लिया। कई साल पहले मंचूरियाके आक्रमणकी भाँति मध्य चीनपर भी जापानियोंने डाकुओंकी तरह अपने पुराने ढंगसे आक्रमण किया। उन्हींकी प्रेरणासे जो "स्थानीय घटनाएँ" हुई थीं, उनसे उन्होंने बेजा फायदा उठाया। "अन्तरराष्ट्रीय नियमों," सन्धिपत्रों, समझौतोंकी शर्तों आदिको उन्होंने उठाकर ताक़ पर रख दिया। चीनके कब्ज़ेसे लिनचिन और शांघाईके विशाल बाज़ार जापानके हाथमें आ गये।

जब तक जपानके पास शांघाई और लिनचिन हैं, तब तक वह किसी भी समय ग्रेट ब्रिटेन और संयुक्त राष्ट्र अमरीकाको मध्य चीनसे, जहाँ उनकी भारी पूँजी लगी हुई है, निकाल बाहर कर सकता है।

इसमें संदेह नहीं कि चीनकी जनताने और चीनी सेनाने जापानी आततायियोंके विरुद्ध वीरतापूर्वक जो संग्राम किया है; चीनमें जो विशाल राष्ट्रीय जागरण हुआ है; जनशक्ति और भूमिके उसके पास जो विशाल उपकरण हैं और अन्तमें चीनकी राष्ट्रीय सरकारने जो निश्चय किया है कि चीनकी भूमिसे जब तक आक्रमणकारी पूरी तरह निकाल न दिये जायँगे, तब तक वे अपनी स्वाधीनताकी लड़ाई लड़ते ही रहेंगे,—इस सबसे यह निर्विवाद सिद्ध होता है कि चीनमें जापानी साम्राज्यवादियोंके लिये कोई भविष्य नहीं है, और कभी होगा भी नहीं।

फिर भी यह सच है कि चीनसे व्यापार करनेकी कुंजी अभी जापानके पास है और उसका चीनपर आक्रमण ब्रिटेन और अमरीकाके हितोंपर भी आघात करता है।

इस प्रकार चीनके आसपास प्रशान्त महासागरमें लड़ाईकी एक गिरह और पड़ी।

इन सब बातोंसे सिद्ध होता है कि दूसरी साम्राज्यवादी लड़ाई वास्तवमें आरम्भ हो चुकी है। बिना किसी ऐलानके यह लड़ाई चोरीसे शुरू हुई है। राष्ट्र और जातियाँ प्रायः बिना कुछ समझे-बूझे ही, इस द्वितीय साम्राज्यवादी युद्धके आवर्त्तमें खिंच आयी है। तीन आक्रमणकारी राष्ट्रोंने, जर्मनी, इटली और जापानके फासिस्ट शासकोंने, संसारके विभिन्न प्रदेशोंमें इस लड़ाईको छेड़ दिया है। जिब्राल्टरसे लेकर शांघाई तक विशाल भूखंडपर यह युद्ध रचा जा रहा है। इसके व्यूहमें अभी भी ५० करोड़ जनता आबद्ध हो चुकी है। इसकी छान-बीन करनेपर यही परिणाम निकलता है कि यह युद्ध ब्रिटेन, फ्रांस और अमरीकाके पूँजीवादी हितोंके विरुद्ध हो रहा है क्योंकि इसका उद्देश्य संसारको

और अपने व्यापार-क्षेत्रोंको इस तरह बाँट लेनेका है कि नामचारके जनवादी राष्ट्रोंके हितोंकी वलि देकर आक्रमणकारी देशोंका भला किया जाय।

इस दूसरे साम्राज्यवादी युद्धकी एक विशेषता यह है कि अभी तक इसका संचालन आक्रमणकारी देश कर रहे हैं और दूसरे देश, अर्थात "जनवादी" राष्ट्र जिनके विरुद्ध वास्तवमें यह लड़ाई हो रही है, बन रहे हैं कि लड़ाईका उनसे कोई संबंध नहीं है। वे उसे दूरसे नमस्कार करते हैं, पीछे हट जाते हैं, अपनी शान्तिप्रियताके गीत गाते हैं, फासिस्ट आक्रमणकारियोंको खरी-खोटी सुनाते हैं और...तिल-तिल करके अपनी ज़मीन उनके हवाले करते जाते हैं; साथ ही यह भी कहते जाते हैं, कि हम लड़ाईकी तैयारी कर रहे हैं।

यह स्पष्ट है कि यह लड़ाई कुछ अजीव-सी और एकतरफा है। लेकिन इससे उसकी बर्बरतामें कमी नहीं होती। अवीसीनिया, स्पेन और चीनकी अरक्षित जनताकी वलि देकर महान् विजय-लिप्साके इस संग्रामका संचालन हो रहा है।

लड़ाई एकतरफा इसलिये नहीं है कि "जनवादी" राष्ट्र सैनिक या आर्थिक दृष्टिसे निर्बल हैं। ऐसा समझना भूल होगी। अवश्य ही "जनवादी" राष्ट्र आक्रमणकारी देशोंसे वलवान हैं। यह बढ़ती हुई संसार-व्यापी लड़ाई एकतरफा इसलिये है कि फ़ासिस्ट देशोंके विरुद्ध "जनवादी" राष्ट्रोंका कोई संयुक्त मोर्चा नहीं है। निस्सन्देह "जनवादी" राष्ट्रोंको फासिस्ट देशोंकी "ज्यादतियाँ" पसन्द नहीं हैं; उनकी शक्ति बढ़नेसे वे शंकित होते हैं। लेकिन योरपके श्रमिक-आंदोलन और एशियाके राष्ट्रीय स्वाधीनताके आंदोलनसे वे और भी शंकित होते हैं; उनकी समझमें इन "खतरनाक" आंदोलनोंके लिये फासिज़्म एक "उत्तम रामवाण" है। इस कारणसे "जनवादी" राष्ट्रोंके शासक, विशेषकर ब्रिटेनके कंज़रवेटिव शासक केवल वाद-विवादकी नीतिका पालन करते हैं। मगरूर फासिस्ट शासकोंसे "ज्यादती न करने की" प्रार्थना भर करते हैं; साथ ही उन्हें यह भी वता देते हैं कि श्रमिक-आंदोलन और राष्ट्रीय स्वाधीनताके आंदोलनपर पहरेदारी करनेकी जिस प्रतिक्रियावादी नीतिका वे पालन कर रहे हैं, उसे ये लोग "अच्छी तरह समझते हैं," और कुल मिलाकर उन्हें इस नीतिसे सहानुभूति भी है। इस दिशा में ब्रिटेनके शासक मोटे तौरसे उसी नीतिका पालन कर रहे हैं जिसका ज़ारशाहीमें रूसके उदारमतवाले सम्राटवादी पूंजीपतियोंने पालन किया था। ज़ारकी नीतिकी "ज्यादतियों" से उन्हें भी डर था लेकिन जनतासे वे और भी डरते थे। इसलिये उन्होंने ऐसी नीतिका पालन किया कि वे ज़ारसे तो प्रार्थना करते रहे और फलतः जनताके विरुद्ध ज़ारके साथ **षड्यन्त्र रचते रहे**। जैसा कि विदित है, इस दुरंगी नीतिके लिये रूसके उदारमतवाले सम्राटवादी पूँजीपतियोंको भारी मूल्य चुकाना पड़ा। यह सहज ही अनुमान किया जा सकता है कि इतिहास ब्रिटेनके शासकों और अमरीकामें उनके मित्रोंको इस नीतिका फल भोगनेके लिये वाध्य करेगा।

यह स्पष्ट है कि अंतरराष्ट्रीय परिस्थितिमें इस महान परिवर्तनकी ओर सोवियत संघ आँखे बंद करके न बैठ सकता था; न वह इन अशुभ घटनाओंकी ओरसे जनताका

भाव बनाये रख सकता था। आक्रमणकारी देश कोई भी युद्ध आरम्भ करते हैं, तो वह छोटेसे छोटा युद्ध हो, तो भी, शान्तिप्रिय देशोंके लिये संकट उत्पन्न हो जाता है। यह द्वितीय साम्राज्यवादी युद्ध जो "बिना जाने ही" जातियोंपर छा गया है और जिसमें ५० करोड़ जनता फँस चुकी है, सभी जातियोंके लिये एक महान संकट है और सबसे पहले यह संकट सोवियत संघके लिये है। इसका ज्वलंत प्रमाण यह है कि जर्मनी, इटली और जापानने "कम्युनिस्ट-विरोधी गुट" बना लिया है। इसलिये हमारे देशने अपनी शान्तिपूर्ण नीतिका पालन करते हुए अपने सीमान्तके मोर्चोंको दृढ़तर करनेका और लाल फ़ौज तथा लाल जल-सेनाके युद्ध कौशलको बढ़ानेका प्रयत्न किया। १९३४ के अंतकी ओर सोवियत संघ "लीग आफ नेशन्स" में सम्मलित हो गया। उसने ऐसा यह जानकर किया कि कमजोरियाँ होते हुए भी लीग आक्रमणकारियोंका पर्दाफ़ाश कर सकेगी। वह युद्धको रोकनेके लिये शान्तिका अस्त्र बन सकती है, वह अस्त्र कितना ही निर्बल क्यों न हो। सोवियत संघका विचार था कि ऐसे दिनोंमें "लीग आफ नेशन्स" जैसी निर्बल अन्तरराष्ट्रीय संस्थाको भी न भुलाना चाहिये। मई १९३५ में आक्रमणकारियों द्वारा भविष्यमें आक्रमणकी संभावनाके विरुद्ध फ्रांस और सोवियत संघमें परस्पर सहायताकी संधि हुई। ऐसी ही संधि इसी समय सोवियत संघ और चेकोस्लोवाकियामें हुई। मार्च १९३६ में सोवियत संघने मंगोलियन जनतन्त्रसे परस्पर सहायताकी संधि की और अगस्त १९३७ में चीनके प्रजातन्त्रसे एक दूसरेपर हमला न करनेकी संधि की।

२. सोवियत संघमें कृषि और उद्योग-धन्धोंमें प्रगति—द्वितीय पंच-वर्षीय योजनाकी अवधिके पहले ही पूर्ति—कृषिका पुनर्निर्माण और सामूहिक खेतीकी व्यवस्थाका सम्पन्न होना—कार्यकर्त्ताओंका महत्व—स्ताखानौफ़ आन्दोलन—सार्वजनिक समद्धिमें विकास—सांस्कृतिक विकास—सोवियत क्रान्तिकी शक्ति।

१९३०–३३ के आर्थिक संकटके तीन बरस बाद ही पूँजीवादी देशोंमें नवीन आर्थिक संकटका आरम्भ होगया था लेकिन **इस समूचे युगमें** सोवियत संघके उद्योग-धंधोंमें सतत विकास होता रहा। १९३७ के मध्यमें संसारके पूँजीवादी उद्योग-धंधोंने १९२९ के उत्पादन-स्तरको देखते हुए कुल मिलाकर कठिनतासे ९५–९९% ही उन्नति की थी। १९३७ के उत्तरार्द्धमें ये उद्योग-धंधे एक नये संकटमें फँस गये थे, लेकिन

१९३७ के अंत तक सोवियत संघके उद्योग-धंधोंने अपनी सतत प्रगतिके कारण १९२९ के उत्पादन-स्तरको देखते हुए ४२८ प्रतिशत उत्पादन बढ़ा लिया था, अर्थात् युद्ध-पूर्वके उत्पादनसे अबका उत्पादन ७०० प्रतिशत बढ़ा हुआ था।

पार्टी और सरकारने निर्माणकी जिस नीतिका डटकर पालन किया था, उसीके परिणामस्वरूप यह सफलताएँ मिलीं थीं।

इन सफलताओंका परिणाम यह हुआ कि उद्योग-धंधोंकी दूसरी पंच-वर्षीय योजना समयसे पहले ही पूरी हो गयी। १ अप्रैल १९३७ को अर्थात् ४ साल और ३ महीनेमें यह योजना पूरी हो गयी।

समाजवादके लिए यह एक अत्यन्त महत्वकी विजय थी।

कृषिसंबंधी प्रगति भी बहुत-कुछ ऐसी ही थी। युद्धके पहले १९१३ में सभी फसलोंके लिए जितनी भूमि जोती जाती थी, उसका क्षेत्रफल १०,५०,००,००० हेक्टार था; १९३७ में यह भूमि बढ़कर १३,५०,००,००० हो गयी थी। १९१३ में अनाजकी पैदावार ४,८०,००,००,००० पूड थी; १९३७ में यह पैदावार बढ़कर ६,८०,००,००,००० पूड तक पहुँच गयी। कपासकी पैदावार ४,४०,००,००० पूडसे बढ़कर १५,४०,००,००० पूड तक हो गयी। सन की पैदावार १,९०,००,००० पूड थी; अब यह बढ़कर ३,१०,००,००० पूड हो गयी। गन्नेकी पैदावार ६५,४०,००,००० पूड थी; अब यह बढ़कर १,२१,१०,००,००० पूड हो गयी। तिलहनकी पैदावार १२,९०,००,००० पूड थी; अब यह बढ़कर ३०,६०,००,००० पूड हो गयी।

यह कह देना उचित होगा कि १९३७ में अकेले पंचायती खेतोंने (सरकारी खेतोंके अलावा) इतना नाज पैदा किया था कि उसमें १,७०,००,००,००० पूड बिकाऊ नाज बच रहा था। १९१३ में जमींदारों, धनी और गरीब किसानोंने जितना नाज बेचा था, उससे यह राशि ४० करोड़ पूड ज़्यादा थी।

कृषिका एक अंग पशु-पालन युद्ध-पूर्वके स्तरसे अब भी पिछड़ा हुआ था और उसकी प्रगति विलम्बित बनी रही।

कृषिमें जहाँ तक पंचायती व्यवस्थाका संबंध है, उसे हम पूर्ण हुआ समझ सकते हैं। जिन किसान परिवारोंने पंचायती खेतीमें भाग लिया, उनकी १९३७ तक की संख्या १८५,००,००० थी। यह संख्या कुल किसान परिवारोंकी ९३ प्रतिशत थी। पंचायती खेतोंकी भूमि किसानोंकी कुल खेतीकी भूमिका ९९ प्रतिशत थी।

कृषिमें जो पुनर्निर्माण हुआ था और खेतीमें ट्रैक्टरों और मशीनोंका जो बहुत उपयोग किया गया था, उसका परिणाम स्पष्ट था।

उद्योग-धंधों और कृषिके पुनर्निर्माणकी पूर्ति हो जानेसे देशकी आर्थिक व्यवस्थाको उच्च कोटिका कौशल सुलभ हो गया। उद्योग-धंधों, कृषि, यातायात व्यवस्था और सेनाको आधुनिक कौशलकी विशाल सामग्री मिलने लगी अर्थात मशीनों और मशीनोंके पुर्जे, ट्रैक्टर और खेतीकी मशीनें, मोटर और जहाज, तोपें और टैंक, वायुयान और युद्ध-पोत

पुनः सुलभ हो सके। ऐसे लाखों-करोड़ों लोगोंकी ज़रूरत पड़ी जो इस कौशलका उपयोग कर सकें और उससे अधिकसे अधिक लाभ उठा सकें। इसके बिना अर्थात् कौशलमें योग्यता प्राप्त करनेवाले यथेष्ट लोगोंके बिना, यह भय था कि कौशल बेकार हो जायगा और उसका वही मूल्य होगा जो काममें न लाये हुए लोहेके भारी ढेरका हो सकता है। यह एक बहुत बड़ा ख़तरा था जिसका कारण यह था कि कौशलका उपयोग करनेवाले शिक्षित कर्मचारियोंकी संख्या कौशलके विस्तारका **साथ न दे रही थी** वरन् उससे **बहुत पिछड़ भी रही थी।** यह समस्या इस कारणसे भी विकट हो गयी कि उद्योग-धंन्धोंके काफ़ी कार्यकर्त्ताओंने इस खतरेको समझा नहीं। उन्हें यही विश्वास बना रहा कि कौशलसे **काम अपने आप बन जायगा।** पहले तो उन्होंने कौशलके महत्वको न समझा था और उसके प्रति घृणाका व्यवहार किया था; अब वे उसे बहुत बढ़ा-चढ़ाकर बताने लगे और उसे देवी-देवताकी तरह पूजने लगे। उन्होंने यह नहीं समझा कि कौशल में योग्यता प्राप्त करनेवाले लोगोंके बिना कौशल एक बेजान चीज़ होगी। उन्होंने यह न समझा कि कौशलसे उत्पादन बढ़ानेके लिये ऐसे लोगोंकी ज़रूरत है जिन्होंने कौशलमें योग्यता प्राप्त की हो। इसलिये कौशलमें योग्यता प्राप्त करनेवाले कर्मचारियोंकी समस्या प्रधान हो गयी। उद्योग-धंधोंके जिन कार्यकर्त्ताओंने कौशलके लिये बड़ा उत्साह दिखाकर शिक्षित कर्मचारियोंके महत्वको भुला दिया था, उन्हें कौशलके अध्ययन और उसमें योग्यता प्राप्त करनेकी समस्याकी ओर ध्यान देना पड़ा। उन्हें यह समझना पड़ा कि कौशलका उपयोग करनेके लिये और उससे अधिकसे अधिक लाभ उठानेके लिये हज़ारों कर्मचारियोंको शिक्षित करनेकी आवश्यकता है।

पुनर्निर्माणके युगके आरम्भमें जब देशमें कौशलका अभाव था तब पार्टीने यह नारा लगाया था कि "पुनर्निर्माणके युगमें कौशलही सब कुछ है"। अब कौशलका आधिक्य था, पुनर्निर्माणका कार्य मुख्यतः समाप्त हो गया था और देशमें कार्यकर्ताओंका विकट अभाव था; इसलिये पार्टीके लिये एक नया नारा लगाना आवश्यक हो गया जो लोगोंका ध्यान इतना कौशलकी ओर नहीं जितना उन कर्मचारियोंकी ओर खींचे जो पूर्ण रूपसे इस कौशलका उपयोग कर सकें।

इस संबंधमें कामरेड स्तालिनका वह भाषण अत्यन्त महत्वपूर्ण था जो उन्होंने लाल फ़ौजके विद्यालयोंके छात्रोंके आगे मई १९३५ में दिया था।

कामरेड स्तालिनने कहा था,—

"पहले हम कहा करते थे कि 'कौशल ही सब कुछ है।' इस नोरसे हम कौशलके अभावको दूर करनेमें समर्थ हुए हैं और प्रत्येक कार्यक्षेत्रमें हमने लोगोंके लिये एक ऐसा विस्तृत आधार बना दिया है जहाँ वे उच्च कोटिके कौशलका उपयोग कर सकते हैं। यह बहुत अच्छा है, लेकिन काफ़ी नहीं है। इससे काम नहीं चल सकता। कौशलको चालू करनेके लिये और उससे पूरा लाभ उठानेके लिये हमें ऐसे लोग चाहिये जिन्होंने कौशलमें योग्यता प्राप्त की हो; हमें ऐसे

कार्यकर्ताओंकी आवश्यकता है जो सभी क़ायदा-क़ानून जानकर इस कौशलमें योग्यता प्राप्त कर सकें और उसका उपयोग कर सकें। ऐसे लोगोंके विना जिन्होंने कौशलमें योग्यता प्राप्त की हो, कौशल बेकार है। जिन लोगोंने योग्यता प्राप्त की है उनके हाथमें कौशल चमत्कार उत्पन्न कर सकता है और उसे ऐसा करना चाहिये। यदि हमारी अव्वल दर्जेकी मिलों और कारख़ानोंमें, सरकारी और पंचायती खेतोंमें और हमारी लाल फ़ौजमें ऐसे कर्मचारियोंकी यथेष्ट संख्या हो जो इस कौशलका उपयोग कर सकें, तो हमारे देशको आजकी अपेक्षा तिगुनी-चौगुनी सफलता मिल सकती है। इसी कारण हमें कर्मचारियोंपर,—कौशलमें योग्यता प्राप्त करनेवाले लोगोंपर—जोर देना चाहिये। 'कौशल ही सब कुछ है' एक बीते हुए युगका प्रतिविम्ब है जब कि हमारे यहाँ कौशलका अभाव था। उसकी जगह हमें नया नारा लगाना चाहिये 'कार्यकर्ता ही सब कुछ हैं'। आजकी यही मूल समस्या है......

"यह समझनेका समय आ गया है कि दुनियाके पास जो मूल्यवान पूँजी है, उसमें सबसे मूल्यवान जनता है, कार्यकर्ता हैं, जिनका कार्य फ़ैसला करनेवाला होता है। हमें इस बातका अनुभव करना चाहिये कि आजकी परिस्थितिमें **निपटारेकी ताक़त कार्यकर्ताओंके हाथमें है**। अगर कृषि, उद्योग-धन्धों, याता-यात-व्यवस्था और सेनामें हमारे पास अच्छे और बहुतसे कार्यकर्ता हों, तो हमारा देश अजेय हो जायगा। ऐसे कार्यकर्ताओंके विना हम दो टाँगें होते हुए भी लंगड़े बने रहेंगे।"

इस प्रकार हमारा प्रमुख कार्य यह था कि कुशल कर्मचारियोंकी शिक्षाके कार्यको हम तेज़ीसे आगे बढ़ायें जिससे कि नये कौशलमें योग्यता प्राप्त करनेके बाद श्रमिक उत्पादनमें लगातार उन्नति होती रहे।

ऐसे कार्यकर्ताओंकी वृद्धि, नये कौशलमें योग्यता प्राप्त करनेवालों तथा श्रमिक उत्पादनमें लगातार उन्नतिका सबसे पुष्ट प्रमाण स्ताखानोफ़ आन्दोलन था। इसका जन्म दोन्येत्स प्रदेशमें कोयलेके उद्योग-धन्धोंमें हुआ; वहीं से विकसित होकर यह उद्योग-धन्धोंकी दूसरी शाखाओंमें, पहले रेलवेमें फिर कृषिमें फैल गया। इसके जन्मदाताका नाम अलेक्सी स्ताखानोफ़ था जो दोन्येत्स प्रदेशकी सेन्ट्रल इरमीनो कोलियरीमें कोयला ढोनेका काम करता था। उसीके नामसे यह आंदोलन स्ताखानोफ़ आंदोलन कहलाया। स्ताखानोफ़के पहले निकिता इजोतोफ़ने कोयला निकालनेसे पहले सभी रेकार्ड तोड़ दिये थे। ३१ अगस्त १९३५ को स्ताखानोफ़ने एक पालीमें १०२ टन कोयला खोदा और इस प्रकार बँधी खुदाईसे चौदह गुना ज्यादा काम किया। इससे मजदूरों और पंचायती किसानोंमें पैदावार बढ़ानेके लिये एक सामूहिक आंदोलन शुरू हुआ। इसका उद्देश्य था कि श्रमिक उत्पादनमें नयी प्रगति हो सके, मोटरके उद्योग-धन्धोंमें बुसीगिन, चमड़ेके काममें स्मेतानिन, रेलवेमें क्रोवोनोस, लकड़ीके काममें मुसेन्स्की,

सूतके काममें एव्दोकिया विनोग्रादोवा और मारिया विनोग्रादोवा तथा खेतीके काममें मारिया देम्चेन्को, मारिया शतेन्को, पा. आंजलीना, पोलागुतिन, कोलेसौफ, वोर्लिन और कोवारदिक,—स्ताखानौफ़ आंदोलनके ये अग्रदूत थे।

इनके पीछे दूसरे कार्यकर्ता आये। कार्यकर्ताओंके बड़े-बड़े जत्थे आये जिन्होंने पहलेके पथदर्शकोंकी अपेक्षा श्रमिक-उत्पादनको बहुत आगे बढ़ा दिया।

नवम्बर १९६५ में क्रेमलिनमें अखिल सोवियत संघके स्ताखानौफ़वादियोंकी जो पहली कान्फ्रेन्स हुई और उसमें कामरेड स्तालिनका भाषण हुआ। उससे स्ताखानौफ़ आंदोलनको भारी प्रेरणा मिली।

इस भाषणमें कामरेड स्तालिनने कहा था,—

"स्ताखानौफ़ आंदोलन समाजवादी प्रतियोगिताकी एक नयी लहरका द्योतक है, वह समाजवादी प्रतियोगिताके एक उच्चतर और नवीन धरातलका द्योतक है।......इससे पहले तीन वर्ष पूर्व समाजवादी प्रतियोगिताकी पहली मंजिलके समय अपना संबंध अनिवार्य रूपसे आधुनिक कौशलसे न जोड़ा गया था। उस समय वास्तवमें हमारे पास आधुनिक कौशल बहुत कम था। समाजवादी प्रतियोगिताकी इस मंजिलमें स्ताखानौफ़ आंदोलन आधुनिक कौशलसे जुड़ा है। एक नवीन और उच्चतर कौशलके बिना इस आंदोलनकी कल्पना भी असम्भव होगी। हमारे सामने कामरेड स्ताखानौफ़, बुसीगिन, स्मेतामिन, क्रीवोविनौस, विनोग्रादोवा बहनें और दूसरे बहुतसे लोग हैं जो एक नयी तरहके हैं। वे ऐसे मजदूर हैं जिन्होंने अपने-अपने कार्यके कौशलमें दक्षता प्राप्त कर ली है। उसका उपयोग करते हुए वे आगे बढ़ चले हैं। तीन साल पहले हमारे पास ऐसे लोग बिल्कुल नहीं थे या नहींके बराबर थे।......स्ताखानौफ़ आंदोलनका महत्व इस बातमें है कि वह कौशलके पुराने मानदंडोंको तोड़ रहा है क्योंकि वे ओछे पड़ गये हैं। कई जगह सबसे बढ़े हुए पूँजीवादी देशोंके श्रमिक-उत्पादनसे भी वह बाज़ी मार रहा है। इस प्रकार अपने देशमें समाजवादको, और भी पुष्ट करनेके लिये और सब देशोंमें अपने देशको समृद्ध बनानेके लिये, वह एक प्रत्यक्ष संभावना उत्पन्न कर रहा है।"

स्ताखानौफ़वादियोंकी कार्यप्रणाली और देशके भविष्यके लिये इस आंदोलनके गुरुतर महत्वका वर्णन करते हुए कामरेड स्तालिनने कहा था,—

"अपने साथी स्ताखानौफ़वादियोंको थोड़ा और नजदीकसे देखो। ये किस तरहके लोग हैं। अधिकतर ये लोग जवान या अधेड़ मज़दूर हैं जिनके पास संस्कृति और कौशल-ज्ञान है, जिन्होंने अचूक और नपा-तुला काम करनेका नमूना पेश किया है, जो अपने काममें समयका महत्व समझते हैं और जिन्होंने मिनटोंकी ही नहीं सेकिंडोंकी भी गिनती करना सीखा है। उनमेंसे अधिकांशने कौशल की अल्पतम शिक्षा प्राप्त की है और आगे शिक्षा पाते जा रहे हैं। उनके अंदर

इंजीनियरों, कौशल-वेत्ताओं और व्यापार-विशारदोंकी जड़ता और अंध परम्पराका अभाव है। वे साहसपूर्वक आगे बढ़ रहे हैं और कौशलके जीर्ण-शीर्ण मानदंडोंको तोड़ते हुए वे नवीन और उच्चतर मानदंड बना रहे हैं। हमारे उद्योग-धंधोंके नेताओं-ने जो आर्थिक योजनाएँ बनायी हैं और श्रमिक-योग्यताकी जो सीमाएँ निश्चित की हैं, उनमें वे संशोधन कर रहे हैं। इंजीनियरों और कौशल-वेत्ताओंकी बातोंमें वे बहुधा संशोधन करते हैं और उन्हें पूर्ण बनाते हैं। वे बहुधा उन्हें नयी बातें सिखाते हैं और आगे बढ़ाते हैं क्योंकि उन्होंने अपने कामके कौशलको अच्छी तरह समझ लिया है और उससे जितना लाभ हो सकता है, उतना लाभ उठानेसे वे नहीं चूकते। आज स्ताखानोफ़वादियोंकी संख्या कम है, लेकिन किसे संदेह हो सकता है कि कल यह संख्या बढ़कर दस गुनी हो जायगी? क्या यह स्पष्ट नहीं है कि स्ताखानोफ़वादी हमारे उद्योग-धंधोंके नवीन परिवर्तनकारी हैं, कि स्ताखानोफ़ आंदोलन हमारे उद्योग-धंधोंके भविष्यका निदर्शक है, कि भविष्यमें मजदूर-वर्गके सांस्कृतिक और कौशल-संबंधी विकासके बीज इस आंदोलनमें हैं, कि इससे हमारे सामने वह मार्ग खुल जाता है जिसके द्वारा ही हम श्रमिक उत्पादनके उस उच्च धरातल तक पहुँच सकते है जो सोशलिज्मसे कम्युनिज्म तक पहुँचनेके लिये और मानसिक तथा शारीरिक श्रमका भेद मिटानेके लिये आवश्यक है।"

स्ताखानोफ़ आंदोलनके प्रसारसे और अवधिके पहलेही दूसरी पंचवर्षीय योजना के पूरे हो जानेसे वह परिस्थिति उत्पन्न हो गयी जिससे कि श्रमिक जनताकी समृद्धि और संस्कृतिका धरातल और उन्नत हो सके।

दूसरी पंचवर्षीय योजनाकी अवधिमें मजदूरों और दफ्तरके कर्मचारियोंकी असली तनख्वाहें दुगनीसे ज्यादा हो गयी थीं। १९३३ में कुल मिलाकर उन्हें ३४ अरब रूबल तनख्वाह दी जाती थी; १९३७ में यह तनख्वाह बढ़कर ८१ अरब रूबल हो गयी। इसी अवधिमें सरकारी सामाजिक बीमाका फंड ४ अरब ६० करोड़ रूबलसे बढ़कर ५ अरब ६० करोड़ रूबल हो गया। अकेले १९३७ में मजदूरों और कर्मचारियोंके सरकारी बीमेपर लगभग १० अरब रूबल खर्च किये गये थे। इसीमेंसे रहन-सहनकी परिस्थितिमें सुधार करनेके लिये, सांस्कृतिक आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिये, स्वास्थ्य-गृहों, विश्रामघरों और औषधि-व्यवस्था आदिके लिये भी खर्च किया गया था।

गाँवोंमें पंचायती कृषि-व्यवस्था निश्चित रूपसे दृढ़ हो गयी थी। फ़रवरी १९३५ में पंचायती खेतोंके अग्रसर कर्मचारियोंकी दूसरी कांग्रेसने खेतीकी **सहकारी संस्थाओंके नियम** बनाये और पंचायती खेतोंको वह जमीन **हमेशाके लिये** दे दी जिसे वे जोतते थे। इससे पंचायती कृषि-व्यवस्थाके दृढ़ होनेमें बड़ी सहायता मिली थी। पंचायती कृषि-व्यवस्थाके दृढ़ होनेसे ग्रामीण जनताकी निर्धनता और उनके जीवनकी अस्थिरताका अंत हो गया। इसके पहले तीन वर्ष पूर्व पंचायती किसानोंको

मज़दूरीके हर दिनके लिये एक या दो किलोग्राम अनाज मिलता था ; अब अधिकांश पंचायती किसानोंको कृषि-प्रधान स्थानोंमें ५ से १२ किलोग्राम तक अनाज मिलने लगा और बहुतोंको दूसरी पैदावार और पैसेकी आमदनीके अलावा मज़दूरीके हर दिनके लिये २० किलोग्राम तक अनाज मिलने लगा। कृषि-प्रधान स्थानोंमें अब इस तरहके लाखों पंचायती किसानोंके परिवार थे जिन्हें सालमें ५०० से १५०० पूड तक अनाज मिलता था और उन प्रदेशोंमें जहाँ कपास, गन्ना, सन, पशुपालन, अंगूर, नीबू, फल और तरकारियाँ पैदा होती थीं, उनकी सालाना आमदनी हजारों रूबल तक पहुँच गयी थी। पंचायती खेत समृद्ध हो गये थे। पंचायती किसानोंके परिवारोंकी मूल समस्या यह हो गयी थी कि वे अनाज रखनेके लिये नयी खत्तियाँ और बखारें बनायें क्योंकि पुरानी खत्तियाँ वगैरह सालमें थोड़ा-सा ही नाज रखनेके लिये बनी थीं और उनमें कुटुम्बके लिये आवश्यक नाजका दसवाँ हिस्सा भी न आता था। १९३६ में जनताकी बढ़ती हुई समृद्धिको देखते हुए सरकारने गर्भपातके विरुद्ध क़ानून बना दिया। इसके साथ ही मातृगृह, बालगृह, दूध पीनेके घर और बच्चोंके बाग-बगीचेकी एक विशाल योजना स्वीकार की, १९३६ में इन सब कामोंके लिये २ अरब करोड़ १७ लाख रूबल नियत किये गये जब कि १९३५ में इसके लिये ८७ करोड़ ५० लाख रूबल ही खर्च किये गये थे। बड़े परिवारोंको यथेष्ट आर्थिक सहायता देनेके लिये एक क़ानून बनाया गया। इस क़ानूनके अनुसार १९३७ में कुल मिलाकर १ अरब रूबलसे ऊपर आर्थिक सहायता दी गयी।

सार्वजनिक शिक्षा अनिवार्य कर देनेसे और नये स्कूल बननेसे जनताका सांस्कृतिक विकास तेज़ीसे होने लगा। देशभरमें सैकड़ों स्कूल बनाये गये। प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षाके स्कूलोंमें १९१४ में छात्रोंकी संख्या कुल ८० लाख थी; १९३६–३७ के सालमें इनकी संख्या २ करोड़ ८० लाख थी। इसी अवधिमें विश्वविद्यालयोंके छात्रोंकी संख्या १ लाख १२ हजारसे बढ़कर ६ लाख ४२ हजार हो गयी।

वास्तवमें यह एक सांस्कृतिक क्रान्ति थी।

जनताकी संस्कृति और समृद्धिकी उन्नति हमारी सोवियत क्रान्तिकी अजेयता, शक्ति और उसके बलका परिचय दे रही थी। पूर्वमें क्रान्तियाँ असफल हो गयी थीं, क्योंकि जनताको स्वाधीनता देकर वे जनताकी भौतिक और सांस्कृतिक दशामें विशेष उन्नति न कर पायी थीं। हमारी क्रान्ति पूर्वकी सभी क्रान्तियोंसे इस बातमें भिन्न है कि उसने जनताको ज़ारशाही और पूँजीवादसे मुक्त ही न किया वरन उसकी सांस्कृतिक दशामें और समृद्धिमें भी महान परिवर्तन कर दिया। उसकी अजेयता और शक्ति इसी बातमें है।

स्ताखानोफ़वादियोंकी पहली अखिल सोवियत संघ कान्फ्रेन्समें कामरेड स्तालिनने कहा था,—

"हमारी सर्वहारा-क्रान्ति संसारमें अकेली ऐसी क्रान्ति है जिसे इस बातका अवसर मिला है कि वह जनताको क्रान्तिके राजनीतिक परिणाम ही नहीं वरन्

भौतिक परिणाम भी देखने दे। मजदूरोंकी सभी क्रान्तियोंमें हम केवल एक क्रान्तिको जानते हैं जिसने शासन-सूत्रको अपने हाथमें कर लिया था। यह क्रान्ति पैरिस-कम्यूनकी थी। लेकिन वह अधिक समय तक न टिक सकी। यह सच है कि उसने पूँजीवादकी बेड़ियोंको तोड़नेकी चेष्टा की लेकिन उन्हें तोड़नेका उसे काफ़ी समय न मिला। जनताके हितके लिये क्रांतिका भौतिक परिणाम कैसा हो सकता है यह दिखानेके लिये उसे और भी कम अवसर मिला। हमारी क्रान्ति ही एक ऐसी क्रान्ति है जिसने पूँजीवादकी बेड़ियोंको तोड़कर जनताको स्वाधीनताही नहीं दी। वरन जनताके समृद्ध जीवनके लिये भौतिक परिस्थितियोंका निर्माण करनेमें भी वह सफल हुई है। हमारी क्रान्तिकी अजेयता और शक्ति इसी बातमें है।"

३. सोवियतोंकी आठवीं कांग्रेस—सोवियत संघके नये विधान की स्वीकृति।

फ़रवरी १९३५ में सोवियत सोशलिस्ट प्रजातंत्रोंके संघकी सातवीं सोवियत कांग्रेसने यह निर्णय किया था कि सोवियत संघके १९२४ वाले विधानको बदल दिया जाय। सोवियत संघके जीवनमें १९२४ से, जब कि पहला विधान स्वीकृत हुआ था, अब तक विशाल परिवर्तन हो चुके थे। इसलिये विधानमें भी परिवर्तन होना आवश्यक था। इस अवधिमें देशके भीतर वर्गोंका परस्पर संबंध बदल बिल्कुल चुका था। एक नयी समाजवादी उद्योग-व्यवस्थाका निर्माण हो चुका था। धनी किसानों (कुलकों) का ध्वंस हो चुका था और पंचायती कृषि-व्यवस्थाकी विजय हो चुकी थी। राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्थाके प्रत्येक विभागमें सोवियत समाजके आधार रूपमें उत्पादनके साधनोंपर समाजवादी अधिकार हो चुका था। समाजवादकी विजयसे अब यह संभव हो गया कि निर्वाचन-पद्धतिको अधिक जनवादी बनाया जाय और गुप्त वोट देनेकी प्रथाके साथ सभीको वोट देनेका सीधा और समान अधिकार मिल जाय। सोवियत संघका नया विधान बनानेके लिये कामरेड स्तालिनके सभापतित्वमें एक कमीशन नियुक्त किया गया था। इसने विधानका जो मसौदा बनाया, उसपर विवाद करनेके लिये उसे जनताके सामने रक्खा गया और यह विवाद साढ़े पाँच महीने तक चलता रहा। इसके बाद वह सोवियतोंकी विशेष आठवीं कांग्रेसके सामने पेश किया गया।

सोवियतोंकी यह आठवीं कांग्रेस सोवियत संघके नये विधानके मसौदेको स्वीकृत या अस्वीकृत करनेके लिये बुलायी गयी थी। यह कांग्रेस नवम्बर १९३६ में हुई थी।

नये विधानके मसौदेपर कांग्रेसमें अपनी रिपोर्ट देते हुए कॉ. स्तालिनने उन मुख्य परिवर्तनोंका उल्लेख किया जो १९२४ के विधानकी स्वीकृतिके बादसे सोवियत संघमें हुए थे।

१९२४ का विधान नवीन आर्थिक नीतिके आरम्भ-कालमें बना था। उस समय समाजवादके विकासके साथ सोवियत सरकार पूँजीवादके विकासकी भी अनुमति दे रही थी। सोवियत सरकारने यह योजना बनायी थी कि पूँजीवादी और समाजवादी व्यवस्थाओंकी परस्पर होड़में, आर्थिक क्षेत्रमें भी, पूँजीवादपर समाजवादकी विजय निश्चित रूपसे हो सकेगी और उसकी विजयके लिये यथेष्ट प्रयत्न किया जाय। "जीत किसकी होगी," यह सवाल तब तक हल न हुआ था। उद्योग-धंधोंके पास वही पुराने कल-पुर्जे थे, इसलिये उत्पादन युद्ध-पूर्वके स्तर तक भी न पहुँचा था। खेतीकी दशा और भी गयी-बीती थी। सरकारी और पंचायती खेत किसानोंके निजी खेतोंके अपार सागरमें छोटे-छोटे टापुओं जैसे थे। उस समय प्रश्न यह नहीं था कि कुलक या धनी किसानोंका ध्वंस कर दिया जाय वरन यह था कि उन्हें पैर न फैलाने दिया जाय। सोशलिस्ट पद्धतिके अनुसार देशका व्यापार पचास फीसदी ही होता था।

१९३६ में सोवियत संघकी रूपरेखा इससे बिल्कुल भिन्न थी। इस समय तक देशके आर्थिक जीवनमें पूरा-पूरा परिवर्तन हो चुका था। पूंजीवादी शक्तियोंका पूर्ण रूपसे ह्रास हो चुका था और आर्थिक जीवनके सभी विभागोंमें समाजवादी पद्धतिकी विजय हो चुकी थी। अब समाजवादी उद्योग-व्यवस्थाने युद्ध-पूर्वके उत्पादनकी अपेक्षा अपनी पदावार सतगुनी बढ़ा दी थी और निजी उद्योग-धन्धोंका बिल्कुल ही सफ़ाया कर दिया था। खेतीमें यन्त्र सज्जित समाजवादी कृषि-व्यवस्थाकी विजय हो चुकी थी। संसारमें सबसे बड़े पैमानेपर सरकारी और पंचायती खेतोंमें अप-टू-डेट मशीनोंसे खेती की जाती थी। १९३६ तक वर्ग रूपमें धनी किसानोंका सफ़ाया हो चुका था और निजी खेती करनेवाले किसानोंका देशके आर्थिक जीवनमें कोई खास हाथ न रह गया था। मनुष्य द्वारा मनुष्यके शोषणका सदाके लिये अंत हो चुका था। नयी समाजवादी व्यवस्थाके दृढ़ आधारके रूपमें आर्थिक जीवनके सभी विभागोंमें उत्पादनके साधनोंपर सार्वजनिक समाजवादी अधिकार अडिग रूपसे स्थापित हो चुका था। नये सोशलिस्ट समाजमें अर्थ-संकट, निर्धनता, बेकारी और भुखमरीका सदाके लिये अंत हो गया था। अब ऐसी परिस्थिति बनायी जा चुकी थी कि सोवियत समाजके सभी सदस्योंका जीवन समृद्ध और सांस्कृतिक बन सके।

कामरेड स्तालिनने अपनी रिपोर्टमें कहा था कि सोवियत संघकी जनताका वर्ग-संबंधी अनुपात भी वैसे ही बदल चुका था। गृह-युद्धके समयमें ही जमींदारों और पुराने खुर्राट साम्राज्यवादी पूँजीपतियोंके वर्गका सफ़ाया किया जा चुका था। समाजवादी निर्माणके युगमें शोषण करने वाले सभी लोग—पूँजीपति, सौदागर, कुलक और मुनाफ़ाखोर—खतम कर दिये गये थे। शोषक वर्गोंके नगण्य, अवशिष्ट अंश ही अव-साँसें ले रहे थे और उनका सम्पूर्ण ध्वंस निकट भविष्यमें ही होनेवाला था।

समाजवादी निर्माणके युगमें सोवियत संघकी श्रमिक जनतामें—मज़दूरों, किसानों और बुद्धिजीवियोंमें—व्यापक परिवर्तन हो चुका था।

मज़दूर-वर्ग उत्पादनके साधनोंसे दूर किया हुआ शोषित वर्ग नहीं था जैसा कि वह पूँजीवादी व्यवस्थामें है। उसने पूँजीवादका ध्वंस कर दिया था और उत्पादनके साधनोंको पूँजीपतियोंसे छीनकर उसने उन्हें जन-सम्पत्तिका रूप दे दिया था। यह वर्ग अपने पुराने और सही अर्थमें सर्वहारा वर्ग नहीं रह गया था। सोवियत-संघके सर्वहारा वर्गके पास शासन शक्ति थी; उसका एक नये ही वर्गमें रूपान्तर हो चुका था। शोषणसे मुक्त यह एक ऐसा मजदूर-वर्ग था जिसने पूँजीवादी अर्थ-पद्धतिको निर्मूल कर दिया था और उत्पादनके साधनोंपर समाजवादी अधिकार स्थापित किया था। इसलिये यह एक ऐसा मज़दूर-वर्ग था जैसा कि मनुष्य जातिके इतिहासने पहले कभी देखा-सुना न था।

सोवियत संघके किसानोंमें जो परिवर्तन हुए थे, वे भी कम व्यापक नहीं थे। पुराने ज़मानेमें दो करोड़से ऊपर निम्न और मध्यकोटिके किसान परिवार पुराने हल-माची लिये छोटे-छोटे खेतोंमें खेती करते थे। जमींदार, कुलक, सौदागर, मुनाफ़ाख़ोर, सूदख़ोर आदि आदि सभी जोंककी तरह इनका खून चूसनेमें लगे रहते थे। सोवियत-संघका किसान अब एकदम नये ढंगका था। किसानोंका खून चूसनेके लिये, जमींदार कुलक, सौदागर और सूदख़ोर न रह गये थे। किसान परिवारोंका बहुभाग पंचायती खेतीमें शामिल हो गया था। पंचायती खेतीका आधार निजी सम्पत्ति न होकर उत्पादनके साधनोंपर पंचायती अधिकार था। इस पंचायती अधिकारका जन्म सामूहिक श्रमसे हुआ था। अबका किसान सभी तरहके शोषणसे मुक्त एक नये ढंगका किसान था। वह एक ऐसा किसान था जैसा कि मनुष्य जातिके इतिहासने पहले कभी देखा-सुना न था।

सोवियत-संघके बुद्धिजीवियोंमें भी परिवर्तन हुआ था। अधिकांशतः इनकी रूप-रेखा बदल गयी थी। इस वर्गका बहुभाग किसानों और मज़दूरोंसे निर्मित हुआ था। पुराने बुद्धिजीवियोंकी तरह यह वर्ग पूँजीवादकी सेवा न करता था; वह समाजवादकी सेवा करता था। सोशलिस्ट समाजमें उसका दर्जा बराबरीका था। मज़दूरों और किसानों के साथ वह एक नये सोशलिस्ट समाजका निर्माण कर रहा था। यह एक नये ढंग का बुद्धिजीवी वर्ग था जो शोषणसे मुक्त होकर जनताकी सेवा करता था। यह ऐसा वर्ग था जैसा कि मनुष्य जातिके इतिहासने पहले कभी देखा-सुना न था।

इस प्रकार सोवियत संघकी श्रमिक जनताके बीचमें पहले जो वर्ग-विभाजनकी रेखाएँ बनी थीं, वे मिट रही थीं और वर्गोंका अकेलापन दूर हो रहा था। मज़दूरों, किसानों और बुद्धिजीवियोंके बीचकी आर्थिक और राजनीतिक असंगतियाँ क्रमशः क्षीण होकर नष्ट हो रहीं थीं। समाजकी नैतिक और राजनीतिक एकताका आधार निर्मित हो चुका था।

सोवियत संघके जीवनके ये व्यापक परिवर्तन, सोवियत संघमें समाजवादकी ये निश्चित सफलताएँ, नये विधानमें प्रतिबिम्बित थीं।

नये विधानके अनुसार सोवियत-समाजमें दो मित्र वर्ग हैं—मजदूर और किसान—जिनका वर्ग-भेद अभी बना हुआ है। सोवियत सोशलिस्ट प्रजातंत्रोंका संघ मजदूरों और किसानोंका समाजवादी राज है।

सोवियत संघके राजनीतिक आधारका निर्माण श्रमिक जनताके प्रतिनिधियोंके ही सोवियतोंसे हुआ है। जमींदारों और पूँजीपतियोंकी शक्तिके ध्वंसके फलस्वरूप और सर्वहारा वर्गके एकाधिपत्यकी स्थापनासे इनका विकास और पोषण हुआ।

सोवियत संघमें सभी शक्ति ग्राम और नगरकी श्रमिक जनताके हाथमें उनके प्रतिनिधियोंके सोवियतों द्वारा प्रतिष्ठित है।

सोवियत संघमें राजकीय शक्तिकी उच्चतम संस्था संघका प्रधान सोवियत है।

सोवियत संघके प्रधान सोवियतमें समान अधिकार वाली दो सभाएँ हैं एक तो संघका सोवियत और दूसरा जातियोंका सोवियत। प्रधान सोवियतका चुनाव सोवियत संघके नागरिकों द्वारा चार सालके लिये होता है। गुप्त वोट देनेकी प्रथाके साथ स्वयं वोट देनेका अधिकार समान रूपसे सबके लिये है। श्रमिक जनताके प्रतिनिधियोंके सभी सोवियतोंकी भाँति प्रधान सोवियतके लिये भी निर्वाचनका अधिकार **सार्वजनिक** है। इसका यह अर्थ है कि सोवियत संघके सभी नागरिक जिनकी आयु अठारह वर्षकी हो चुकी है, वे विना किसी जाति, राष्ट्र, धर्म, शिक्षा, निवास, जन्म, सम्पत्ति या पुरानी कार्यवाहीका विचार किये हुए प्रतिनिधियोंके चुनावमें वोट देनेका और स्वयं चुने जानेका अधिकार रखते हैं। अपवाद रूपमें वे व्यक्ति हैं जो पागल हो गये हैं या जिन्हें अदालतसे ऐसा दंड मिला है जिसमें निर्वाचन अधिकारका छीना जाना सम्मिलित है।

प्रतिनिधियोंका चुनाव **समान** रूपसे होता है। इसका यह अर्थ है कि हर नागरिक को एक वोट देनेका अधिकार है और सभी नागरिक चुनावमें एक समान भाग लेते हैं।

प्रतिनिधियोंका निर्वाचन **प्रत्यक्ष** है। इसका यह अर्थ है कि श्रमिक जनताके प्रतिनिधियोंके सभी सोवियत—श्रमिक जनताके प्रतिनिधियोंकी ग्राम और नगर पंचायतोंसे लेकर संघके प्रधान सोवियत तक—सभीके प्रतिनिधियोंका चुनाव नागरिकोंके प्रत्यक्ष या सीधे वोट देनेसे होता है।

सोवियत संघका प्रधान सोवियत दोनों सभाओंके सम्मिलित अधिवेशनमें प्रधान सोवियतके सभापति-मंडल और संघके जन-प्रतिनिधियोंकी समितिका चुनाव करता है।

सोवियत संघका आर्थिक आधार समाजवादी अर्थ-नीति और उत्पादनके साधनोंपर समाजवादी अधिकार है। सोवियत संघमें यह समाजवादी सिद्धांत चरितार्थ हुआ है—"जितना बने उतना करो, जितना करो उतना भरो।"

सोवियत संघके सभी नागरिकोंको काम करनेका और आराम करनेका, छुट्टीका समय वितानेका, शिक्षा पानेका, बुढ़ापेमें या रोग-दोख लगनेपर प्रतिपालित होनेका अधिकार है।

जीवनके सभी क्षेत्रोंमें स्त्रियोंको पुरुषोंके समान अधिकार है। सोवियत संघके नागरिकोंकी समानता विना किसी जाति या राष्ट्र-भेदके एक अटूट विधान है। धार्मिक स्वाधीनताके साथ धर्मविरोधी प्रचार करनेकी स्वाधीनता सभी नागरिकोंके लिये है।

सोशलिस्ट-समाजको दृढ़ बनानेके लिये यह विधान लोगोंको भाषण, प्रकाशन, सभा समिति करने, जन-संस्थाएँ बनानेकी स्वाधीनता देता है और स्वीकार करता है कि किसी व्यक्तिपर शारीरिक आघात नहीं किया जा सकता तथा उसके पत्र-व्यवहार और निवास-स्थानकी गोपनीयतामें हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता

विदेशमें श्रमिक जनताके हितोंकी रक्षा करनेके लिये या अपनी वैज्ञानिक कार्यवाही के लिये या राष्ट्रीय स्वाधीनताके लिये युद्ध करनेके कारण यदि विदेशी नागरिक सताये जानेपर सोवियत संघमें आश्रय खोजें तो उन्हें आश्रय मिलनेका अधिकार है।

नये विधानने सोवियत संघके सभी नागरिकोंके लिये महत्त्वपूर्ण कर्त्तव्य भी निश्चित किये हैं:—उन्हें नियमोंका पालन करना चाहिये, श्रमसंबंधी अनुशासन मानना चाहिये, ईमानदारीसे सार्वजनिक कर्त्तव्योंका पालन करना चाहिये, सोशलिस्ट समाजके नियमोंका आदर करना चाहिये, सार्वजनिक सोशलिस्ट सम्पत्तिकी रक्षा करनी चाहिये और उसे मजबूत बनाना चाहिये तथा अंतमें सोशलिस्ट मातृभूमिकी रक्षा करनी चाहिये।

"मातृभूमिकी रक्षा करना प्रत्येक सोवियत नागरिकका परम कर्त्तव्य है।"

विभिन्न सभा-समितियोंमें नागरिकोंके संगठित होनेके संबंधमें विधानका एक नियम है:—

"...मजदूर वर्ग और श्रमिक जनताके अन्य स्तरोंमें राजनीतिक दृष्टिसे सचेत और सबसे अधिक क्रियाशील व्यक्ति सोवियत संघकी कम्युनिस्ट (बोल्शेविक) पार्टीमें संगठित होते हैं। यह पार्टी सोशलिस्ट समाज व्यवस्थाको विकसित और सुदृढ़ करनेमें श्रमिक जनताका अग्रदल है और श्रमिक जनताके सार्वजनिक और सरकारी, सभी संगठनोंका मेरुदंड है।"

सोवियतोंकी आठवीं कांग्रेसने सोवियत संघके नये विधानके मसौदेका अनुमोदन किया और उसे स्वीकार किया।

इस प्रकार सोवियत देशने एक नया विधान पाया, ऐसा विधान जिसमें समाजवाद तथा मजदूरों और किसानोंके जनवादकी विजय सन्निहित थी।

इस प्रकार इस विधानने इस युग-प्रवर्त्तक तथ्यको वैधानिक रूप दिया कि सोवियत संघ अपने विकासकी एक नयी मंजिल पार कर रहा है। यह मंजिल सोशलिस्ट समाजके निर्माणकी पूर्तिकी मंजिल है। इस युगमें सोशलिस्ट समाज कम्युनिस्ट समाज की ओर संक्रमण कर रहा है जहाँ कि सामाजिक जीवनका निर्देश इस कम्युनिस्ट सिद्धांत द्वारा होगा—"जितना बने उतना करो, जितना चाहिये उतना भरो।"

४. देशके प्रति दगाबाज़ी करनेवाले बुखारिन-त्रात्स्की-गुटके बचे-खुचे जासूसों और तोड़-फोड़ करनेवालोंका सफ़ाया—सोवियत संघकी प्रधान सोवियतके चुनावकी तैयारी—पार्टीके भीतर कार्य-संबंधी व्यापक जनवादी नीति—सोवियत संघकी प्रधान सोवियतका निर्वाचन।

१९३७ में बुखारिन-त्रात्स्की-गुटके राक्षसी कार्योंपर नवीन प्रकाश पड़ा। पियाताकौफ़, रादेक इत्यादिके मुक़दमेसे, तूखाचेव्स्की, याकिर आदिके मुक़दमेसे, और अंतमें बुखारिन, राइकौफ़, केस्तिन्सकी, रोजेन गोल्त्स आदिके मुक़दमेसे साबित हो गया कि बुखारिनवादी और त्रात्स्की-पंथियोंने बहुत पहलेसे जनताके दुश्मनोंका एक सम्मिलित मोर्चा बना लिया था जो "दक्षिणवादियों और त्रात्स्कीपंथियोंके गुट" के नामसे कार्य करता था।

इस मुक़दमेसे साबित हो गया कि मनुष्य जातिके ये कृमि-कीट जनताके शत्रुओं अर्थात त्रात्स्की, जिनोवियेफ़ और कामेनेफ़के साथ अक्तूबरकी सोशलिस्ट क्रान्तिके दिनोंसे लेनिनके विरुद्ध, पार्टीके विरुद्ध और सोवियत सरकारके विरुद्ध षड़यन्त्र रचते रहे थे। २० सालकी अवधिमें इन लोगोंने क्या-क्या नहीं किया। १९१८ के आरम्भमें ब्रेस्त-लितोव्स्ककी संधि न होने देनेके नीच प्रयत्न किये, लेनिनके विरुद्ध षड़यन्त्र किया और "वामपंथी" सामाजिक-क्रान्तिकारियोंके साथ १९१८ की वसन्त ऋतुमें लेनिन, स्तालिन और स्वेर्दलौफ़को पकड़ने और उनकी हत्या करनेकी चेष्टा की; १९१८ की ग्रीष्म ऋतुमें इन्हीं पापियोंकी गोलीसे लेनिन घायल हुए; १९१८ की ग्रीष्म-ऋतुमें "वामपंथी" सामाजिकक्रान्तिकारियोंने विद्रोह किया; १९२१ में पार्टीके मतभेदको जानबूझकर बढ़ाया जिससे कि वे लेनिनके नेतृत्वको भीतर-भीतर खोखला करके ढहा दें; लेनिनकी बीमारीके समय और उनकी मृत्युके बाद पार्टीके नेतृत्वको ध्वस्त करनेकी चेष्टा की; सरकारी गुप्त वार्तोंका भेद प्रगट कर दिया और विदेशी जासूस विभागोंको जासूसी ढंगकी सूचनाएँ दीं; किरौफ़की जघन्य हत्या की; जगह-जगहपर तोड़-फोड़ की, बम फोड़े और काम रोक दिया; मेन्जिन्स्की, क्यूबीशेफ़ और गोर्कीकी नीचतापूर्ण हत्या की,—ये और ऐसे ही नीच कार्य इन्होंने त्रात्स्की, ज़िनोवियेफ़, कामेनेफ़, राइकौफ़ और उनके दूतोंके साथ-साथ या उनके निर्देशसे पूँजीवादी राष्ट्रोंकी जासूसी विभागोंकी आज्ञासे किये। मुकदमेसे इनकी दुष्ट नीतिका पर्दाफ़ाश हो गया।

इन मुक़दमोंसे यह बात साबित हो गयी कि त्रात्स्की, बुख़ारिन गुटके ये राक्षस अपने मालिकों अर्थात विदेशी राष्ट्रोंके जासूसी विभागोंकी इच्छानुसार पार्टी और सोवियत

सरकारका नाश करनेपर तुल गये थे। उनका उद्देश्य था कि आत्मरक्षा करनेकी शक्ति को खोखला कर दिया जाय, विदेशी सैनिक हस्तक्षेपमें सहायता की जाय, लाल फ़ौजकी पराजयकी पहलेसे तैयारी की जाय, सोवियत संघके टुकड़े-टुकड़े कर दिये जायँ, सोवियत संघकी समुद्रके पासकी भूमि जापानियोंको दे दी जाय, सोवियत वायलोरूस पोलोंको और सोवियत युक्राइन जर्मनोंको दे दिया जाय, मज़दूरों और पंचायती किसानोंने जो कुछ बनाया था उसे बिगाड़ डाला जाय, और सोवियत-संघमें पूँजीवादी गुलामीकी जड़ फिर जमा दी जाय।

यह ग़द्दार-बच्चे जिनकी ताक़त मच्छड़-भुनगोंसे ज्यादा न थी, अपनेको देशका मालिक समझ बैठे थे। वे कल्पना करने लगे थे कि युक्राइन, वायलोरूस और समुद्र-वर्ती प्रदेशको दे देना सचमुच उन्हींके हाथमें है।

यह ग़द्दार-बच्चे भूल गये थे कि सोवियत देशके सच्चे मालिक सोवियत नागरिक हैं और ये राइकौफ़, बुखारिन, जिनोवियेफ़ और कामेनेफ़ केवल सरकारके अस्थायी कर्मचारी हैं, जिन्हें सोवियत जनता किसी भी समय उनके पदोंसे कूड़ा-करकटकी तरह निकाल बाहर कर सकती थी।

फ़ासिस्टोंके ये नीच गुलाम यह भूल गये थे कि सोवियत जनताको सिर्फ़ अँगुली उठानेकी देर है कि उनकी धूल भी न मिलेगी।

सोवियत न्यायालयने बुखारिन-त्रात्स्की-गुटके राक्षसोंको प्राण-दंड दिया।

गृह-कार्योंके जन-प्रतिनिधि-मंडलने इस दंडको चरितार्थ किया। बुखारिन-त्रात्स्की-गुटके ध्वंसका सोवियत जनताने अनुमोदन किया और फिर दूसरे काममें लग गयी। और दूसरा काम प्रधान सोवियतके चुनावकी तैयारी करना था और व्यवस्थित रूपमें उसे पूरा करना था।

चुनावकी तैयारीमें पार्टीने अपनी शक्ति लगा दी। उसका कहना था कि सोवियत संघके नये विधानकी कार्यरूपमें परिणति यह प्रकट करती है कि देशके राजनीतिक जीवन में एक परिवर्तन हो गया है। इस परिवर्तनका अर्थ यह था कि निर्वाचन पद्धति अब पूर्ण रूपसे जनवादी ढंगकी हो गयी है, निर्वाचन-अधिकार नियमित न होकर सार्वजनिक हो गया है, निर्वाचनके असमान अधिकारके बदले लोगोंको समान अधिकार मिला है, अप्रत्यक्ष निर्वाचन प्रथाके बदले प्रत्यक्ष निर्वाचनकी प्रथा हो गयी है और खुले वोट देनेके बदले गुप्त रूपसे वोट देनेका अधिकार हो गया है।

नये विधानके लागू होनेके पहले पुरोहितों, पहलेके ग़द्दारों और कुलकों तथा उपयोगी श्रम न करनेवालोंके निर्वाचन अधिकार सीमित थे। नये विधानसे इस तरहके नागरिकोंके लिये भी चुनावके बंधेज उड़ा दिये गये और प्रतिनिधियोंका चुनाव सार्वजनिक हो गया।

इसके पहले प्रतिनिधियोंका निर्वाचन असमान था क्योंकि गांव और शहरकी जनताके निर्वाचनका आधार अलग-अलग था; लेकिन अब निर्वाचनकी समानता पर बंधेज

लगानेकी आवश्यकताएँ दूर हो गयी थीं और सभी नागरिकोंको समान भावसे निर्वाचन में भाग लेनेका अधिकार मिल गया था।

इसके पहले सोवियतोंके लिये प्रतिनिधियोंका चुनाव खुले वोटसे होता था और उम्मीदवारोंकी सूचीके लिये भी वोट दिये जाते थे। लेकिन अब सूचियोंके बदले अलग-अलग निर्वाचन-प्रदेशके उम्मीदवारोंके लिए गुप्त रूपसे वोट दिये जाने लगे।

देशके राजनीतिक जीवनमें यह एक निश्चित परिवर्तन था।

नयी निर्वाचन-व्यवस्थासे जनतामें राजनीतिक कार्यवाही बढ़ गयी। जैसा कि होना ही था सोवियत-शासनकी संस्थाओंपर जनताका अधिक नियन्त्रण हो गया; साथ ही, जनताके प्रति इन संस्थाओंका उत्तरदायित्व भी बढ़ गया।

इस परिवर्तनके लिये अच्छी तरह तैयार होनेके लिये पार्टीको हिरावलका काम करना था। अगले चुनावमें पार्टीकी प्रमुख भूमिकाको सुनिश्चित होना था। लेकिन यह तभी हो सकता था जब कि अपनी दैनिक कार्यवाहीमें पार्टीके संगठन स्वयं ही पूर्ण रूपसे जनवादी बन जायँ; जब कि पार्टीके आंतरिक जीवनमें जनवादी केन्द्रीयताके सिद्धान्तोंका पूर्ण रूपसे पालन हो जैसा कि पार्टीके नियमोंके अनुसार आवश्यक था। यह तभी हो सकता था जब पार्टीकी सभी संस्थाएँ चुनी जायँ और आलोचना और निजी-समालोचना पार्टीमें पूरी तरहसे बढ़े, जब कि पार्टीके सदस्योंके प्रति पार्टीकी संस्थाओंका पूर्ण उत्तरदायित्व हो और जब पार्टीके सदस्य स्वयं ही पूर्ण रूपसे क्रियाशील हों।

फ़रवरी १९३७ के अंतमें केन्द्रीय समितिके अधिवेशनमें कामरेड ज़्दानोफ़ने एक रिपोर्ट दी जिसका विषय संघकी प्रधान सोवियतके चुनावके लिये पार्टी संस्थाओंकी तैयारी थी। उससे यह पता चला कि कई पार्टी संस्थाएँ लगातार पार्टीके नियमोंकी और जनवादी केन्द्रीयताके सिद्धांतोंकी अपने दैनिक कार्योंमें अवहेलना करती जा रही हैं; निर्वाचनके बदले इच्छानुसार किसीको मिला लेनेकी नीतिका पालन किया जाता है; उम्मीदवारोंके लिये अलग वोट न देकर सूचीके लिये वोट दिये जाते हैं इत्यादि, इत्यादि। यह स्पष्ट था कि जहाँ यों कारबार चल रहा था, इस तरहकी संस्थाएँ प्रधान सोवियतके चुनावमें पूरी तरहसे अपने कार्यका पालन न कर सकती थीं। इसलिये सबसे पहले यह आवश्यक था कि पार्टी-संस्थाओंमें इस तरहकी जनवाद-विरोधी कार्यवाहीको बंद किया जाय और एक व्यापक जनवादी नीतिके अनुसार पार्टीके कार्यको पुनः व्यवस्थित किया जाय।

फलतः कामरेड ज़्दानोफ़का विवरण सुननेके बाद केन्द्रीय समितिके अधिवेशनने निर्णय किया कि—

> "(क) पार्टी-नियमोंके अनुसार पार्टीके आंतरिक जनवादके सिद्धांतोंका पूर्ण और निरपवाद रूपसे पालन करते हुए पार्टीके कार्यको पुनः व्यवस्थित किया जाय।

" (ख) पार्टी समितियोंमें इच्छानुसार सदस्योंको मिलानेकी प्रथाका अंत किया जाय और पार्टी नियमोंके अनुसार पार्टी संगठनकी निर्देशक संस्थाओंके आवश्यक निर्वाचन-सिद्धांतको पुनः प्रतिष्ठित किया जाय।

" (ग) पार्टी-संस्थाओंके चुनावमें उम्मीदवारोंकी सूचीके लिये वोट देना बंद किया जाय। निर्वाचन व्यक्तिगत उम्मीदवारोंका होना चाहिये। पार्टीके सभी सदस्योंको इस बातका अनियन्त्रित अधिकार है कि वे उम्मीदवारोंको चुनौती दें और उनकी आलोचना करें।

" (घ) पार्टी संस्थाओंके चुनावमें गुप्त निर्वाचनकी प्रथा लागू हो

" (ङ) पार्टीके सभी संगठनोंमें प्राथमिक पार्टी-संगठनोंकी, पार्टी कमिटियोंसे लेकर मंडल और प्रदेशकी कमिटियों और जातीय कम्युनिस्ट पार्टियोंकी केन्द्रीय समितियों तक सभी पार्टी-संस्थाओंका चुनाव हो और २० मई तक पूरा हो जाय।

" (च) सभी पार्टी-संगठनोंको ताक़ीद कर दी जाय कि वे पार्टी संस्थाओंके पदोंकी अवधिके बारेमें पार्टी-नियमोंका कड़ाईसे पालन करें अर्थात् प्राथमिक पार्टी-संगठनोंमें सालाना चुनाव करें; जिले और शहरके संगठनोंमें सालाना चुनाव करें और मंडल, प्रदेश और प्रजातन्त्रोंके संगठनोंमें डेढ़ सालमें चुनाव करें।

" (छ) इस नियमका कड़ाईसे पालन होना चाहिये कि पार्टी संगठन फैक्टरियोंकी आम सभाओंमें पार्टी कमिटियोंको चुनें और सभाओंका काम डेलीगेट कान्फ्रेन्सोंसे न लें।

" (ज) कुछ प्राथमिक पार्टी संगठनोंमें इस चलनका अंत कर दिया जाय कि आम सभाओंका काम शॉप-मीटिंगों और डेलीगेट-कान्फ्रेन्सोंसे लिया जाय और आम सभाएँ ख़तम कर दी जायँ।"

इस प्रकार पार्टीने अगले चुनावके लिये तैयारी शुरू की।

केन्द्रीय समितिके इस निर्णयका राजनीतिक महत्व बहुत बढ़ा-चढ़ा था। उसका महत्व यही नहीं था कि उससे प्रधान सोवियतके चुनावमें पार्टीके आंदोलनका आरम्भ हुआ वरन् इस बातमें था और पहले था कि उससे पार्टी संगठनोंको अपना कार्य पुनः व्यवस्थित करनेमें, आंतरिक पार्टी-जनवादके सिद्धांतोंको चरितार्थ करनेमें और प्रधान सोवियतके चुनावके लिये पूरी तरहसे तैयार हो जानेमें सहायता मिली।

पार्टीने निर्णय किया कि निर्वाचन-आंदोलनको बढ़ानेके लिये उसकी नीतिका मूल-सूत्र यह होगा कि पार्टीसे बाहरकी जनता और कम्युनिस्टोंका एक निर्वाचित-गुट बनाया जाय। पार्टीने पार्टीके बाहरकी जनतासे सहयोग करके निर्वाचन-गुटमें यह निर्णय करके भाग लिया कि चुनावके हल्कोंमें पार्टीसे बाहरकी जनताके साथ संयुक्त उम्मीदवार खड़े किये जायँ। यह निर्णय अभूतपूर्व था और पूँजीवादी देशोंके चुनावमें एकदम असंम्भव था। लेकिन हमारे देशमें कम्युनिस्टों और पार्टीसे बाहरकी जनताके गुट एक सहज और स्वाभाविक बात थी क्योंकि हमारे यहाँ विरोधी दल नहीं है और जनताके सभी स्तरोंकी नैतिक और राजनीतिक एकता एक अपरिहार्य सत्य है।

७ दिसम्बर १९३७ को पार्टीकी केन्द्रीय समितिने निर्वाचकोंके नाम एक घोषणा-पत्र निकाला जिसमें लिखा था :—

"१२ दिसम्बर १९३७ को हमारे सोशलिस्ट विधानके अनुसार सोवियत संघकी श्रमिक जनता संघकी प्रधान सोवियतके लिये अपने प्रतिनिधियोंको चुनेगी। बोल्शेविक पार्टी पार्टीसे बाहरके मजदूरों, किसानों, दफ़्तरके कर्मचारियों और बुद्धिजीवियोंसे **सहयोग** करके, एक **गुटमें** निर्वाचनमें भाग ले रही है।... ...... बोल्शेविक पार्टी पार्टीसे बाहरकी जनतासे अपनेको दूर नहीं रखती वरन् इसके विपरीत एक गुटमें पार्टीसे बाहरकी जनतासे सहयोग करके, मज़दूरों और दफ़्तरके कर्मचारियोंके संघोंसे गुट बनाकर तथा नौजवान, कम्युनिस्ट लीग और पार्टीसे बाहरकी दूसरी संस्थाओंसे गुट बनाकर निर्वाचनमें भाग ले रही है। फलतः उम्मीदवार कम्युनिस्टोंके और पार्टीसे बाहरकी जनताके उम्मीदवार होगें। पार्टीसे बाहरका हर प्रतिनिधि कम्युनिस्टोंका भी प्रतिनिधि होगा; वैसे ही हर कम्युनिस्ट प्रतिनिधि पार्टीसे बाहरकी जनताका प्रतिनिधि होगा।"

केन्द्रीय समितिका घोषणा-पत्र निर्वाचकोंके प्रति इस प्रार्थनाके साथ समाप्त होता था:—

"सोवियत संघकी कम्युनिस्ट (बोल्शेविक) पार्टी सभी कम्युनिस्टों और हमदर्दोंसे कहती है कि वे पार्टीसे बाहरके उम्मीदवारोंके लिये वैसे ही एकमत होकर वोट दें, जैसे कि वे कम्युनिस्ट उम्मीदवारोंके लिये देंगे।

" सोवियत संघकी कम्युनिस्ट (बोल्शेविक) पार्टीकी केन्द्रीय समिति पार्टी से बाहरके सभी निर्वाचकोंसे कहती है कि वे कम्युनिस्ट उम्मीदवारोंके लिये वैसे ही एकमत होकर वोट दें, जैसे कि वे पार्टीसे बाहरके उम्मीदवारोंके लिये वोट देंगे।

" सोवियत-संघकी कम्युनिस्ट (बोल्शेविक) पार्टीकी केन्द्रीय समिति सभी निर्वाचकोंसे कहती है कि १२ दिसम्बर १९३७ को वे एक साथ वोट देनेकी जगह एकत्र हों जिससे कि वे संघके सोवियत और जातियोंके सोवियतके लिये प्रतिनिधि चुनें।

" ऐसा एक भी निर्वाचक न होना चाहिये जो सोवियत राज्यकी प्रधान संस्थाके लिये प्रतिनिधि चुननेके सम्मानप्रद अधिकारका उपयोग न करे।

" ऐसा एक भी सचेत नागरिक न होना चाहिये जो इसे अपना नागरिक कर्त्तव्य न समझे कि बिना अपवादके सभी निर्वाचक प्रधान सोवियतके चुनावमें भाग लें।

" सोवियत-संघकी सभी जातियोंकी श्रमिक जनताके लिये १२ दिसम्बर १९३७ को एक बहुत बड़े पर्वका दिन होना चाहिये जिसे वे लेनिन और स्तालिन के विजयी झंडेके चारों ओर मनावेंगे। "

११ दिसम्बर १९३७ को निर्वाचनके एक दिन पहले कामरेड स्तालिनने उस हल्केके निर्वाचकोंको, जहाँसे वह उम्मीदवार थे, बताया कि सोवियतके प्रतिनिधि बनानेके

लिये जनता जिन लोगोंको चुनेगी, वे उसके सार्वजनिक जीवनमें भाग लेनेवाले किस तरहके लोग होंगे। कामरेड स्तालिनने कहा,—

"निर्वाचकोंको, जनताको, यह माँग करनी चाहिये कि उनके प्रतिनिधि अपने कर्तव्यका पालन करें; अपने काममें वे राजनीतिक कमाऊ-खाऊ लोगोंकी तरह नीचे न गिरें; अपनी जगहोंपर वे उस कोटिके राजनीतिक व्यक्ति हों जिस कोटिके लेनिन थे; अपने सार्वजनिक जीवनमें उनके व्यक्तित्वकी रूपरेखा वैसी ही पुष्ट और स्पष्ट हो जैसी लेनिन की थी; लड़ाईमें वे वैसे ही निर्भय हों और जनताके शत्रुओंके प्रति वैसे ही निर्मम हों जैसे लेनिन थे; उनमें किसी तरहकी कातरता न हो, जब परिस्थिति विकट हो जाय और क्षितिजपर विपत्तिके बादल घिर आयें, तब उनमें किसी प्रकारकी कातरताकी छाया भी न हो; सभी तरहकी कातरताकी छायासे वे वैसेही मुक्त हों जैसे कि लेनिन थे; कि उन सभी प्रश्नोंपर जो पेचीदा हों और जिनके पक्ष और विपक्षके तर्कोंको अच्छी तरह तौलने की ज़रूरत हो, जहाँ दृष्टिकोणमें कोई व्यापक परिवर्तन करना हो, वहाँ वे वैसे ही धीर और बुद्धिमान हों जैसे लेनिन थे; वे वैसे ही ईमानदार और निष्कलंक हों जैसे लेनिन थे; वे अपनी जनतासे वैसे ही स्नेह करें जैसे लेनिन करते थे।"

सोवियत संघके प्रधान सोवियतके लिये १२ दिसम्बरको बड़े उत्साहसे चुनाव हुआ। यह चुनाव ही नहीं, उससे कुछ बढ़कर था। यह सोवियत जनताका महान विजय-पर्व था, सोवियत संघकी दृढ़ मैत्रीका प्रदर्शन था। ९ करोड़ ४० लाखसे ऊपर निर्वाचकोंमें ९ करोड़ १० लाखसे ऊपरने अर्थात् ९६.८ प्रतिशत निर्वाचकोंने मत दिया। इस संख्यामेंसे ८ करोड़ ९८ लाख ४४ हज़ारने अथवा ९८.६ प्रतिशतने कम्युनिस्टों और पार्टीसे बाहरकी जनताके लिये वोट दिया। केवल ६ लाख ३२ हज़ार लोगोंने अथवा १ प्रतिशतसे भी कम लोगोंने कम्युनिस्टों और पार्टीसे बाहरकी जनताके उम्मीदवारोंके विरुद्ध मत दिया। गुटके सभी उम्मीदवार एक भी अपवादके बिना चुन लिये गये।

इस प्रकार ९ करोड़ जनताने एकमत होकर सोवियत संघमें समाजवादकी विजयका समर्थन किया।

कम्युनिस्टों और पार्टीसे बाहरकी जनताके गुटके लिये यह विजय अपूर्व थी।

यह बोल्शेविक पार्टीकी शानदार जीत थी। अक्तूबर क्रान्तिकी बीसवीं बरसीके अवसरपर कामरेड मोलोतोफने अपने ऐतिहासिक भाषणमें सोवियत जनताकी जिस नैतिक और राजनीतिक एकताका उल्लेख किया था, उसका यह एक ज्वलंत प्रमाण था।

सारांश

बोल्शेविक पार्टीने जो ऐतिहासिक मार्ग पार किया है, उससे हम कौनसे मुख्य परिणाम निकालते हैं?

सोवियत संघकी कम्युनिस्ट (बोल्शेविक) पार्टीके इतिहाससे हम क्या सीखते हैं ?

(१) पार्टीका इतिहास हमें सिखाता है कि सर्वहारा-क्रान्तिकी विजय, सर्वहारा वर्गके एकाधिपत्यकी विजय, उस वर्गकी एक ऐसी क्रान्तिकारी पार्टीके बिना असम्भव है जो अवसरवादसे मुक्त हो, जो समझौता करनेवालों और पराजयवादियोंसे मेल-मुलाहिजा कर ही न सके और जिसका दृष्टिकोण पूँजीवादी वर्ग तथा उसके राजतन्त्र के प्रति क्रान्तिकारी हो।

पार्टीका इतिहास हमें सिखाता है कि सर्वहारा वर्गको इस तरहकी पार्टीके बिना छोड़ देनेका यह अर्थ है कि हम उसे क्रान्तिकारी नेतृत्वके बिना छोड़ देते हैं। सर्वहारा वर्गको क्रान्तिकारी नेतृत्वके बिना छोड़ देनेका यह अर्थ है कि हम सर्वहारा-क्रान्तिके उद्देश्यको चौपट कर देते हैं।

पार्टीका इतिहास हमें सिखाता है कि पच्छिमी योरपकी सामाजिक-जनवादी पार्टियोंके ढंगकी मामूली पार्टियाँ जो नागरिक शांतिके वातावरणमें पली हैं, जो अवसरवादियोंके पीछे घिसटती रही हैं, जो "सामाजिक सुधारों" का सुख-स्वप्न देखती रही हैं और सामाजिक क्रान्ति जिनके लिये दुःस्वप्न रही है, वे ऐसी पार्टियाँ नहीं हो सकतीं।

सोवियत संघकी बोल्शेविक पार्टी इस तरहकी पार्टी है।

कामरेड स्तालिनने लिखा है,—

"क्रान्तिपूर्व युगमें, बहुत कुछ शान्तिमय विकासके दिनोंमें, जब कि मजदूर आन्दोलनमें दूसरे इन्टरनेशनलकी पार्टियाँ प्रमुख शक्तियाँ थीं और व्यवस्थापिका सभाओंका संघर्ष ही युद्धका मुख्य रूप समझा जाता था, पार्टीका वह निश्चित महत्व न था और न हो सकता था जो कि खुली क्रान्तिकारी लड़ाईके दिनोंमें हो गया। दूसरे इन्टरनेशनलकी आलोचनाका उत्तर देते हुए कौत्सी कहता है कि दूसरे इन्टरनेशनलकी पार्टियाँ युद्धका साधन न होकर शांतिका साधन हैं और इसी कारणसे युद्धके समय, जब कि सर्वहारा वर्गकी क्रान्तिकारी कार्यवाही चालू थी, तब वे कोई भी महत्वपूर्ण निर्णय करनेमें असमर्थ रहीं। यह बिल्कुल सही है लेकिन इसका क्या अर्थ है ? इसका यह अर्थ है कि दूसरे इंटरनेशनलकी पार्टियाँ सर्वहारा वर्गके क्रान्तिकारी संघर्षके लिये उपयुक्त नहीं हैं और यह कि वे सर्वहारा वर्गकी लड़नेवाली पार्टी न होकर चुनावकी मशीनें हैं, जो पार्लियामेन्टके चुनावोंमें और पार्लियामेन्टकी लड़ाईमें तो काम दे सकती हैं लेकिन मजदूरोंको राज्यसत्ता तक नहीं ले जा सकतीं। वास्तवमें इस बातसे यह भी सिद्ध हो जाता है कि उन दिनों, जब कि दूसरे इंटरनेशनलके अवसरवादियोंकी बन आयी थी, पार्टीके बदले उसका पार्लियामेण्टवाला दल ही सर्वहारा-वर्गका प्रमुख राजनीतिक संगठन क्यों था। यह अच्छी तरह विदित है कि उस समय पार्टी पार्लियामेण्टके इस दलका परिशिष्ट-भाग थी और उसके आधीन थी। कहना न होगा कि ऐसी परिस्थितिमें,

और ऐसी पार्टीके कर्णधार होनेपर, सर्वहारा वर्गको क्रान्तिके लिये तैयार करनेका प्रश्न ही न उठ सकता था।

"लेकिन नये युगके आरम्भसे बात बिल्कुल बदल गयी। यह नया युग वर्गोंकी खुली मुठभेड़का युग है, सर्वहारा वर्गकी क्रान्तिकारी कार्यवाईका, सर्वहारा-क्रान्तिका युग है,—एक ऐसा युग जब कि साम्राज्यवादके ध्वंसके लिये और सर्वहारा वर्ग द्वारा शासनतन्त्रको हथियानेके लिये प्रत्यक्ष रूपसे शक्ति-संचय, संगठन किय जा रहा है। इस युगमें सर्वहारा वर्गके सामने नये कार्य हैं; उसके सामने पार्टीके कार्यको नयी क्रान्तिकारी लीकपर पुनः व्यवस्थित करनेका कार्य है। उसके सामने मजदूरोंको इस भावनामें दीक्षित करनेका कार्य है कि वे क्रान्तिकारी संग्राम द्वारा राज्यसत्तापर अधिकार कर लें। उसे अपनी रिजर्व शक्तिको तैयार करना और आगे बढ़ाना है; पड़ौसी देशोंके सर्वहारा वर्गोंसे संयोग स्थापित करना है; उसे उपनिवेशों और पराधीन देशोंसे दृढ़ संबंध स्थापित करना है, इत्यादि। यह समझना कि पार्लियामेण्टगीरीके शान्तिमय वातावरणमें पाली-पोसी हुई पुरानी सामाजिक-जनवादी पार्टियाँ इन नये कार्योंको कर सकेंगीं, अपनेको निराशा और अनिवार्य पराजयके गर्तमें ढकेल देना है। सर्वहारा वर्गको जब इन महान कार्योंका उत्तरदायित्व लेना है, तब पुरानी पार्टियोंके नेतृत्वमें रहकर वह एकदम अरक्षित और अशक्त हो जायगा। कहना न होगा कि सर्वहारा वर्ग ऐसी परिस्थितिको कभी मान न सकता था।

"इसीलिये एक नयी पार्टी, एक लड़नेवाली पार्टी, एक क्रान्तिकारी पार्टीकी आवश्यकता हुई, जो राज्यसत्ताके संग्राममें सर्वहारा वर्गका यथेष्ट साहससे नेतृत्व कर सके, जिसे इतना अनुभव हो कि क्रान्तिकारी परिस्थितिके विषम ऊहापोहमें उसके पैर न उखड़ जाँय और जो इतनी लचीली हो कि लक्ष्यकी ओर जानेवाली राहमें जो छिपी हुई चट्टानें हों उनसे बचकर निकल सके।

"ऐसी पार्टीके बिना साम्राज्यवादका ध्वंस और सर्वहारा वर्गके एकाधिपत्यको चरितार्थ करनेका विचार भी व्यर्थ होगा।

"यह नयी पार्टी लेनिनवादकी पार्टी है।" (**जो. स्तालिन: लेनिनवाद—अं. सं.**)

(२) पार्टीका इतिहास हमें यह सिखाता है कि मजदूर-वर्गकी पार्टी अपने वर्गके नेताका कार्य तब तक नहीं कर सकती, वह सर्वहारा क्रान्तिके संगठनकर्ता और नेता का कार्य तब तक नहीं कर सकती, जब तक कि उसने श्रमिक-आंदोलनके अग्रसर सिद्धांतों पर, मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धांतोंपर अधिकार नहीं कर लिया हो।

मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धांतोंकी शक्ति इस बातमें है कि उससे किसी भी परिस्थितिमें पार्टी अपने सही दृष्टिकोणको समझ सकती है, सामयिक घटनाओंके तारतम्य को समझ सकती है, उनकी भावी गति-विधिको परख सकती है और यही नहीं पहचान

सकती कि वर्तमान समयमें उनका विकास किस दिशामें हो रहा है, वरन यह भी जान सकती है कि भविष्यमें भी कैसे और किस दिशामें उनका विकास अनिवार्य है।

ऐसी ही पार्टी जिसने मार्क्सवादी–लेनिनवादी सिद्धांतोंपर अधिकार कर लिया हो, विश्वासपूर्वक स्वयं बढ़कर मजदूर-वर्गको आगे ले जा सकती है।

इसके विपरीत जिस पार्टीने मार्क्सवादी–लेनिनवादी सिद्धांतोंपर अधिकार नहीं किया, उसे अपना रास्ता टटोलना पड़ता है, अपने कार्योंमें उसकी आस्था नहीं रहती और वह मजदूर-वर्गको आगे नहीं ले जा पाती।

ऐसा लग सकता है कि मार्क्सवादी–लेनिनवादी सिद्धांतोंपर अधिकार करनेके लिये मार्क्स, एंगेल्स और लेनिनकी पुस्तकोंसे बिखरे हुए परिणामों और विचारोंको मेहनत करके रट लिया जाय और मौक़ा पड़नेपर झटसे उनको दोहरा दिया जाय और इसके बाद बस सीताराम। आशा यह की जायगी कि ये रटे हुए परिणाम और विचार हर परिस्थिति और हर अवसरपर फिट कर जायँगे। लेकिन मार्क्सवादी–लेनिनवादी सिद्धांतोंके प्रति यह धारणा एकदम ग़लत है। मार्क्सवादी–लेनिनवादी सिद्धांतोंको व्यास-सूत्रोंका संग्रह न समझना चाहिये जो धर्मकी ऐसी पोथीं हैं कि उससे तिलभर इधर–उधर हिलना–डुलना पाप होगा और न यह समझना चाहिये कि मार्क्सवादी वितंडावादी शास्त्री लोग हैं। मार्क्सवादी–लेनिनवादी सिद्धांत सामाजिक विकासके विज्ञानके सिद्धांत हैं; ये सिद्धांत मजदूर–आंदोलनके विज्ञान, सर्वहारा–क्रान्तिके विज्ञान, कम्युनिस्ट समाज–निर्माणके विज्ञानके सिद्धांत हैं। विज्ञान होनेसे ही ये सिद्धांत स्थिर नहीं हैं, न हो सकते हैं वरन विकसित होते हैं और अधिक भरे-पूरे बनते हैं। यह स्पष्ट है कि अपने विकासमें वे नये अनुभव और नये ज्ञानसे भरे-पूरे बनेंगे। समय बीतने पर कुछ धारणाएँ और कुछ परिणाम बदलेंगे भी और नयी ऐतिहासिक परिस्थितियोंके अनुकूल उनके स्थानमें नयी धारणाएँ और नये परिणाम प्रतिष्ठित होंगे।

मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्तोंपर अधिकार करनेका यह अर्थ नहीं है कि हम उनके परिणामों और सूत्रोंको कंठस्थ कर लें और उनके हर शब्दसे चिपटे रहें। मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धातोंपर अधिकार करनेके लिये हमें सबसे पहले ऊपरी शब्दों और उनके तात्पर्यमें भेद करना सीखना होगा।

मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्तोंपर अधिकार करनेका यह अर्थ है कि हम इन सिद्धान्तोंका **सारतत्व** ग्रहण करके और क्रान्तिकारी आंदोलनकी प्रत्यक्ष समस्याओंको, सर्वहारा वर्ग-संघर्षकी परिवर्तनशील परिस्थितियोंमें, हल करते समय उसका उपयोग करना सीखें।

मार्क्सवादी लेनिनवादी सिद्धांतोंपर अधिकार करनेका यह अर्थ है कि क्रान्तिकारी आंदोलनके नये अनुभवसे तथा नये विचारों और परिणामोंसे उन सिद्धांतोंको भरा-पूरा बनाया जाय। उनपर अधिकार करनेका यह अर्थ है कि हम उन्हें **विकसित कर सकें और आगे बढ़ा सकें** और नयी ऐतिहासिक परिस्थितिमें, जहाँ उनके विचार और परिणाम

पुराने पड़ गये हों, वहाँ उनके सार-तत्वके अनुकूल उन विचारों और परिणामोंको बदलने में भी न झिझकें तथा नयी परिस्थितिके अनुकूल उनकी जगह नये विचारों और परिणामोंको प्रतिष्ठित कर सकें। मार्क्सवाद-लेनिनवादके सिद्धांत धर्मशास्त्र नहीं वरन् काम करनेके लिये निर्देश हैं।

फरवरी १९१७ की दूसरी रूसी क्रान्तिके पहले सभी देशोंके मार्क्सवादी यह मान लेते थे कि पूँजीवादसे समाजवादकी ओर संक्रमणके युगमें समाजका सबसे अच्छा राजनीतिक संगठन पार्लियामेण्टरी-जनवादी प्रजातन्त्र है। यह सच है कि १८७० के लगभग मार्क्सने कहा था कि सर्वहारा वर्गके अधिनायकत्वके लिये पेरिस-कम्यून जैसा राजनीतिक संगठन ही सबसे अधिक उपयुक्त है, न कि पार्लियामेण्टरी प्रजातन्त्र। परन्तु दुर्भाग्यवश मार्क्सने इस विचारको आगे नहीं बढ़ाया; इसलिये लोग उसे भूल गये। इसके सिवा १८९१ के एरफुर्ट-कार्यक्रमके मसौदेकी अधिकारसहित आलोचनामें एंगेल्सने कहा था कि "सर्वहारा वर्गके अधिनायकत्वके लिये जनवादी प्रजातन्त्र ही विशिष्ट रूप है।" इस बातसे कोई संदेह न रह जाता था कि मार्क्सवादी जनवादी प्रजातन्त्रको ही सर्वहारा वर्गके अधिनायकत्वका राजनीतिक रूप मानते थे। एंगेल्सकी धारणा आगे चलकर, लेनिन समेत, सभी मार्क्सवादियोंके लिये निर्देशक बन गयी। फिर भी १९०५ की रूसी क्रान्तिने, और विशेषकर फरवरी १९१७ की क्रान्तिने समाजके एक नये राजनीतिक संगठनको जन्म दिया। यह संगठन था श्रमिक और सैनिक प्रतिनिधियोंके सोवियत। दोनों क्रान्तियोंके अनुभवोंको अध्ययन करके, मार्क्सवादके सिद्धांतोंके सहारे लेनिन इस परिणामपर पहुँचे कि सर्वहारा वर्गके अधिनायकत्वके लिये पार्लियामेण्टरी-जनवादी प्रजातन्त्र नहीं, वरन् सोवियतोंका प्रजातन्त्र उपयुक्त है। इसी विचारको आगे बढ़ाते हुए, पूँजीवादी क्रान्तिसे समाजवादी क्रान्तिकी ओर संक्रमणके युगमें, अप्रैल १९१७ में लेनिनने यह नारा लगाया कि सर्वहारा वर्गके शासनके लिये सबसे अच्छा राजनीतिक संगठन सोवियतोंका प्रजातन्त्र है। सभी देशोंके अवसरवादी पार्लियामेण्टरी प्रजातन्त्रका पल्ला पकड़े रहे और लेनिनको दोषी ठहराते रहे कि उन्होंने मार्क्सवादको छोड़ दिया है और जनवादका नाश कर दिया है। परन्तु वास्तवमें मार्क्सवादी तो लेनिन ही थे जिन्होंने मार्क्सवादके सिद्धांतोंपर अधिकार कर लिया था, न कि अवसरवादी; क्योंकि लेनिन मार्क्सीय सिद्धांतोंको नये अनुभवसे भरा-पूरा बनाकर आगे बढ़ा रहे थे जब कि अवसरवादी उसे पीछे घसीट रहे थे और उसके एक विचारको धर्मशास्त्रका सूत्र बना रहे थे।

यदि लेनिन मार्क्सवादके शब्दोंसे आतंकित हो जाते और एंगेल्स द्वारा प्रतिपादित मार्क्सवादकी एक धारणाके बदले, साहसपूर्वक नयी ऐतिहासिक परिस्थितियोंके अनुकूल, सोवियत प्रजातंत्र संबंधी नयी धारणा न प्रतिष्ठित करते, तो हमारी पार्टीकी, क्रान्तिकी, और मार्क्सवादकी अब क्या दशा होती? पार्टी अँधेरेमें राह टटोलती होती, सोवियत असंगठित होते, हमारे यहाँ सोवियत शासन न होता और मार्क्सीय सिद्धान्तोंको भारी धक्का लग चुका होता। सर्वहारा वर्ग हार जाता और उसके दुश्मन जीत जाते।

साम्राज्यवादसे पूर्वके पूँजीवादका अध्ययन करके एंगेल्स और मार्क्स इस परिणाम पर पहुँचे थे कि अकेले एक देशमें समाजवादी क्रान्तिकी विजय न हो सकती थी; एक साथ ही सभी देशोंमें अथवा अधिकांश सभ्य देशोंमें वह एक साथ ही विजयी हो सकती थी। यह उन्नीसवीं सदीके मध्यकी बात है। यह परिणाम सभी मार्क्सवादियोंके लिये आगे चल कर निर्देशक बन गया था। फिर भी बीसवीं सदीके आरम्भमें साम्राज्यवादसे पूर्वका पूँजीवाद साम्राज्यवादी पूँजीवादमें परिणत हो चुका था। विकासोन्मुख पूँजीवाद अब गतिरुद्ध पूँजीवाद बन गया था। साम्राज्यवादी पूँजीवादका अध्ययन करके मार्क्सीय सिद्धांतोंके सहारे लेनिन इस परिणामपर पहुँचे कि एंगेल्स और मार्क्सका पुराना सूत्र नयी ऐतिहासिक परिस्थितियोंके अनुकूल नहीं हैं और इसलिये समाजवादी क्रान्तिकी विजय अकेले एक देशमें भी बिल्कुल संभव है। सभी देशोंके अवसरवादी एंगेल्स और मार्क्सके पुराने सूत्रको घोखते रहे और लेनिनपर मार्क्सवादको छोड़ देनेका दोष लगाते रहे। परन्तु वास्तवमें मार्क्सवादी तो लेनिन ही थे, जिन्होंने मार्क्सीय सिद्धान्तोंपर अधिकार किया था, न कि अवसरवादी; क्योंकि लेनिन उन सिद्धान्तोंको नये अनुभवसे भरा-पूरा बना कर आगे बढ़ा रहे थे जब कि अवसरवादी उन्हें पीछे ढकेल रहे थे और उनकी केंचुलको बनाये रखना चाहते थे।

यदि लेनिन मार्क्सवादके शब्दोंसे आतंकित हो जाते और उनमें इतना सैद्धांतिक विश्वास न होता कि मार्क्सवादके एक पुराने परिणामको ठुकरा दें और उसके बदले नयी ऐतिहासिक परिस्थितियोंके अनुकूल एक नये परिणामको प्रतिष्ठित करें, तो पार्टीका, क्रान्तिका, और मार्क्सवादका क्या होता? पार्टी अंधेरेमें राह टटोलती होती, सर्वहारा-क्रान्ति नेतृत्वहीन हो जाती और मार्क्सीय सिद्धांतोंका ह्रास होने लगता। सर्वहारा वर्गकी हार होती और उसके दुश्मन जीत जाते।

अवसरवादका सदा यह अर्थ नहीं होता कि वह मार्क्सीय सिद्धांतोंका या उनके किन्हीं विचारों और परिणामोंका विरोध ही करे। अवसरवाद कभी-कभी इस रूपमें भी प्रगट होता है कि यह मार्क्सवादके किन्हीं विचारोंको जो अब पड़ पुराने गये हैं धर्मशास्त्रका रूप देकर उन्हें पकड़े रहता है जिससे कि मार्क्सवाद आगे न बढ़ सके। फलतः वह सर्वहारा वर्गके क्रान्तिकारी आंदोलनके विकासको रोक लेता है।

बिना अतिशियोक्तिकी शंकासे यह कहा जा सकता है कि एंगेल्सकी मृत्युके बाद सिद्धांत-गुरु लेनिन, और लेनिनके बाद स्तालिन तथा लेनिनके दूसरे शिष्य ही ऐसे मार्क्सवादी रहे हैं जिन्होंने मार्क्सीय सिद्धांतोंको आगे बढ़ाया है और सर्वहारा वर्ग-संघर्ष की नयी परिस्थितियोंमें नये अनुभवसे उसे भरा-पूरा बनाया है।

और लेनिन तथा लेनिनवादियोंने मार्क्सीय सिद्धान्तोंको आगे बढ़ाया है, इसलिये लेनिनवाद मार्क्सवादका ही विकसित रूप है। वह सर्वहारा वर्ग-संघर्षकी नयी परिस्थितियोंका मार्क्सवाद है, सर्वहारा-क्रान्तियों और साम्राज्यवादी युगका मार्क्सवाद है, वह भूमंडलके छठे भागमें समाजवादकी विजयके युगका मार्क्सवाद है।

बोल्शेविक पार्टीके प्रमुख नेताओंने यदि मार्क्सवादी सिद्धान्तोंपर पूर्ण अधिकार न कर लिया होता, यदि उन्होंने इन सिद्धान्तोंको अपने कार्यका मार्गदर्शक समझना न सीख लिया होता, यदि उन्होंने मार्क्सवादी सिद्धान्तोंको सर्वहारा वर्गके श्रेणी-संघर्षके नये अनुभवोंसे भरपूर बनाकर उन्हें और आगे बढ़ाना न सीख लिया होता, तो वे १९१७ की अक्तूबर क्रान्तिमें विजयी न हो सकते।

अमरीकामें जिन जर्मन मार्क्सवादियोंने वहाँके मजदूर-आंदोलनका नेतृत्व करनेका बीड़ा उठाया था, उनकी आलोचना करते हुए एंगेल्सने लिखा था,—

"जर्मनोंने यह नहीं सीखा कि वे अपने सिद्धान्तोंका किस तरह अस्त्र-रूपमें प्रयोग करें जिससे कि अमरीकी जनसमूहमें गति उत्पन्न हो। अधिकतर वे स्वयं सिद्धान्तों को नहीं समझते और धर्मशास्त्रकी तरह वितंडावादके लिये उनका उपयोग करते हैं, मानों उन्हें मान लेनेसे ही बिना हाथ-पैर डुलाये सब कार्य सिद्ध हो जायेंगे। उनके लिये ये सिद्धान्त धर्मशास्त्र हैं न कि काम करनेके लिये पथ-दर्शक।" **जौर्गेको पत्र, १९ नवम्बर १८८६)**

जब क्रान्तिकारी आंदोलन आगे बढ़ चुका था और समाजवादी क्रान्तिकी ओर संक्रमणकी मांग कर रहा था, तब कामेनेफ और कुछ दूसरे पुराने बोल्शेविक सर्वहारा वर्ग और किसानोंके क्रान्तिकारी जनवादी शासनका पुराना सूत्र रटे चले जा रहे थे। अप्रैल १९१७ में इनकी आलोचना करते हुए लेनिनने लिखा था,—

> "मार्क्स और एंगेल्सका कहना था कि हमारा दर्शन धर्मशास्त्र नहीं है वरन् काम करनेके लिये पथ-दर्शक है। जो लोग सूत्रोंको कंठस्थ किये रहते थे और उनकी आवृत्ति करके अपना पांडित्य प्रदर्शित करते थे, उनका मार्क्स और एंगेल्स ने उचित ही मजाक बताया था। अधिकसे अधिक इन सूत्रोंसे **साधारण** कार्यों की रूपरेखा निश्चित हो सकती है। परन्तु ये कार्य ऐतिहासिक क्रमकी प्रत्येक विभिन्न दशामें ठोस आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियों द्वारा परिवर्तित होते हैं। ऐसा होना आवश्यक है......यह आवश्यक है कि हम अतर्क्य सत्यको समझें कि मार्क्सवादीको वास्तविक जीवनपर ध्यान देना चाहिये, वास्तविक ठोस, यथार्थको परखना चाहिये और बीते हुए युगके सिद्धांतोंका पल्ला न पकड़ना चाहिये......"
>
> **(संक्षिप्त लेनिन—ग्रन्थावली—रू. सं., खं. २२, पृ. १००-१०१**

(३) पार्टीके इतिहाससे हम यह भी सीखते हैं कि मजदूर-वर्गके भीतर जो निम्न-पूँजीवादी पार्टियाँ क्रियाशील हैं और जो मजदूर-वर्गके पिछड़े हुए भागको पूँजीपतियों के हाथों सौंप देती हैं और इस प्रकार मजदूर-वर्गकी एकता खंडित कर देती हैं, जब तक वे नष्ट न की जायँगी तब तक सर्वहारा-क्रान्तिकी विजय असम्भव है।

हमारी पार्टीका इतिहास निम्न-पूँजीवादी पार्टियों—सामाजिक-क्रान्तिकारियों, मेन्शेविकों, अराजकवादियों और राष्ट्रवादियोंसे संघर्षका इतिहास है और इन पार्टियोंकी पूर्ण पराजयका इतिहास है। यदि ये पार्टियाँ परास्त न की जातीं और मजदूर-वर्गकी

पाँतिसे निकाल बाहर न की जातीं तो मजदूर-वर्गमें कभी एकता स्थापित न होती। मजदूर-वर्गकी एकताके बिना सर्वहारा वर्गकी विजय भी असंभव थी।

ये पार्टियाँ पहले पूंजीवादको बनाये रखनेके पक्षमें थीं और आगे चलकर अक्तूबर क्रान्तिके बाद पूँजीवादको पुनः प्रतिष्ठित करनेके पक्षमें रही थीं। यदि ये पार्टियाँ पूर्ण रूपसे परास्त न की जातीं तो सर्वहारा वर्गके एकछत्र शासनको बनाये रखना असम्भव होता, विदेशी शक्तियों द्वारा सशस्त्र हस्तक्षेपको पराजित करना और समाजवादका निर्माण करना भी असम्भव होता।

सभी निम्न-पूँजीवादी पार्टियाँ—सामाजिक-क्रान्तिकारी, मेन्शेविक, अराजकवादी और राष्ट्रवादी—जो जनताकी आँखोंमें धूल झोंकनेके लिये अपने माथेपर "क्रान्तिकारी" और "समाजवादी," शब्दोंका टीका लगाये रहती थीं, अक्तूबरकी समाजवादी क्रान्तिके पहले ही क्रान्तिविरोधी बन गयीं। आगे चलकर विदेशके पूँजीवादी जासूस-विभागोंकी वे दलाली करने लगीं; वे जासूसों, तोड़-फोड़ करनेवालों, हत्यारों और दगाबाजोंका भी गिरोह बन गयीं। इसको आकस्मिक घटना न समझना चाहिये।

लेनिनने कहा था,—

> "सामाजिक क्रान्तिके युगमें मार्क्सवादकी सबसे अग्रसर क्रान्तिकारी पार्टी द्वारा ही, और दूसरी सभी पार्टियोंसे जमकर युद्ध करके ही, सर्वहारा-एकता स्थापित हो सकती है।" **(लेनिन-ग्रंथावली—रूसी संस्करण, खंड २६, पृ. ५०)**

(४) पार्टीके इतिहाससे हम यह सीखते हैं कि जब तक मजदूर-वर्गकी पार्टी बिना किसी मेल-मुलाहिजेके अपनी ही पाँतिमें बैठे हुए अवसरवादियोंसे युद्ध नहीं करती, अपने बीचके भगोड़ोंको कुचल नहीं देती, तब तक वह अपनी पाँतिमें एकता और अनुशासन नहीं स्थापित कर सकती, सर्वहारा-क्रान्तिके नेता और संगठनकर्त्ताकी भूमिका को वह पूरा नहीं कर सकती, न वह नये सोशलिस्ट समाजके निर्माणमें ही अपनी भूमिका पूरी कर सकेगी।

हमारी पार्टीके आंतरिक जीवनके विकासका इतिहास पार्टीके भीतर अवसरवादी गुटों—"अर्थवादी", मेन्शेविक, त्रात्स्की-पंथी, बुखारिनवादी और राष्ट्रवादी गुमराहोंसे संघर्षका इतिहास है। वह इन गुटोंकी पूर्ण पराजयका इतिहास है।

अपनी पार्टीके इतिहाससे हम सीखते हैं कि ये सभी विश्वासघाती गुट वास्तवमें पार्टीके भीतर मेन्शेविज़्मके दलाल थे, मेन्शेविज़्मकी रही-सही तलछट और उसके नाम-लेवा थे। मेन्शेविकोंकी तरह मजदूर-वर्ग और पार्टीमें पूँजीवादी प्रभावका विस्तार करनेका वे साधन थे। इसलिये पार्टीके भीतर इन गुटोंका सफाया करनेके लिये जो संघर्ष हुआ, वह मेन्शेविज़्मका ध्वंस करनेवाले संघर्षका उपसंहार था।

यदि हमने "अर्थवादियों" और मेन्शेविकोंको न हराया होता, तो हम पार्टीका निर्माण न कर सकते और मजदूर-वर्गको सर्वहारा-क्रान्तिकी ओर न ले जा सकते।

यदि हमने त्रात्स्कीपंथी और बुखारिनवादियोंको परास्त न किया होता, तो हम समाजवादके निर्माणके लिये आवश्यक परिस्थितियोंकी सृष्टि न कर पाते।

यदि हमने सभी तरहके राष्ट्रवादी गुमराहोंको परास्त न किया होता, तो हम जनताको अंतरराष्ट्रीयताकी दीक्षा न दे सकते; सोवियत संघकी जातियोंकी महती एकता के झंडेकी रक्षा न कर सकते और हम सोवियत समाजवादी प्रजातन्त्रोंका संघ न बना पाते।

कुछ लोगोंको शंका हो सकती है कि पार्टीके भीतर अवसरवादियोंसे लड़नेमें बोलशेविकोंने बहुत ज़्यादा समय लगा दिया और उनके महत्वको बहुत बढ़ा-चढ़ाकर आँका। लेकिन यह बिलकुल ग़लत है। हमारे बीचमें अवसरवाद स्वस्थ शरीरमें नासूर की तरह है, इसे कभी न रहने देना चाहिये। पार्टी मज़दूर-वर्गकी हिरावल है, सबसे आगे लड़नेवाली टुकड़ी है, उसका पहला किला है और उसका सैन्य-विभाग है। मज़दूर वर्गके सैन्य-विभागमें शंकित हृदयवालों, अवसरवादियों, शरणागमियों और विश्वास-घातियोंके लिये जगह नहीं है। पूँजीपतियोंसे अपने जीवन-मरणका युद्ध करते हुए यदि उसके सैन्य-विभागमें ही, उसके दुर्गमें ही, शरणगामी और विश्वासघाती हों, तो मज़दूर वर्गको आगे और पीछेसे, दोनों ओरसे दुश्मनका सामना करना पड़ेगा। यह स्पष्ट है कि ऐसी लड़ाईमें हार ही होगी। किला फतह करनेका सबसे आसान तरीक़ा भीतरी हमला है। विजय पानेके लिये मज़दूर-वर्गकी पार्टीको, अपने सैन्य-विभागको, मोर्चे परके किलेको विश्वासघातियों, भगोड़ों, गुंडों और दग़ाबाज़ोंसे पाक रखना होगा।

यह कोई आकस्मिक घटना नहीं है कि लेनिन और पार्टीसे लड़नेवाले त्रात्स्कीपंथी बुखारिनवादी और राष्ट्रीय गुमराह आखिर वहीं रुके जहाँ मेन्शेविक और सामाजिक-क्रान्तिकारी पार्टियाँ रुकी थीं। अर्थात उन्होंने फासिस्ट जासूसी विभागके दलाल बनकर तोड़-फोड़, हत्या और दग़ाबाज़ी करके ही दम ली।

लेनिनने कहा था,—

"अपनी पाँतिमें सुधारवादियों, मेन्शेविकोंके रहनेपर सर्वहारा-क्रान्तिमें विजय पाना **असंभव** है; विजय पाकर उसकी रक्षा करना **असंभव** है। सिद्धांत रूपमें यह स्पष्ट है, और रूस और हंगरीके अनुभवसे प्रत्यक्ष रूपमें उसकी पुष्टि हो चुकी है।... रूसमें **अनेक बार** ऐसी विकट परिस्थितियाँ आयी हैं कि यह **बिलकुल निश्चित** है कि यदि हमारी पार्टीमें मेन्शेविक, सुधारवादी और निम्न-पूँजीवादी-जनवादी रहते, तो सोवियत शासनका नाश हो जाता।..."

(लेनिन ग्रन्थावली—रूसी संस्करण, खंड २५, पृ. ४६२-६३)

कामरेड स्तालिनने लिखा था,

"हमारी पार्टी अपनी पाँतिमें अपूर्व संबद्धता और आंतरिक एकता स्थापित करनेमें मुख्यतः इसलिये सफल हुई कि उसने समय-रहते अवसरवादी कोढ़को दूर कर दिया था, उसने अपनी पाँतिसे विसर्जनवादी मेन्शेविकोंको निकाल बाहर किया था। सर्वहारा-पार्टियाँ अपने बीचमेंसे अवसरवादियों और सुधारवादियों, सामाजिक-साम्राज्यवादियों और सामाजिक-राष्ट्रवादियों, तथा सामाजिक-देशभक्तों और सामाजिक-हिंसावादियोंको निकालकर विकसित और दृढ़ होती हैं। पार्टी

अवसरवादी लोगोंको निकाल कर दृढ़ होती है।"

(स्तालिन : लेनिनवाद—अं. सं.)

(५) पार्टीके इतिहाससे हम यह सीखते हैं कि यदि विजयसे उन्मत्त होकर पार्टीमें दम्भ उत्पन्न हो जाय, यदि वह अपने कार्योंकी त्रुटियोंकी ओर देखना बंद कर दे, यदि वह अपनी भूल स्वीकार करनेमें डरे और समय रहते खुले आम और ईमानदारीसे उसे ठीक न करे, तो वह मजदूर-वर्गके नेताकी भूमिकाको पूरा नहीं कर सकती।

यदि पार्टी आलोचना और आत्म-समालोचनासे न डरे, अपने कार्यकी त्रुटियों और भूलोंपर लीपा-पोती न करे, यदि वह पार्टी-कार्यकी भूलोंसे सबक़ लेकर अपने कार्य-कर्त्ताओंको सिखाये-पढ़ाये, और यदि वह समय रहते अपनी भूलोंको सुधारना जाने, तो वह पार्टी अजेय होगी।

यदि पार्टी अपनी भूलोंको छिपाये, अपनी समस्याओंपर पर्दा डाले, यदि वह अपनी कमज़ोरियोंको यह कहकर छिपाये कि सब कुछ अच्छा ही अच्छा हो रहा है, यदि आलोचना और आत्म-समालोचनाके लिये उसके पास धैर्य न हो, यदि वह आत्म-तुष्टि और गर्वमें भूल जाये तथा एक बार विजय पाकर हाथपर हाथ धरे बैठी रहे, तो वह नष्ट हो जायगी।

लेनिनने कहा था,—

"पार्टीमें कितनी लगन है और अपने **वर्ग** तथा श्रमिक **जनता**के प्रति अपने कर्त्तव्योंको वह **प्रत्यक्ष रूप**में कैसे पालन करती है—इसे जाँचनेका एक बहुत अच्छा और अचूक तरीक़ा किसी राजनीतिक पार्टीका अपनी भूलोंके प्रति रवैया है। जिस पार्टीमें लगन होगी, उसका लक्षण यह है कि वह खुले दिलसे अपनी भूल स्वीकार करेगी, उसके कारणोंका पता लगायगी, जिन परिस्थितियोंसे भूल हुई थी, उनकी छान-बीन करेगी और उसे सुधारनेके लिये पूरी तरहसे उपायोंपर विचार करेगी। अपना कर्त्तव्य पालन करनेका यही मार्ग है। इसी तरह पहले **वर्ग** और फिर **जनता**को सिखाना-पढ़ाना चाहिये।"

(लेनिन-ग्रन्थावली—रू. सं., खं. २५, पृ. २००)

और भी :—

"अभी तक जितनी क्रान्तिकारी पार्टियाँ नष्ट हुई हैं, वे इसलिये कि उनमें **गरूर** हो गया था, वे यह नहीं जान सकीं कि उनकी शक्ति कहाँ है, **अपनी कमज़ोरियोंको बताते हुए उन्हें डर लगता था**। लेकिन हम नष्ट न होंगे क्योंकि हमें अपनी कमजोरियाँ बताते डर नहीं लगता और हम उनपर विजय पाना सीखेंगे।" **(लेनिन-ग्रन्थावली—रू. सं., खं. २७, पृ. २६०–६१)**

(६) अंतमें पार्टीके इतिहाससे हम यह सीखते हैं कि जब तक जनतासे उसका व्यापक संबंध न होगा, जब तक वह इस संबंधको बराबर दृढ़ न करती रहेगी, जब तक वह जनताकी आवाजको सुनकर उनकी आवश्यकताओंको समझ न सकेगी, जब तक वह जनताको सिखानेके लिये ही नहीं, वरन् जनतासे सीखनेके लिये भी तैयार न होगी,

तब तक मजदूर वर्गकी पार्टी एक वास्तविक जनताकी पार्टी नहीं बन सकती जो लाखों मजदूरों और समस्त श्रमिक जनताका नेतृत्व कर सके। लेनिनके शब्दोंमें यदि पार्टी,—

"आम मेहनतकश जनताके साथ अपना संबंध स्थापित कर सके, उसके निकट रह सके और चाहो तो एक हद तक जाँगर चलाने वालोंमें—विशेषकर मजदूरोंमें, लेकिन सर्वहारा वर्गसे इतर मेहनतकश जनतामें भी घुल-मिल सके तो वह अजेय होगी।" **(लेनिन-ग्रन्थावली—रू. सं., खंड २५, पृ. १७४)**

यदि पार्टी अपने दरबेमें बंद हो जाय, जनतासे संबंध विच्छेद करले और अपने ऊपर नौकरशाहीकी जंग लग जाने दे, तो वह नष्ट हो जायगी।

कामरेड स्तालिनका कहना है,—

"हम इसे एक नियम मान सकते हैं कि जब तक बोल्शेविक जन-साधारणसे अपना सम्पर्क बनाये रहेंगे, वे अजेय होंगे। लेकिन इसके विपरीत जहाँ वे जनतासे अलग होकर अपना संबंध-सूत्र खो देंगे और जहाँ उनमें नौकरशाहीकी जंग लग जायगी, वहाँ वे अपनी सारी शक्ति खो बैठेंगे और शून्यके समान हो जायेंगे।

"पुराने यूनानियोंकी दंतकथाओंमें एँटियस नामका एक वीर था जो जन-श्रुतिके अनुसार समुद्रके देवता पोसाइदीन और धरतीकी देवी गियाका पुत्र था। जिस धरती माताने उसे पैदा किया था और पाल-पोसकर बड़ा किया था, उसे एँटियस बहुत प्यार करता था। ऐसा एक भी वीर न था, जिसे एँटियस ने हराया न हो। वह एक अजेय योद्धा समझा जाता था। उसकी शक्तिका रहस्य क्या था? जब भी किसी युद्धमें वह संकटमें होता, वह उस धरती माताको जिसने उसे पैदा किया और पाला-पोसा था, छू लेता और उसमें नई शक्ति आ जाती। फिर भी यह खतरा था कि किसी न किसी तरह वह धरतीसे हटा न लिया जाय। उसके शत्रु उसकी यह कमजोरी पहचानते थे और अपनी घातमें थे। एक दिन ऐसा दुश्मन आया कि इस कमजोरीका लाभ उठाकर उसने एँटियस को पछाड़ दिया। यह दुश्मन हरकुलीज था। हरकुलीजने एँटियसको कैसे पछाड़ा? उसने उसे धरतीसे उठा लिया, उसे हवामें टांगे रखा, और उसे धरती न छूने देकर अधरमें ही उसका गला घोंट दिया।

"मेरा विचार है कि बोल्शेविकोंसे हमें ग्रीक दंतकथाओंके वीर एँटियस की याद आती है। एँटियसकी भाँति वे भी इसीलिये शक्तिशाली हैं कि जिस जनतारूपी माताने उन्हें पैदा किया और पाल-पोस कर बड़ा किया है, उसे वे नहीं भूलते। और जब तक वे अपनी मातासे, जनतासे दूर नहीं जाते तब तक उनकी अजेय रहनेकी बराबर संभावना है।

"बोल्शेविक नेतृत्वकी अजेयताका यही रहस्य है।"

(जो. स्तालिनः पार्टी कार्यमें त्रुटियाँ)

यही वे मुख्य बातें हैं जिन्हें हम बोल्शेविक पार्टीके तै किये हुए ऐतिहासिक मार्गसे सीख सकते हैं।

अनुक्रमणिका

★

पारिभाषिक शब्द

Absolute	परम, सम्पूर्ण, परम तत्व, निरपेक्ष, निरंकुश
Absolute idea	परम तत्व, पूर्ण अध्यात्म तत्व
Absolute monarchy	निरंकुश राजतन्त्र
Abstract	निराकार, अमूर्त
Abstract labour	निर्गुण श्रम
Accident	संयोग
Accidental	आकस्मिक
Accumulation	संचयन
Accumulated labour	सञ्चित श्रम
Ad valorem	मूल्यानुसार
Agnosticism	अज्ञेयवाद
Altruism	परमार्थवाद
Amortisation	ऋण-परिशोध
Analogy	उपमा, सादृश्य
Anarchism	अराजकतावाद
Anti-thesis	प्रतिवाद
Thesis	सिद्धान्त, वाद
Synthesis	संवाद
Appearance	दृश्य, रूप, आभास, आकृति
Apprentice	शागिर्द, उम्मीदवार
Appropriation	उपभोग
Aristocracy	अभिजात वर्ग, उच्च वर्ग, अभिजातशाही
Artisan	कारीगर, दस्तकार
Atheism	अनीश्वरवाद
Atom	परिमाणु
Atomism	परिमाणुवाद
Autonomy	स्वायत्त शासन

Balance	रोकड़-बाक़ी
Being	सत्ता
Bill	हुण्डी
Bond	हुण्डी
Boom	समृद्धि, तेज़ी
Bourgeois	पूँजीवादी
— Petty	निम्न पूँजीवादी
Bourgeoisie	पूँजीवादी वर्ग
Bourgeois Democratic	पूँजीवादी जनवादी
Burgess (Medieval)	व्यापारी नागरिक (मध्य युगीन)
Burgher (chartered)	पट्टेदार महाजन
Cadre	कार्यकर्ता
Capital	पूँजी
— Authorised	निर्धारित पूँजी
— Auxiliary	सहायक पूँजी
— Bank	बैंक पूँजी
— Circulating	चल पूँजी
— Constant	स्थिर पूँजी
— Fixed	अचल पूँजी
— Finance	महाजनी पूँजी
— Industrial	औद्योगिक पूँजी
— Joint	सम्मिलित पूँजी
— Monopoly	एकाधिकारी पूँजी
— Variable	अस्थिर पूँजी
— Working	कार्यशील पूँजी
Capitalism	पूँजीवाद, सरमायेदारी
Capitalist	पूँजीवादी
Category	कोटि
Capitulators	शरणगामी
Cause	हेतु, कारण
Causality	कार्य-कारण सम्बन्ध
Causal-process	हेतु-क्रम
Cave-man	गुहा-मानव
Cell	जीव-कोष

Centralization	केन्द्रीकरण
Centralism	केन्द्रीय अधिकारवाद
— Democratic	जनवादी केन्द्रीयता
Centrist	मध्यवादी
Character	स्वरूप, स्वभाव, लक्षण, चरित्र
Chauvinism	देशाहंकार, राष्ट्रवाद
Circle	गुट, गोष्ठी, दल
Circulation	चलन
Circulating capital	चल पूँजी
Class	श्रेणी, वर्ग
— character	वर्ग–रूप
— conscious	श्रेणी–सजग
— consciousness	वर्ग–चेतना
— contradiction	श्रेणी–विरोध
— Interest	श्रेणी–स्वार्थ
— struggle	श्रेणी–संघर्ष, वर्ग-संघर्ष
Classic	मूल ग्रन्थ
Classical	प्राचीन, शास्त्रीय
Clerical	पुरोहिती, धार्मिक
— obscurantism	पुरोहितोंका अन्धकूप
Collective	सामूहिक
— farm	सामूहिक खेत
Collectivisation	सामूहीकरण
Collectivism	सामूहिकता
Commerce	व्यवसाय
Commissar	जन-प्रतिनिधि, जन-मंत्री
Commune	कम्यून, ग्राम-पञ्चायत
Communism	कम्युनिज्म, साम्यवाद
Community	समुदाय
Commodity	माल
— fetishism	मालकी जड़-पूजा
Competition	प्रतियोगिता, होड़
— free	मुक्त प्रतियोगिता
Complex	जटिल

Concentration — एकत्रीकरण
Conception — कल्पना
Concrete — सगुण, मूर्त
Consciousness — चेतना
Conservative — अनुदार, दकियानूसी, टोडी
Consistent — सुसंगत
Constant — स्थिर, घनीभूत, स्थिर विन्दु
— capital — स्थिर पूँजी
Constituent Assembly — विधान-परिषद
Constitutional Democrat — वैधानिक जनवादी
— Monarchy — वैधानिक राजतन्त्र
Consumer — उपभोग करनेवाला, ख़रीदनेवाला
Contemplation — चिन्तन
Content — तत्व, सार
Contradiction — विरोध
Co-operative — सहकारितापूर्ण
— movement — सहकार आन्दोलन
— society — सहकार-समिति
Craftsman — दस्तकार
Handicraftsman — दस्तकार
Crisis — संकट
— Economic — आर्थिक संकट
Critical point — चरम विन्दु

Deadlock — गतिरोध
Decentralised — विकेन्द्रित
Democracy — जनवाद
Determinism — नियतिवाद
Deviation — च्युति, गुमराही
Dictatorship — डिक्टेटरशिप, एकाधिपत्य
Dictatorship of the proletariat — मजदूर वर्गका एकाधिपत्य
Differential rent — सभेद लगान
Distribution — वितरण
Draft — मसविदा

Dual	द्विविधात्मक
Dualism	द्वैतवाद
Duma	राजसभा
— Deliberative	विचारसभा
— Legislative	धारासभा
Dynamic	गतिशील
Economics	अर्थशास्त्र
Economic life	आर्थिक जीवन
— structure	आर्थिक व्यवस्था
Economism	अर्थवाद
Economy	अर्थनीति
Element	तत्व
Elite	अभिजात
Empericism	अनुभववाद
Emperio-criticism	अनुभव-सिद्ध आलोचना
Enterpreneur	संचालक, जोखिम उठानेवाला
Enterprise	कारबार
Epoch	युग
Ethics	आचारशास्त्र
Ethical	नैतिक
Environment	परिवेश, वातावरण
Exchange	विनिमय
Experience	अनुभव
Export	निर्यात
Expropriation	लूट–पाट
Fact	तथ्य
Farmhand	खेत–मजदूर, खेतिहर
— labourer	मजदूर
Fatalism	भाग्यवाद
Federation	संघ
Federal	संघात्मक
Federalism	संघवाद
Fetish	अंध–श्रद्धा

Feudalism	ठाकुरशाही
Feudal-landlord	सामन्ती ज़मींदार
Fideism	श्रद्धावाद
Finance capital	महाजनी पूँजी
Financial oligarchy	महाजनशाही
Fixed capital	अचल पूँजी
Formal	ऊपरी, रस्मी, विधिवत
Formalist	नियमवादी
Free competition	मुक्त प्रतियोगिता
Free man	स्वतंत्र मनुष्य
General	सामान्य
Gnosiological	अध्यात्मवादी
Goods	माल, सामान
Group	गुट, दल
Guild	शिल्पी संघ
— corporate	पंचायती शिल्पी संघ
Handicraft	दस्तकारी
Hetrogeneous	अनेकरूपता
High finance	महाजनी पूँजी
Historical Materialism	ऐतिहासिक भौतिकवाद
Homogeneous	एकरूपता
Hypothesis	प्रमेय
Idea	तत्व-विचार
Ideal	आदर्श
Idealism	आदर्शवाद
Idealised	आदर्श रूप
Ideology	विचार-धारा
Illusion	मरीचिका
Immutable	चिरन्तन
Imparted	प्रविष्ट
Impression	अनुभव
Industry	उद्योग-धन्धे

Industrialist	उद्योगपति
Industrial capital	औद्योगिक पूँजी
Industrialisation	औद्योगीकरण
Inherent	निहित
Initiative	स्वयंप्रेरणा—दाँव
Insentient	अचेतन
Instrument of productions	उत्पादनके यन्त्र
Intelligentsia	बुद्धिजीवी वर्ग
Investment	पूँजी लगाना
Joint-stock	संयुक्त पूँजी
Journeymen	मजदूर कारीगर
Jurisprudence	दण्ड–विधान
Khvostism	पिछलगूपन, पुच्छवाद
Knight	सरदार
Knowable	ज्ञेय
Knowledge	ज्ञान
Labour	श्रम
— Abstract	निर्गुण श्रम
— Accumulated	सञ्चित श्रम
— Concrete	सगुण श्रम
— Congealed	घनीभूत श्रम
— Dead	निर्जीव श्रम
— Fettered	प्रतिबन्धित श्रम
— Living	जीवित श्रम
— Restricted	सीमित श्रम
— Skilled	निपुण श्रम
— Simple	साधारण श्रम
Labour-power	श्रम-शक्ति
Labour-rent	मिट्टीदारी
Labour-time	श्रम-काल
— Average	औसत
— Socially necessary	सामाजिक रूपसे आवश्यक

Leap	छलाँग
Left	वाम-पक्ष
Leftist	वामपक्षी, गरम दली
Legal Marxist	क़ानूनी मार्क्सवाद
Liberal	उदारपंथी
Liquidator	विसर्जनवादी
Magnitude	परिमाण
— Social	सामाजिक परिमाण
Manufacturer	कारखानेदार
Market	बाजार
Marxist	मार्क्सवादी
Mass	जनता, जन-साधारण
Materialism	भौतिकवाद
— Dialectical	द्वन्द्वात्मक
— Historical	ऐतिहासिक
Materialist conception of history	इतिहासकी भौतिकवादी व्याख्या
Material life	भौतिक जीवन
Matriarchal	मातृ–सत्तात्मक
Matter	वस्तु
Means of communication	चिट्ठी–पत्रीके साधन
Means of subsistence	जीवन–निर्वाहके साधन
Means of Transport	आवागमनके साधन
Mechanical	यान्त्रिक
Mechanical materialism	यान्त्रिक भौतिकवाद
Memorandum	चिट्ठा
Metaphysics	अधिभूतवाद
Middle Class	मध्य वर्ग
Militant	अग्रसर
Mind	मन, चित्
Minimum wage	अल्पतम मजदूरी
Molecule	अण्ड
Momentum	वेग
Monarchy	राजतन्त्र

Money	मुद्रा
Monopoly	इजारादारी, एकाधिकार
— capital	एकाधिकारी पूँजी
Monopolies	एकाधिकारी संघ
Monopolist	एकाधिकारी
Morality	आचार-विचार, सदाचार
Motion	गति
Motive force	प्रेरक शक्ति
Mutation	परिवर्तन
Mysticism	रहस्यवाद
Narodnik	लोकवादी
Narodism	लोकवाद
Nation	जाति
Nationalisation	राष्ट्रीयकरण
Nationalism	राष्ट्रीयता
Nationality	जाति
Nature	प्रकृति
Negation	प्रतिषेध
Negative	नकारात्मक
Nodal-point	क्रान्ति-बिन्दु, संक्रमण-बिन्दु
Nominal wages	नक़द दाम
Nucleus	केन्द्र
Objective	वैज्ञानिक, बाह्य, यथार्थ
Objective reality	वैज्ञानिक वास्तविकता
Objective real	वस्तुगत
Objective truth	वस्तुगत
Opportunist	अवसरवादी
Oppression	उत्पीड़न
Organ	संस्था, अंग
Organic	सचेतन
Origin	उत्पत्ति-स्थान
Otzovist	बहिष्कारवादी

Pantheism	सर्व ब्रह्मवाद
Patriarch	कुलपति
Patriarchal	पितृ-सत्तात्मक
Patrician	अभिजात वर्ग, कुलीन
Peasant proprietor	खुदक़ाश्त जमींदार
Perception	इन्द्रिय-ज्ञान
Perceptual	गोचर
— Image	गोचर-आकार
Petty Bourgeois	निम्न पूँजीवादी
Phenomenon	घटना
Phenomenal form	घटनात्मक स्वरूप
Philistine	अधकचरा
Physics	पदार्थ विज्ञान
Physical matter	जड़वस्तु
Physical science	भौतिक विज्ञान
Plebian	साधारण प्रजाजन
Pluralism	बहुसत्तावाद
Positive	स्वीकारात्मक, निश्चित
Positive side	भावपक्ष
Positivism	अस्तित्ववाद
Practice	प्रयोग, व्यवहार
Practical	क्रियात्मक
Practical reason	व्यावहारिक बुद्धि
Pragmatism	क्रियावाद
Price	क़ीमत, दाम
Primal	साकार, मौलिक
Primitive	प्राचीन, आदिम
Primitive communal	प्राचीन पंचायती व्यवस्था
Primordial	प्रथम, मौलिक
Probability	
Process	प्रक्रिया, घटना-प्रवाह, क्रम
Process of development	विकास-क्रम
Production	उत्पादन
— Cost of	उत्पादन-खर्च
— Instruments of	उत्पादनके यन्त्र

— Means of	उत्पादनके साधन
— relation	उत्पादनके सम्बन्ध
Productive forces	उत्पादक शक्ति
Productivity	उत्पादन-क्षमता
Proletariat	सर्वहारावर्ग, श्रमजीवी, मजदूरवर्ग
Proprietor	मालिक
Psychological make-up	मानसिक गठन
Quality	गुण
Qualitative	गुणात्मक
Qualitative differences	गुणभेद
Quantity	परिमाण, मात्रा
Quantitative	परिमाण सम्बन्धी
Quantitative composition	अणुबद्ध रचना
Race	नस्ल
Rationalism	बुद्धिवाद
Rationality	विवेक
Reaction	प्रतिक्रिया
Realism	यथार्थवाद, वास्तववाद
Reality	वास्तविकता
Reconciliation	समन्वय
Reconstruction	पुनर्निर्माण
Reflection	प्रतिबिम्ब
Reflex	प्रतिबिम्ब
Relative	सापेक्ष
Relativity	सापेक्षता
Reproduction	पुनरुत्पादन
— Capitalist	पूँजीवादी पुनरुत्पादन
— Simple	साधारण पुनरुत्पादन
Republic	प्रजातन्त्र
Restrictive	प्रतिबन्धक
Returns	
— Diminishing	क्रमागत ह्रास
— Increasing	क्रमागत वृद्धि
— Constant	क्रमागत समान उपज

Revenue	सार्वजनिक आय
Revisionism	संशोधनवाद
Right	नरम दल
Rightist	नरम दली
Role	भूमिका
Scepticism	संशयवाद
Scholastic	मीमांसा
School	मत
Science	विज्ञान
Sect	सम्प्रदाय
Semi-Proletariat	अर्द्ध-सर्वहारा
Sensation	संवेदना
Sense	इन्द्रिय
Sensitive	संवेदनशील
Separatist	पृथकतावादी
Serf	कम्मी, दास
Serfdom	कम्मी प्रथा, दास प्रथा
Simple	साधारण
Slave	दास
Social Chauvinist	सामाजिक राष्ट्रवादी
Social democracy	सामाजिक जनवाद
Socialism	सोशलिज़्म, समाजवाद
Socialist revolutionary	सामाजिक क्रान्तिकारी
Solipsism	अहंवाद
Solution	समाधान
Sophist	पाखण्डी
Soul, spirit	आत्मा
Sovereign	पूर्ण सत्ताशाली
Sovereignty	पूर्ण सत्ता
Soviet	सोवियत, पंचायत
Spiritualist	अध्यात्मवादी
Spontaneous	स्वयंस्फूर्त
Spontaneity	स्वयंस्फूर्ति
State	राज्य

State capital	सरकारी पूँजी
Strategy	समर-नीति
Subjective	आत्मनिष्ठ, बहुमत, मनोगत
Subjectivism	मनोवाद
Subjective idealism	आत्मवाद
Supernatural	लोकोत्तर
Suprasensuous	गोतीत
Surplus	अतिरिक्त
Symbol	प्रतीक
Synthesis	संवाद, समन्वय
Tactics	कार्यनीति
Technique	कौशल
Teleology	प्रयोजनवाद
Territorial	प्रादेशिक, भौगोलिक
Theism	ईश्वरवाद
Theology	धर्मशास्त्र
Theoretician	सिद्धान्तवेत्ता
Theory	सिद्धान्त, धारणा
Thesis	वाद, सिद्धान्त
Things-in-themselves	वस्तु
Things for us	वस्तुरूप
Thinking	विचार, चित्
Thought	विचार
— Process of	विचार-क्रम
Trade	व्यापार
Transition	संक्रमण
Transport	आवाजाही, यातायात
Tribe	क़बीला
Union	संघ
Unit	इकाई
United	संयुक्त
Universe	विश्व
Universal money	सार्वलौकिक मुद्रा

Universal suffrage	सार्वजनिक मताधिकार
Unskilled labourer	अनिपुण मज़दूर
Utilitarianism	उपयोगितावाद
Utopia	कल्पना
Utopian	कल्पनावादी
Validity	प्रामाणिकता
Value	मूल्य
— Use	उपयोग मूल्य
— Exchange	विनिमय मूल्य
Vanguard	हिरावल, अग्रदल
Variable capital	अस्थिर पूँजी
Vassal	छोटे सरदार
Vitalism	प्रांणवाद
Volume	परिणाम
Voluntary	ऐच्छिक
Wages	उजरत, मज़दूरी
— Real	असली
— Money	नक़द
— Nominal	नक़द
Wage-labour	मज़दूरी
Wage-labourer	मज़दूर
Weavers	बुनकर
Working class	मज़दूर वर्ग
Workshop	कारखाना